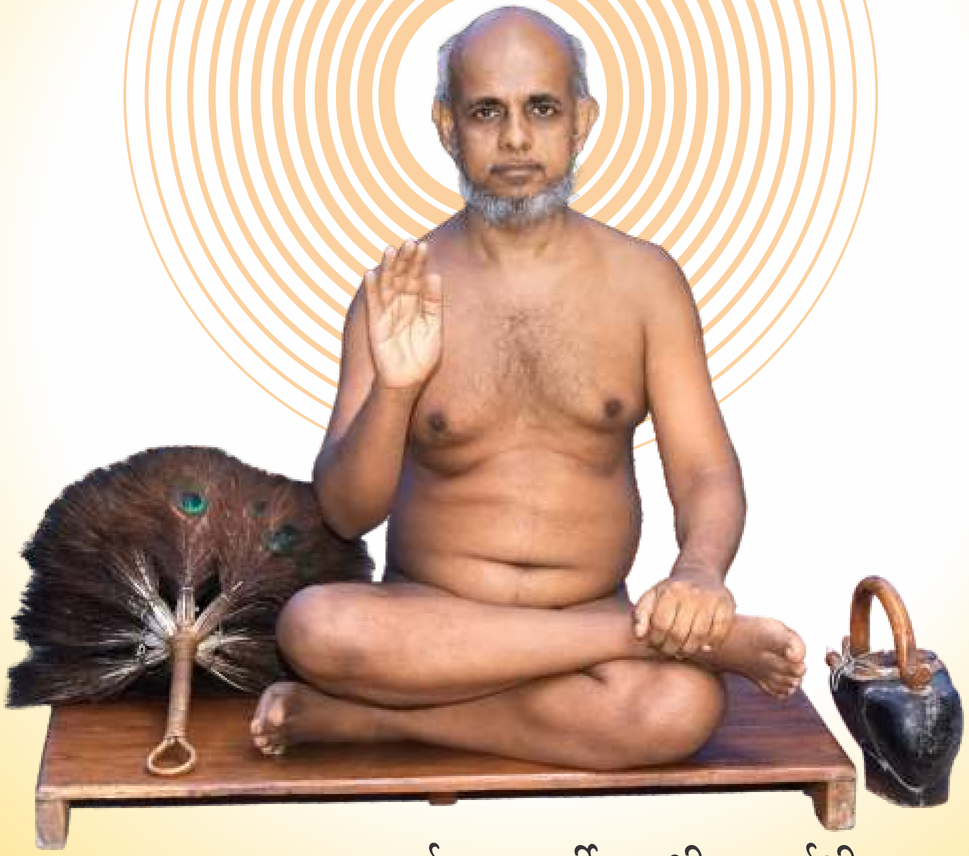

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती पट्टाधीशाचार्यश्री

सुविधिसागर जी महाराज

के

50 वें जन्मदिवस के पावन अवसर पर

सुविधि–परिवार के द्वारा आयोजित

जिनवाणी-महोत्सव

सहस्रग्रन्थसंग्रह

* जन्मदिवस 19–03–1971 * मुनिदीक्षा–11–05–1989 * आचार्यपद– 20–06–2004

पट्टाधीशपद– 24–12–2010 (20–06–2004 को की गई उद्घोषणा के अनुसार)

परम पूज्य आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज के द्वारा की गई उद्घोषणा:–

हमारी समाधि के पश्चात् आपको इस संघ के संचालकपद पर नियुक्त करते हैं।

(अंकलीकर वाणी–जुलाई 2004) (अक्षयज्योति–अक्तूबर 2004)

व्रतवैभव = 04

संकलन–संयोजन
जयकुमार निशान्त

मुद्रक
मन्नूलाल जी जैन प्रतिष्ठाचार्य स्मृति ट्रस्ट
टीकमगढ़ (मध्यप्रदेश)

(परम्परानायक)

परम पूज्य चारित्र–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज
(अंकलीकर)

(द्वितीय पट्टाधीश)

परम पूज्य तीर्थभक्त–शिरोमणि,
आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज

(तृतीय पट्टाधीश)

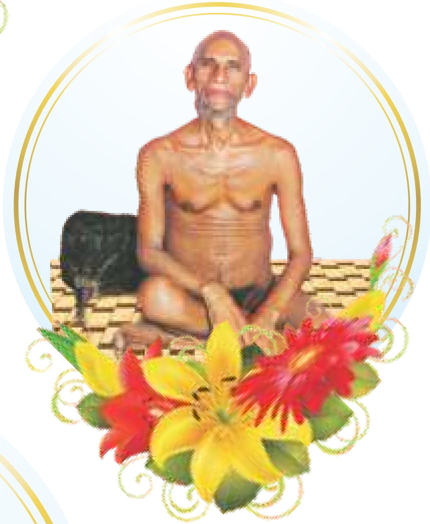

परम पूज्य सिद्धान्त–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज

(चतुर्थ पट्टाधीश)

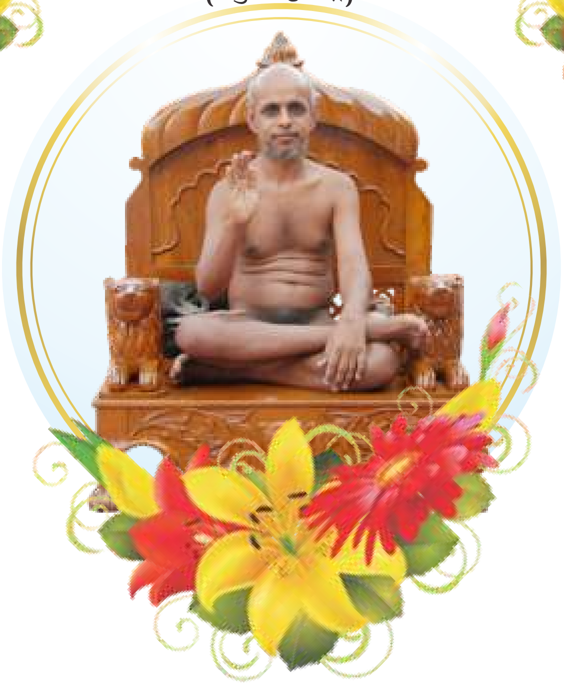

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती, आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज

दिगम्बर साधु निरन्तर पगविहार करते रहते हैं। ग्रन्थभण्डार को साथ में रख कर विहार करना अशक्यप्राय: होता है। फलत: उनको ग्रन्थों के सन्दर्भ देखने में असुविधा होती है। उनकी सुविधा के लिये इस कोश का निर्माण किया गया है। इस कोश के निर्माण में किसी भी प्रकार का व्यापारिक हेतु नहीं है।

आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न श्रावकबन्धुओं से निवेदन है कि वे ग्रन्थ का विक्रय कर अध्ययन करने की परम्परा को कायम रखें।

मुखपृष्ठ पर हमने ग्रन्थकर्त्ता, अनुवादक, सम्पादक, प्रकाशक आदि के नाम दिये हैं। किसी संस्थान का कर्तुत्व हमने लुप्त नहीं किया है।

इस कोश के लिये आवश्यक ग्रन्थ हमें अनेक स्रोतों से प्राप्त हुये हैं। हम उन सभी का आभार मानते हैं।

सुविधि–परिवार

(1 ए)

व्रत वैभव

भाग-4

(व्रत उद्यापन विधान)

निर्देशन

पं. गुलाबचन्द्र 'पुष्प'

संकलन/संयोजन

ब्र. जयकुमार 'निशांत'

सम्पादक

ब्र. विनोद जैन, पपौराजी

पं. विनोद कुमार, रजवांस

-: प्रकाशक :-

पं. मन्नूलाल जैन प्रतिष्ठाचार्य स्मृति ट्रस्ट

पुष्पभवन, टीकमगढ़ (म0प्र0) **472001**

फोन- **07683-243138**

ग्रन्थ- **व्रत वैभव**
आशीर्वाद- आचार्य विद्यासागर जी महाराज
प्ररेणा- उपाध्याय श्री 108 ज्ञानसागरजी महाराज
निर्देशन- प गुलाबचन्द्र 'पुष्प'
सकलन/सयोजन- ब्र जयकुमार 'निशान्त'
सम्पादक- ब्र विनोद जैन, पपौराजी, प विनोदकुमार, रजवास
अवसर- श्रीमज्जिनेन्द्र पचकल्याणक महोत्सव अतिशय क्षेत्र तिजारा
सान्निध्य- सराकोद्धारक उपाध्याय श्री 108 ज्ञानसागरजी महाराज ससघ
आवृत्ति- प्रथम-1100
प्राप्तिस्थान-

1 ब्र जयकुमार 'निशात',
प मन्नूलाल जैन प्रतिष्ठाचार्य स्मृति ट्रस्ट
पुष्प भवन, टीकमगढ (म0प्र0) 472001 फोन- 07683-243138

2 अरिहत साहित्य सदन
4, रेनवो विहार, मुजफ्फरनगर(उ0प्र0) फोन 0131-2433257

3 गजेन्द्र ग्रन्थमाला
2578, गली पीपल वाली, धर्मपुरा, दिल्ली- 110006 फोन-9810035356

4 श्री दिगम्बर जैन पञ्चबालयति मन्दिर
विद्यासागर नगर, सत्यम गैस के सामने, एम जी रोड, इन्दौर-10
फोन- 0731-2571851

5 सतोषकुमार जयकुमार वैटरी वाले
कटरा बाजार, सागर (म प्र) फोन-07582-243736, 244475

लागत मूल्य- 100 00

आवरण तथा शब्द सज्जा-
ए व्ही एस कम्प्यूटर, टीकमगढ (म0प्र0) फोन-07683-240047

मुद्रक - **एन एस. इन्टरप्राईजिस**
2578, गली पीपल वाली, धर्मपुरा, दिल्ली-110006
मोबाईल : 9810035356, 9312200580

जैन विद्या प्रशिक्षण शिविर

5 जून से 12 जून 2005

सान्निध्य :-

उपाध्यायरत्न श्री गुप्तिसागर जी महाराज

सप्रेम भेट

श्रीमती कमला देवी जैन

धर्म चन्द जैन — कु. रमा जैन

पुष्पा जैन — मा. अंशुल जैन

रुचिका ध. प. श्री कपिल जैन

नित्या

डी. सी. पर्ल्स

निर्माता एवं निर्यातक :- मोतियों के आभूषण

एक्स-45, प्रताप स्ट्रीट, गांधी नगर,

दिल्ली-110031

व्रत वैभव की विषय वस्तु

व्रत वैभव भाग 1- (व्रत विवरण एव मत्र)

1 व्रत ग्रहण करने का उद्देश्य
2 व्रत ग्रहण करने की विधि एव सकल्प
3 व्रत के दिन श्रावक की चर्या
4 व्रत का सम्पूर्ण विवेचन
5 मत्र एव पूजा विधि
6 सदर्भ ग्रन्थ एव सक्षिप्तिका

व्रत वैभव भाग 2- (व्रत पूजा एव कथाएँ)

1 आचार्यो/मुनिराजों/आर्यिका माताजी के शुभाशीष
2 विद्वानो के अभिमत
3 व्रत सबधी आवश्यक लेख
4 अभिषेक, शान्तिधारा एव पूजन
5 व्रतोपयोगी भक्तियाँ
6 व्रत कथाऍ
7 सदर्भ ग्रन्थ एव सक्षिप्तिका

व्रत वैभव भाग 3- (व्रत उद्यापन विधान)

1 व्रत उद्यापन विधि
2 अभिषेक, शान्तिधारा एव पूजन
3 व्रतोपयोगी भक्तियॉ
4 उद्यापन विधान (अकारादिक्रम में अ से प तक)
5 सदर्भ ग्रन्थ एव सक्षिप्तिका

व्रत वैभव भाग 4- (व्रत उद्यापन विधान)

1 व्रत उद्यापन विधि
2 अभिषेक, शान्तिधारा एव पूजन
3 व्रतोपयोगी भक्तियाँ
4 उद्यापन विधान (अकारादि क्रम में र से त्र तक)
5 सदर्भ ग्रन्थ एव सक्षिप्तिका

पं गुलाबचन्द्र 'पुष्प' प्रतिष्ठाचार्य
को प्राप्त सम्मान राशि का
ग्रन्थ प्रकाशन मे सदुपयोग

1 पुष्पाञ्जलि ग्रन्थ प्रकाशन समिति
2 ऋषभाञ्चल ध्यान योग केन्द्र
3 दशलक्षण पर्व 2004 ऋषभाञ्चल
4 श्रीमज्जिनेन्द्र पचकल्याणक गजरथ महोत्सव करगुवाजी, झासी
5 पार्श्वनाथ पूजा समिति मन्दिर क्रमाक 14 पपौरा जी
6 श्रीमज्जिनेन्द्र पचकल्याणक महोत्सव पिपलानी, भोपाल
7 श्रीमज्जिनेन्द्र पचकल्याणक पचगजरथ महोत्सव सिद्ध क्षेत्र पावागिरी
8 श्रीमज्जिनेन्द्र पचकल्याणक महोत्सव अतिशय क्षेत्र बडागॉव (खेकडा)

आवरण पृष्ठ का परिचय

श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र सीरौन जी (ललितपुर) उ प्र मे स्थापित आचार्य परमेष्ठी विम्ब, जिसमे फल सहित वृक्ष, मुनि, आर्यिका, श्रावक एव श्राविका भी दृष्टिगोचर है।

* व्रत के दिन व्रत मंत्र की 3 माला अवश्य करे।
* व्रत का उद्यापन व्रत के दिन ना करके पारणा के दिन करे अथवा एक व्रत अतिरिक्त करके करे।

व्रत क्यों ?

* व्रत मानसिक शाति के प्रबल निमित्त हैं।
* व्रत मोक्ष महल की सीढी हैं।
* व्रत मन, वचन, काय की पवित्रता के साक्षात् कारण हैं।
* व्रत ही शाश्वत लक्ष्य की कुजी हैं।
* व्रत मानवपर्याय के लिए उपहार हैं।
* परिणाम विशुद्धि व्रताचरण से ही सभव है।
* व्रतों का पूर्णफल सम्यक्विधि से ही प्राप्त होता है। मात्र उपवास (लघन) से नहीं।
* व्रतों के बिना मानव जीवन अधूरा है।
* व्रत साधना है, मनौति नहीं।
* व्रतों के प्रति अरुचि/प्रमाद/अवमानना का भाव नहीं करना चाहिए।

अनुक्रमणिका

प्रकाशकीय	7ए
सम्पादकीय	9ए
आमुख	13ए
प्रस्तावना	17ए
विधानो के मण्डल	40ए
स्वस्तिक अकन	46ए
मगल पञ्चक	1
मगलाष्टक पाठ	2
अभिषेक विधि	4
अभिषेक पाठ	7
शान्ति-धारा	11
आरती	13
विनय पाठ	14
पूजा प्रारम्भ	16
समुच्चय पूजा	21
अर्घ्यावली	13
समुच्चय महार्घ्य	35
शान्ति पाठ	36
विसर्जन	38
सिद्धभक्ति	39
शान्तिभक्ति	40
मण्डल विर्सजन	42
रविवार व्रत उद्यापन	43
रत्नत्रय विधान	62
लब्धि विधान	127
श्रुतस्कध विधान	175
श्रीजिन सहस्रनाम विधान	198
सोलहकारण विधान	269
त्रिकाल चतुर्विंशति विधान	371
त्रैलोक्य जिनालय विधान	416
सदर्भ ग्रन्थ सूची	431
सक्षिप्तिका	436

प्रकाशकीय

गृहस्थ जीवन मे होने वाले दोषों से श्रावक चाहकर भी नही बच पाता है, उससे दोष/पाप होते रहते है। उनके निराकरण के लिए तीर्थकरो ने अपनी देशना मे श्रमण धर्म के साथ श्रावक धर्म का भी विवेचन किया है। जिसके आधार से श्रावक अपनी शक्ति अनुसार गृहस्थ धर्मों का निर्वहन कर व्रतो का पालन करके मुनि धर्म की ओर अग्रसर होने के भाव से धर्माचरण करें, इसलिए आचार्यो ने श्रावको के लिए व्रत करने का निर्देश दिया है। जिसमें व्रतों का स्वरूप अवधि, जापमन्त्र, कथा, उद्यापन आदि का विवेचन किया है। किन्तु विभिन्न क्षेत्रो में क्षेत्रीय परम्परा अनुसार व्रत किये जाने से व्रतो की विधि आदि मे विकृति एव शिथिलाचार आ जाने के कारण आचार्यो को समय-समय पर, क्षेत्र एव परिस्थितियो के अनुरूप व्रतों के स्वरूप में परिवर्तन करना पडा फिर भी व्रतो का पालन नगन्य हो गया था। अनेक व्रतो का सृजन भी समयानुसार हुआ। आचार्यो ने हमे अनेक व्यवस्थाये अवस्था के अनुसार प्रदान की है। यह परिवर्तन, काल के लम्बे-लम्बे अन्तरालो में हुआ है अत इन व्रतो की एक साथ उपलब्धि दुरूह हो गई थी। जिससे भिन्न-भिन्न क्षेत्र के भिन्न-भिन्न काल के श्रावकों को शास्त्रानुसार व्रत विधि की समग्र जानकारी प्राप्त नही हो पाती थी। जिससे श्रावक व्रतों का पालन एव उद्यापन आदि नही कर पाते थे। गृहस्थ धर्म के पालन की सुविधा के लिए व्रतों के समग्र विवेचन की आवश्यकता थी।

इसके लिए पडित प्रवर प्रतिष्ठाचार्य श्री गुलाबचन्द्र जी के निर्देश से ब्र जय 'निशान्त' ने 475 व्रतों के नाम, अवधि, विधि, जापमन्त्र, पूजा आदि को सकलित किया है। प पुष्प जी जैन जगत के सर्वमान्य प्रामाणिक एव निर्दोष क्रिया को स्वीकारने वाले सुप्रसिद्ध प्रतिष्ठाचार्य हैं। उनके इन गुणों का ब्र निशात जी ने शब्दश अनुसरण किया है। इनके

द्वारा जिन व्रतो का सकलन/सयोजन किया गया है वे निर्दोष प्रामाणिक एव शास्त्र सम्मत है। इसमे किसी प्रकार की शका आदि की आशका नही रह जाती है, क्योकि आपके द्वारा जितने साहित्य का सृजन हुआ, हो रहा है वह साधु/विद्वान एव समाज मे सर्वमान्य रहा है।

अक्षर-अक्षर पिरोकर शब्द-विन्यास करके साहित्य सृजन और सम्पादन के दुरूह कार्य को समर्थ विद्वान ही कर सकता है। कई लोगो के श्रम से ही इस ग्रन्थ की सयोजना हो सकी है। सम्पादक द्वय का श्रम श्लाघनीय है।

इस *प्रामाणिक "व्रत वैभव" नामक ग्रन्थ को प्रतिष्ठाचार्य प* मन्नूलाल जैन स्मृति ट्रस्ट प्रकाशित कर गौरवान्वित हुआ है। इस ट्रस्ट की स्थापना सन 1995 मे सर्वोपयोगी सत् साहित्य के सृजन/प्रकाशन एव प्रचार-प्रसार के लिए हुई थी। इस ट्रस्ट से अत्यल्प कार्यकाल मे प्रतिष्ठा रत्नाकर, प्रतिष्ठा पराग आदि सात जनोपयोगी ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके है। जो ट्रस्ट का गौरव है। इसी श्रृखला मे "व्रत वैभव" को प्रकाशित करके इसे नगर-नगर, गॉव-गॉव तक पहुँचाने का सकल्प ट्रस्ट ने लिया है। ट्रस्ट का उद्देश्य है कि इस ग्रन्थ से व्रतो का स्वरूप जानकर श्रावक गृहस्थ जीवन के दोषो से अपने आत्म कल्याण का मार्ग प्रशस्त करे।

हम मगल भावना के साथ ग्रन्थ के निर्देशक, सकलक/सयोजक, सपादक मुद्रक आदि समस्त सहयोगी जन का आभार मानते हुए इनसे दीर्घ साहित्य सेवा की कामना करते है।

प्रतिष्ठाचार्य प मन्नूलाल जैन स्मृति ट्रस्ट

टीकमगढ

सम्पादकीय

मानव जीवन का चरम लक्ष्य दु ख की निवृत्ति और सुख की प्राप्ति है। यही कारण है कि समस्त ग्रन्थों में दु ख के कारण और सुख प्राप्ति के उपायों का बृहद् निरूपण प्राप्त होता है। प्राय सभी शास्त्रों को पढकर अथवा सुनकर आत्मसात करने का प्रयास करते हैं किन्तु कोई विरले ही व्यक्ति ऐसे होते हैं जो यथार्थ में आत्मसात करने में सक्षम हो पाते हैं। उन्हीं व्यक्तियों में यदि प गुलाबचन्द्रजी'पुष्प' का नाम लिया जाये तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। प गुलाबचन्द्रजी 'पुष्प' एक ऐसे व्यक्तित्व के धनी हैं। जिस व्यक्तित्व की प्रतिभा में दूसरे अपने प्रतिबिम्ब सहजता से देख लेते है, जिस विराट व्यक्तित्व में ऐसी क्षमता विद्यमान हो उसका शब्दों के द्वारा मूल्याकन करना निरर्थक सा प्रतीत होता है। प्रश्न ये है कि प गुलाबचन्द्र'पुष्प' जी का यह व्यक्तित्व क्या जन्मजात था यदि इस प्रश्न के गवाक्ष में अन्वेषण किया जाये तो उत्तर प्राप्त होता है नहीं। उन्होंने अपने जीवन में उस पुरुषार्थ को क्रियान्वित किया है जिससे उनका यह व्यक्तित्व देखने मे आ रहा है।

प जी एक ऐसे वैज्ञानिक एव जिज्ञासु मानव हैं जिन्होंने अपने जीवनकाल में रूढिवादिता से समझौता नहीं किया यदि उनके पास कोई समस्या आई तो उन्होंने आगम के पक्ष, विद्वानों के दृष्टिकोण, वर्तमान प्रसग एव यथार्थ मूल्याकन कर उसे सुलझाने का प्रयास किया। यही कारण है कि यदि उनकी हस्तलिखित प्रतिष्ठा विषयक डायरियॉ, ज्योतिष सम्बन्धी कॉपी, विविध सदर्भों से समाहित रहती हैं। आज भी यदि उनके अध्ययन कक्ष में उनसे यदि कोई चर्चा करना चाहता है तो पूर्वाग्रह, हठाग्रहिता को छोड्कर धैर्यता के साथ आगम के सदर्भों से प जी सदैव वार्ता के लिए तत्पर रहते हैं। यह तो प जी के बाह्य पक्ष का एक सामान्य आकलन हो सकता है, किन्तु यदि उनका अभ्यतर जीवन देखा जाये तो वे प्रति समय अपने परम ध्येय के प्रति श्रद्धावान होते हुए पर्व दिवसों में उपवास, समय पर सामायिक, हित, मित, प्रिय भाषण सतुलित आहार-बिहार

एव निषिद्धयाशन में सदैव प्रयत्नरत रहते हैं। श्रावक के व्रत जितनी निष्ठा के साथ पालन करना चाहिए प्राय वह निष्ठा उनमें दृष्टिगोचर होती है। अतिचार और अनाचारों के प्रति निरन्तर जागृत रहे हैं और रहते हैं।

"व्रत वैभव" नामक कृति का प्रकाशन इसलिए हुआ कि श्रावक बहुत से व्रतों को अपने जीवन में आचरित करना चाहते हैं। जैन ग्रन्थों में व्रतों के यथा कनकावलि, एशोनव आदि का नामोल्लेख तो प्राप्त होता है किन्तु उनके स्वरूप आदि के विषय में विविध मान्यताएँ हैं तथा व्रत सम्बन्धी सागोपाग विषय का किसी भी ग्रन्थ में पूर्ण विवरण उपलब्ध नहीं होता है। पूर्व में इस विषय में बहुतेरे प्रयास भी हुये हैं यथा व्रत विधान सग्रह आदि। किन्तु ये ग्रन्थ सरलता से व्रत विधि के निरूपण में पूर्णत सक्षम नहीं हुए हैं, इसी कारण से दीर्घकाल से प जी के मन में यह भाव था कि व्रतों का एक सागोपाग विवेचक ग्रन्थ सग्रहीत किया जाए जो व्रत अनुष्ठान करने वालों के लिए सेतु का कार्य करे। इसी भावना को साकार करने के लिए प जी साहब चिरकाल से व्रत सम्बन्धी सामग्री का सग्रह करते आ रहे हैं। जिसके फलस्वरूप यह ग्रन्थ आपके सामने प्रस्तुत है। इस ग्रन्थ के सयोजन में प जी के सुपुत्र चि ब्र जय कुमार 'निशान्त' ने इस प्रकार से कार्य किया है जिस प्रकार कि मन्दिर के निर्माण के पश्चात् मन्दिर पर कलशारोहण का कार्य होता है। उन्होंने दिगम्बर परम्परा में मान्य व्रतों का उल्लेख उन अभिलेखों के साथ में किया है जो व्रतों की उपयोगिता, विधि, सावधानियाँ इत्यादि को इस प्रकार से प्रस्तुत करता है कि पाठक सहज ही उनके स्वरूप को उपलब्ध कर लेता है।

यह ग्रन्थ चार भागों में विभक्त है, प्रथम भाग व्रत विषयक विशिष्ट सामग्री से सयुक्त है। इसी भाग में पाठकों की सुविधानुसार प्रत्येक मासों में करणीय व्रत तथा व्रत से सम्बन्धित तिथि एव अकारादि क्रम में 475 व्रतों का अवधि, विधि, पूजन, जाप, उद्यापन आदि का निरूपण उपलब्ध है।

इसी ग्रन्थ के द्वितीय भाग में सयोजक ने बडी कुशलता से परिशिष्ट सहित दैनिक उपलब्ध सकल व्रतो की लगभग 27 पूजाएँ एव उपयोगी भक्तियाँ

समाहित की हैं। इसी भाग में उन अभिलेखों को समाहित किया गया है जो व्रतों की ऐतिहासिकता, वैज्ञानिकता इत्यादि सामग्री को प्रस्तुत करते हैं।

इस ग्रन्थ के तृतीय एव चतुर्थ भाग में व्रतों के उद्यापन हेतु अकारादि क्रम से उपयोगी विधानों का सकलन करके इस ग्रन्थ को सर्वांगीण एव सर्वोपयोगी बनाया गया है।

ग्रन्थ वैशिष्टय

-व्रत विषयक उपलब्ध ग्रन्थों में 475 व्रतों का निरूपण करने वाला यह प्रथम ग्रन्थ होगा।

- मासों में करणीय व्रत एव अकारादि क्रम से व्रतों का नामोल्लेख इस ग्रन्थ के अलावा अन्यत्र देखने में नहीं आता है।

- प्राचीन दिगम्बर परम्परा का निर्दोषता से पोषण करने वाले व्रतों के नामोल्लेख और स्वरूप सहित विवरण अन्यत्र दुष्प्राप्य है।

- व्रतों में अनुष्ठेय मत्र जाप, पूजन, उद्यापन विधान इस ग्रन्थ के अलावा अन्यत्र सुलभ नहीं हैं।

किसी भी ग्रन्थ का विशिष्ट रूप तब तक पूर्ण नहीं होता जब तक कि परम गुरुओं का आशीष न हो इस ग्रन्थ के प्रेरणास्रोत आचार्य गुरुवर विद्यासागर जी एव आचार्य मुनि विद्यानदजी हैं। प गुलाबचन्द्रजी 'पुष्प' एव ब्र जय कुमार 'निशान्त' ने समय-समय पर परम गुरुओं/ मुनिराजों का परामर्श भी लिया है जो इस विषय के पारगत एव निष्णात् विद्वान हैं उनके प्रति हृदयाभार के साथ परम पूज्य राष्ट्रसत विद्यानद जी, सराकोद्धारक उपा ज्ञानसागर जी, मुनि श्री सुधासागर जी, मुनि श्री प्रमाणसागर जी, मुनि श्री विशुद्धसागर जी, मुनि श्री सौरभसागर जी, मुनि श्री अभयसागर जी, मुनि श्री प्रसादसागर जी एव ऐलक श्री सिद्धातसागर जी का नाम विशिष्ट रूप से उल्लेखनीय है।

साहित्य सयोजना करना और उसे जन सामान्य तक पहुँचाना कितना कठिन कार्य होता है यह तो साहित्य सेवी ही जानते हैं। इस ग्रन्थ के सयोजन में अर्चना जैन(पम्मी) को किस रूप में स्मरण किया जाये उसे शब्दों में सयोजित

करना सभव नहीं है, क्योंकि उन्होंने अपने व्यस्ततम क्षणों में पूर्ण समर्पण के साथ ग्रन्थ को आकार देने में जो सहयोग दिया अद्वितीय है। मनीष जैन(सजू) एक ऐसे युवा होनहार समर्पित मनीषी हैं जिन्होंने सदैव निष्ठा के साथ कार्य किया है साथ ही अनेकान्त परिवार की बहिनो ने प्रत्यक्ष परोक्ष रूप से इसकी सयोजना में अपना बहूमूल्य समय दिया है। अक्षर सयोजन मे दीपक जैन (ए व्ही एस कम्प्यूटर) एव मुद्रण में श्री नीरज जैन (दिगम्बर) का सहयोग सराहनीय है जिन्होंने अल्प समय में अथक श्रम करके ग्रन्थ जन सामान्य तक सुलभ कराया है।

इसके साथ ही हम डॉ सुरेन्द्र जैन पठा, अभिनन्दन साधेलिय के हृदय से आभारी हैं क्योंकि उन्होने अपने उपयोगी क्षणों से भी समय निकालकर हमें कृतार्थ किया है। आशा है कि यह ग्रन्थ श्रावकों को मुक्तिपथ में पाथेय बनेगा।

–ब्र विनोद जैन (पपौरा)
प विनोद जैन (रजवांस)

आमुख

सकल्प पूर्वक· सेव्ये नियमोऽशुभ कर्मव·।
निवृत्तिर्वा व्रत स्याद्वा प्रवृत्ति शुभ कर्मणि।।

अर्थात् सेवन योग्य विषयों में सकल्प पूर्वक नियम करना अथवा हिसा, असत्य, चौर्य, कुशील और परिग्रह इन अशुभ कर्मों से सकल्प पूर्वक विरक्त होना या शुभ कार्यों में प्रवृत्ति होना व्रत कहलाता है। यहाँ तत्त्वार्थसूत्र के सप्तम अध्याय के अनुसार शुभाश्रव रूप अहिसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, परिग्रह परिमाणाणुव्रत तथा दान आदि शुभ कार्यों मे प्रवृत्त होने से शुभ कर्मों का आश्रव होता है। यह श्रावक के कर्तव्यों मे शामिल है। असत् कार्यों से निवृत्ति और सत्कार्यों में प्रवृत्ति दोनों का ही अभिप्राय एक है। व्रत के स्वरूप का यह स्पष्टीकरण है। तत्त्वार्थ सूत्र के नवम अध्याय मे सवर के अन्तर्गत बारह भावना में सवर भावना का लक्षण इस प्रकार है।

जिन पुण्य पाप नहि कीना, आतम अनुभव चित दीना।
तिन ही विधि आवत रोके, सवर लहि सुख अवलोके।।

पुण्य पाप दोनों के आश्रव निरोध को सवर कहते है। द्रव्य सग्रह गाथा 35 में सवर के भेद एव व्रत का लक्षण शुभाशुभ रागादि विकल्पों से रहित बताया है।

भावार्थ यह है कि व्रत श्रावक के लिए प्रवृत्तिरूप शुभाश्रव का कारण हैं और पापाश्रव निवृत्ति रूप सवर भी है जो शुभोपयोग के अतर्गत है। वही व्रत पुण्य-पाप निवृत्ति रूप शुद्धोपयोग के होने पर निश्चय रत्नत्रय रूप हो जाता है। विषय-कषाय के साथ किया गया उपवास सार्थक नहीं होता है।

कषाय विषयाहारो त्यागोयत्र विधीयते।
उपवास· सु विज्ञेयो शेष लंघनकं विदु·।।

अर्थ- कषाय और इद्रिय विषयो का जहाँ त्याग किया गया है, उसे

उपवास कहते हैं। इसका उद्देश्य यह है कि हमारी इद्रियाँ हमारे वश में बनी रहें, हम इद्रियों के अधीन न हो जावें और आत्म सन्मुख रहते हुऐ सामायिक, स्वाध्याय आदि सत् प्रवृत्तियों में सलग्न रह सकें। किसी रोगादि या शारीरिक कारण से केवल आहार छोडना उपवास न होकर लघन कहलाता है। एक दिन-रात की अवधि में दिन में एक बार शुद्ध आहार लेना एकाशन कहलाता है। विधि पूर्वक किया गया व्रत ही महाव्रत की भूमिका बनाता है, जो परम्परा से मोक्ष को प्राप्त कराता है।

इस ग्रन्थ में 475 व्रतों का उल्लेख है। इन सबके उद्यापन की विधि भी है, जो अन्यत्र उपलब्ध नहीं है। कहीं है भी तो सस्कृत में है, हिन्दी में सरल रूप मे नहीं है।

दशलक्षण, नदीश्वर, णमोकार मत्र, कर्म निर्झर, लब्धि विधान, रविव्रत आदि हिन्दी पद्यों में विस्तृत उद्यापन विधि प्रस्तुत ग्रन्थ में प्रकाशित की गई है। सभी व्रतों की ऐसी विधि प्रथम बार प्रकाशित हो रही है।

श्री राजवैद्य प बारेलाल जी जैन ने सन 1952 मे 'जैन व्रत विधान' पुस्तक में अनेक उपयोगी व्रतों के साथ 170 व्रतों का उल्लेख किया है। परतु इसमें 475 व्रतों का वर्णन है। अनेक नए व्रत भी है।

व्रतों की उद्यापन विधि आवश्यक थी जिसे इस ग्रन्थ मे लिखकर कमी की पूर्ति कर दी गई है। उद्यापन न कर सके तो व्रत को दुगना करने पर उसकी पूर्ति मानी जाती है।

व्रतोद्यापन में जो पूजा के साथ किन्ही वस्तुओ के वितरण का रिवाज है उसके सबध में हमारा सुझाव है कि अपनी शक्ति के अनुसार ही व्यय करना चाहिए। उसका सकेत भी हमने उद्यापन विधि में पढा है। शक्ति से बाहर प्रदर्शन करना उचित नहीं है।

व्रत के दिनों में निश्चित मत्र का जप, पूजा, स्वाध्याय और धर्माराधन तथा आरभ त्याग के साथ शातिपूर्वक दिवस व रात्रि व्यतीत करना चाहिए।

ब्रह्मचर्य पूर्वक रहना आवश्यक है। भोजन भी ऐसा गरिष्ट न हो जो

रात्रि को पिपासा आदि बाधाएँ उत्पन्न कर पीडा पहुँचाए। जहॉ तक सभव हो व्रत का सकल्प किसी दिगम्बर गुरु के समक्ष करना चाहिए।

व्रतों को करने के पूर्व कुछ बिन्दुओं पर मुख्यत से विचार करना चाहिए, जो निम्न हैं-

1 त्याग, यम और नियम रूप होता है। मद्य, माँस, मधु एव पाँच पाप आदि का त्याग यम (जीवन पर्यन्त) रूप होता है। नियम रूप त्याग ये व्रत आदि हैं।

2 उपवास मे जल से मुख शुद्धि नहीं की जाती है।

3 मदिर में विराजमान प्रतिष्ठित जिनेन्द्र प्रतिमाएँ अर्हत्परमेष्ठी की हैं अत उनका अभिषेक हिन्दी या सस्कृत अभिषेक पाठ बोलकर करना चाहिए, जन्म कल्याणक का पाठ बोलकर नही। अभिषेक जल मस्तक व आखो के ऊपरी भाग में लगाना चाहिए। अभिषेक जल पीना या शरीर पर चुपडना दोष है, अभिषेकजल कूप में नही डालना चाहिए।

4 जैन धर्मानुसार सूर्योदय से 6 घडी का दिनमान माना है। उससे कम ग्राह्य नही है।

अष्टमी चतुर्दशी आदि व्रत भी उसी दिन किये जाते हैं। षोडशकारण, दशलक्षण आदि भी इसी प्रकार किये जाते है। पचागो मे ही हम अपने धर्मानुसार नियमो का पालन करते हे। यदि पचाग की अष्टमी या दशलक्षण षोडशकारण का प्रथम दिन 6 घडी कम होता है तो एक दिन पहले से हमें ये व्रत आरभ करना चाहिए। बीच में दो तिथियॉ भी शामिल हो सकती है। ऐसी स्थिति मे उक्त पूर्व दिन का हिसाब ठीक बैठ जाता है। दो तिथि भी हो तो व्रत पहली तिथि में करना चाहिए। अतिम दिन तो प्रत्येक व्रत का पूर्व से ही निश्चित रहता है। जैन धर्मानुसार जिसदिन छह घडी से कम हो तो आगे का दिन ही माना जाता है। षोडशकारण में कुल 32 दिन होते है। बीच में दिन घट गया हो तो प्रारभ दिन से एक या दो दिन पूर्व से प्रारभ करना चाहिए। यह व्रत मासिक नहीं मानना चाहिए। इसमें 32 दिन ही होते

हैं 16 उपवास और 16 पारणा या एकाशन करके यह व्रत पूर्ण होता है।

इस ग्रन्थ में जो व्रत एव उद्यापन विधि का स्पष्ट और विशद् वर्णन किया गया है उन सबका अन्वेषण कर एक बडी कमी को पूर्ण करने वाले ब्र जय "निशात" जी का समाज आभारी है। वे श्री दिग जैन पचबालयति मदिर के विशाल आयोजन एव निर्माण के सूत्रधार है। उनका परिश्रम सराहनीय है। धार्मिक प्रवृत्ति वाले साधर्मी बन्धु इससे लाभ उठावें।

इन्दौर

नाथूलाल जैन शास्त्री

प्रस्तावना

सयमोऽपि सदारक्ष्यो निज-कोष-समो बुधैः।
ततोऽधिक यतो नास्ति निधान जीवेन परम्।।

-कुरल काव्य 13/2

आत्म सयम की रक्षा अपने खजाने के समान ही करना चाहिए क्योंकि सयम से वढकर इस जीवन में और कोई निधि नहीं है। मानव जीवन इसलिए महत्त्वपूर्ण है क्योंकि मानव जीवन में ही उत्कृष्ट सयम साधना हो सकती है।

यदि सयम-व्रत पालन न करें तो मनुष्य और पशुओं में अन्तर नहीं होता है। नरक गति में साधन हीनता है और स्वर्गों में भोगाभिलाषा की अधिकता है, वहॉ देव असयमी जीवन जीते है। पशु पर्याय में आगमानुसार अणुव्रत(देश सयम) धारण करने की पात्रता तो है, परन्तु सकल सयम ग्रहण करने मे पशु असमर्थ है। प द्यानतराय जी ने सयमधर्म की पूजा में स्पष्ट किया है- "नरक सुरग पशुगति में नाहि"। सयम के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए कविवर द्यानतराय जी ने लिखा है- "जिस बिना नहीं जिनराज सीझे, तू रुल्यो जग कीच में" अर्थात् बिना सयम धारण किये जब तीर्थंकर को मोक्ष नहीं मिलता तब हम सामान्य श्रावकों को कैसे मिल सकता है? अत हमें आत्मा को परमात्मा बनाने के लिए निरन्तर सयम साधना करना चाहिए। श्री रइधूकवि कहते है "सयम बिन घडी नियत्थ जाऊँ" अर्थात् सयम के बिना जीवन की एक घडी भी नहीं जाना चाहिए। हमारा जीवन सयम पूर्वक ही बीतना चाहिए क्योंकि आगामी आयु का बन्ध भुज्जमान आयु के त्रिभाग रूप अपकर्ष काल में होता है, यह त्रिभाग आठ बार आ सकता है। हमें पता नहीं है कि कब आयु का बन्ध समय आवेगा, अत· हमें प्रतिसमय सयम साधना में ही समय व्यतीत करना चाहिए। यदि असयमी अवस्था में आयुबन्ध हुआ तो अशुभ आयु का बन्ध होगा। अत सयम ही सुखी जीवन की आधार शिला है।

श्रावकों के कर्तव्यों में आचार्यों ने सयम को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है। आचार्य गुणधर कहते हैं।

"दाण पूया सीलमुववासो चेदि चउव्विहो सावय धम्मो ।"

कषाय पाहुड सूत्र 82

दान, पूजा, शील और उपवास ये श्रावक के चार मुख्य कर्तव्य है। आचार्यों ने श्रावकों के कल्याणार्थ विषय कषायों से बचने के लिए उपवास आदि को श्रावक का कर्तव्य बताया है।

आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी ने श्रावकों को निर्देश देते हुए कहा है-

"दाण पूजा मुक्ख सावयधम्मेण तेण विणा"

-रयणसार गाथा 10

श्रावक का धर्म दान-पूजा के बिना नही हो सकता।

आचार्य श्री पद्मनन्दि ने श्रावक के षटकर्मों का उल्लेख करते हुए सयम व्रत दान आदि को प्रतिदिन करने का निर्देश दिया है।

देवपूजा गुरुपास्ति· स्वाध्याय· सयमस्तप·।
दान चेति गृहस्थानां षट्कर्माणि दिने-दिने।।

-पद्मनन्दि पञ्च विशतिका अध्याय 6/7

देवपूजा, गुरुभक्ति, स्वाध्याय, सयम, तप और दान गृहस्थ को प्रतिदिन करने चाहिए। जब श्रावक सकल्प पूर्वक सयम का पालन करता है तो उसके परिणाम निर्मल होते हैं और वह अशुभ भावों से बचता है। रयण- सार में गाथा 59 से 61 तक आचार्य कुन्दकुन्द ने अशुभ और शुभ भावों का निम्नानुसार वर्णन किया है।

हिसादि पाप, क्रोधादि कषाय, मिथ्याज्ञान, पक्षपात, मात्सर्य अष्टमद, दुरभिनिवेश, अशुभ लेश्या, विकथा में प्रवृत्ति होना अशुभ भाव हैं। अशुभ भाव को त्याग करने से सवर होता हैं।

छह द्रव्य, पाँच अस्तिकाय, सात तत्त्व, नौ पदार्थ का चिन्तन बारह अनुप्रेक्षा, रत्नत्रय, दयाधर्म आदि परिणाम शुभ भाव हैं। श्रावक को

गृहस्थाश्रम में दैनिक आश्रव रोकने के लिए देवपूजा, स्वाध्याय, सयम, दान आदि का पालन अवश्य करना चाहिए। गृहस्थोचित कर्तव्यों का पालन करने से श्रावक अपने कर्मों की निर्जरा कर लेता है।

व्रताचरण की आवश्यकता-

मोह-तिमिरापहरणे, दर्शन-लाभादवाप्त-सज्ञान
रागद्वेष-निवृत्यै, चरण प्रतिपद्यते साधु.।1।

-रत्नकरण्डक श्रावकाचार अध्याय -3/1

मोहान्धकार के दूर होने से सम्यग्दर्शन एव सम्यग्ज्ञान प्राप्त कर भव्य जीव रागद्वेष की निवृत्ति के लिए चारित्र को धारण करता है। रागद्वेष आदि को नष्ट करने में सयम ही समर्थ है।

व्रतों को ग्रहण करने से ससारी जीवो के सुख का मार्ग प्रशस्त होता है। व्यक्ति महाव्रत/देशव्रत आदि का पालन कर आत्मकल्याण कर लेते हैं किन्तु असमर्थ, हीन भाग्य वाले, दीन-दु खी, तिरस्कृत व्यक्ति जो कि महाव्रत/ देशव्रत आदि धारण नही कर पाते वे सामान्य व्रतों के द्वारा अपना कल्याण करते है। पतित एव अज्ञानी व्यक्ति भी व्रत धारण कर पावन एव सुखी हो जाते है। पौराणिक ग्रन्थो में उल्लेख है कि अनन्त भवों के दु ख उठाने वाले एव कुगतियों में जन्म लेकर ससार भ्रमण करने वाले जीवों ने व्रतो के द्वारा सद्गति एव सुख प्राप्त किया है। ऐसी अनेक कथाएँ वर्णित हैं जो व्रताचरण की आवश्यकता को और भी महत्त्वपूर्ण बना देती है।

व्रती का लक्षण-

हिंसादिक पाँच पापों से विरत होने के साथ-साथ त्रिशल्यों से मुक्त होना भी अनिवार्य है अन्यथा यथार्थ मोक्षमार्ग के साध्य तक पहुँचना कठिन होता है क्योंकि कामनाएँ कहीं न कहीं किसी न किसी रूप में विद्यमान रहतीं हैं जिससे साधना काल में चित्त निराकुलता को उपलब्ध नहीं कर पाता हैं इसीलिए "नि शल्यो व्रती" यह लक्षण सार्थक मालूम होता है।

मायानिदान-मिथ्यात्व-शल्या-भावविशेषत.।
अहिसादि-व्रतोपेतो व्रतीति व्यपदिश्यते ।

तत्त्वार्थसार 4/78

माया, मिथ्या और निदान इन तीन शल्यों से रहित जो अहिसा आदि व्रतों का पालन करता है वही व्रती कहलाता है। आचार्य उमास्वामी ने व्रती का लक्षण "नि शल्यो व्रती" कहा है।

व्रती के भेद-

व्रती के विविध भेदों का जो उल्लेख जिनागम मे दृष्टिगोचर होता है वह मुख्यत अतरग और बहिरग कषायों की क्षीणता के ऊपर आधारित है। अतरग कषायों के क्षय-उपशम आदि अवस्थाओं के होने पर जो सक्लेष की हानि तथा विशुद्धि की वृद्धि होती है, साथ ही अहिसादिक व्रतों के पालन में जो निष्ठा प्रकट होती है। इन सब में अभ्यतर कषाय मल का अभाव ही जानना चाहिए। बाह्य निरतिचार व्रतों का पालन प्रशम, सवेग, अनुकपा, आस्तिक्य भावो का प्रादुर्भाव तथा अष्टाग रूप सम्यग्दर्शन के अगो मे प्रवृत्ति यह व्रती के बाह्य जीवन की अवस्था होती है। प्रत्येक व्रती का यह साध्य रहता है कि वह समस्त बाह्य और अतरग द्वन्द से छूटता हुआ परम प्राप्तव्य आत्मतत्त्व को उपलब्ध करे। इसी प्राप्तव्य हेतु विविध सोपानो अथवा प्रतिमाओं का उल्लेख भी जिनागम मे दृष्टव्य है, इस प्रकार यह भेदों का जो उल्लेख वह मूलत पर का विमोचन और स्व की उपलब्धता की ओर इगित करता है। प्रत्येक साधक को भेदों की परिभाषा मे न उलझ कर उसके मूल साध्य को प्राप्त करना चाहिए।

अनगारस्तथागारी स द्विधा परिकथ्यते
महाव्रतोऽनगार· स्याद्गारी स्यादणुव्रत ।

तत्त्वार्थसार 4/79

अनगार और आगारी के भेद से व्रती दो प्रकार के है। महाव्रती अनगार(मुनि) कहलाते हैं और अणुव्रत के धारक आगारी (श्रावक) कहलाते हैं। चारित्र प्राभृत में भी इस प्रकार कहा गया है।

द्विविधं संयमचरण सागारं तथा भवेत् निरागारम्
सागार सग्रन्थे परिग्रहाद्रहिते निरागारम्।

चारित्र प्राभृतम 20

चारित्राचार के दो भेद है सागार और निरागार। सागार चरित्राचार परिग्रह सहित गृहस्थ के होता है। और निरागार चरित्राचार परिग्रह रहित मुनि के होता है और भी कहा है-

सकल विकल चरण तत्सकलं सर्वसग-विरतानाम्
अनगाराणा विकल सागाराणा ससंगानाम्।

रत्नकरण्डक श्रावकाचार, अध्याय 3/4

वह चारित्र सकल चारित्र एव विकल चारित्र के भेद से दो प्रकार का है उनमें से सकल चारित्र समस्त परिग्रहों से रहित मुनियों के और विकल चारित्र परिग्रह युक्त ग्रहस्थों के होता है। शक्त्यनुसार श्रावक धर्म तीन प्रकार का है पाक्षिक, नैष्टिक एव साधक। सप्तव्यसन का त्याग, अष्टमूलगुण पालन, रात्रिभोजन त्याग, छानकर पानी पीना, प्रतिदिन देव दर्शन करना यह पाक्षिक श्रावक का साधारण सयम है, नैष्ठिक श्रावक का सयम निम्न प्रकार है।

दर्शन व्रतं सामायिकं प्रोषध सचित्तं रात्रिभुक्तिश्च ।
ब्रह्मचर्य आरम्भ· परिग्रह· अनुमतिः उद्दिदठ देसविरदो य ।21।

(1) दर्शन (2) व्रत (3) सामायिक (4) प्रोषध (5) सचित्तत्याग (6) रात्रि-भुक्तित्याग (7) ब्रह्मचर्य (8) आरम्भ त्याग (9) परिग्रह त्याग (10) अनुमति- त्याग (11) उद्दिष्ट त्याग। ये सब देशविरत अथवा सागार चारित्राचार हैं। जिनका पालन नैष्टिक श्रावक करता है, इन्हें प्रतिमा के नाम से भी जाना जाता है। ससार, शरीर और भोगों से विरक्ति होने लगती है तब प्रतिज्ञा का जो भाव प्रकट होता है उसे प्रतिमा कहा गया है। प बनारसीदास ने उसे इस प्रकार कहा है।

संयम भाव जगो जबै अरुचि भोग परिणाम।
उदय प्रतिज्ञा को भयो सो प्रतिमा ताको नाम।।

इन ग्यारह प्रतिमाओं का निरतिचार पालन करना ही श्रावक धर्म की उत्कृष्टता है। सागार सयमाचरण (व्रत प्रतिमा) को आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी ने बारह प्रकार का कहा है।

पञ्चेव गुव्वयाइ गुणव्वयाइ हवन्ति तहतिण्णि।।
सिक्खावय चत्तारि य संयम चरण च साया रं।।

चारित्र पाहुड 23

पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत, और चार शिक्षाव्रत इस प्रकार बारह प्रकार का सागार सयमाचरण चारित्र है यह गृह निरत श्रावक के होता है। इन बारह व्रतों का निरतिचार पालन करके समाधि मरण करने वाला साधक कहलाता है। इन बारह प्रकार के व्रतों के पालनार्थ जितनी इच्छाओं का निरोध होता है वह तप की कोटी में माना गया है।

तप का लक्षण–

सम्यक् प्रकार से निष्काक्ष भाव से इच्छाओ का निरोध करना तप है, तप का मुख्य प्रयोजन सस्कारों का क्षय कर स्व की तरफ लक्ष्य करना है, मानव विविध सस्कारों का पुज है, इसलिए जैनाचार्यों ने कुसस्कार से सुसस्कार की तरफ और फिर दानों ही सस्कारों से मुक्त होकर शुद्ध की तरफ पहुँचने का सकेत दिया है। बाह्य और अभ्यतर तप के जो भेद हैं ये दोनों ही भेद मन, वचन, काय की शुद्धि प्रकट करने के लिए किये गए है। अत तप के द्वारा साधक कुसस्कारों का क्षय करते हुए सुसस्कार में निवास कर शुद्ध तत्त्व को उपलब्ध करता है।

पर कर्म क्षयार्थं यत्तप्यते तत्तप स्मृतम् ।

तत्वार्थसार अध्याय -6

अर्थात् कर्मों का क्षय करने के लिए जो किया जावे, वह तप कहलाता है।

इच्छा निरोधस्तप.

इच्छाओं को रोकना तप है। उपवास, एकाशन आदि व्रतों में भोजन, शयन विषय कषाय आदि विकारों को रोकते हैं वह तप है, वह कर्म निर्जरा में कारण है।

तप के भेद- तप के दो भेद हैं (1) बाह्य तप (2) अभ्यन्तर तप। इनके 6-6 भेद हैं।

बाह्य तप- अनशनावमौदर्य-वृत्तिपरिसख्यान-रसपरित्याग विविक्त-शय्याशन कायक्लेशा बाह्य तप । -तत्त्वार्थ सूत्र अध्याय-9 सूत्र-19

अनशन, अवमौदर्य, वृत्तिपरिसख्यान, रस परित्याग, विविक्त शय्यासन, कायक्लेश ये बाह्य तप हैं।

अभ्यन्तर तप-प्रायश्चित्त-विनय-वैयावृत्य-स्वाध्याय-व्युत्सर्ग ध्यानान्युत्तरम्। -तत्त्वार्थ सूत्र अध्याय-9 सूत्र-20

प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय, व्युत्सर्ग एव ध्यान ये अभ्यन्तर तप हैं।

श्रावक की अपेक्षा तप के लक्षण-

श्रावक वही है जो श्रद्धावान, विवेकवान और क्रियावान हो। यहाँ क्रियावान से हमें श्रावक का चारित्र ग्रहण करना है। वह चारित्र उसके यम और नियम के रूप में द्विधा विभक्त है। यम रूप से तो प्रत्येक श्रावक को नित्य देव दर्शन करना, छना जल ग्रहण, रात्रि भोजन त्याग तथा मद्य, मास, मधु का त्याग करना चाहिए। नियम रूप से विविध व्रतों का अनुष्ठान दिग्व्रत, देशव्रत, गुणव्रत आदि का पालन करना चाहिए। ये दोनों यम और नियम ही श्रावक के लिए तप हैं क्योंकि श्रावक इनके द्वारा स्वच्छद मन, वचन और काय की प्रवृत्ति को रोकने में समर्थ हो जाता है। इसलिए इस तप के द्वारा अनिवार्य रूप से निर्जरा घटित होती रहती है। इस प्रकार श्रावक को यम और नियम को दत्त चित्त हो सम्यक् रीति से पालन करना चाहिए।

नियमश्च तपश्चेति द्वयमेतन्न भिद्यते ।242।
तेन युक्तो जनः शक्त्या तपस्वीतिनिगद्यते
तत्र सर्व प्रयत्नेन मतिः कार्या सुमेधसा ।243।

-पद्म पुराण 14/242-243

नियम और तप ये दो पदार्थ जुदे-जुदे नहीं हैं।

जो मनुष्य नियम से युक्त है वह शक्ति के अनुसार तपस्वी कहलाता है। इसलिए बुद्धिमान मनुष्य को सब प्रकार से नियम अथवा तप में प्रवृत्त रहना चाहिए ।

"पर्वस्वथ यथाशक्ति भुक्ति-त्यागादिकं तपः।
वस्त्रपूतं पिबेत्तोय रात्रिभोजन-वर्जनम्।।"

-पद्मनन्दि पञ्च विशतिका 6/25

छना जल एव रात्रि भोजन का त्याग करते हुए श्रावक को पर्व के दिनों (अष्टमी एव चतुर्दशी) में अपनी शक्ति के अनुसार भोजन के परित्याग आदि रूप(अनशनादि) तपों को करना चाहिए। इन पवित्र दिनों में जीव दया का पालन करना चाहिए एव कषाय आदि विकारी भाव नहीं करना चहिए।

उपवास की परिभाषा-

दी गई उपर्युक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट है कि अतरग कषाय परिणामो का निरोध और बाह्य चतुर्विध प्रकार का आहार विमोचन उपवास है। उपवास की इस परिभाषा से स्पष्ट होता है कि साधना का मार्ग अतरग और बहिरग साधनो पर आधारित है। जो लोग मात्र अतरग साधन पर जोर देते हैं और बहिरग साधन को वेबुनियाद ठहराते है, उनकी दृष्टि अभी इस परिभाषा से समीचीन नहीं है तथा जो लोग मात्र बाह्य त्याग में ही अपना जीवन का सर्वस्व प्राप्तव्य मान लेते हैं वे भी भ्रम में है। अत हमें चाहिए कि हम लोग समीचीनतया अतरग और बहिरग दोनों मार्गों की आराधना करते हुए अपने साध्य को प्राप्त करें।

कषाय विषयाहारो त्यागो यत्र विधीयते।
उपवासः स विज्ञेयः शेष लघनक बिदुः।।

मोक्षमार्ग प्रकाशक पृ0 7/231

विषय कषाय के साथ आहार (चारों प्रकार का) का त्याग करना यथार्थ उपवास है, अन्यथा लघन है। विषय-कषाय के बिना मात्र आहार का त्याग करना अर्थात् कषाय की तीव्रता में आहार का त्याग करना लघन मात्र है। इससे आत्म कल्याण एव कर्म निर्जरा सम्भव नहीं है।

चार प्रकार का आहार निम्न प्रकार का है।

(1) **खाद्य**- पूडी, रोटी, दाल, चावल आदि।

(2) स्वाद्य- लवग, इलायची आदि।

(3) लेह्य- रबडी आदि चाटने वाले पदार्थ।

(4) पेय- पानी, दूध, शरबत, रस आदि पीने वाले पदार्थ।

उपवास के दिन इन चार प्रकार के आहार का त्याग किया जाता है।

उपवास के तीन प्रकार-

प्रोषधोपवास के जो उत्तम, मध्यम और जघन्य भेद आगम ग्रन्थों में उपलब्ध होते है, उन सबका अभिप्राय एकमात्र यही है कि अधिक से अधिक अपना आत्मबल प्रकट करते हुए क्षुधा, तृषा इत्यादि की बाधाओ को सहन करने हुए अपने आप को स्व में अधिक से अधिक स्थापित करना चाहिए। उत्तम आदि भेदों में अपनी शक्ति के अनुसार निर्दोष प्रवृत्ति करना चाहिए।

(1) **उत्तम उपवास**-सप्तमी त्रयोदशी को भोजनोपरान्त नियम (धारणा) करना अष्टमी या चतुर्दशी के दिन चारों प्रकार के आहार का त्याग कर नवमी या पूर्णिमा को एकाशन (पारणा) यह 16 पहर का है।

(2) मध्यम उपवास-सप्तमी या त्रयोदशी को साय कालीन भोजनोपरान्त उपवास लेना, अष्टमी चतुर्दशी का उपवास, नवमी पूर्णिमा को पारणा यह 12 पहर का है।

(3) जघन्य उपवास-अष्टमी या चतुर्दशी को प्रात काल ही उपवास लेना यह 8 पहर का है।

पर्व की परिभाषा पूज्यपाद आचार्य ने निम्न प्रकार से की है।

"प्रोषध शब्दः पर्व पर्यायवाची"। सर्वार्थ सिद्धि अध्याय-7 पृ0-279

प्रोषध शब्द का अर्थ पर्व है।

अर्थात् प्रोषध पूर्वक लिए गये उपवासादि को पर्व की सज्ञा दी गई है।

व्रत का उद्देश्य-

हिसाया अनृताच्चैव स्तेयाद्ब्रह्मतस्तथा
परिग्रहाच्च विरति· कथयन्ति व्रत जिना·।

-तत्त्वार्थसार 4/60

हिसानृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहेभ्यो विरतिव्रतम्

-तत्वार्थसूत्र, अध्याय 7/1

हिसा, झूठ, चोरी, कुशील, परिग्रह से निवृत्ति होने को जिनेन्द्र भगवान् व्रत कहते है। व्रत का उद्देश्य कषाय को कृश करना है, कायक्लेश नहीं।

सकल्पपूर्वकः सेव्ये नियमोऽशुभ-कर्मणः।
निवृत्तिर्वा व्रत स्याद्वा-प्रवृत्ति शुभकर्मणि।।

-सागार धर्मामृत-2/80

पञ्चेन्द्रिय जन्य विषयों को सकल्प पूर्वक त्याग करना और हिसादिक अशुभ कर्मों से विरक्त होना अथवा पात्रदानादि शुभकार्यों में प्रवृत्ति करना व्रत कहलाता है।

व्रत एक पवित्र कर्म/अनुष्ठान है जो साधक की मनोदशा परिवर्तित करने में सक्षम होता है। यही कारण है कि जैनाचार्यों ने पापों से विरक्ति का नाम व्रत कहा है।

व्रतों के भेद-

उपर्युक्त सभी व्रतों के भेद श्रावक अपनी योग्यता की वृद्धि करने के लिए प्रयोग करता है। जैसे-जैसे श्रावक के अथवा साधु के आत्मबल की वृद्धि होती जाती है वैसे-वैसे ही वह उत्तरोत्तर उच्च श्रेणी को उपलब्ध करता जाता है। विशिष्ट काय क्लेश जन्य स्थिति उत्पन्न होने पर उसके परिणामों में विशुद्धि हानि को प्राप्त नहीं होती है। इसलिए व्रतों के ये विविध भेद सार्थक हैं।

नियमोयमश्च विहितौ द्वेधा भोगोपभोग-संहारात्।
नियमः परिमित-कालो यावज्जीवं यमो ध्रियते।

-रत्नकरण्ड श्रावकाचार अध्याय 3/41

भोग और उपभोग के परिमाण का आश्रय कर नियम और यम दो प्रकार से प्रतिपादित हैं उनमें जो काल के परिमाण से सहित है वह नियम है और जो जीवन पर्यन्त के लिए धारण किया जाता है वह यम कहलाता है।

व्रत विधि की अपेक्षा से व्रत के निम्न भेद है-

1 सावधि 2 निरवधि 3 दैवसिक 4 नैशिक 5 मासावधि 6 वर्षावधि 7 काम्य 8 अकाम्य 9 उत्तमार्थ।

-व्रत तिथि निर्णय पृ0-160

(1) **सावधि व्रत**- जिन व्रतों की प्रारम्भ तिथि निश्चित होती है वे सावधि व्रत कहलाते हैं। सावधि व्रत दो प्रकार के होते हैं-

1 तिथि अवधि 2 दिन की आवधि

(अ) तिथि अवधि- तिथि के आधार से किये जाने वाले व्रत जैसे- सुख चिन्तामणि भावना, पञ्चविंशति भावना, णमोकार पञ्चविंशति भावना आदि।

(ब) दिन की अवधि- दिन के आधार से किये जाने वाले व्रत जैसे-दुखहरण, धर्मचक्र, जिनगुणसम्पत्ति, सुख सम्पत्ति, शील कल्याणक, श्रुतिकल्याणक, चन्द्रकल्याण आदि।

(2) **निरवधि व्रत**- जिन व्रतो की कोई अवधि नहीं होती अर्थात् किसी भी तिथि या दिन से प्रारम्भ होने वाले व्रत निरवधि व्रत कहलाते है। जैसे-कवलचन्द्रायण, तपोञ्जलि, जिनमुखावलोकन, मुक्तावली, द्विकावली, एकावली आदि।

(3) **दैवसिक व्रत**- जिन व्रतो को दिन में किया जाता है जैसे- रत्नावली, मुक्तावली, कनकावली, जिनगुणसम्पत्ति, सुखसम्पत्ति, शीलकल्याणक, श्रुतकल्याणक, दशलक्षण, रत्नत्रय, अष्टाह्निका।

(4) **नैसिक व्रत**- जिन व्रतों में रात्रि के समय भक्ति, जाप, ध्यान करते हुए जागरण किया जाता है।

जैसे- आकाश पञ्चमी, चन्दनषष्ठी, नक्षत्रमाला, जिनरात्रि आदि।

(5) **मासावधि व्रत**- एक माह की अवधि वाले व्रत
जैसे- षोडशकारण, मेघमाला।

(6) **वर्षावधि व्रत**- वर्ष की अवधि से होने वाले व्रत

(7) **काम्यव्रत**- जो व्रत कामना के साथ किये जाते हैं।
जैसे- सकटहरण, दुखहरण, धनदकलश।

(8) **अकाम्यव्रत** कामना से रहित व्रत अकाम्य व्रत है।
जैसे- कर्मचूर, कर्मनिर्जरा, मेरुपक्ति आदि।

(9) **उत्तमार्थव्रत**- आत्मशुद्धि पूर्वक किये जाने वाले व्रत
जैसे-सिह निष्क्रीडित भाद्रवन सिहनिष्क्रीडित, सर्वतोभद्र आदि।

व्रत सकल्प मन्त्र- व्रत लेते समय श्रीफल के साथ सकल्प

-व्रत तिथि निर्णय पृ० 201

ॐ अद्य भगवतो महापुरुषस्य ब्रह्मणो मतेस्मिन् मासाना मासोत्तमे मासे - मासे-----पक्षे ----तिथौ------वासरे जम्बूद्वीपे भरत क्षेत्रे आर्यखण्डे ----प्रदेशस्य---- नगरे एतत् अवसर्पिणी कालावसान चतुर्दश प्राभृतमानिमानित सकललोकव्यवहारे श्री गौतमस्वामी श्रेणिकमहामण्डलेश्वर समाचरित सन्मार्गाविशेषे ----वीर निर्वाण सवत्सरे अष्ट महाप्रातिहार्यादिशोभित श्री मदर्हत्परमेश्वर प्रतिमा/ अष्टाविशति मूलगुण- आराधक मुनिराज सन्निधौ अह-----व्रतस्य सकल्प करिष्ये। अस्य व्रतस्य समाप्ति पर्यन्त मे सावद्य त्याग गृहस्थाश्रमजन्यारम्भ परिग्रहादीनापि त्याग.।

(नौ वार णमोकार मन्त्र की जाप कर व्रत ग्रहण करें)

व्रत का सकल्प (हिन्दी)-

श्री वीतराग सर्वज्ञदेव को नमस्कार कर वृषभादि चौबीस तीर्थकरो के द्वारा प्रवर्तित जिनधर्मानुसार मास में पक्ष में तिथि में वार में जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र, आर्यखण्ड भारत देश के प्रदेश स्थित नगर में श्री वीर निर्वाण सवत्सर में अष्ट प्रातिहार्य से शोभित जिनेन्द्र प्रतिमा

के सान्निध्य में मैं   व्रत का सकल्प करता हूँ। इस व्रत के समाप्ति पर्यन्त यथाशक्ति पापों का त्याग कर एव गृहस्थ सबधी आरभ परिग्रहादि का भी त्याग करता हूँ। इस व्रत की विधि अनुसार व्रत पूजा, व्रत कथा एव व्रत मत्र पूर्वक एकाशन/उपवास करूँगा/करूँगी। बीमारी, सूतक, पातक, अशुद्धि आदि किसी कारणवश व्रत की तिथियाँ न मिल सकीं तो उसे आगे तिथियों में व्रत करके व्रत पूरा होने पर अपनी शक्ति अनुसार व्रत का उद्यापन करूँगा/करूँगी। हे भगवन! मैं इस व्रत को यथा सभव शुद्धि पूर्वक करके अधिक से अधिक समय धर्म में लगाऊँगा। फिर भी मुझसे मन से, वचन से, काय से जाने अनजाने मे कोई गलती हो जाये तो मै भगवान से क्षमा मॉगता हूँ/माँगती हूँ। हे भगवन! इस व्रत को करने से मेरे सारे कष्ट दूर हो जायें, मेरे सारे दुखों का नाश हो, मुझे बोधि की प्राप्ति हो, मेरे आठो कर्मों का नाश हो और यथाशीघ्र मुझे मोक्ष की प्राप्ति हो।

हे भगवन! इस व्रत को करने से मेरे सकल परिजनों को सुख समृद्धि और शाति मिले। जगत के सकल जीवों को सुख और शाति मिले।

ॐ हा ही हू हौं ह अ सि उ सा नम अह   (व्रत का नाम)   व्रत धारयामि, प्रतिष्ठयामि ह्रीं नम स्वाहा।

(वेदी पर श्रीफल चढाकर नौबार णमोकार का ध्यान करें)

व्रत गुरु के समक्ष ही लेना चाहिए, गुरु का सान्निध्य न होने पर प्रतिमा के समक्ष व्रत लेकर प्रयास पूर्वक किन्हीं महाराज से व्रत का सकल्प लेकर उसकी प्रायश्चित्त विधि समझ लेना चाहिए।

व्रत ग्रहण में सावधानी-

समीक्ष्य व्रत-मादेय-मात्त पाल्यं प्रयत्नतः
छिन्न दर्पात्प्रमादाद्वा प्रत्यवस्थाप्य-मञ्जसा।

-सागार धर्मामृत 2/79

देश कालादिक को देखकर व्रत लेना चाहिए और ग्रहण किये व्रतों का प्रयत्न पूर्वक पालन करना चाहिए। मदावेश या प्रमाद से व्रत भग हो जाये तो शीघ्र ही प्रायश्चित्त लेकर पुन व्रत धारण करना चाहिए।

व्रतों में अतिचार-

अतिक्रमो मानस शुद्धि हानि· व्यतिक्रमो यो विषयाभिलाषः।
तथातिचारं करणालसत्व भगो ह्यनाचार-मिहव्रतानाम।।

व्रत के भग करने का मन में विचार आना अतिक्रम, विषयों की अभिलाषा (व्रत भग करने वाली सामग्री को एकत्रित करना) होना व्यतिक्रम, इन्द्रियों की असावधानी अर्थात् व्रत के आचरण में शिथिलता होना अतिचार और व्रत का सर्वथा भग हो जाना अनाचार है। अतएव व्रत मे किसी भी प्रकार की असावधानी नही होनी चाहिए।

इसके साथ एक आभोग नाम का अतिचार भी कहा गया है, व्रत भग हो जाने पर प्रायश्चित्त नही करना पूर्व की तरह अनाचार रूप प्रवृत्ति करना आभोग है अर्थात् व्रत भग हो जाने पर प्रायश्चित्त न करते हुए व्रत को छोड देना आभोग अतिचार है।

व्रतों की रक्षा कैसे करे-

प्राणान्तेऽपि न भक्तव्य गुरु-साक्षिश्रित व्रतम्।
प्राणान्तस्तत्क्षणे दु·ख व्रत-भगो भवे भवे।।

-सागार धर्मामृत 7/52

गुरु की साक्षी में लिया हुआ व्रत यदि प्राण भी चले जाये तो भी भग नहीं करना चाहिए क्योंकि प्राणनाश (मरण) के समय मात्र ही दुख होता है परन्तु व्रत भग होने पर भव-भव में दुख ही मिलता है। व्रत बीच मे छूट जावे तो उसे शुरू से करना चाहिए।

जइ अंतरम्मि कारण-वसेण एक्को व दो व उपवासा।
ण कओ तो मूलाओ पुणो वि सा होई कायव्वा।।

-वसुनन्दिश्रावकाचार 360

यदि व्रत करते हुये बीच में किसी कारण वश एक या दो उपवास न किये जा सके हों तो मूल से अर्थात् प्रारम्भ से लेकर पुन वही उपवास विधि करना चाहिये।

निरतिचार व्रतों का फल-

व्रतानि पुण्याय भवन्ति जन्तोर्न सातिचाराणि निषेवितानि
सस्यानि किं क्वापि फलन्ति लोके मलोपलीढानि कदाचनापि।

-सागार धर्मामृत क्षेपक 4/16

जीवो को व्रत पुण्य फल देते हैं किन्तु अतिचार सहित व्रत पुण्य- जनक नहीं होते हैं। जिस प्रकार केवल धान बो देने से खेती फलदायक नहीं होती उसमें से होने वाले घास को निकालकर साफ करना पडता है उसके बिना फसल घर मे नहीं आती। उसी प्रकार व्रतों को निरतिचार पालन करने से पुण्य होता है, सातिचार व्रतों के द्वारा पुण्य प्राप्त नहीं होता, निरतिचार व्रतों के पालन करने से अनेक सिद्धियाँ प्राप्त होती है। रत्नमाला नामक ग्रन्थ में आचार्य शिवकोटि जी कहते है।

व्रतशीलानियान्येव, रक्षणीयानि सर्वदा।
एकैकेन जायन्ते देहिना दिव्य सिद्धय ।।

-रत्नमाला 37

जो शील तथा व्रत धारण करते है उनकी गृहस्थी की हमेशा रक्षा होती है। एक एक व्रत और एक एक शील के निमित्त से प्राणियों के दिव्य सिद्धि प्राप्त होती है।

अव्रतानि परित्यज्य व्रतेषु परिनिष्ठितः।
त्यजेत्तान्यपि संप्राप्य परम पदमात्मनः।।

मोक्षार्थी पुरुष अव्रतो को छोडकर व्रतों मे स्थिर होकर परमात्मपद प्राप्त करे और परमात्मपद प्राप्तकर उन व्रतों का त्याग करें। निरतिचार व्रतों का पालन करना ही मोक्ष का साधन है, अतिचार सहित व्रत नहीं। यह मात्र ससार सुख दे सकते है।

-वृहद द्रव्य सग्रह मो०मा० अधिकार पृ० 256

व्रतों के उद्यापन का विधान-

पञ्चम्यादि-विधिं कृत्वा शिवान्ताभ्युदय-प्रदम्
उद्योतयद्यथा-सम्पन्निमित्ते प्रोत्सहेन्मन.।

-सागार धर्मामृत 2/78

मोक्ष पर्यन्त अभ्युदय देने वाली पञ्चमी (मुक्तावली, पुष्पाञ्जलि, कनकावली, रत्नत्रय) आदि व्रतों को करके अपनी आर्थिक शक्त्यनुसार उद्यापन करें, तथा नैमित्तिक व्रत अनुष्ठान में मन उत्कृष्ट रूप से उत्साहित करें। *अर्थात् अत्यन्त प्रभावना पूर्वक अनुष्ठान कर उद्यापन करें जिससे व्रत* की महिमा बढे और लोगों को व्रत करने की प्रेरणा मिले।

उद्यापन की विधि-

कर्तव्य जिनागारे महाभिषेक-मद्भुतम्
सघैश्चतुर्विधै साध महापूजादि-कोत्सवम्।
घण्टाचामर-चन्द्रोपक-भृगार्यार्तिकादय.
धर्मोपकरणान्येवं देय भक्त्या स्वशक्तित.।
पुस्तकादि-महादानम् भक्त्यादेय वृषाकरम्
महोत्सव विधेय सुवाद्य-गीतादि-नर्तनै.।
चतुर्विधाय संघाया-हारदानादिक मुदा
आमत्र्य परया भक्त्या देय सम्मान-पूर्वकम्।
प्रभावना जिनेन्द्राणा शासन चैत्य-धामनि
कुर्वन्तु यथाशक्त्या स्तोक चोद्यापन मुदा।

-जैन व्रत विधान सग्रह पृ 22-24

विशाल मन्दिरों का निर्माण करावें और समारोह के साथ प्रतिष्ठा कराके जिनबिम्ब स्थापन करें पश्चात् चतुर्विध सघ के साथ प्रभावना पूर्वक महाभिषेक के साथ महापूजा करें और घण्टा, झालर, चमर, छत्र, सिंहासन, चन्दोवा, झारी, भृगार आदि अनेक उपकरण शक्त्यनुसार देवें।

आचार्यादि महापुरुषों को धर्मवृद्धि, ज्ञानवृद्धि हेतु शास्त्र प्रदान करें, आहारादि देवें। अनेक वादित्रों के साथ गीत एव नृत्यादिक पूर्वक भक्ति प्रमोद भावना के साथ आहारादि चारो प्रकार के दान देवें। जिनेन्द्र भगवान के शासन के महात्म्य को प्रकट कर प्रभावना करें। इस प्रकार उद्यापन कर व्रत का विसर्जन करें। जिस व्रत का उद्यापन करे उतने पूजा के बर्तन, सामग्री, छत्र, चवर, चन्दोवा, शास्त्र, घण्टा आदि उतने ही मन्दिरों को प्रदान करे।

प्रातःसामायिक कुर्यात्ततः तात्कालिकीं क्रियाम्

धौताम्बर धरो धीमान् जिनध्यान परायण.।

व्रनी श्रावक प्रात काल ब्रह्ममुहूर्त में सामायिक करें पश्चात् नित्यक्रियाओं से निवृत्त होकर शुद्ध वस्त्र धारणकर श्री जिनेन्द्र देव का ध्यान करता हुआ मन्दिर जावें।

महाभिषेक-मद्‌भुत्यै-र्जिनागारे व्रतान्वितै.

कर्तव्य सह सघेन महापूजादिकोत्सवम्।

जिनालय में महान आश्चर्य करने वाला महाभिषेक करे। फिर परिवार एव सघ के साथ समारोह पूर्वक महापूजा करें।

ततो स्वगृहमागत्य दान दद्यान् मुनीशिने

निर्दोष प्रासुक शुद्ध मधुर तृप्तिकारणम्।

पूजा के पश्चात् अपने घर में आकर निर्दोष प्रासुक शुद्ध मधुर और तृप्ति कारक आहार मुनिराजों को देवें शेष बचे आहार को कुटुम्ब के साथ स्वय करे। मुनिराज के न होने पर साधर्मीजनों को भोजन करावें।

पञ्चमी व्रत के उद्यापन की विधि बताते हुए आचार्य वसुनन्दी जी लिखते हैं।

अवसाणो पञ्च घडा-विऊण पडिमाओ जिण-वरिंदाणं।

तह पञ्च पोत्थयाणि य लिहाविऊण ससत्तीए।।

–वसुनन्दिश्रावकाचार 355

तेसिं पइटठ्याले ज कि पि पइटठ्-जोग्ग-मुव-यरण।
तसव्व कायव्व पत्तेय पञ्च पञ्च सखाए।।

-वसुनन्दिश्रावकाचार 356

व्रत पूर्ण हो जाने पर जिनेन्द्र भगवान की पॉच प्रतिमाएँ बनवाकर तथा पाँच शास्त्रों को लिखवाकर अपनी शक्ति के अनुसार उनकी प्रतिष्ठा के लिए जो कुछ भी प्रतिष्ठा योग्य उपकरण आवश्यक हो वे सब पाँच-पाँच की सख्या में बनवाना चाहिए। जो व्रत जितने वर्ष या दिन का किया जाता है उतने शास्त्र आदि बनवाकर मन्दिर जी में रखना चाहिए। उनकी सख्या व्रतानुसार होना चाहिए उतनी ही सामग्री, शास्त्र, पूजा के बर्तन, अछार, जाप, छत्र, चवर अष्टद्रव्य आदि उतने ही मन्दिरों मे भिजवाना चाहिए जिससे व्रत एव करने वालों की प्रभावना एव बहुमान बढता है और व्रतों को करने की प्रेरणा मिलती है।

उद्यापन की अन्य विधि-

सम्पूर्णेह्यनु कर्तव्य स्वशक्त्योद्यापन बुधै
सर्वथायेऽप्यशक्त्यादि व्रतोद्यापन सद्विधौ।

व्रत की मर्यादा पूर्ण होने पर शक्ति के अनुसार उद्यापन करें यदि उद्यापन की शक्ति नहीं हो तो व्रत को दुगुना करना चाहिए। व्रत को दुगना करना ही उद्यापन है। वसुनन्दी श्रावकाचार में भी ऐसा ही कहा गया है।

व्रत समापन विधि-

व्रत को पूर्ण करने के बाद ही उद्यापन करना चाहिए। व्रत की समाप्ति के दिन उद्यापन नहीं करना चाहिए। जिस दिन व्रत पूर्ण हो उससे अगले दिन उद्यापन होना चाहिए। दुगना व्रत करने के बाद उद्यापन आवश्यक नहीं है।

व्रत के समापन में जलयात्रा, अभिषेक, मगलाष्टक, सकलीकरण, अगन्यास, स्वस्ति वाचन आदि के उपरान्त सम्बन्धित व्रतोद्यापन की पूजा एव विधान अनुष्ठानपूर्वक कराना चाहिए। सकल्प मन्त्र में तत्सम्बन्धित व्रत

का नाम तथा तिथि नक्षत्रादि जोडकर संकल्प कर व्रत का समापन करना चाहिए।

व्रत समापन मन्त्र-

ॐ अद्याना .आद्ये जम्बूद्वीपे भरत क्षेत्रे शुभे---- मासे--- पक्षे----तिथौ-----वासरे श्रीमदर्हत प्रतिमासन्निधौ पूर्व----(व्रत का नाम) गृहीत तस्य परिसमाप्तिं करिष्ये-अह प्रमादाज्ञानवशात् व्रते जायमानदोषा शातिमुपयान्ति। ॐ ह्रीं क्ष्वीं स्वाहा। श्रीमज्जिनेन्द्रचरणेषु आनन्दभक्ति सदास्तु, समाधिमरणं भवतु, पापविनाशन भवतु।

ॐ ही अर्हं अ सि आ उ सा सर्व शान्तिर्भवतु ह्रीं नम ।

(इस मत्र का नौ बार जाप) -व्रत तिथि निर्णयपृ0-202

व्रत समापन मत्र (हिन्दी) -

जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र के नगर मे मास मे पक्ष मे आज तिथि वार में श्री अर्हंत प्रतिमा के सान्निध्य में

व्रत ग्रहण किया था उसका विधि पूर्वक पालन एव उद्यापन करके मै आगे और व्रत करने की भावना के साथ व्रत का समापन कर रहा हूँ।

यदि व्रत मे प्रमाद या अज्ञानवश व्रत के समय कोई अपराध हुए हो तो उसकी क्षमायाचना करता हूँ। ॐ ह्रीं क्ष्वीं स्वाहा।

श्रीफल या सुपारी आदि चढाकर भगवान को नमस्कार कर नौ वार इस मन्त्र की जाप करे। पश्चात् शान्ति भक्ति के बाद शान्ति विर्सजन करके पूजा समाप्त करना चाहिए एव उद्यापन के अनन्तर ग्रन्थ या धार्मिक पुस्तकें, फल वितरण करना चाहिए।

-व्रत तिथि निर्णयपृ0-46

सामग्री व्यवस्था

शास्त्रों में व्रतों के उद्यापन में लगने वाली सामग्री का उल्लेख व्रतानुसार किया गया है। यथा-

षोडशकारण व्रत- षोडशकारण यन्त्र, पूजन सामग्री, 256चाँदी के स्वस्तिक, 256सुपाडी, 16 शास्त्र, 16 नारियल, 16 जोडी पूजा के बर्तन, 16छत्र, 16चमर आदि मगल द्रव्य, चन्दोवा, दान करने के लिए राशि आदि आवश्यक सामान है।

-व्रत तिथि निर्णय पृ0-46

दशलक्षण- छत्र, चमर, झारी आदि मगलद्रव्य, जपमाला, कलश, दश शास्त्र, मन्दिरों के लिए दस जोडी पूजा के बर्तन, दशलक्षण यन्त्र, 100 चाँदी के स्वस्तिक, दस नारियल(सूखे), 100सुपाडी आवश्यक होती है। इस उद्यापन में दस घरों मे फल बाँटना आवश्यक है।

-व्रत तिथि निर्णय पृ0-45

अष्टाह्निका- मन्दिर मे देने के लिए आठ-आठ उपकरण, आठ शास्त्र, पूजन सामग्री, चन्दोवा, पूजन मे चढाने के लिए 52 चाँदी के स्वस्तिक, 52 सुपाडी, 4 नारियल की आवश्यकता होती है। सिद्धयन्त्र की भी आवश्यकता होती है।

रत्नत्रय- पूजन सामग्री, रत्नत्रय यन्त्र, तेरह शास्त्र, मन्दिरों के लिए 13 जोडी पूजन के बर्तन, छत्र, चमर, झारी आदि मगल द्रव्य, चन्दोवा तथा राशि। उद्यापन के उपरान्त साधर्मी भाइयों के तेरह घरो में फल भेजना चाहिए।

इसी प्रकार व्रत मे सामग्री की योजना निम्नानुसार करना चाहिए-

उद्यापन सामग्री-

हल्दी गाँठ, श्रीफल, बादाम, सुपारी, गोला, लवग, इलायची, चावल, धूप शुद्ध, कपूर, केशर, शुद्ध घृत, माडना, कलावा (पचरगा धागा), यज्ञोपवीत, रुई, माचिस, मुकुट, मालाएँ, विनायक यन्त्र, पीला कपडा, लाल तूस, खादी सफेद, पानी का छन्ना, मगल कलश, मगलध्वजा, मन्दिर ध्वजा, मण्डल ध्वजायें, घट यात्रा कलश, पच रत्न पुडियाँ, चाँदी के स्वस्तिक(व्रतानुसार), धोती दुपट्टा (मन्दिर हेतु), चन्दोवा, अछार, पूजा के बर्तन, छत्र, चमर, अष्ट

प्रातिहार्य, अष्ट मगलद्रव्य, माला(जाप्य), कोयला, आसनी बडी, आसनी छोटी, तखत, टेबिल, चौका, चौकी, दीपक बडे, दीपक छोटे, कुण्ड, पटिया लकडी, सजावट का सामान, सगीत पार्टी, बैण्ड बाजे, जुलूस की सामग्री, जपवाले, इन्द्र इन्द्राणी, पीला सरसों, पण्डाल, स्पीकर, जिस व्रत का उद्यापन हो उसका यन्त्र, विधान की किताबें एव मन्दिर में देने के लिए उपकरण(चाँदी के बर्तन, छत्र, शास्त्र, राशि आदि)।

सदर्भ ग्रन्थ सूची-

व्रतों की विधि आदि का सयोजन अनेक ग्रन्थों से किया गया है। प्रमुख ग्रन्थ निम्नानुसार है।

(1) हरिवश पुराण	(2) सागार धर्मामृत
(3) रत्नकरण्डक श्रावकाचार	(4) आचार्य धर्मसागर अभिनन्दन ग्रन्थ
(5) जैन व्रत तिथि निर्णय	(6) जैन व्रत विधान सग्रह
(7) व्रत कथा कोष	(8) श्रावकाचार सग्रह
(9) क्रियाकोष	(10) जैन व्रत विधि
(11) सुदृष्टि तरगणि	(12) वर्धमान पुराण
(13) सस्कृत वागमय शब्दकोष परिच्छेद खण्ड पूर्वार्द्ध	
(14) चारित्रसार	(15) जैनेन्द्र कथा कोष

आदि अनेक ग्रन्थों के माध्यम से लगभग 475 व्रतों का परिचय निम्न बिन्दुओं के रूप में दिया गया है।

(1) व्रत का नाम, (2) व्रतारम्भ तिथि, (3) व्रत की अवधि, (4) व्रत की विधि (5) व्रत की पूजा, (6) व्रत की जाप (मन्त्र) (7) व्रत का उद्यापन और (8) विशेष- जिस व्रत में कोई विशेषता हुई तो उसे विशेष शीर्षक से उल्लिखित किया गया है।

जिन व्रतों में विसगतियाँ देखने को मिलीं उनका सुधार आवश्यक समझकर कुछ सशोधन भी किया गया है। यथा तीर्थंकर कल्याणक तिथियों के अनुसार व्रतों के नाम एव व्रतों के नाम के अनुसार तिथियों में

सशोधन करना पडा है। जो व्रत व्यक्ति विशेष के नाम से थे उन व्रतों को दिया नहीं है। सराग देवों की उपासना का आगम में निषेध है इससे देवी देवताओं के नाम वाले व्रतों को भी नहीं दिया है। इसी प्रकार अन्य मतानुसार वाले व्रतो को भी नही दिया जा रहा है, क्योंकि वीतरागता प्राप्त करने के उद्देश्य से किये गये व्रत वीतरागता से अनुराग करने वाले होना चाहिए। रात्रि जागरण को जैन व्रत परम्परा में विशेष महत्त्व नहीं दिया गया है अत ऐसे व्रतो को भी सम्मिलित नहीं किया गया है। जैन पर्व एव त्यौहार सम्बन्धि सभी व्रतों को देने का प्रयास किया गया है। फिर भी कुछ व्रत छूट भी गये होंगे। उन्हें विद्वज्जन अन्य स्थान से प्राप्त कर लाभ लेवें। सभी व्रतों के जाप मन्त्र सशोधित कर दिये गये हैं। जिन व्रतों के मन्त्र नहीं थे उन्हें खोज कर दिया गया है क्योंकि व्रत के दिन मन्त्र की जाप अनिवार्य है, इससे भावों में एकाग्रता आती है। कई व्रतों में उद्यापन विधि एव विधान का उल्लेख नहीं था उन व्रतों के उद्यापन विधान को लिखा गया है। व्रत के दिन भक्तियों का बहुत महत्त्व है। इन्हें भावशुद्धि पूर्वक पढना चाहिये। इस भाव को ध्यान मे रखकर भक्तियों को भी सग्रहीत किया गया है। लगभग सभी क्षेत्रों में महिलाएँ ही सबसे ज्यादा व्रत करती है। उन्हे व्रतों की पूरी जानकारी नही होती है और यदि होती भी है तो पूजा, भक्तियाँ, विधान आदि न मिलने से परेशानी होती है। अत इस ग्रन्थ के दूसरे खण्ड में व्रत लेने की विधि आदि का पूर्ण विवरण दिया गया है। जिसमें अभिषेक, शान्तिधारा दैनिक पूजा एव जो व्रत पूजाएँ सहज उपलब्ध नहीं होती थीं उन्हें सकलित किया है। व्रतों के अलावा पूजाएँ सभी पुस्तकों में सरलता से उपलब्ध हो जाती हैं उन्हें ग्रन्थ विस्तार के भय से नहीं दिया जा रहा है।

ग्रन्थ की विषय वस्तु अनेक आचार्यों/मुनिराजों/आर्यिका माताओं ने देखकर आशीर्वाद प्रदान किये हैं एव अनेक विद्वानों ने इसे आद्योपान्त पढकर सुझाव और अभिमत प्रदान किये हैं। उन सभी के चरणों में सादर नमन करते हैं।

इस ग्रन्थ के सयोजन में बहुत समय और श्रम लगा है। जिसे अनेक सन्तों का सहयोग लेकर पूरा किया जा सका है। पूज्य मुनि श्री क्षमासागर जी महाराज ने सपूर्ण विषय को देखकर आवश्यक निर्देशन के साथ आवश्यक लेखों के माध्यम से व्रत एव पूजन की वैज्ञानिकता, व्रतो की ऐतिहासिकता, वर्तमान समय में श्रावक की दिनचर्या आदि विषय परिमार्जित कराये हैं। पूज्य मुनि श्री सुधासागरजी, समतासागर जी, आर्जवसागरजी, प्रमाणसागरजी, प्रसादसागरजी, सौरभसागरजी के सुझावो से विषय की पूर्णता हुई है। आर्यिका पूर्णमति माताजी ने व्रतों का महत्त्व देकर ग्रन्थ का वैशिष्ठ्य बढाया है।

लेखन के दुरूह एव श्रमसाध्य कार्यों को सफलता पूर्वक करने में अर्चना(पम्मी), श्री मनीष जैन(सजू) ने पूर्ण कुशलता से किया है। सशोधन एव सवर्द्धन आदि कार्यों में युवा मनीषी ब्र विनोद भैया जी (पपौराजी) एव प विनोद कुमार जी (रजवास), ब्र सरेन्द्र जी (सागानेर), ब्र रवीन्द्र जी(सोनागिर), कौशल किशोर भट्ट का पूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ है।

कम्पोजिग को कुशलता पूर्वक करने के लिये श्री दीपक जैन (ए व्ही एस कम्प्यूटर) एव स्वच्छ एव स्पष्ट छपाई के लिय श्री नीरज जैन (दिगम्बर) प्रिटिग प्रेस आभार के पात्र हैं। इस ग्रन्थ के सयोजन, सशोधन, सवर्धन में प्रत्यक्ष और परोक्ष रूपसे जिनका सहयोग प्राप्त हुआ है एव जिन्होंने अपनी चचला लक्ष्मी का उपयोग कर इस ग्रन्थ के प्रकाशन में सहयोग किया है उन सभी के हम बहुत बहुत आभारी हैं।

इस ग्रन्थ से भव्य श्रावक श्राविकाएँ लाभ लेकर अपना कल्याण कर मार्ग प्रशस्त करें तो हम अपना प्रयास सफल समझेंगे।

टीकमगढ ब्र पं गुलाब चन्द्र 'पुष्प'

ब्र. पं जय 'निशात'

रविव्रत विधान मण्डल

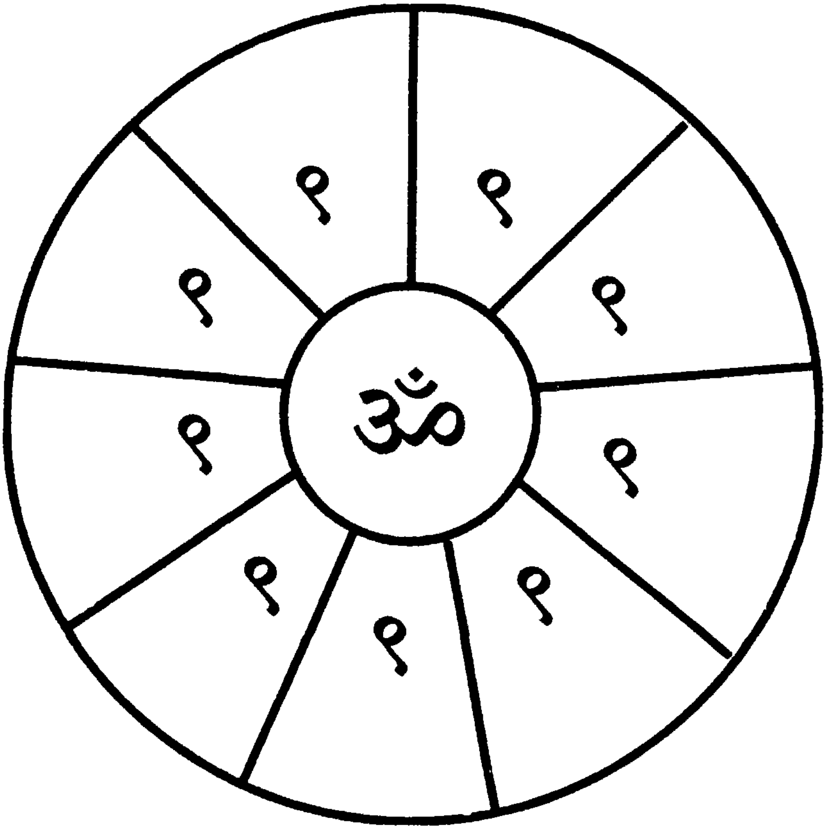

प्रत्येक वलय में १-१ स्वस्तिक या
श्री अंकित करें।

रत्नत्रय विधान मण्डल

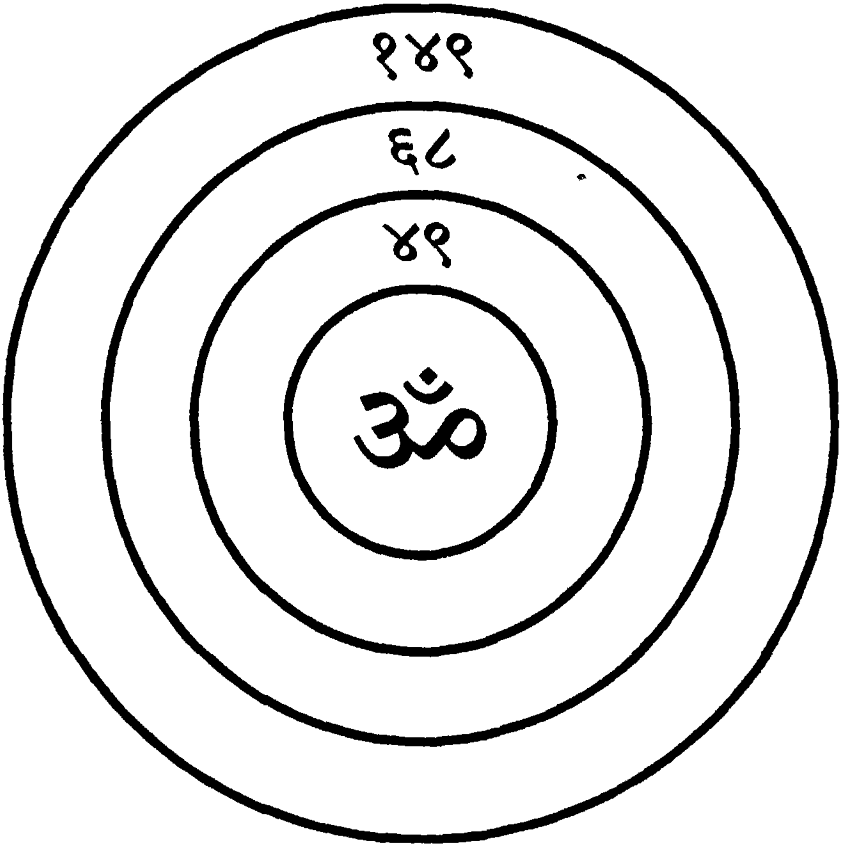

प्रत्येक वलय में लिखी संख्या अनुसार
स्वस्तिक या श्री अंकित करें।

लब्धि विधान मण्डल

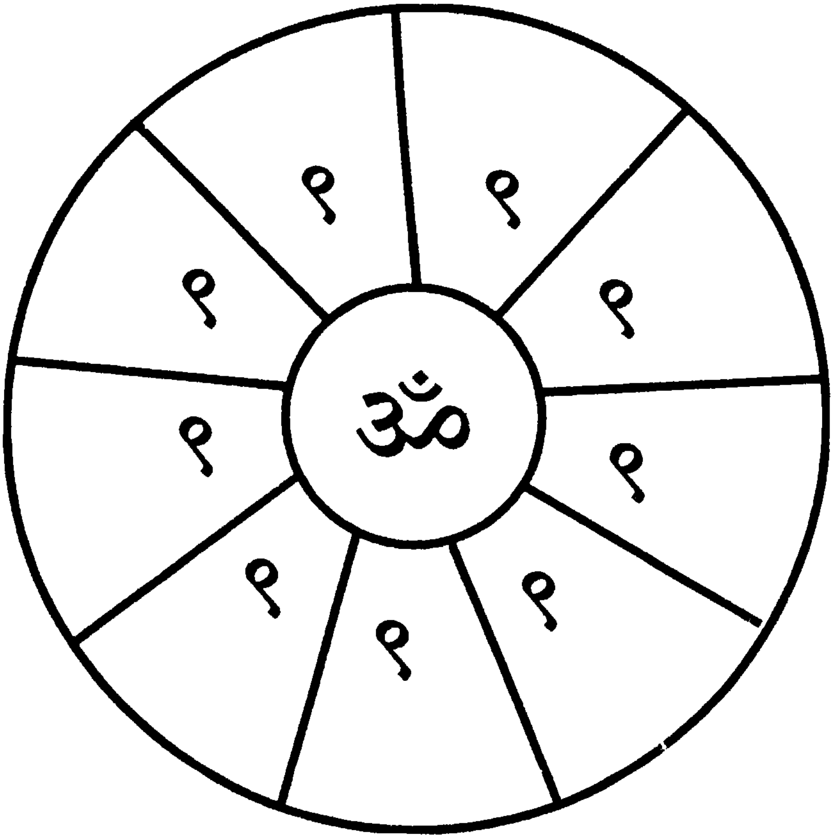

प्रत्येक वलय में १-१ स्वस्तिक या
श्री अंकित करें।

श्रुतस्कन्ध विधान मण्डल

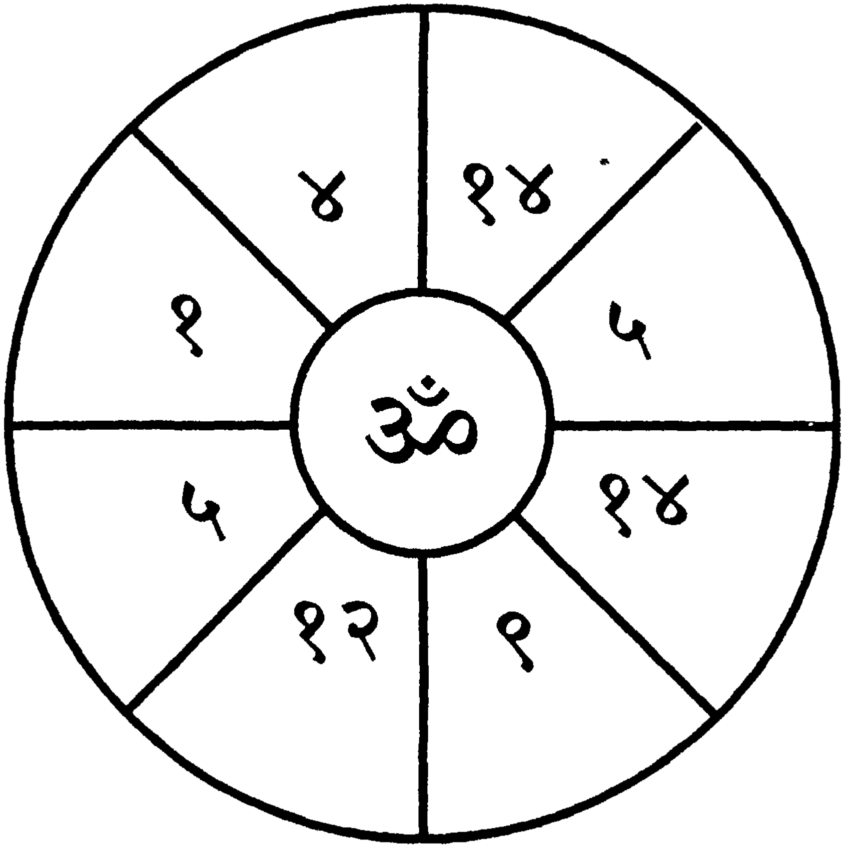

प्रत्येक वलय में लिखी संख्या अनुसार
स्वस्तिक या श्री अंकित करें।

सहस्रनाम विधान मण्डल

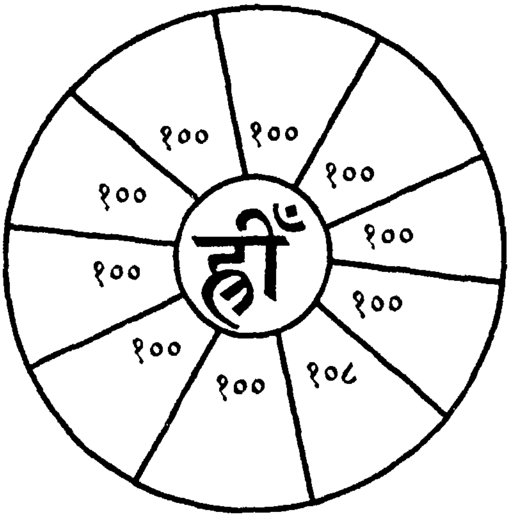

प्रत्येक वलय में लिखी संख्या अनुसार स्वस्तिक या श्री अंकित करें।

सोलहकारण विधान मण्डल

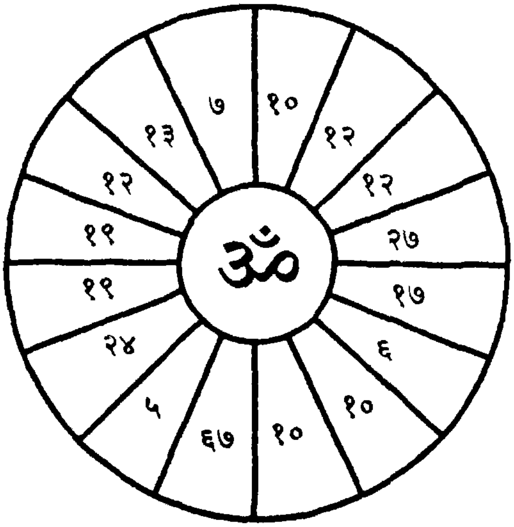

वलय में लिखी सख्या अनुसार स्वस्तिक या श्री अंकित करें।

त्रिकाल चौबीसी विधान मण्डल

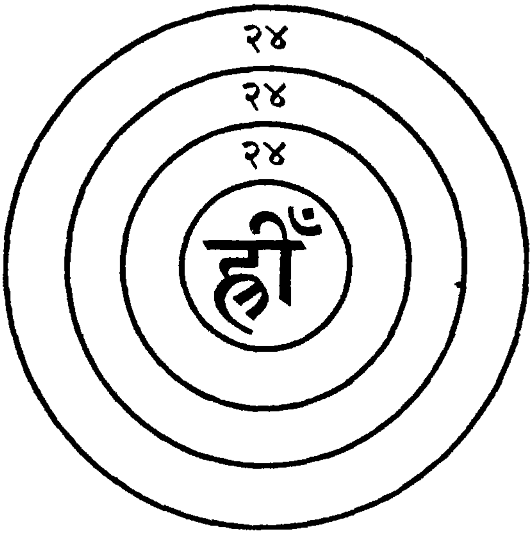

प्रत्येक वलय मे २४-२४ स्वस्तिक या श्री अंकित करें।

त्रिलोक जिनालय विधान मण्डल

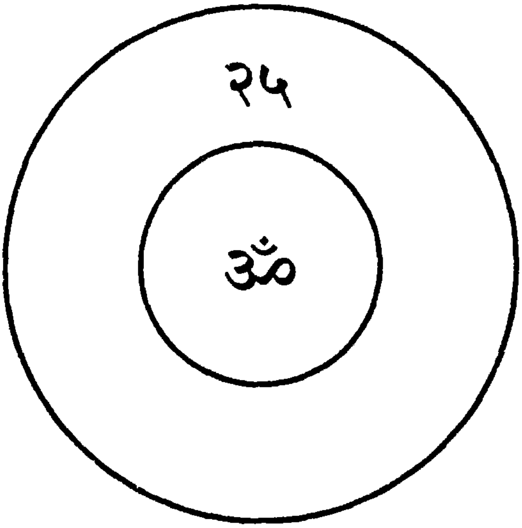

वलय में २५ स्वस्तिक या श्री अंकित करे।

स्वस्तिक अंकन

स्वस्तिक का भाव है, "स्वस्ति करोतीति स्वस्तिक" अर्थात् स्वहित-कल्याण करे। "स्वस्तिक क्षेत्र कायति इति स्वस्तिक" अर्थात् कुशल क्षेत्र कल्याण का प्रतीक है। स्वस्तिक शब्द सु-अस् धातु से बना है सु का अर्थ है-सुन्दर, मगल अस् अर्थात् अस्तित्व या उपस्थिति। प्रत्येक शुभ कार्य में स्वस्तिक दर्शन का विशेष महत्त्व है।

इसीलिए सभी मगल कार्यो मे स्वस्तिक का उपयोग एव अकन किया जाता है। प्रत्येक अनुष्ठान मे स्थापित किए जाने वाले मगल कलश मे स्वस्तिक रखा जाता है। पचकल्याणक प्रतिष्ठा विधि मे भी कल्याणको की क्रिया मे स्वस्तिक एव नद्यावर्त स्वस्तिक का उपयोग किया जाता है। वेदी प्रतिष्ठा एव शिलान्यास मे स्वस्तिक अनिवार्यत स्थापित करके यह भावना की जाती है कि यह वास्तु या प्रतिमा प्रलयकाल तक अचल रहे।

अन्य प्रकार से व्युत्पत्ति पर विचार करने पर उसके सात्थिअ, सुस्थिय, सात्थिय-सुत्यि और सात्थिउ-सोथिय रूप मे मिलते है। जो क्रमश अर्द्ध मागधी, शौरसैनी प्राकृत के है। जिसका अर्थ है स्व स्थित अर्थात् अपने आत्म स्वरूप मे लीन होना। सु का सयोग होने पर उसमे सम्यक् विशेषण जुड जाने से अर्थ "सम्यक् प्रकार से आत्मा मे स्थित" हो जाता है।

अमरकोश में स्वस्तिक सु = अच्छा, अस्ति = अस्तित्व, क = कर्ता सर्वतोभद्र अर्थात् सभी दिशाओ में सबका कल्याण हो। इस प्रकार स्वस्तिक सभी का मगल करने वाला है।

स्वस्तिक अनादि-निधन आकृति है, जब छठवें काल के अतिम 49 दिनों मे कुवृष्टियाँ होती हैं तब कर्मभूमि का समस्त पृथ्वी मडल

नष्ट होकर बह जाता है। चित्रापृथ्वी पर दो स्थानों पर नद्यावर्त स्वस्तिक की आकृति रहती है जिस पर शाश्वत तीर्थराज सम्मेदशिखर तथा तीर्थंकरों की जन्मभूमि अयोध्या की रचना होती है।

शिलाकित प्राचीन स्वस्तिक दूसरी शताब्दी ईसापूर्व सम्राट खारवेल के अभिलेख मे और मथुरा के शिल्प में उपलब्ध हुये है।

स्वस्तिक मगलमय होने के साथ-साथ ससारी प्राणी की अज्ञानता से ससार परिभ्रमण को दर्शाते हुए उससे निकलने का मार्ग भी सम्यक् रूपेण प्रशस्त करता है।

नरसुरतिर्यङ्नारकयोनिषु परिभ्रमति जीवलोकोऽयम्।
कुशला स्वस्तिक-रचनेतीव निदर्शयति धीराणाम्।।

अर्थात् ससार में प्राणी निरन्तर जन्म-मरण करता हुआ चार मोड वाली रेखाओ में निरूपित नरकगति, त्रिर्यञ्चगति, देवगति और मनुष्यगति रूप मे लोक की चौरासी लाख योनियो मे घूमता है। यह स्वस्तिक की रचना से स्पष्ट निर्देशित होता है।

स्वस्तिक मे खडी रेखा ससार रेखा है। उसको काटती आडी रेखा जन्म-मरण की है चारो मोड चार गतियो के प्रतीक है।

स्वस्तिक में स्थित चार बिन्दु चारों अनुयोगों को निरूपित करते है, प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग और द्रव्यानुयोग, इन अनुयोगों के स्वाध्याय से मोक्षमार्ग प्रशस्त होता है।

सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः।

सम्यग्दर्शन, सम्यक्ज्ञान और सम्यक्चारित्र मोक्ष का मार्ग हैं। इन त्रिरत्नों की एकता से ही मोक्ष अर्थात् सिद्धत्व की प्राप्ति सम्भव है। इसलिए स्वस्तिक के ऊपर बिन्दु रत्नत्रय एद अर्द्धचन्द्राकार सिद्धशिला प्रतीक रूप मे बनाये जाते हैं।

आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज ने **मूकमाटी** महाकाव्य मे इन बिन्दुओ को चारों गतियाँ सुख से शून्य है उल्लेखित किया है।

आचार्य जयसेन स्वामी ने ठोने पर स्वस्तिक बनाने का विधान स्पष्ट रूप से प्रतिष्ठा पाठ के पृष्ठ *144* पर किया है।

प्रत्यर्थिव्रजनिर्जयान्निजगुणप्राप्तावनंताक्रम-

दृष्टिज्ञानचरित्रवीर्यसुखचित्संज्ञास्वभाव· पर।

आगत्यात्रनिवेशिताकितपदैः सवौषडा द्विष्ठतो

मुद्रारोपणसत्कृतैश्च वषडा गृह्णीध्वमर्चाविधिम्।

शत्रूनका समूहकू अर्थात् बाह्याभ्यन्तर बैरीन का समूहका अत्यत जयतै निज गुण की प्राप्तिनै होता सता अनत अरु क्रम-रहित दर्शन, ज्ञान, चारित्र, वीर्य, सुख, चैतन्यसत्ता-रूप है स्वभाव जिनका ऐसे सर्व जिन-मुनि है ते इहा आय सवौषट् मत्र निवेशन किया अरु द्विबार ठ ठ मन्त्र करि स्थापन किया अरु मुद्रका आरोपण सत्कार करि तथा वषट् पद करि सनिहित किया सता पूजा की विधिनै ग्रहण करो। ऐसै तीन बार पढै।

ॐ ह्रीं अत्र जिन प्रतिष्ठाविधाने सर्वयागमडलोक्ता जिनमुनय अत्रावतरत, तिष्ठत् तिष्ठत् ठ· ठः, ममात्रसनिहितो भवत भवत वषट् इत्यादि त्रिबार कुर्यात्।

मडलमध्ये सुप्रतीकपीठे स्वस्तिकोपरि स्थापयेत्।

अरु मण्डल मध्य कर्णिक में पीठ में स्वस्तिक ऊपरि स्थापना करनी।

रविव्रत उद्यापन में भी ठोने पर स्वस्तिक बनाकर स्थापना करने की विधि वर्णित है।

पूज्य जिनेश्वर पार्श्वनाथ का, करके विधि पूर्वक आह्वान,
भक्ति भावनाओं से प्रेरित कर, जिन प्रतिमा का श्रद्धान।
संस्थापन स्वस्तिक मंडप पर, रविव्रत विधि विधान अनुसार,
भक्तों की पूजा स्वीकारो, हे दयाल तत्काल पधार।।

पूजा में ठोने की आवश्यकता तिलोयपण्णत्ती, त्रिलोकसार एव प्रतिष्ठा पाठों मे विशेष रूप से वर्णित है।

भृंगार-चामर-सुदर्पण-पीठ-कुम्भ-
तालध्वजा-तप-निवारक-भूषिताग्रे।
वर्धस्व नन्द जय पाठ-पदा-वलिभि,
सिहासने जिन भवन्त-महं श्रयामि।।

अत ठोने पर स्वस्तिक बनाकर मुद्रापूर्वक आह्वानन, स्थापन एव सन्निधिकरण करना चाहिए।

स्वस्तिक बनाने का उद्देश्य एवं भावना

स्वस्तिक हमारी पूजा का सार्थक उद्देश्य है। यह हमारी अतरग भावना का प्रतीक है। सर्वप्रथम हस्त प्रक्षालन कर मत्रित जल से स्वय की एव स्थल की शुद्धि करे। तत्पश्चात् द्रव्य चढाने वाली थाली मे दाहिने हाथ की अनामिका अगुली से स्वस्तिक अकित करते समय प्रथमत खडी रेखा नीचे से ऊपर उसी तरह बनाना चाहिए जिस प्रकार हम अपने आत्मीय का तिलक नीचे से ऊपर की ओर करके उसकी उन्नति एव समृद्धि की कामना करते है। स्वस्तिक बनाने में भी आराध्य प्रभु के सामने स्वय की उन्नति की कामना करते है।

हे भगवन्! इस त्रस नाली में निगोद से स्वर्गों की यात्रा करते हुए (क्र -1) अनादिकाल से चारों गतियो की 84 लाख योनियों मे

जन्म मरण कर रहा हूॅ। (क्र -2) खोटे कर्म करके कभी अधोगति नरक में गया हूँ। (क्र -3) हे प्रभु! शक्ति देना कि ऐसे कार्य नहीं करूँ जिससे नरक जाना पडे (क्र -4) कभी छल कपट करके तिर्यंच गति में गया (क्र -5) मै तिर्यंच गति मे न जाने का सकल्प करता हूँ। (क्र -6) कभी शुभ भावों से मरण कर देव भी हुआ (क्र -7) मै असयमी देव भी नही होना चाहता (क्र -8) कभी शुभ सकल्प व्रतादि धारण कर मानव पर्याय पाई (क्र -9) मै इसमे उत्कृष्ट सयम पालन करने की भावना करता हूॅ। (क्र -10) यह परिभ्रमण मूलत अज्ञान, मिथ्यात्व, मोह एव विषय-कषाय के कारण से हो रहा है- यथा

1 कित निगोद कित नारकी कित

2 चौदह राजु उत्तुग नभ

3 भव विकट वन मे कर्म बैरी

4 मोह महामद पियो अनादि

5 मै भ्रमों अपन को विसर आप

अज्ञान मिटाने के लिए मै सकल्प करता हूॅ कि प्रथमानुयोग (क्र -11), करणानुयोग (क्र -12), चरणानुयोग(क्र -13), एव द्रव्यानुयोग (क्र -14), का स्वाध्याय करके मै भी सम्यक्दर्शन(क्र -15), सम्यक्ज्ञान (क्र -16), एव सम्यक्चारित्र (क्र -17) को प्राप्त करूॅगा तथा रत्नत्रय की पूर्णता करके सिद्ध शिला (क्र -18), से ऊपर मानव पर्याय के परम लक्ष्य पचम गति सिद्ध पद को प्राप्त करूँगा (क्र -19),

इस प्रकार शुभ एव पवित्र भावना से ठोना एव जल, चदन के पात्रो पर भी स्वस्तिक अकित करके पूजन आरभ करें।

अभिषेक की थाली में 'श्री' अंकित करने का विधान आचार्य माघनंदी महाराज ने अभिषेक पाठ में किया है। 'ॐ' पचपरमेष्ठी का बीजाक्षर है, उसे लिखकर मिटाना उचित नही है।

अभी तक किसी भी शास्त्र में पूजा की थाली में बीजाक्षर अंकित करने का विधान प्राप्त नहीं हुआ है।

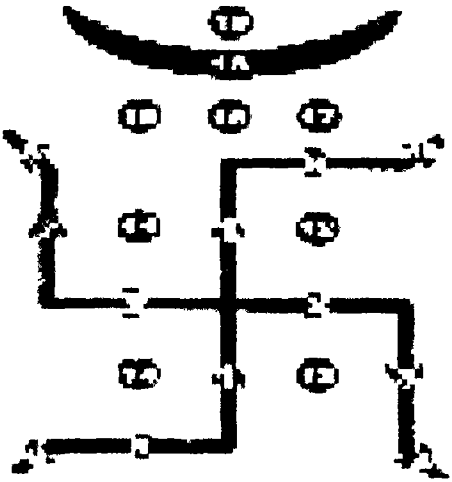

1 ससार रेखा (त्रसनाली-निगोद से मोक्ष की ओर)

2 जन्म मरण की रेखा ऊर्ध्वगमन

3 नरक गति (नीचे की ओर)

4 वज्र- नरक गति में न जाने का सकल्प

5 तिर्यंच गति

6 वज्र तिर्यंच गति में न जाने का सकल्प

7 देव गति (ऊपर)

8 वज्र देवगतियों में न जाने का सकल्प

9 मनुष्यगति

10 वज्र मनुष्यगति में न रहने का सकल्प
11 प्रथमानुयोग
12 करणानुयोग
13 चरणानुयोग
14 द्रव्यानुयोग
15 सम्यक्दर्शन
16 सम्यक्ज्ञान
17 सम्यक्चारित्र
18 सिद्धशिला
19 सिद्ध भगवान

सदर्भग्रथ-

तिलोयपण्णत्ती	-	आचार्य यतिवृषभ
त्रिलोकसार	-	आचार्य नेमिचद सिद्धातचक्रवर्ती
प्रतिष्ठापाठ	-	आचार्य जयसेन
प्रतिष्ठा सारोद्धार	-	प आशाधरजी
तत्त्वार्थसूत्र	-	आचार्य उमास्वामी
अभिषेक पाठ	-	आचार्य माघनदी
मूकमाटी	-	आचार्य विद्यासागर
धर्मचक्र	-	डॉ प्रकाश चन्द जैन
रविव्रत विधान	-	कल्याण शशि

❑❑❑

मंगल-पञ्चक

गुणरत्नभूषा विगतदूषा सौम्यभाव निशाकरा
सद्बोधभानुविभा-विभासित-दिक्चया विदुषावरा
नि सीम-सौख्य-समूह-मण्डित-योग-खण्डित-रतिवरा
अर्हंत इह कुर्वन्तु मगलमद्य आदि-जिनेश्वरा ।।1।।

सद्ध्यान-तीक्ष्ण-कृपाण-धारा-निहत-कर्म-कदम्बका
देवेन्द्र-वृन्द्र-नरेन्द्र-वन्द्या प्राप्त-सुख-निकुरम्बका
योगीन्द्र-योग-निरूपणीया प्राप्त-बोध-कलापका
कुर्वन्तु मगलमत्र ते सिद्धा सदा सुखदायका ।।2।।

आचार-पञ्चक-चरण-चारण-चुञ्चव समताधरा
नानातपोभरहेति-हापित-कर्मका सुखिताकरा
गुप्तित्रयी परिशीलनादि-विभूषिता वदता वरा
कुर्वन्तु मगलमत्र ते श्री-सूरयोऽर्जित शम्भरा ।।3।।

द्रव्यार्थ-भेद-विभिन्न-श्रुतभरपूर्ण-तत्त्व-निभालिनो
दुर्योग-योग-निरोधदक्षा सकल-गुणवर-जालिन
कर्तव्य-देशन-तत्परा विज्ञान-गौरव-शालिन
कुर्वन्तु मगलमत्र ते गुरुदेव-दीधित-मालिन ।।4।।

सयम-समित्यावश्यकापरिहाणि-गुप्ति-विभूषिता
पञ्चाक्ष-दान्ति-समुद्यता समता-सुधा-परिभूषिता
भूपृष्ठ-विष्टर-शायिनो विविधर्द्धिवृन्द-विभूषिता
कुर्वन्तु मगलमत्र ते मुनय सदा शम-भूषिता ।।5।।

❑❑❑

मंगलाष्टक पाठ

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्र-महिता सिद्धाश्च सिद्धीश्वरा
आचार्या जिन-शासनोन्नतिकरा पूज्या उपाध्यायका
श्री सिद्धान्त-सुपाठका मुनिवरा रत्नत्रयाराधका
पञ्चैते परमेष्ठिन प्रतिदिन कुर्वन्तु नो मगलम्।।1।।

श्रीमन्नम्र-सुरासुरेन्द्र-मुकुट-प्रद्योतरत्नप्रभा
भास्वत्पाद-नखेन्दव प्रवचनाम्भोधीन्दव स्थायिन
ये सर्वे जिन-सिद्ध-सूर्यनुगतास्ते पाठका साधव
स्तुत्या योगिजनैश्च पञ्चगुरव कुर्वन्तु नो मगलम्।।2।।

सम्यग्दर्शन-बोध-वृत्तममल रत्नत्रय पावन
मुक्ति-श्री-नगराधिनाथ-जिनपत्युक्तोऽपवर्गप्रद
धर्म सूक्ति-सुधा च चैत्यमखिल चैत्यालय श्र्यालय
प्रोक्त च त्रिविध चतुर्विधममी कुर्वन्तु नो मगलम्।।3।।

नाभेयादिजिना प्रशस्त-वदना ख्याताश्चतुर्विंशति
श्रीमन्तो भरतेश्वर-प्रभृतयो ये चक्रिणो द्वादश
ये विष्णु प्रतिविष्णु-लागलधरा सप्तोत्तरा विशतिस्
त्रैकाल्ये प्रथितास्त्रिषष्टिपुरुषा कुर्वन्तु नो मगलम्।।4।।

ये सर्वौषध-ऋद्धय श्रुत-तपो वृद्धिगता पञ्च ये
ये चाष्टाग-महानिमित्त-कुशलाश्चाष्टौ वियच्चारिण
पञ्चज्ञान धरास्त्रयोऽपि बलिनो ये बुद्धि-ऋद्धीश्वरा
सप्तैते सकलार्चिता मुनिवरा कुर्वन्तु नो मगलम्।।5।।

ज्योतिर्व्यन्तर भावनामरगृहे मेरौ कुलाद्रौ स्थिता
जम्बू-शाल्मलि-चैत्यशाखिषु तथा वक्षार-रूप्याद्रिषु
इष्वाकारगिरौ च कुण्डलनगे द्वीपे च नन्दीश्वरे
शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहा कुर्वन्तु नो मगलम्।।6।।

कैलासो वृषभस्य निर्वृतिमही वीरस्य पावापुरी
चम्पा वा वसुपूज्य-सज्जिनपते सम्मेद-शैलोऽर्हताम्
शेषाणामपि चोर्जयन्तशिखरी नेमीश्वरस्यार्हतो
निर्वाणावनय प्रसिद्ध विभवा कुर्वन्तु नो मगलम्।।7।।

सर्पो हारलता-भवत्यसि-लता सत्पुष्पदामायते
सम्पद्येत रसायन विषमपि-प्रीति विधत्ते रिपु
देवा यान्ति वश प्रसन्नमनस कि वा बहु ब्रूमहे
धर्मादेव नभोऽपि वर्षतितरा कुर्वन्तु नो मगलम्।।8।।

यो गर्भावतरोत्सवो भगवता जन्माभिषेकोत्सवो
यो जात परिनिष्क्रमेण विभवो य केवलज्ञानभाक्
य कैवल्यपुरप्रवेश-महिमा सम्पादित स्वर्गिभि
कल्याणानि च तानि पञ्च सतत कुर्वन्तु नो मगलम्।।9।।

इत्थ श्री जिनमगलाष्टकमिद सौभाग्य सम्पतकर
कल्याणेषु महोत्सवेपु सुधियस्तीर्थकराणा-मुषात्
ये शृण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनैर्धर्मार्थ-कामान्विता
लक्ष्मीराश्रयते व्यापायरहिता निर्वाण लक्ष्मीरपि।।10।।

जैनाचार्यो ने चार तरह के अभिषेक का उल्लेख किया है- जन्माभिषेक, राज्याभिषेक, दीक्षाभिषेक, चतुर्थाभिषेक। तीर्थकर बालक को सुमेरुपर्वत पर स्थित पाण्डुक शिला पर ले जाकर जो क्षीरसागर के जल से अभिमिचित किया जाता है वह जन्माभिषेक कहलाता है। तीर्थकर कुमार का राजतिलक के अवसर पर जो अभिषेक किया जाता है वह राज्याभिषेक कहलाता है। तीर्थकर का जिन दीक्षा लेने से पूर्व जो अभिषेक किया जाता है वह दीक्षाभिषेक कहलाता है। विधि-विधान पूर्वक प्रतिष्ठित किए गए जिनबिब पर जो अभिषेक किया जाता है वह चतुर्थाभिषेक या प्रतिमाभिषेक कहलाता है।

-मुनि क्षमासागर

अभिषेक विधि

जलशुद्धि मन्त्र

ॐ ह्रा ह्री ह्रू ह्रौ ह्र नमोऽर्हते भगवते श्रीमत्पद्म-महापद्म-तिगिञ्छकेसरि-महापुण्डरीकपुण्डरीक गगासिन्धुरोहिद्रोहितास्या हरिद्धरिकान्ता-सीतासीतोदा-नारीनरकान्ता सुवर्णरूप्यकूलारक्तारक्तोदा क्षीराम्भोधिजल सुवर्णघटप्रक्षिप्त नव- रत्नगन्ध पुष्पाक्षतादिबीजपूरित पवित्र कुरु कुरु झ्रौ झ्रौ व व म म ह ह स स त त प प स्वाहा (जलाभिमन्त्रणम्)

शुद्धि-मन्त्र

शोधये सर्वपात्राणि पूजार्थानपि वारिभि

समाहितो यथाम्नाय करोमि सकलीक्रियाम्।

ॐ ह्रा ह्री ह्रू ह्रौ ह्र. अ सि आ उ सा पवित्रतर जलेन पात्रशुद्धि करोमि

(सभी पात्र दाहिनी चुल्लू में जल लेकर मन्त्रित जल से स्वय की शुद्धि करें।)

पात्रेऽर्पित चन्दनमौषधीश, शुभ्र सुगन्धाहृतचञ्चरीकम्।

स्थाने नवाके तिलकाय चर्च्य, न केवल देहविकारहेतो ।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौ ह्रः मम सर्वांगशुद्धि कुरु कुरु

(नवतिलक करें)

श्रीमन्मन्दरमस्तके शुचिजलै धौतै सदर्भाक्षतै

पीठे मुक्तिवर निधाय रचित त्वत्पादपद्मस्रज ।

इन्द्रोऽह निजभूषणार्थकमिद यज्ञोपवीत दधे।

मुद्रा-ककण-शेखराण्यपि तथा जैनाभिषेकोत्सवे।।

ॐ ह्रीं इन्द्रोचिताभूषणमवधारयामि।

(हार मुकुट, यज्ञोपवीत आदि धारण करें)

दिग्बन्धन मन्त्र

ॐ ह्रां णमो अरिहंताणं ह्रां पूर्व दिशातः समागतविघ्नान् निवारय-निवारय एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा।

(बन्द मुट्ठी से पूर्व दिशा में पुष्प क्षेपण करें।)

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं दक्षिण दिशातः समागतविघ्नान् निवारय-निवारय एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा।

(बन्द मुट्ठी से दक्षिण दिशा में पुष्प क्षेपण करें।)

ॐ ह्रूं णमो आयरियाणं ह्रूं पश्चिम दिशातः समागतविघ्नान् निवारय-निवारय एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा।

(बन्द मुट्ठी से पश्चिम दिशा में पुष्प क्षेपण करें।)

ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाण ह्रौ उत्तर दिशातः समागतविघ्नान् निवारय-निवारय एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा।

(बन्द मुट्ठी से उत्तर दिशा में पुष्प क्षेपण करें।)

ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूण ह्रः सर्व-दिशातः समागतविघ्नान् निवारय- निवारय एतान् सर्वान् रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा।

(बन्द मुट्ठी से सभी दिशा में पुष्प क्षेपण करें।)

रक्षा मन्त्र

ॐ हूं क्षूं फट् किरिटिं किरिटिं घातय-घातय पर विघ्नान् स्फोटय स्फोटय सहस्र खण्डान् कुरु-कुरु पर मुद्रा छिन्द-छिन्द, परमन्त्रान् भिन्द भिन्द क्षां क्षः वाः वाः हूं फट् स्वाहा।

(स्वय के ऊपर पुष्प क्षेपण करें)

शान्ति मन्त्र

ॐ नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणाशेषदोष कल्मषाय दिव्य तेजोमूर्तये नमः श्री शान्तिनाथाय शान्तिकराय सर्वविघ्न-प्रणाशनाय सर्वरोगापमृत्यु विनाशनाय सर्वपरकृच्छ्रुद्रोपद्रव-

नाशनाय सर्व-क्षामडामर-विघ्न-विनाशनाय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा सर्वशान्ति तुष्टि पुष्टि च कुरु-कुरु स्वाहा।

(विश्वशान्ति की कामना के साथ सभी दिशाओं में पुष्प क्षेपण करें।)

मंगल-कलश स्थापन

ॐ अद्य भगवतो महापुरुषस्य श्रीमदादिब्रह्मणो मतेऽस्मिन् विधीयमाने कर्मणि. .. ....श्रीवीरनिर्वाण सवत्सरे ....मासे........ .पक्षे . तिथौ ... . .वासरे प्रशस्तलग्ने... कार्यस्य निर्विघ्न समाप्त्यर्थं नवरत्नगन्ध-पुष्पाक्षत-श्रीफलादि-शोभित मगलकलश-स्थापनम् करोमि। श्री क्ष्वी क्ष्वीं ह स· स्वाहा।

(मुख्य दिशानुसार ईशान कोण मे मगल कलश स्थापित करें)

दीपक स्थापन

रुचिरदीप्तिकर शुभदीपक सकललोकसुखाकर-मुज्ज्वलम्।
तिमिरजालहर प्रकर सदा किल धरामि सुमगलक मुदा।।

ॐ ह्री अज्ञानतिमिरहर दीपक स्थापयामि।

(मुख्य दिशानुसार आग्नेय कोण में दीपक स्थापित करे)

अभिषेक हेतु धातु के बिम्बो को ही स्थापित करना चाहिए, पाषाण प्रतिमाओं के ऊपर धारा न करके केवल गीले एव सूखे छन्ने से मार्जन करना चाहिए।

प्रत्यग्र चलनक्षम दृढवपुः तथा धातुज।
योग्य नित्यमहोत्सवेषु शिविकासत्स्यदनारोहणे।।

प्रतिष्ठा पाठ, आ जयसेन, श्लोक 71

नवीन अरु हलन चलन मे समर्थ अरु दृढ है शरीर की सन्धि जाकी ऐसी धातु की प्रतिमा नित्योत्सवनि (दैनिक अभिषेक आदि) में पालकी अथवा रथ मे आरोहण योग्य कहा है।

अभिषेक पाठ

(आचार्य माघनन्दीकृत)

श्रीमन्-नतामर-शिरस्तट-रत्न-दीप्ति-
तोयावभासि-चरणाम्बुज-युग्म-मीशम्।
अर्हंत-मुन्नत-पद-प्रद-माभिनम्य-
त्वन्मूर्तिषूद्यदभिषेक-विधि-करिष्ये।।

अथ पौर्वाह्निक / माध्याह्निक / अपराह्निकदेव-वन्दनाया पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं भावपूज वन्दनास्तवसमेत श्रीपञ्चमहागुरु भक्ति कायोत्सर्ग करोम्यहम्।

(श्वासोच्छवास पूर्वक नो बार णमोकार मन्त्र का स्मरण करे)

या कृत्रिमास्तदितरा प्रतिमा जिनस्य,
सम्नापयन्ति पुरुहूत-मुखादयस्ता ।
सद्भाव-लब्धि-समयादि-निमित्त-योगात्
तत्रैवमुज्ज्वलधिया कुसुम क्षिपामि।।

ॐ ह्री अभिषेकप्रतिज्ञापनाय पुष्पाञ्जलि क्षिपेत्

श्रीपीठक्लृते विशदाक्षतौघै ,
श्रीप्रस्तरे पूर्ण-शशाककल्पे।
श्रीवर्तके चन्द्रमसीतिवार्ता,
सत्यापयन्ती श्रियमालिखामि।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीं श्रीलेखनं करोमि।

कनकाद्रि-निभ कम्र पावन पुण्य-कारणम्।
स्थापयामि वर पीठ जिनस्नपनाय भक्तित ।।

ॐ ह्रीं पीठ (सिंहासन) स्थापन करोमि।

भृगार-चामर-सुदर्पण-पीठ-कुम्भ -
तालध्वजातप-निवारक-भूषिताग्रे।

वर्धस्व नन्द जय पाठ-पदावलिभि ,
सिंहासने जिन! भवन्त-मह श्रयामि।।
वृषभादिसुवीरान्तान् जन्माप्तौ जिष्णुचर्चितान्।
स्थापयाम्यभिषेकाय भक्त्या पीठे महोत्सवम्।।

ॐ ह्रीं श्रीधर्मतीर्थाधिनाथ भगवन्निह स्नपनपीठे तिष्ठ तिष्ठ!

श्रीतीर्थकृत्स्नपन-वर्य-विधौ-सुरेन्द्र
क्षीराब्धि-वारिभि-रपूरय-दर्थ-कुम्भान्।
तास्तादृशा-निव विभाव्ययथार्हणीयान्
सस्थापये कुसुम-चन्दन-भूषिताग्रान्।।
शात-कुम्भीय-कुम्भौघान् क्षीराब्धेस्तोय-पूरितान्।
स्थापयामि जिनस्नान-चन्दनादि-सुचर्चितान्।।

ॐ ह्रीं चतु.कोणेषु स्वस्तये चतुःकलशस्थापनं करोमि

आनन्द-निर्भर-सुर-प्रमदादि-गानै -
र्वादित्र-पूर-जय-शब्द-कलप्रशस्तै ।
उद्गीय-मान-जगती-पति-कीर्ति-मेना,
पीठस्थली वसु-विधार्चनयोल्लसामि।।

ॐ ह्रीं स्नपनपीठस्थितजिनायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

कर्म-प्रबन्ध-निगडै-रपि हीनताप्त,
ज्ञात्वापि भक्ति-वशत परमादि-देवम्।
त्वा स्वीय-कल्मष-गणोन्मथ-नाय देव,
शुद्धौदकै-रभिनयामि नयार्थ-तत्त्वम्।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं व मं ह स त पं वं वं मं मं हं हं स सं तं तं प प झं झं झ्वीं झ्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रा द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पवित्रतरजलेन जिनमभिषेचयामः।

तीर्थोत्तम भवै-र्नीरै क्षीर-वारिधि-रूपकै ।
स्नपयामि सुजन्माप्तान् जिनान् सर्वार्थ-सिद्धिदान्।।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिवीरान्तान् जलेन स्नपयामः

स्नात्वा शुभावरधरा कृत-यत्नयोगात्
यन्त्र निवेश्य शुचिपीठ-वरेऽभिषिञ्चेत्।
ॐ भूर्भुव स्वरिह मगलयन्त्र मेतत्
विघ्नौघवारक मह परिषेचयामि।।

ॐ ह्रीं विघ्नौघवारकयन्त्र वयं परिषेचयामः

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादि वीरान्तान् विनायक सिद्ध यन्त्र च जलेन स्नपयामः

ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवंत कृपालसन्त श्रीवृषभादिमहावीरान्त-च्तुर्विंशतितीर्थंकरपरमदेव मध्यलोके जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे भारतदेशे . . ..प्रदेशे.....नाम्निनगरे ..... . मन्दिरे(-मण्डपे) ....वीर-निर्वाणसवत्सरे मासानामुत्तमे मासे . .मासे.. पक्षे .. ... वासरे मुन्या-आर्यिका श्रावक श्राविकाणां सकल कर्म क्षयार्थं जलेन जिनमाभिषिचयाम ।

सकल-भुवन-नाथ त जिनेन्द्र सुरेन्द्रै,
रभिषव-विधि-माप्त स्नातक स्नापयाम ।
यदभिषवन-वारा, बिन्दु-रेकोऽपि नृणा,
प्रभवतिहि विदधातु भुक्तिसन्मुक्तिलक्ष्मीम्।।

ॐ ह्रीं श्री क्ली ऐं अर्हं व मं ह स त प व व म म ह हं सं सं तं तं प पं झ झ झ्वी झ्वीं क्ष्वीं क्ष्वी द्रा द्रां द्री द्री ह झ झ्वी क्ष्वीं ह सः झ व ह· य· स· क्षां क्षी क्षू क्षे क्षै क्षों क्षौ क्ष क्षः क्ष्वीं ह्रा ह्रीं ह्रू ह्रें ह्रै ह्रों ह्रौं ह्रं ह्रः ही द्रा द्रीं नमोऽर्हते भगवते श्रीमते ठः ठः इति बृहच्छान्तिमन्त्रेणाभिषेकं करोमि।

हे तीर्थपा निज-यशो-धवली-कृताशा ,
सिद्धौषधाश्च भव दु ख-महा-गदा-नाम्।
सद्भव्य-हृज्जनित-पक-कबन्ध-कल्पा,
यूय जिना सतत-शान्तिकरा भवन्तु।।12।।

शान्त्यर्थं पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

पानीय-चन्दन-सदक्षत-पुष्पपुञ्ज-
नैवेद्य-दीपक-सुधूप-फल-व्रजेन।
कर्माष्टक-क्रथन-वीर-मनन्त-शक्ति,
सम्पूजयामि महसा महसा निधानम्।।

ॐ ह्री अभिषेकान्ते श्री वृषभादिवीरान्तेभ्योऽर्घ्यं निर्व. स्वाहा!

नत्वा मुहु-र्निज-करै-रमृतोप-मेयै,
स्वच्छै-र्जिनेन्द्र तव चन्द्र-करावदातै।
शुद्धाशुकेन विमलेन नितान्त-रम्ये,
देहे स्थितान् जलकणान् परिमार्जयामि।।14।।

ॐ ह्री अमलाशुकेन जिनबिम्ब मार्जन करोमि

स्नान विधाय भवतोष्ट-सहस्र-नाम्ना-
मुच्चारणेन मनसो वचसो विशुद्धिम्।
जिघृक्षुरिष्ठ-मिन तेऽष्ट-तयी विधातु
मिहासने विधि-वदत्र निवेशयामि।।15।।

ॐ ह्री वेदिकाया सिहासने जिनबिम्बं स्थापयामि।

जल-गन्धाक्षतै पुष्पैश्चरु-दीप-सुधूपकै।
फलै-रर्घै-र्जिनमर्चे जन्मदु खापहानये।।

ॐ ह्री पीठस्थितजिनायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

नत्वा परीत्य निज-नेत्र-ललाट-योश्च,
व्यात्यु-क्षणेन हरता-दघ-सञ्चय मे,
शुद्धोदक जिनपते तव पाद-योगाद्,
भूयाद्-भवातप-हर धृत-मादरेण।।16।।

नमस्कारं कृत्वा जिनगन्धोद्धकं शिरसि धारयामि

शान्ति-धारा

ॐ नम सिद्धेभ्य श्रीवीतरागाय नम

ॐ ह्री णमो अरिहताण णमो सिद्धाण णमो आइरियाण

णमो उवज्झायाण णमो लोए सव्वसाहूण।

चत्तारि मगल-अरिहता मगल सिद्धा मगल साहू मगल केवलिपण्णत्तो धम्मो मगल चत्तारि लोगुत्तमा-अरिहता लोगुत्तमा सिद्धा लोगुत्तमा साहू लोगुत्तमा केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो चत्तारि सरण पव्वज्जामि-अरिहते सरण पव्वज्जामि सिद्धे सरण पव्वज्जामि साहू सरण पव्वज्जामि केवलिपण्णत्त धम्म सरण पव्वज्जामि ॐ ह्री अनादि-मूल-मन्त्रेभ्यो नम सर्व-शान्ति तुष्टि पुष्टि च कुरु-कुरु।

ॐ नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणाशेषदोष-कल्मषाय दिव्य-तेजोमूर्तये नम श्रीशान्तिनाथाय शान्तिकराय सर्वविघ्नप्रणाशनाय सर्वरोगापमृत्यु-विनाशनाय सर्व-परकृच्छ्रक्षुद्रोपद्रवनाशनाय सर्वक्षामडामर-विघ्न विनाशनाय ॐ ह्रा ह्रीं ह्रू ह्रौ ह्र अ सि आ उ सा सर्व-शान्ति तुष्टि पुष्टि च कुरु-कुरु।

ॐ ह्रू क्ष्रू फट् किरिटि किरिटि घातय घातय पर विघ्नान् स्फोटय-स्फोटय सहस्र-खण्डान् कुरु-कुरु परमुद्रा छिन्द-छिन्द पर-मन्त्रान् भिन्द भिन्द क्षा क्ष वा वा ह्रू फट् सर्वशान्ति कुरु-कुरु।

ॐ ह्री श्री क्ली अर्ह अ सि आ उ सा अनाहतविद्यायै णमो अरिहताण ह्रौ सर्वविघ्नशान्ति कुरु-कुरु।

ॐ अ ह्रा सि ह्री आ ह्रू उ ह्रौ सा ह्र जगदातप-विनाशनाय ह्री शान्तिनाथाय नम सर्व-शान्ति कुरु-कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथाय अशोक तरु-सत्प्रातिहार्य-मण्डिताय अशोक तरु-सत्प्रातिहार्य-शोभनपदप्रदाय ह्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव-शान्तिकराय नम सर्व शान्ति कुरु-कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथाय सुरपुष्पवृष्टि-सत्प्रातिहार्य-मण्डिताय सुरपुष्पवृष्टि-सत्प्रातिहार्य-शोभनपदप्रदाय भ्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय नम सर्व-शान्ति कुरु-कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथाय दिव्यध्वनि-सत्प्रातिहार्य-मण्डिताय दिव्यध्वनि-सत्प्रातिहार्य-शोभनपदप्रदाय म्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय नम सर्व शान्ति कुरु-कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथाय चामरोज्ज्वल-सत्प्रातिहार्य-मण्डिताय चामरोज्ज्वल-सत्प्रातिहार्य-शोभनपदप्रदाय र्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय नम सर्व शान्ति कुरु-कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथाय सिंहासन-सत्प्रातिहार्य-मण्डिताय सिंहासन-सत्प्रातिहार्य-शोभनपदप्रदाय घ्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय नम सर्व-शान्ति कुरु-कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथाय भामण्डल-सत्प्रातिहार्य-मण्डिताय भामण्डल-सत्प्रातिहार्य-शोभनपदप्रदाय झ्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय नम सर्व-शान्ति कुरु-कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथाय दुन्दुभि-सत्प्रातिहार्य मण्डिताय दुन्दुभि-सत्प्रातिहार्य-शोभनपदप्रदाय स्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय नम सर्व शान्ति कुरु-कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथाय छत्रत्रय-सत्प्रातिहार्य-मण्डिताय छत्रत्रय-सत्प्रातिहार्य-शोभनपदप्रदाय ख्म्ल्व्र्यूं बीजाय सर्वोपद्रव शान्तिकराय नम सर्व शान्ति कुरु-कुरु।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथाय प्रातिहार्याष्ट-सहिताय बीजाष्ट-मण्डन-मण्डिताय सर्वविघ्नशान्तिकराय नम सर्वशान्ति कुरु-कुरु।

तव भक्तिप्रसादाल्लक्ष्मीपुर राज्यगेह पदभ्रष्टोद्‌भवो-पद्रव दारिद्रोद्‌भवोपद्रव-स्वचक्र-परचक्रोद्-भवोपद्रव-प्रचण्ड-पवनानल-

जलोद्भवोपद्रव-शाकिनी-डाकिनी-भूत-पिशाच-कृतोपद्रव-दुर्भिक्षव्यापार-वृद्धिरहितोपद्रवाणा विनाशन भवतु।

श्रीशान्तिरस्तु शिवमस्तु जयोस्तु नित्यमारोग्यमस्तु सर्वेषा पुष्टिरस्तु तुष्टिरस्तु समृद्धिरस्तु कल्याणमस्तु सुखमस्तु अभिवृद्धिरस्तु कुलगोत्र-धनधान्य सदास्तु श्रीसद्धर्मबलायुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्धिरस्तु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सम्पूर्णकल्याणमंगलरूपमोक्षपुरुषार्थश्च भवतु।

सम्पूजकाना प्रतिपालकाना,
यतीन्द्र-सामान्य-तपोधनाना।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञ
करोति शान्ति भगवज्जिनेन्द्र ।।

आरती

आनन्द आपार है भक्ति का प्रसार है।
देखो बिम्ब प्रतिष्ठा का, कैसा जय-जयकार है।।टेक।।

मगल आरती लेकर स्वामी, आया तेरे द्वार जी।
गुण गाता हूँ आदि प्रभू का, होगा बेडा पार जी।।।।1।।

इन्द्र इन्द्राणी नाचे भगवन, आज तुम्हारे द्वार जी।
शान्ति प्रभू करके न्हवन, बोले जय-जयकार जी।।2।।

पर परिणति से अब तक भटका, शरण कही नहीं पाया जी।
तारन तरन विरद सुन करके, सिद्ध शरण में आया जी।।3।।

अब तो पार लगा दो भगवन, 'पुष्प' चरण शिरनाया जी।
अजर अमर पद पा जाऊँ मै, सिद्ध शरण मे आया जी।।4।।

विनय पाठ

इह विधि ठाडो होय के, प्रथम पढै जो पाठ।
धन्य जिनेश्वर देव तुम, नाशे कर्म जू आठ।।1।।

अनन्त चतुष्टय के धनी, तुमही हो सिरताज।
मुक्ति-वधु के कन्त तुम, तीन भुवन के राज।।2।।

तिहुँ जग की पीडा हरन, भवदधि शोषणहार।
ज्ञायक हो तुम विश्व के, शिवसुख के करतार।।3।।

हरता अघ अधियार के, करता धर्मप्रकाश।
थिरतापद दातार हो, धरता निजगुण रास।।4।।

धर्मामृत उर जलधि सों, ज्ञानभानु तुम रूप।
तुमरे चरण-सरोज को, नावत तिहु जग भूप।।5।।

मै बन्दौ जिनदेव को, कर अति निर्मल भाव।
कर्मबन्ध के छेदने, और न कछू उपाव।।6।।

भविजन को भवकूपतै, तुमही काढनहार।
दीनदयाल अनाथ पति, आतम गुण भण्डार।।7।।

चिदानन्द निर्मल कियो, धोय कर्मरज मैल।
सरल करी या जगत में, भविजन को शिवगैल।।8।।

तुम पदपकज पूजतै, विघ्न रोग टर जाय।
शत्रु मित्रता को धरैं, विष निरविषता थाय।।9।।

चक्री सुर खग इन्द्रपद, मिलै आपतैं आप।
अनुक्रमकर शिवपद लहैं, नेम सकल हनि पाप।।10।।

तुम बिन मैं व्याकुल भयो, जैसे जल बिन मीन।
जन्म जरा मेरी हरो, करो मोहि स्वाधीन।।11।।

पतित बहुत पावन किये, गिनती कौन करेव।
अञ्जन से तारे प्रभु, जय जय जय जिनदेव।।12।।

थकी नाव भवदधिविषै, तुम प्रभु पार करेय।
खेवटिया तुम हो प्रभु, जय जय जय जिनदेव।।13।।
ग्गसहित जग में रुल्यो, मिले सरागी देव।
वीतराग भेट्यो अबै, मेटो राग कुटेव।।14।।
कित निगोद कित नारकी, कित तिर्यञ्च अज्ञान।
आज धन्य मानुष भयो, पायो जिनवर थान।।15।।
तुमको पूजै सुरपती, अहिपति नरपति देव।
धन्य भाग्य मेरो भयो, करन लग्यो तुम सेव।।16।।
अशरण के तुम शरण हो निराधार आधार।
मैं डूबत भवसिन्धु मे खेव लगाओ पार।।17।।
इन्द्रादिक गणपति थके, कर विनती भगवान।
अपनो विरद निहारकै, कीजै आप समान।।18।।
तुमरी नेक सुदृष्टितै, जग उतरत है पार।
हा हा डूबो जात हो, नेक निहार निकार।।19।।
जौ मै कहहूँ औरसो, तो न मिटै उर झार।
मेरी तो तोसो बनी, तातै करौं पुकार।।20।।
वन्दो पाँचों परम गुरु, सुरगुरु वन्दत जास।
विघनहरन मगलकरन, पूरन परम प्रकाश।।21।।
चौबीसों जिनपद नमों, नमों शारदा माय।
शिवमग साधक साधु 'नमि', रच्यो पाठ सुखदाय।।22।।

मंगलपाठ

मगल मूर्ति परमपद, पञ्चधरो नित ध्यान।
हरो अमगल विश्व का, मगलमय भगवान।।23।।
मगल जिनवर पद नमों, मगल अर्हतदेव।
मगलकारी सिद्ध पद, सो वन्दों स्वयमेव।।24।।

मगल आचारज मुनि मगल गुरु उवझाय।
सर्व साधु मगल करो, वन्दो मन वच काय।।25।।
मगल सरस्वती मातका, मगल जिनवर धर्म।
मगल मय मगल करो, हरो असाता कर्म।।26।।
या विधि मगल करन से, जग मे मगल होत।
मगल "नाथूराम" यह, भवसागर दृढ पोत।।27।।

अथ अर्हत्-पूजा-प्रतिज्ञाया पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्म क्षयार्थं-भावपूजा वन्दनास्तव समेत-पञ्चमहागुरुभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

(पूजा की प्रतिज्ञा करते हुए नौ बार णमोकार मन्त्र का ध्यान करे)

पूजा प्रारम्भ

ॐ जय जय जय नमोस्तु, नमोस्तु, नमोस्तु।
णमो अरिहताण णमो सिद्धाण णमो आयरियाण
णमो उवज्झायाण णमो लोए सव्वसाहूण।।

ॐ ह्री अनादि-मूल-मन्त्रेभ्यो नमःपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

चत्तारि मगल अरिहता मगल सिद्धा मगल
साहू मगल केवलिपण्णत्तो धम्मो मगल।
चत्तारि लोगुत्तमा अरिहता लोगुत्तमा सिद्धा लोगुत्तमा
साहू लोगुत्तमा केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो
चत्तारि सरण पव्वज्जामि अरिहते-सरण पव्वज्जामि
सिद्धे सरण पव्वज्जामि साहू सरण पव्वज्जामि
केवलि पण्णत्त धम्म सरण पव्वज्जामि।।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा, पुष्पाञ्जलि क्षिपेत्।

अपवित्र पवित्रो वा, सुस्थितो दु स्थितोऽपि वा।
ध्यायेन् पञ्च-नमस्कार, सर्वपापै प्रमुच्यते।।1।।

अपवित्र पवित्रो वा, सर्वावस्था गतोऽपि वा।
य स्मरेत्परमात्मान, स बाह्याभ्यन्तरे शुचि ।।2।।
अपराजित-मन्त्रोऽय, सर्व-विघ्न-विनाशन ।
मगलेषु च सर्वेषु, प्रथम मगल मत ।।3।।
एसो-पच-णमोयारो, सव्व-पावप्पणासणो।
मगलाण च सव्वेसि, पढम होइ मगल।।4।।
अर्हमित्यक्षर ब्रह्म-वाचक परमेष्ठिन ।
सिद्धचक्रस्य सद्‌बीज, सर्वत प्रणमाम्यह।।5।।
कर्माष्टक-विनिर्मुक्त, मोक्ष-लक्ष्मी-निकेतन।
सम्यक्त्वादि-गुणोपेत, सिद्धचक्र नमाम्यह।।6।।
विघ्नौघा प्रलय यान्ति, शाकिनी-भूत-पन्नगा ।
विष निर्विषता याति, स्तूयमाने जिनेश्वरे।।7।।

(पुष्पाञ्जलि क्षिपेत्)

उदक-चन्दन-तण्डुल-पुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकै ।
धवल-मगल-गान रवाकुले जिनगृहे कल्याणमह यजे।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीभगवतो गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाणपञ्चकल्याणकेभ्योऽर्घ्यं।

उदक-चन्दन-तण्डुल-पुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकै ।
धवल-मगल-गान रवाकुले जिनगृहे जिननाथमह यजे।।2।।

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्-सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

उदक-चन्दन-तण्डुल-पुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकै ।
धवल-मगल-गान रवाकुले जिनगृहे जिननाम यजाम्यहम्।।3।।

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनअष्टाधिकसहस्रनामभ्योऽर्घ्यं नि० स्वाहा।

उदक-चन्दन-तण्डुल-पुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकै ।
धवल-मगल-गान रवाकुले जिनगृहे जिनसूत्रमह यजे।।4।।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि तत्त्वार्थ सूत्रे दशाध्याये अर्घ्यं

उदक-चन्दन-तण्डुल-पुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकै·।
धवल-मगल-गान रवाकुले जिनगृहे जिनस्तोत्रमह यजे।।5।।

ॐ ह्रीं सर्व जिनस्तोत्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री-मज्जिनेन्द्र-मभिवन्द्य जगत्-त्रयेश,
स्याद्वाद-नायक-मनन्त-चतुष्टयार्हम्।
श्रीमूल-सघ-सुदृशां सुकृतैक-हेतुर्,
जैनेन्द्र-यज्ञ-विधि-रेष मयाऽभ्यधायि।।1।।

स्वस्ति त्रिलोक-गुरवे जिन-पुगवाय,
स्वस्ति स्वभाव-महिमोदय-सुस्थिताय।
स्वस्ति प्रकाश-सहजोर्ज्जित-दृगमयाय,
स्वस्ति प्रसन्न-ललिताद्-भुत-वैभवाय।।2।।

स्वस्त्युच्छलद्-विमलबोधसुधा-प्लवाय,
स्वस्ति स्वभाव-परभाव-विभासकाय।
स्वस्ति त्रिलोक-विततैक-चिदुद्गमाय,
स्वस्ति त्रिकाल-सकलायत-विस्तृताय।।3।।

द्रव्यस्य शुद्धि-मधिगम्य यथानुरूप,
भावस्य शुद्धि-मधिकामधिगन्तुकाम·।
आलम्बनानि विविधान्यवलम्ब्य वल्गन्,
भूतार्थ-यज्ञ-पुरुषस्य करोमि यज्ञम्।।4।।

अर्हन् पुराण-पुरुषोत्तम पावनानि,
वस्तून्यनूनमखिलान्ययमेक एव।
अस्मिन्-ज्वलद्विमल-केवल-बोध वह्नौ,
पुण्य समग्रमह-मेकमना जुहोमि।।5।।

ॐ ह्रीं विधियज्ञप्रतिज्ञानाय जिनप्रतिमाग्रे पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

श्रीवृषभो न स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअजित ।
श्रीशम्भव स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअभिनन्दन ।
श्रीसुमति स्वस्ति, स्वस्ति श्रीपद्मप्रभ ।
श्रीसुपार्श्व स्वस्ति, स्वस्ति श्रीचन्द्रप्रभ ।
श्रीपुष्पदन्त स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशीतल ।
श्रीश्रेयान् स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवासुपूज्य ।
श्रीविमल स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअनन्त ।
श्रीधर्म स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशान्ति ।
श्रीकुन्थु स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअरनाथ ।
श्रीमल्लि स्वस्ति, स्वस्ति श्रीमुनिसुव्रत ।
श्रीनमि स्वस्ति, स्वस्ति श्रीनेमिनाथ ।
श्रीपार्श्व स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवर्द्धमान ।

इति चतुर्विंशतिजिनेन्द्र-स्वस्तिमगलविधानं पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

नित्याप्रकम्पाद्भुत-केवलौघा , स्फुरन्मन पर्यय-शुद्धबोधा ।
दिव्यावधिज्ञान-बलप्रबोधा , स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो न ।1।

(यहॉ से प्रत्येक श्लोक के अन्त मे पुष्पाञ्जलि क्षेपण करना चाहिये)

कोष्ठस्थ-धान्योपममेकबीज, सम्भिन्न-सश्रोतृ-पदानुसारि।
चतुर्विध बुद्धि-बल दधाना , स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो न ।।2।।
सस्पर्शन सश्रवण च दूरादास्वादन-घ्राण-विलोकनानि।
दिव्यान् मतिज्ञान-बलाद्वहन्त , स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो न ।।3।।
प्रज्ञा-प्रधाना श्रमणा समृद्धा , प्रत्येक-बुद्धा दशसर्वपूर्वै ।
प्रवादिनोऽष्टाग-निमित्त-विज्ञा , स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो न ।।4।।
जघानल-श्रेणि-फलाम्बु-तन्तु-प्रसून-बीजाकुर-चारणाह्वा ।
नभोऽङ्गण-स्वैर-विहारिणश्च, स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो न ।।5।।
अणिम्नि दक्षा कुशला महिम्नि, लघिम्नि शक्ता कृतिनो गरिम्णि।
मनो-वपु-र्वाग्बलिनश्च नित्य, स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो न ।।6।।

सकाम-रूपित्व-वशित्वमैश्य, प्राकाम्य-मन्तर्द्धि-मथाप्तिमाप्ता ।
तथाऽप्रतीघातगुणप्रधाना·, स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो न ।।7।।
दीप्त च तप्त च तथा महोग्र, घोर तपो घोरपराक्रमस्था ।
ब्रह्मापर घोर-गुणाश्चरन्त , स्वस्ति-क्रियासु परमर्षयो न ।।8।।
आमर्ष-सर्वौषधयस्तथाशी-र्विषाविषा दृष्टिविषाविषाश्च।
सखेल-विड्जल्ल-मलौषधीशा , स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो न ।।9।।
क्षीर स्रवतोऽत्र घृत स्रवतो, मधु स्रवतोऽप्यमृत स्रवत.।
अक्षीण-सवास-महानसाश्च, स्वस्ति क्रियासु परमर्षयो न ।।10।।

इति परमर्षिस्वस्तिमंगल-विधानं परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

आह्वान, स्थापन एवं सन्निधिकरण

पूजा के पाच अग होते हैं-1 आह्वान 2 स्थापन 3 सन्निधिकरण 4 पूजन 5 विसर्जन।

इनके अनुसार ही पूजा विधि सम्पादित करना चाहिए।

प्रथम तीन अग मुद्रा पूर्वक सम्पादित करके ठोने पर बने स्वस्तिक के ऊपर पुष्प क्षेपण करके पूजा का सकल्प करना चाहिए आह्वानम् मद्रा- हथेली को ऊपर करके हाथ की दोनों रेखाओं को मिलाकर अगूठे को अनामिका के मूल में लगाकर जिनबिम्ब को देखते हुए आह्वान का भाव करना।

स्थापन मुद्रा- ऊपर की मुद्रा को अधोमुखी हथेली करते हुए स्थापन का भाव करना।

सन्निधिकरण मुद्रा- दोनो अगूठों को ऊपर उठाकर मुट्ठी बद करके अगूठे को हृदय के पास लगाकर सन्निधिकरण का भाव करके पूजा का सकल्प करते हुऐ पुष्प या लवग ठोने पर क्षेपण करें। इस क्रिया में गिनकर (3-3) पुष्प चढाने का विधान किसी ग्रन्थ में नही मिला है।

—पुष्पाञ्जलि

समुच्चय पूजा

दोहा- देवशास्त्र गुरु नमन करि, बीस तीर्थंकर ध्याय।
सिद्ध शुद्ध राजत सदा, नमू चित्त हुलसाय।।

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरु-समूह विद्यमान-विंशति-तीर्थंकर-समूह अनन्तानन्त-सिद्ध-परमष्ठि-समूह अत्रावतर अवतर सवौषट् आह्वानम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अनादिकाल से जग में स्वामिन्, जल से शुचिता को माना।
शुद्धनिजातम सम्यक् रत्नत्रय, निधि को नहि पहचाना।।
अब निर्मल रत्नत्रय जल ले, श्री देवशास्त्र गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभू के गुण गाऊँ।।1।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशति-तीर्थंकरानन्तानन्त सिद्धपरमेष्ठिभ्यो जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

भव आताप मिटावन की, निज में ही क्षमता समता है।
अनजाने अब तक मैने, पर मे की झूठी ममता है।।
चन्दन सम शीतलता पाने, श्री देवशास्त्र गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभू के गुण गाऊँ।।2।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशति-तीर्थंकरानन्तानन्त सिद्धपरमेष्ठिभ्यः संसारताप-विनाशनाय चन्दन नि० स्वाहा।

अक्षय पद बिन फिरा, जगत की लख चौरासी योनि मे।
अष्ट कर्म के नाश करन को, अक्षत तुम ढिग लाया मै।।
अक्षय निधि निज की पाने को, श्री देवशास्त्र गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभू के गुण गाऊँ।।3।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशति-तीर्थंकरानन्तानन्त सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतान् नि. स्वाहा।

पुष्प सुगन्धी से आतम ने, शील स्वभाव नशाया है।
मन्मथ बाणों से विन्ध करके, चहुँ गति दुख उपजाया है।।
स्थिरता निज में पाने को, श्री देवशास्त्र गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभू के गुण गाऊँ।।4।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशति-तीर्थंकरानन्तानन्त सिद्धपरमेष्ठिभ्यः कामवाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

षट् रस मिश्रित भोजन से, ये भूख न मेरी शान्त हुई।
आतम रस अनुपम चखने से, इन्द्रिय मन इच्छा शमन हुई।।
सर्वथा भूख के मेटन को, श्री देवशास्त्र गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभू के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशति-तीर्थंकरानन्तानन्त सिद्धपरमेष्ठिभ्यः क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जड दीप विनश्वर को अब तक, समझा था मैने उजियारा।
निज गुण दरशायक ज्ञान दीप से, मिटा मोह का अधियारा।।
ये दीप समर्पित करके मैं, श्री देवशास्त्र गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभू के गुण गाऊँ।।6।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशति-तीर्थंकरानन्तानन्त सिद्धपरमेष्ठिभ्यो मोहांधकार-विनाशनाय दीपं नि० स्वाहा

ये धूप अनल में खेने से, कर्मों को नहीं जलायेगी।
निज में निज की शक्ति ज्वाला, जो राग द्वेष नशायेगी।
उस शक्ति दहन प्रगटाने को, श्री देवशास्त्र गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभू के गुण गाऊँ।।7।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशति तीर्थंकरानन्तानन्त सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अष्टकर्म-विध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पिस्ता बदाम श्रीफल लवग, चरणन तुम ढिग मैं ले आया।
आतमरस भीने निजगुण फल, मम मन अब उनमें ललचाया।।
अब मोक्ष महाफल पाने को, श्री देवशास्त्र गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभू के गुण गाऊँ।।8।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशति-तीर्थंकरानन्तानन्त सिद्धपरमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम वसुधा पाने को, कर में ये आठों द्रव्य लिये।
सहज शुद्ध स्वाभाविकता से, निज मै निज गुण प्रगट किये।
ये अर्घ्य समर्पण करके मै, श्री देवशास्त्र गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभू के गुण गाऊँ।।9।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशति-तीर्थंकरानन्तानन्त सिद्धपरमेष्ठिभ्योऽनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

देव शास्त्र गुरु बीस जिन, सिद्ध अनन्तानन्त।
गुण गाऊँ जयमालिका, भव दुख नशे अनन्त।।

नशे घातिया कर्म अर्हन्त देवा, करे सुर असुर नर मुनि नित्य सेवा।
दरश ज्ञान सुख बल अनन्त के स्वामी, छियालीस गुण युत महाईश नामी।।
तेरी दिव्य वाणी सदा भव्य मानी, महा मोह विध्वसिनी मोक्ष दानी।
अनेकान्त मय द्वादशागी बखानी, नमो लोक माता श्री जैन वाणी।।
विरागी अचारज उवज्झाय साधू, दरश ज्ञान भण्डार समता अराधू।
नगन वेषधारी सु एका बिहारी, निजानन्द मण्डित मुकति पथ प्रचारी।।
विदेह क्षेत्र में तीर्थंकर बीस राजें, विहरमान बन्दू सभी पाप भाजें।
नमूँ सिद्ध निर्भय निरामय सुधामी, अनाकुल समाधान सहजाभिरामी।।

देव शास्त्र गुरु बीस तीर्थंकर, सिद्ध हृदय बिच धरले रे।
पूजन ध्यान गान गुन करके, भव सागर जिय तरले रे।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरु-विद्यमानविंशति-तीर्थंकरानन्तानन्त सिद्धपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भूत भविष्यत वर्तमान की, तीस चौबीसी मै ध्याऊँ।
चैत्य चैत्यालय कृत्रिमाकृत्रिम, तीन लोक के मन लाऊँ।।

ॐ ह्रीं त्रिकाल-सम्बन्धि-विंशत्यधिकसप्तशत-तीर्थंकरेभ्यो कृत्रिमाकृत्रिम-चैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चैत्य भक्ति आलोचन चाहूँ, कायोत्सर्ग अघ नाशन हेत।
कृत्रिमाकृत्रिम तीनलोक मे, राजत है जिन बिम्ब अनेक।।
चतुर निकाय के देव जजे ले, अष्ट द्रव्य निज भक्ति समेत।
निज शक्ति अनुसार जजूँ मै, कर समाधि पाऊँ शिवखेत।।

ॐ ह्री कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयसम्बन्धिजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्व मध्य अपराह्न की बेला, पूर्वाचार्यो के अनुसार।
देव वन्दना करूँ भाव से सकल कर्म की नाशन हार।।
पञ्च महा गुरु सुमरन करके कायोत्सर्ग करूँ सुखकार।
सहज स्वभाव शुद्ध लख अपना जाऊँगा अब मै भव पार।।

पुष्पाञ्जलि क्षिपेत् (नौ बार णमोकार मन्त्र का ध्यान करें)

श्रीजिन के प्रसाद तें, सुखी रहे सब जीव।
यातें-तन-मन-वचन-ते सेओ-भव्य सदीव।।

इत्याशीर्वाद

पुष्पाञ्जलि क्षिपेत्

जैन दर्शन में सयम और व्रत की मुख्यता है यदि व्रत सयम न होता तो जैन दर्शन आदर्शता को प्राप्त नही हो पाता। जैसे शरीर मे रीड की हड्डी जीवन को प्राणदायिनी मानी जाती है उसी प्रकार व्रत-सयम जैनदर्शन की रीड है।

—ब्र डॉ प्रमिला जैन

अर्घ्यावली

अकृत्रिम चैत्यालय अर्घ्य

कृत्याकृत्रिम-चारु-चैत्यनिलयान् नित्य त्रिलोकीगतान्,
वन्दे भावन-व्यन्तर-द्युतिवरान् स्वर्गामरावासगान्।
सद्-गन्धाक्षत-पुष्पदामचरुकै सद्दीपधूपै फलै-
र्नीराद्यैश्च यजे प्रणम्य शिरसा दुष्कर्मणा शान्तये।।

ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयसम्बन्धि जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं नि०।

वर्षेषु वर्षान्तर-पर्वतेषु नन्दीश्वरे यानि च मन्दरेषु।
यावन्ति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि वन्दे जिनपुगवाना।।1।।

अवनितल-गताना कृत्रिमाकृत्रिमाणा।
वन-भवन-गताना दिव्य-वैमानिकानाम्।।
इह मनुज-कृताना देवराजार्चिताना।
जिनवर निलयाना भावतोऽहं स्मरामि।।2।।

जम्बू-धातकि-पुष्करार्ध-वसुधा-क्षेत्र-त्रये ये भवा-
श्चन्द्राम्भोज शिखण्डिकण्ठ-कनक-प्रावृड्घनाभाजिना ।
सम्यग्ज्ञान-चरित्र-लक्षणधरा दग्धाष्ट-कर्मेन्धना ,
भूतानागत-वर्तमान-समये तेभ्यो जिनेभ्यो नम ।।3।।

श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जम्बुवृक्षे,
वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकर-रुचके कुण्डले मानुषाके,
इष्वाकारेऽञ्जनाद्रौ-दधिमुख-शिखरे व्यन्तरे स्वर्गलोके,
ज्योतिर्लोकेऽभिवन्दे भवन-महितले यानि चैत्यालयानि।।4।।

द्वौ कुन्देन्दु-तुषार-हार-धवलौ द्वाविन्द्रनीलप्रभौ,
द्वौ बन्धूक-सम-प्रभौ जिनवृषौ द्वौ च प्रियगुप्रभौ।
शेषा षोडश जन्म-मृत्यु-रहिता सन्तप्त हेम-प्रभा-
स्ते सज्ज्ञान-दिवाकरा सुर-नुता सिद्धि प्रयच्छन्तु न ।।5।।

ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धि-कृत्रिमाकृत्रिम-जिन-चैत्यालयेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इच्छामि भंते। चेइयभत्ति काउसग्गो कओ तस्सालोचेऊ अहिलोय-तिरियलोय- उड्ढलोयम्मि किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि-जिण-चेइयाणि ताणि सव्वाणि तीसु वि लोएसु भवणवासिय-वाणवितर-जोइसियकप्पवासिय त्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गंधेण दिव्वेण पुप्फेण दिव्वेण धूवेण दिव्वेण चुण्णेण दिव्वेण वासेण दिव्वेण ण्हाणेण णिच्चकाल अच्चंति पुज्जंति वंदंति णमस्संति अहमवि इह सन्तो तत्थ संताइ णिच्चकाल अच्चेमि पूज्जेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमण समाहिमरण जिणगुण-सम्पत्ति होउ मज्झ।

इति पौर्वाह्णिक/माध्याह्णिक/आपराह्णिक-देववन्दनाया पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजा वन्दनास्तवसमेत चैत्यभक्तिकायोत्सर्ग करोम्यहम्।

वर्तमान चौबीसी अर्घ्य

जल फल आठो शुचिसार, ताको अर्घ्य करों।
तुमको अरपों भवतार, भव तरि मोक्ष वरो।
चौबीसों श्री जिनचन्द, आनन्दकन्द सही।
पद जजत हरत भवफन्द, पावत मोक्ष मही।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादि-वीरान्त-चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्योऽनर्घ्यपद-प्राप्तयेअर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री आदिनाथ अर्घ्य

शुचि निर्मल नीर गन्ध सुअक्षत, पुष्प चरु ले मन हरषाय।
दीप धूप फल अर्घ्य सु लेकर, नाचतताल मृदंग बजाय।।
श्रीआदिनाथ के चरण कमल पर बलि बलि जाऊँ मन वच काय।
हो करुणानिधि भव दुख मेटो, यातें मैं पूजों प्रभु पाय।।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री अजितनाथ अर्घ्य

जल फल सब सज्जे, वाजत वज्जे, गुनगनरज्जै मनमज्जै।
तुम पदजुगमज्जै सज्जन जज्जै, ते भव भज्जै निजकज्जै।।
तुम अजित जिनेश नुत चक्रेश चक्रधरेश खग्गेश।
मन वाछित दाता त्रिभुवन त्राता, पूजों ख्याता जग्गेश।।
ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सम्भवनाथ अर्घ्य

जल चन्दन तन्दुल पुष्प चरु, दीप धूप फल अर्घ्य किया।
तुमको अरपो भावभगतिधर, जै जे जै शिवरमनि पिया।।
सम्भवजिन के चरन चरचते, सब आकुलता मिट जावै।
निज निधि ज्ञान-दरश-सुख-वीरज, निराबाध भविजन पावै।।
ॐ ह्रीं श्रीसम्भवनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री अभिनन्दन अर्घ्य

अष्ट द्रव्य सवारि सुन्दर, सुजस गाय रसाल ही।
नचत रजत जजो चरन जुग, नाय नाय सुभाल ही।।
कलुष ताप निकन्द श्री अभिनन्द, अनुपम चन्द है।
पदवन्द वृन्द जजे प्रभू भवद्वन्द-फन्द निकन्द है।।
ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री सुमतिनाथ अर्घ्य

जल चन्दन तन्दुल प्रसून चरु, दीप धूप फल सकल मिलाय।
नाचिराचि शिरनाय समरचों, जय जय जय जय जयजिनराय।।
हरिहर वन्दित पाप निकन्दित, सुमतिनाथ त्रिभुवन के राय।
तुम पद पद्म सद्म शिवदायक, जजत मुदित मन उदित सुभाय।
ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री पद्मप्रभ अर्घ्य

जलफल आदि मिलाय गाय गुन, भगति भाव उमगाय।
जजों तुमहि शिवतियवर जिनवर, आवागमन मिटाय।।
पूजों भाव सों श्री पद्मनाथ पद सार, पूजों भाव सों।।
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री सुपार्श्वनाथ अर्घ्य

आठों दरव साजि गुनगाय, नाचत राचत भगति बढाय।
दया निधि हो, जय जगबन्धु दयानिधि हो।।
तुम पद पूजों मन वच काय, देव सुपारस शिवपुरराय।
दया निधि हो जय जगबन्धु दयानिधि हो।।
ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री चन्द्रप्रभ अर्घ्य

वसु विधि अर्घ्य बनाय मनोहर, श्री जिन मन्दिर जावो।
अष्टकर्म के नाश करन को, श्री जिन चरण चढावो।।
चञ्चल चित को रोक, चतुर्गति चक्रभ्रमण निरवारो।
चारु चरण आचरण चतुरनर, चन्द्रप्रभ चितधारो।।
ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री पुष्पदन्त अर्घ्य

जलफल सकल मिलाय मनोहर मनवचतन हुलसाय।
तुम पद पूजो प्रीति लायकें जय जय त्रिभुवनराय।।
मेरी अरज सुनीजे, पुष्पदन्त जिनराय मेरी अरज सुनीजे।।
ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदन्त-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री शीतलनाथ अर्घ्य

कश्री फलादि वसु प्रासुक द्रव्य साजे।
नाचे रचे मचत बज्जत सज्ज बाजे।।
रागादिदोष मलमर्द्दन हेतु येवा।
चर्चों पदाब्ज तव शीतल नाथ देवा।।

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री श्रेयांसनाथ अर्घ्य

जल मलय तन्दुल सुमन चरु, अरु दीप धूप फलावली।
करि अर्घ्य चरचो चरनजुग प्रभु मोहि तार उतावली।।
श्रेयासनाथ जिनेन्द्र त्रिभुवन वन्द्य आनन्द कन्द है।
दुख द्वन्दफन्द निकन्द पूरनचन्द्र जोति अमन्द है।।

ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांसनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री वासुपूज्य अर्घ्य

जल फल दरव मिलाय गाय गुन, आठों अग नमाई।
शिवपदराज हेतु हे श्री पति! निकट धरो यह लाई।।
वासुपूज्य वसुपूज तनुज पद, वासव सेवत आई।
बाल ब्रह्मचारी लखि जिनको, शिवतिय सनमुख धाई।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्य-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री विमलनाथ अर्घ्य

आठों दरब सवार, मनसुखदायक पावने।
जजों अर्घ्य भर थार विमल विमल शिवतिय रमन।।

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री अनन्तनाथ अर्घ्य

शुचि नीर चन्दन शालितन्दुल, सुमन चरुदीपक धरों।
धूप फल जुत अरघ करके, कर जोर जुग विनती करों।।
जगपूज परमपुनीत मीत, अनन्त सन्त सुहावनें।
शिवकन्तवन्त महन्त ध्यावों, भ्रमणतन्त नशावनें।।

ॐ ह्री श्रीअनन्तनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री धर्मनाथ अर्घ्य

आठो दरव साज शुचि चितहर, हरषि हरषि गुन गाई।
बाजत दृमदृम दृम मृदगगत, नाचत ता थेइ थाई।।
परम धरम शमरमण धरम-निज अशरनशरन तिहारी।
पूजूँ पाय गाय गुन सुन्दर, नाचूँ दै दै नारी।।

ॐ ह्री श्रीधर्मनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री शान्तिनाथ अर्घ्य

वसु द्रव्य सवारी, तुम ढिग धारी, आनन्दकारी दृग प्यारी।
तुम हो भवतारी, करुणाधारी, यातै थारी शरनारी।।
श्री शान्ति-जिनेश, नुतशक्रेश, वृषचक्रेश, चक्रेश।
हनि अरि चक्रेश, हे गुनधेश, दयामृतेश, मक्रेश।।

ॐ ह्री श्रीशान्तिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री कुन्थुनाथ अर्घ्य

जल चन्दन तन्दुल प्रसून चरु, दीप धूप लेरी।
फलजुत जजन करों मन सुखधरि, हरों जगत फेरी।।
कुन्थु सुन अरज दासकेरी, नाथ सुन अरज दासकेरी।
भवसिन्धु परयो हों नाथ, निकारो बाँह पकर मेरी।।

ॐ ह्रीं श्रीकुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री अरनाथ अर्घ्य

शुचि स्वच्छ पटीर, गन्धगहीर, तन्दुलशीर पुष्प चरु।
वर दीप धूप, आनन्दरूप, लै फल भूप अर्घ्य करू।।
प्रभु दीनदयाल अरिकुलकाल, विरद विशाल सुकुमालम्।
हरि मम जजाल, हे जगपाल, अरगुनमाल वरमालम्।।

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री मल्लिनाथ अर्घ्य

जलफल अरघ मिलायगाय गुन पूजो भगति बढाई।
शिवपदराज हेत हे श्रीधर, शरनगहो मै आई।।
राग द्वेष मद मोह हरन को, तुम ही हो वरवीरा।
याते शरन गही जगपतिजी, वेग हरो भव पीरा।।

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथ-जिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि०।

श्री मुनिसुव्रतनाथ अर्घ्य

जलगन्ध आदि मिलाय आठों, दरब अरघ सजों वरो।
पूजों चरनरज भगत जुत, जातें जगत सागर तरों।।
शिवसाथ करत सनाथ सुव्रतनाथ मुनिगुनमाल है।
तुम चरन आनन्दभरन तारन, तरन विरद विशाल है।।

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथ-जिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं।

श्री नमिनाथ अर्घ्य

जल फलादि मिलाय मनोहरं, अरघ धारय ही भय भव हर।
जजतु हों नमि के गुन गाय के, जुगपदाम्बुज प्रीति लगाय कें।।

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री नेमिनाथ अर्घ्य

जलफल अर्घ्य बनाय गाय गुन, रतन थाल भरिये सुखदान।
अष्टकर्म के नाशक प्रभु को, पूजूँ निजगुणदायक जान।।

बाल ब्रह्मचारी जगतारी, नेमिश्वर जिनराज महान।
मै नित ध्यान करूँ प्रभु तेरा, मोकूँ दीजे अविचल थान।।

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री पार्श्वनाथ अर्घ्य

सघर्षों में उपसर्गों में तुमने समता का भाव धरा।
आदर्श तुम्हारा अमृत बन भक्तो के जीवन में बिखरा।।
मैं अष्टद्रव्य से पूजा का शुभथाल सजाकर लाया हूँ।
जो पदवी तुमने पाई है मैं भी उस पर ललचाया हूँ।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री महावीर अर्घ्य

जलफल वसु सजि हिम थार, तन मन मोद धरो।
गुणगाऊँ भवदधितार, पूजत पाप हरों।।
श्री वीर महा अतिवीर सन्मति नायक हो।
जय वर्द्धमान गुणधीर सन्मतिदायक हो।।

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमान-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री बाहुबलि अर्घ्य

वसु विधि के वश वसुधा सब ही परवश अति दुख पावे,
तिहि दुख दूर करन को भविजन अर्घ्य जिनाग्र चढावे।
परम पूज्य वीराधिवीर जिन बाहुबलि बलधारी,
तिनके चरण कमल को नित प्रति धोक त्रिकाल हमारी।।

ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलि-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

सोलहकारण अर्घ्य

जल फल आठों दरब चढाय, द्यानत वरत करों मनलाय।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो।।
दरश विशुद्ध भावना भाय, सोलह तीर्थंकर पद पाय।

परम गुरुहो, जय जय नाथ परम गुरु हो।।

(श्री जिनपूजा जग में सार, भवदधिपार उतारनहार, परम०)

ॐ ह्रीं दर्शन-विशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो अर्घ्यं निव० स्वाहा

रत्नत्रय अर्घ्य

आठ दरब निरधार, उत्तम सों उत्तम लिये।
जनम-रोग निरवार, सम्यक् रत्नत्रय भजूँ।।

ॐ ह्रीं सम्यक्-रत्नत्रयाय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं नि० स्वाहा।।

पञ्चमेरु का अर्घ्य

आठदरब मय अरघ बनाय, 'द्यानत' पूजो श्री जिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय।
पाँचो मेरु असी जिनधाम, सब प्रतिमा को करो प्रणाम।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय।।
(अकृत्रिम जिनवर जिनथान, पूजत होत पाप की हान महा)

ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्ध्यशीति-जिनचैत्यालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो-अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नन्दीश्वरद्वीप का अर्घ्य

यह अरघ कियो निज-हेत, तुमको अरपतु हों।
'द्यानत' कीज्यो शिव-खेत, भूमि समरपतु हों।।
नन्दीश्वर श्री जिनधाम, बावन पूज करों।
वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनन्द भाव धरों।।

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशत्-जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्धचक्र अर्घ्य

निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन धवल अक्षययुत अनी।
शुभ पुष्प मधुकर नित रमें, चरुप्रचुर स्वाद सुविधि घनी।।
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले।
करि अर्घ्य सिद्ध समूह पूजित कर्मअरि सब दलमले।।

ते क्रमावर्त नशाय युगपत ज्ञान निर्मल रूप हैं।
दुख जन्म टार अपार गुण सूक्षम सरूप अनूप है।।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य अदूज शिवकमलापती।
मुनि ध्येय सेय अमेय चहुँगुण, ज्ञेय द्यो हम शुभमती।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनाहत-पराक्रमाय सकल-कर्म-विमुक्ताय श्री-सिद्धचक्राधिपतये सम्मत्त-णाण-दसण-वीर्य-सुहम-अवग्गहण-अगुरुलघु-अव्वावाहं अष्टगुण-संयुक्ताय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

दशलक्षण का अर्घ्य

आठो दरव सवार, 'द्यानत' अधिक उछाह सों।
भव-आताप निवार, दस-लक्षण पूजों सदा।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नवदेवता अर्घ्य

मध्ये कर्णिकमर्हदार्य-मनघ बाह्येष्ट-पत्रोदरे,
सिद्धान् सूरिवराश्च पाठक-गुरुन् साधूश्च दिक्पत्रगान्।
सद्धर्मागम-चैत्यचैत्यनिलयान् कोणस्थ-दिक्पत्रगान्,
भक्त्या सर्वसुरासुरेन्द्र-महितान् तानष्टधेष्ट्या यजे।।

ॐ ह्रीं अर्हदादि-नवदेवेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

विनायक यन्त्र अर्घ्य

सुवरण के थाल भराये, शुचि आठों द्रव्य मिलाये।
गुरुपञ्च परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई।।

ॐ ह्रीं अर्हं मंगलोत्तम-शरण्यभूतेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सरस्वती अर्घ्य

जल चन्दन अक्षत, फूल चरु, अरुदीप धूप अति फल लावै।
पूजा को ठानत, जो तुम जानत, सो नर'द्यानत' सुख पावै।

तीर्थंकर की ध्वनि, गणधर ने सुनी, अग रचे चुनि ज्ञान मई
सो जिनवर वानी, शिवसुखदानी, त्रिभवुन मानी पूज्य भई।।

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्तर्षि अर्घ्य

जल गन्ध अक्षत पुष्प चरुवर दीप धूप सु लावना।
फल ललित आठों द्रव्य मिश्रित अर्घ्य कीजे पावना।।
मन्वादि चारण ऋद्धि धारी मुनिन की पूजा करूँ।
ता करें पातक हटे सारे, सकल आनन्द विस्तरूँ।।

ॐ ह्रीं श्रीमन्वादिचारणसप्तर्षिभ्यो अर्घ्यं नि० स्वाहा।

निर्वाणक्षेत्र अर्घ्य

जल गन्ध अक्षत पुष्प चरुवर दीप धूपायन धरो,
द्यानत करो निर्भय जगत सों, जोरकर विनती करो।
सम्मेदगढ गिरनार चम्पा, पावापुरि कैलाश को,
पूजो सदा चौबीस जिन, निर्वाण भूमि निवास को।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं नि० स्वाहा।

समुच्चय महार्घ्य

मै देव श्री अर्हन्त पूजूँ सिद्ध पूजूँ चाव सो।
आचार्य श्री उवझाय पूजूँ साधु पूजूँ भाव सो।।
अर्हन्त-भाषित बैन पूजूँ द्वादशाग रची गनी।
पूजूँ दिगम्बर गुरुचरन शिव हेतु सब आशा हनी।।
सर्वज्ञ भाषित धर्म दशविधि दया-मय पूजूँ सदा।
जजूँ भावना षोडश रत्नत्रय, जा बिना शिव नहीं कदा।।
त्रैलोक्य के कृत्रिम अकृत्रिम चैत्य चैत्यालय जजूँ।
पञ्चमेरु नन्दीश्वर जिनालय खचर सुर पूजित भजूँ।।

कैलाश श्रीसम्मेद श्रीगिरनार गिरि पूजूँ सदा।
चम्पापुरी पावापुरी पुनि और तीरथ सर्वदा।।
चौबीस श्री जिनराज पूजूँ बीस क्षेत्र विदेह के।
नामावली इक सहस-वसु जय होय पति शिवगेह के।।

दोहा- जल गन्धाक्षत पुष्प चरु दीप धूप फल लाय।
सर्व पूज्य पद पूज हूँ बहु विधि भक्ति बढाय।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुभ्यो द्वादशांग-जिनागमेभ्यो उत्तमक्षमादि-दशलक्षण-धर्मेभ्यो दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारणेभ्यो सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो त्रिलोकस्थित-जिन-बिम्बेभ्यो पञ्चमेरुसम्बन्ध्यसीतिचैत्यालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो नन्दीश्वरद्वीप-स्थित-द्विपञ्चाशत्-जिनालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो श्री-सम्मेदाष्टापदूर्जयन्तगिरि - चम्पापावापुरादि - सिद्धक्षेत्रेभ्यो सातिशयक्षेत्रेभ्यो विद्यमानविंशति-तीर्थंकरेभ्यो अष्टाधिक-सहस्र-जिननामभ्यो श्रीवृषभादि-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जलादि- महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शान्ति पाठ

दोधक छंद

शान्तिनाथ मुख शशि उनहारी, शील-गुणव्रत-सयमधारी।।
लखन एक सौ आठ विराजे, निरखत नयन कमलदल लाजे।।
पञ्चम चक्रवर्तीपद धारी, सोलम तीर्थंकर सुखकारी।।
इन्द्र नरेन्द्र पूज्य जिन नायक, नमो शान्तिहित शान्ति विधायक।।
दिव्य विटप पहुपन की वरषा, दुन्दुभि आसन वाणी सरसा।।
छत्र चमर भामण्डल भारी, ये तुव प्रातिहार्य मनहारी।।
शान्ति जिनेश शान्ति सुखदाई, जगत्पूज्य पूजौं शिर नाई।।
परम शान्ति दीजे हम सबको, पढ़ैं तिन्हें पुनि चार सघ को।।

बसन्ततिलका

पूजै जिन्हे मुकुट हार किरीट लाके,
इन्द्रादि देव अरु पूज्य पदाब्ज जाके।।

सो शान्तिनाथ वरवश जगतप्रदीप,
मेरे लिये करहि शान्ति सदा अनूप।।

इन्द्रवज्रा

सम्पूजकों को प्रतिपालकों, को यतीनकों को यतिनायकों को।
राजा प्रजा राष्ट्र सुदेशको ले, कीजै सुखी हे जिन शान्तिको दे।

स्रग्धरा छन्द

होवै सारी प्रजा को, सुख बलयुत हो, धर्मधारी नरेशा।
होवै वर्षा समय पै, तिलभर न रहै, व्याधियों का अन्देशा।।
होवै चोरी न जारी, सुसमय बरतै हो न, दुष्काल भारी।
सारे ही देश धारैं, जिनवर-वृषको जो, सदा सौख्यकारी।।

दोहा- घातिकर्म जिन नाश करि, पायो केवलराज।
शान्ति करो सब जगत में, वृषभादिक जिनराज।।

मन्दाक्रान्ता

शास्त्रो का हो, पठन सुखदा, लाभ सत्सगति का।
सद्वृत्तो का, सुजस कहके, दोष ढाकूँ सभी का।।
बोलूँ प्यारे, वचन हित के, आपका रूप ध्याऊँ।
तो लौं सेऊँ, चरण जिनके, मोक्ष जौ लौं न पाऊँ।।

आर्या

तव पद मेरे हिय में, मम हिय तेरे पुनीत चरणों मे।
तब लौ लीन रहौ प्रभु, जब लौं न पाया मुक्ति पद मैंने।।
अक्षर पद मात्रा से दूषित, सो कछु कहा गया मुझसे।
क्षमा करो प्रभु सो सब करुणा करि, पुनि छुडाहु भवदुख से।।
हे जगबन्धु जिनेश्वर!, पाऊँ तव चरण शरण बलिहारी।
मरण समाधि सुदुर्लभ, कर्मों का क्षय हो सुबोध सुखकारी।।

शान्तिभक्तिंसमाधिभक्तिच पठित्त्वा कायोत्सर्गं करोम्यहम् पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

विसर्जन-पाठ

बिन जाने व जानके रही टूट जो कोय।
तुम प्रसादतै परम गुरु सो सब पूरन होय।।1।।
पूजन विधि जानूँ नहीं नहि जानूँ आह्वान।
और विसर्जन हूँ नही क्षमा करहु भगवान।।2।।
मन्त्रहीन धनहीन हूँ क्रियाहीन जिनदेव।
क्षमा करहु राखहु मुझे देहु चरणकी सेव।।3।।
श्रद्धा से आराध्य पद, पूजे भक्ति प्रमान।
पूजा विसर्जन मै करूँ, सदा करो कल्याण।।4।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा अर्हदादिपरमेष्ठिनः पूजाविधि विसर्जनं करोमि अपराध-क्षमापण भवतु जःजःजः।

(उक्त मत्र पढकर ठोने पर पुष्प क्षेपण करें)

(निम्नाकित छन्द पढते हुये गवासन मुद्रा से अर्हंत भगवान को नमोऽस्तु करके आशीर्वाद लेते हुए कायोत्सर्ग पूर्वक कार्य पूर्ण करें।)

श्री जिनवर जी की आशिका, लीजै शीश चढाय।
भव भव के पातक कटै, दु ख दूर हो जाय।।

विसर्जन

पूजा का समापन ही विसर्जन है। पूर्व में पूजन का सकल्प पचमहागुरू भक्ति पूर्वक किया था अन्त में शाति एव समाधि भक्ति पूर्वक पूजन को पूर्ण करते हैं। पूजन अनुष्ठान क्रिया में होने वाली त्रुटियों, असावधानियों। अज्ञानता के लिए प्रभु चरणों में क्षमायाचना करके मत्र पूर्वक ठोने पर पुष्प क्षेपण करके पूजन के सकल्प का विसर्जन क्रिया करना चाहिए।

(विधान के पूर्व सिद्धभक्ति एव विसर्जन के पश्चात् शान्ति भक्ति पढें)

सिद्धभक्ति

असरीरा जीवघणा उवजुत्ता दसणे य णाणे य।
सायार-मणायारा लक्खण-मेय तु सिद्धाण।।1।।
मूलोत्तर-पयडीण बधोदय-सत्त-कम्मउम्मुक्का।
मगल-भूदा सिद्धा अट्ठगुणातीद-ससारा।।2।।
अट्ठविह-कम्म वियला सीदीभूदा णिरजणा णिच्चा।
अट्ठ-गुणा किदकिच्चा लोयग्ग-णिवासिणो सिद्धा।।3।।
सिद्धा णट्ठट्ठमला विसुद्ध-बुद्धी य लद्धि-सब्भावा।
तिहुअण-सिर-सेहरया पसियतु भडारया सव्वे।।4।।
गमणागमण-विमुक्के वियडिय-कम्म-पयडि-सघारा।
सासय-सुह-सपत्ते ते सिद्धा वदिमो णिच्च।।5।।
जय-मगल-भूदाण विमलाण णाण-दसणमयाण।
तइलोइ-सेहराण णमो सदा सव्व-सिद्धाण।।6।।
सम्मत्त-णाण-दसण-वीरिय-सुहुम तहेव अवग्गहण।
अगुरु-लघु अव्वावाह अट्ठ-गुणा होति सिद्धाण।।7।।
तव-सिद्धे णय-सिद्धे सजम-सिद्धे चरित्त-सिद्धे य।
णाणम्मि दसणम्मि य सिद्धे सिरसा णमस्सामि।।8।।

इच्छामि भंते। सिद्ध-भत्ति काओसग्गो कओ-तस्सालोचेओ, सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं अट्ठविह-कम्मविप्प-मुक्काणं, अट्ठ-गुण-सपण्णाणं, उड्ढ-लोय-मत्थयम्मि पइट्ठियाणं तवसिद्धाणं णयसिद्धाणं संजमसिद्धाणं चरित्तसिद्धाणं अतीदाणागद-वड्ढमाण कालत्तयसिद्धाणं सव्वसिद्धाणं सया णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइगमणं समाहि-मरणं जिणगुण-सम्पत्ति होउ मज्झं। इति पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं कायोत्सर्गं करोमि।

शान्तिभक्ति

न स्नेहाच्छरण प्रयान्ति भगवन् पादद्वय ते प्रजा ।
हेतुस्तत्र विचित्र दु खनिचय ससार-घोरार्णव ।
अत्यन्त-स्फुरदुग्र-रश्मिनिकर-व्याकीर्ण-भूमण्डलो
ग्रैष्म कारयतीन्दुपाद-सलिलच्छायानुराग रवि ।।1।।
क्रुद्धाशीर्विष-दष्ट-दुर्जय-विष-ज्वालावली-विक्रमो
विद्या-भेषज-मन्त्र-तोय-हवनै-र्याति प्रशान्ति यथा।
तद्वत्ते चरणारुणाम्बुज-युग-स्तोत्रोन्मुखाना नृणा।
विघ्ना काय-विनायकाश्च सहसा शाम्यन्त्यहो विस्मय ।।2।।
सन्तप्तोत्तम-काञ्चन-क्षितिधर-श्री-स्पर्द्धि-गौरद्युते।
पुसा त्वच्चरण-प्रणाम-करणात्पीडा प्रयान्ति क्षयम्।
उद्यद्-भास्कर-विस्फुरत्कर-शतव्याघात-निष्कासिता ।
नाना देहि विलोचन-द्युतिहरा शीघ्र यथा शर्वरी।।3।।
त्रैलोक्येश्वर-भगलब्धविजयादत्यन्त-रौद्रात्मकान्।
नाना जन्मशतान्तरेषु पुरतो जीवस्य ससारिण ।।
को वा प्रस्खलतीह केन विधिना कालोग्र-दावानलान्-
न स्याच्चेत्तव पादपद्म-युगलस्तुत्यापगावारणम्।।4।।
लोकालोकनिरन्तर-प्रवितत-ज्ञानैकमूर्ते विभो।
नानारत्न-पिनद्ध-दण्डरुचिर-श्वेतात-पत्रत्रयम्।
त्वत्पादद्वय-पूतगीत-रवत शीघ्र द्रवन्त्यामया
दर्पाध्मात-मृगेन्द्र भीमनिनदाद्वन्या यथा कुञ्जरा ।।5।।
दिव्यस्त्री-नयनाभिराम-विपुल-श्रीमेरु-चूडामणे
भास्वबाल-दिवाकर-द्युतिहर प्राणीष्ट-भामण्डलम्।
अव्याबाध-मचिन्त्यसार-मतुल त्यक्तोपम शाश्वतम्।
सौख्य त्वच्चरणारविन्द-युगल स्तुत्यैव सम्प्राप्यते।।6।।

यावन्नोदयते प्रभा-परिकर श्रीभास्करो-भासय-
स्तावद्धारयतीह पकज-वन निद्राति-भारश्रमम्।
यावत्त्वच्चणरद्वयस्य भगवन्नस्यात्प्रसादोदय-
स्तावज्जीव-निकाय एष वहति प्रायेण पाप महत्।।7।।
शान्ति शान्तिजिनेन्द्र शान्तमनसस्-त्वत्पाद-पद्माश्र्यात्,
सम्प्राप्ता पृथिवी-तलेषु बहव शान्त्यर्थिन प्राणिन ।
कारुण्यान्मम भाक्तिकस्य च विभो दृष्टि प्रसन्ना कुरु।
त्वत्पादद्वय-दैवतस्य गदत शान्त्यष्टक भक्तित ।।8।।
शान्तिजिन शशि-निर्मल-वक्त्र शील-गुणव्रत-सयम-पात्र।
अष्ट-शतार्चित-लक्षण-गात्र, नौमि जिनोत्तम-मम्बुज-नेत्रम्।।9।।
पञ्चममीप्सित-चक्रधराणा, पूजितमिन्द्र-नरेन्द्र गणैश्च।
शान्तिकर गणशान्तिमभीप्सु षोडश-तीर्थकर प्रणमामि।।10।।
दिव्य-तरु सुरपुष्प-सुवृष्टिर्दुन्दुभिरासन-योजन-घोषौ।
आतप-वारण-चामरयुग्मे यस्य विभाति च मण्डल-तेज ।।11।।
त जगदर्चित-शान्तिजिनेन्द्र शान्तिकर शिरसा प्रणमामि।
सर्वगणाय तु यच्छतु शान्ति मह्यमर पठते परमा च।।12।।
येऽभ्यर्चिता मुकुट-कुण्डल-हार-रत्नै शक्रादिभि सुरगणै स्तुत-पादपद्मा ।
ते मे जिना प्रवर-वश-जगत्प्रदीपा तीर्थंकरा सतत-शान्तिकरा भवन्तु।।13।।
सम्पूजकाना प्रतिपालकाना यतीन्द्र-सामान्य-तपोधनाना।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञ , करोतु शान्ति भगवज्जिनेन्द्र ।
क्षेम सर्वप्रजाना प्रभवतु बलवान्धार्मिको भूमिपाल ।
काले काले च सम्यग्वर्षतु मघवा व्याधयो यान्तुनाशम्।।14।।
दुर्भिक्ष चौरमारी क्षणमपि जगता मा स्म भूज्जीवलोके।
जैनेन्द्र धर्मचक्र प्रभवतु सतत सर्वसौख्य-प्रदायि।।15।।

तद्-द्रव्यमव्ययमुदेतु शुभ स देश सन्तन्यता प्रतपता सतत स काल.।
भाव स नन्दतु सदा यदनुग्रहेण रत्नत्रय प्रतपतीह मुमुक्षु-वर्गे।।16।।
प्रध्वस्त-घातिकर्माण केवलज्ञान-भास्करा ।
कुर्वन्तु जगता शान्ति वृषभाद्या-जिनेश्वरा ।।17।।

इच्छामि भंते शान्तिभत्ति-काओसग्गो कओ तस्सालोचओ पञ्चमहाकल्लाण-सम्पण्णाणं अट्ठ-महापाडिहेर-सहियाणं चउतीसातिसय- विसेस-संजुत्ताणं बत्तीस-देवेन्द-मणिमय-मउड-मत्थय-महियाणं बलदेव-वासुदेव-चक्कहर-रिसिमुणि-जदि-अणगारोवगूढाणं थुइसय-सहस्स-णिलयाणं उसहाइवीर-पच्छिम मंगल-महापुरिसाणं सया-णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइ-गमण समाहि-मरणं जिणगुण-सम्पत्ति होउ मज्झ। (कायोत्सर्गं करोम्यहम्)

मण्डल विसर्जन

जगत शान्तिविवर्धनमहसा प्रलयमस्तु जिनस्तवनेन मे (ते)।
सुकृतबुद्धिरल क्षमयायुतो जिनवृषे हृदये मम (तव) वर्तताम्।।
मोहध्वान्तविदारण विशद विश्वोद्भासि दीप्तिश्रियम्।
सन्मार्गप्रतिभासक विबुधसन्दोहामृतापादकम्।
श्रीपाद जिनचन्द्रशान्तिशरण सद्भक्तिमानेऽपि ते।
भूयस्तापहरस्य देव भवतो भूयात्पुनर्दर्शनम्।।
मगलार्थं समाहूता विसर्ज्याखिलदेवता ।
विसर्जनाख्यमन्त्रेण वितीर्य कुसुमाञ्जलि।।

ॐ ह्रीं अस्मिन् बिम्बप्रतिष्ठामहोत्सवे (कर्मणि) आहूयमान-देवगणाः स्वस्थानं गच्छन्तु अपराधक्षमापणं भवतु।

रविवार व्रत उद्यापन

वीतराग सर्वज्ञ हितकर, निष्कलक निश्चल निष्काम।
रविव्रत पूजा रचा रहा हूँ, करके शत शत वार प्रणाम।।
गन्धकुटी की सर्वप्रथम यह, फल दायक पूजन प्रक्षाल।
प्रस्तुत परम कोष्टगत पूजा, देवोपम वन्दित चिर काल।।
पूज्य जिनेश्वर पार्श्वनाथ का, करके विधि पूर्वक आह्वान।
भक्ति भावनाओं से प्रेरित, कर जिन प्रतिमा का श्रद्धान।।
सस्थापन स्वस्तिक मण्डप पर, रविव्रत विधि विधान अनुसार।
भक्तों की पूजा स्वीकारो, हे दयाल तत्काल पधार।।

स्थापना

उत्तम सामग्री सचित कर, चुनकर लाया विविध प्रकार।
जिनवर पूजा को प्रस्तुत हूँ, मनवचकाय त्रियोग सवार।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानं।
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापन।
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरण।

अथ-अष्टकम्

निर्मल स्वच्छ धवल शीतल जल, हीरक आभा सा द्युतिमान।
स्वर्णकलश भर तुम्हे चढाने, लाया हूँ हे दयानिधान।।
कल्पवृक्ष वा कामधेनु सम, दीजे मनवाछित वरदान।
यह रविव्रत पूजा स्वीकारें, जिनवर पार्श्वनाथ भगवान।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।

मलयागिरि चदन से सुरभित, केशर कुकुमादि अनमोल।।
तपन-शमन के हेतु चढाने, आया मन की ग्रन्थी खोल।
कल्पवृक्ष वा कामधेनु सम, दीजे मनवाछित वरदान।
यह रविव्रत पूजा स्वीकारें, जिनवर पार्श्वनाथ भगवान।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय संसारताप-विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।

निर्मल श्वेत समुद्र फेन सम, चन्द्र किरण सम आभावान।
शोभनीय उज्ज्वल अखण्ड यह, अक्षत लाया भक्ति प्रमान।कल्प ।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।।

ओस कणों से दीप्तिमान शुभ, पारिजात पुष्पों के कुज।
लाया हूँ केतकी मालती, स्वर्ण मयी चपा के पुज।कल्प ।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।

विविध भाँति के घेवर बाबर, व्यजन शुद्ध सरस उपयोग।
सजा सजाकर स्वर्ण पात्र में, लाया हूँ मिष्ठान्न मनोग।कल्प ।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा।।

घृत विशुद्ध भरकर महिमामय, रत्न जडित सुद्योत प्रदीप।
निराबाध लौ से अभिमडित, लेकर आया दीप समीप।कल्प ।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।

कर्मधूम्र से ओतप्रोत मन, इसमें भरती दिव्य प्रकाश।
धूप सुगन्धित नभ को करती, करती अष्टकर्म का नाश।।कल्प ।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्म-विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री फल लौग सुपारी किसमिस पिस्ता चिलगोजा बादाम।
इनका सुन्दर थाल सजोकर, लाया चरणो मे यश धाम।
कल्पवृक्ष वा कामधेनु सम, दीजे मनवाछित वरदान।
यह रविव्रत पूजा स्वीकारे, जिनवर पार्श्वनाथ भगवान।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफल-प्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

रागद्वेष इन्द्रिय सुख विजयी, निष्कामी चारित्र-प्रधान।
आत्म झरोखे द्वारा जिनकी, मुनिगण ने पाई पहिचान।।
जल चन्दन अक्षत नैवेद्य, पुष्प दीप धूप फल लाय।
कनक थाल धर इन्हें चढाने, आया निर्मल अर्घ्य बनाय।।कल्प ।

ॐ ह्रीं श्रपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घपद-प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

रविवारव्रतोद्यापनस्य प्रथमपूजा

मास आषाढ पक्ष उजयार, अनशन करें नियम अनुसार।
मगलमयी दिवस रविवार, रविव्रत पूजन सुख दातार।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य प्रथमवर्षे प्रथमरविवासरे क्षायिकज्ञानलब्धि-विभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दूजा शुभ रवि परम उदार, सदाचार युत अनशन धार।
मगलमयी दिवस रविवार, रविव्रत पूजन सुख दातार।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य प्रथमवर्षे द्वितीयरविवासरे क्षायिक-दर्शनलब्धि विभूषिताय श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

तीजा रवि उपवास महान, वाछित फल दाता सुख खान।
मगलमयी दिवस रविवार, रविव्रत पूजन सुख दातार।।

ॐ ह्री रविवारव्रतस्य प्रथमवर्षे तृतीयरविवासरे क्षायिक सम्यक्त्वलब्धि-विभूषिताय श्रीपार्श्वनार्थजिनेन्द्राय अर्घ्यं स्वाहा।

चौथा नियमित रवि उपवास, पूर्ण करे मन का अभिलाष।
मगलमयी दिवस रविवार, रविव्रत पूजन सुख दातार।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य प्रथमवर्षे चतुर्थरविवासरे क्षायिकचारित्र-लब्धि-विभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पचम अनशन सुख भण्डार, दाता धन धान्यादि अपार।
मगलमयी दिवस रविवार, रविव्रत पूजन सुख दातार।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य प्रथमवर्षे पञ्चमरविवासरे क्षायिकदानलब्धि-विभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छठवाँ रवि उपवास उदार, खोले स्वर्ग मुक्ति के द्वार।
मगलमयी दिवस रविवार, रविव्रत पूजन सुख दातार।।

ॐ ह्री रविवारव्रतस्य प्रथमवर्षे षष्ठरविवासरे क्षायिकलाभलब्धि विभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्तम रविव्रत गुण गम्भीर, काटे अष्टकर्म जजीर।
मगलमयी दिवस रविवार, रविव्रत पूजन सुख दातार।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य प्रथमवर्षे सप्तमरविवासरे क्षायिकभोगलब्धि विभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम रवि महाव्रत नाम, ऋद्धि सिद्धि दाता अभिराम।
मगलमयी दिवस रविवार, रविव्रत पूजन सुख दातार।।

ॐ ह्री रविवारव्रतस्य प्रथमवर्षे अष्टमरविवासरे क्षायिकोप-भोगलब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि स्वाहा।

नवमा रविव्रत भानु समान, उत्तम सुखदाता वरदान।
मगलमयी दिवस रविवार, रविव्रत पूजन सुख दातार।।

ॐ ह्री रविवारव्रतस्य प्रथमवर्षे नवमरविवासरे क्षायिकवीर्यलब्धि विभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मनवचकाय त्रियोग सभार, यह उपवास करें नव वार।
मगलमयी दिवस रविवार, रविव्रत पूजन सुख दातार।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य प्रथमवर्षे नवसु आदित्यवारेषु क्षायिकलब्धि-महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रविवारव्रतोद्यापनस्य द्वितीयपूजा

दूजे वर्ष आठ शुक्ल में, इस प्रकार करिये रविवार।
माड समेत प्रथम रविव्रत मे, चावल का ले काजी आहार।
इस प्रकार रविव्रत महान यह भक्ति भाव से करे विशाल।
पूरी मनोकामनाएँ हों, यश वैभव से रहे निहाल।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य द्वितीयवर्षे प्रथमरविवासरे क्षायिकज्ञान-लब्धिविभूषिताय श्रीपाश्र्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

दूजा वर्ष दूसरा रविव्रत, मनवाछित फल का दातार।
इसमें सुख दायक फल दायक, नियम सहित काजी आहार।इस ।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य द्वितीयवर्षे द्वितीयरविवासरे क्षायिकदर्शन-लब्धिविभूषिताय श्रीपाश्र्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि स्वाहा।

दूजे वर्ष तीसरा रविव्रत, मन से पालन करे पुनीत।
निर्मल काजी भोजन लेते, जीवन हो सुख पूर्ण व्यतीत।इम ।

ॐ ह्री रविवारव्रतस्य द्वितीयवर्षे तृतीयरविवासरे क्षायिक-सम्यक्त्व-लब्धिविभूषिताय श्रीपाश्र्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं स्वाहा।

वर्ष दूसरा चौथा रविव्रत, महिमामय मगल का कोष।
सीमित काजी भोजन द्वारा, मन में भरा रखे सतोष।इस ।

ॐ ह्री रविवारव्रतस्य द्वितीयवर्षे चतुर्थरविवासरे क्षायिकचारित्र-लब्धिविभूतिषताय श्रीपाश्र्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि स्वाहा।

दूजे वर्ष पॉचवॉ रविदिन, सकट मोचन सुखद महान।
इसमे सीमित काजी भोजन, सोलह स्वर्गों का सोपान।इस ।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य द्वितीयवर्षे पञ्चमरविवासरे क्षायिकदान-लब्धिविभूषिताय श्रीपाश्र्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

वर्ष दूसरा छटवाँ रविदिन विघ्न विनाशक मगलकार।
इस व्रत में असीम सुखकारी, माड़ सहित काजी का आहार।इस. ।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य द्वितीयवर्षषष्ठरविवासरे क्षायिक-लाभ-लब्धिविभूषिताय श्रीपाश्र्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

दूजा वर्ष सातवाँ रविदिन, धर्म पुण्य-सचय का द्वार।
एकाशन काजी का भोजन, रसना इन्द्रिय का परिहार।इस ।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य द्वितीयवर्षे सप्तमरविवासरे क्षायिकभोग-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्ष दूसरा अष्टम रविदिन, सम्यग्दर्शन का निष्कर्ष।
काजिक भोजन द्वारा पाले, रविव्रत का आदर्श सहर्ष।इस ।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य द्वितीयवर्षे अष्टमरविवासरे क्षायिकोप-भोगलब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

वर्ष दूसरा नवमा रविव्रत, जो शिव मदिर का आधार।
विधि पूर्वक इसको जो पाले, हो सकट सागर से पार।इस ।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य द्वितीयवर्षे नवमरविवासरे क्षायिकवीर्य-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

द्वितिय वर्ष रविवार व्रतों का, इसके मगलमय परिणाम।
पूर्ण करे श्रद्धा समेत ले, पार्श्वनाथ जिनवर का नाम।इस ।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य द्वितीयवर्षे नवसु आदित्यवारेषु नवक्षायिक-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय महार्घ्यं नि. स्वाहा।

रविवारव्रतोद्यापनस्य तृतीय पूजा

तीजे वर्ष प्रथम रवि नाम, मास आषाढ शुक्ल सुखधाम।
यह व्रत करे सविधि बडभाग, पावे शिव कामिनी अनुराग।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य तृतीयवर्षे प्रथमरविवासरे क्षायिकज्ञान-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

तीजे वर्ष द्वितिय रविवार, सित आषाढ पक्ष अवधार।
यह व्रत करे सविधि बडभाग पावे शिव कामिनि अनुराग।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य तृतीयवर्षे द्वितीयरविवासरे क्षायिक-दर्शनलब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

तीजे वर्ष तृतीय रवि पाल, मानव जीवन करे निहाल।
यह व्रत करे सविधि बडभाग, पावे शिव कामिनि अनुराग।।
ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य तृतीयवर्षे तृतीयरविवासरे क्षायिकसम्यक्त्व-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
तीजे वर्ष तुरिय रवि करे, त्याग भावना मन मे धरे।
यह व्रत करे सविधि बडभाग, पावे शिव कामिनि अनुराग।।
ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य तृतीयवर्षे चतुर्थरविवासरे क्षायिकचारित्र-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
तृनिय वर्ष पचम रविवार, करे अनुज तन का उद्धार।
यह व्रत करे सविधि बडभाग, पावे शिव कामिनि अनुराग।।
ॐ ही रविवारव्रतस्य तृतीयवर्षे पचमरविवासरे क्षायिकदान-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि स्वाहा।
तीजे वर्ष छट्ठो रविवार, जीवन सफल करे व्रतधार।
यह व्रत करे सविधि बडभाग, पावे शिव कामिनि अनुराग।।
ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य तृतीयवर्षे षष्ठरविवासरे क्षायिकलाभ-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि स्वाहा।
तृतीय वर्ष सप्तम रविवार, रिद्धि से रविव्रत धरे उदार।
यह व्रत करे सविधि बडभाग, पावे शिव कामिनि अनुराग।।
ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य तृतीयवर्षे सप्तमरविवासरे क्षायिकभोग-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।
तृतीय वर्ष अष्टम रविवार, व्रत को करे नियम अनुसार।
यह व्रत करे सविधि बडभाग, पावे शिव कामिनि अनुराग।।
ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य तृतीयवर्षे अष्टमरविवासरे क्षायिकोप-भोगलब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

तीजे वर्ष नवम रविमीत, व्रतपूर्वक दिन करे व्यतीत।
यह व्रत करे सविधि बडभाग, पावे शिव कामिनि अनुराग।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य तृतीयवर्षे नवमरविवासरे क्षायिकवीर्य-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

वर्ष तीसरा रविव्रत धरे, बिना नमक एकाशन करें।
यह व्रत करें सविधि बडभाग, पावे शिव कामिनि अनुराग।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य तृतीयवर्षे नवसु आदित्यवारेसु नवक्षायिक-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय महार्घ्यं नि. स्वाहा।

रविवारव्रतोद्यापनस्य चतुर्थ पूजा

वर्ष चौथा पक्ष सित, आषाढ से व्रत कीजिये।
एक चाटुक-प्रमित हर, रविवार भोजन लीजिये।।
एक चाटुक भोज का, इसमे विशेष विधान है।
पुण्य पुष्पो से भरा, रविवार व्रत उद्यान है।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य चतुर्थवर्षे प्रथमरविवासरे क्षायिकज्ञान-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि स्वाहा।

वर्ष चौथे मे नियम से, दूसरा रवि धारिये।
सविधि ऊनोदर करे सब, निर्जरा विस्तारिये।एक ।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य चतुर्थवर्षे द्वितीयरविवासरे क्षायिकदर्शन-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

तीसरा रविवार चौथे, वर्ष मे अपनाइये।
धारकर रविव्रत, मनोवाछित मनोरथ पाइये।एक ।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य चतुर्थवर्षे तृतीयरविवासरे क्षायिकसम्यक्त्व-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

वर्ष चौथे का तुरिय रवि, सुखों का केन्द्र है।
कीजिये श्रद्धा सहित, बनना यदि देवेन्द्र है।एक ।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य चतुर्थवर्षे चतुर्थरविवासरे क्षायिक-चारित्र-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

धन्य चौथा वर्ष पचम, रवि अकिचन से भरा।
इस सुभग रविवार व्रत की, यह विवेक परम्परा।एक ।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य चतुर्थवर्षे पञ्चमरविवासरे क्षायिकदान-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

वर्ष चौथे में छठा रवि, आवरण का मूल है।
पन्थ का हर शूल बन जाता, सुगन्धित फूल है।।एक ।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य चतुर्थवर्षे षष्ठरविवासरे क्षायिकलाभ-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि स्वाहा।

वर्ष चौथा सप्त रवि, चारित्र का भण्डार है।
कर्म घाती विघ्नहर, महिमा अनन्त अपार है।एक ।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य चतुर्थवर्षे सप्तमरविवासरे क्षायिकभोग-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं।

वर्ष चौथा आठवॉ रवि, शुभ शरण-दातार है।
डगमगाती नाव को रवि, व्रत सफल पतवार है।एक ।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य चतुर्थवर्षे अष्टमरविवासरे क्षायिकोप-भोगलब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

वर्ष चौथे में नवम रवि, व्रत जिनागम बोध है।
राग द्वेष कषाय का, इस में अपार विरोध है।एक ।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य चतुर्थवर्षे नवमरविवासरे क्षायिकवीर्य-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

तुरिया वर्षी रविव्रतों में, पार्श्व की आराधना।
मुक्ति दो आनन्द दाता, रविव्रतों की साधना।

एक चाटुक भोज का, इसमें विशेष विधान है।
पुण्य पुष्पो से भरा, रविवार व्रत उद्यान है।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य चतुर्थवर्षे नवसु आदित्यवारेषु नवक्षायिक-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय महार्घ्यं नि. स्वाहा।

रविवारव्रतोद्यापनस्य पञ्चम पूजा

सित अषाढ पञ्चम अभिराम, पहिला रविव्रत मगलधाम।
भवदधि तारक व्रत रविवार, तक्र (छाछ) सहित ओदन आहार।।

ॐ ह्री रविवारव्रते पञ्चमवर्षे प्रथमरविवासरे क्षायिकज्ञान-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

दूजो रविव्रत पञ्चम वर्ष, नासा इन्द्रिय का सघर्ष।
कर्म विदारक व्रत रविवार, तक्र सहित ओदन आहार।।

ॐ ह्री रविवारव्रते पञ्चमवर्षे द्वितीयरविवासरे क्षायिकदर्शन-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पञ्चम वर्ष तृतीय रविवार, सुख सपति दातार अपार।
जन्म सुधारक व्रत रविवार, तक्र सहित ओदन आहार।।

ॐ ह्री रविवारव्रते पञ्चमवर्षे तृतीयरविवासरे क्षायिक-सम्यक्त्व-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पञ्चम वर्ष तुरिय व्रतधार, वाछित स्वर्ग मुक्ति का द्वार।
भव विध्वसक व्रत रविवार, तक्र सहित ओदन आहार।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रते पञ्चमवर्षे चतुर्थरविवासरे क्षायिकचारित्र-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पॉच वर्ष पञ्चम व्रत शुद्ध, करे कर्म बन्धन अवरुद्ध।
पाप विदारक व्रत रविवार, तक्र सहित ओदन आहार।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रते पंचमवर्षे पञ्चमरविवासरे क्षायिकदान-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पञ्चम वर्ष सुखद सयोग, छठवाँ रविव्रत महामनोग।
धर्म प्रसारक व्रत रविवार, तक्र सहित ओदन आहार।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रते पञ्चमवर्षे षष्ठरविवासरे क्षायिकलाभ-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

सप्तम रविव्रत पञ्चम साल, मन मे धर गुण की मणिमाल।
दु खसहारक व्रत रविवार, तक्र सहित ओदन आहार।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रते पञ्चमवर्षे सप्तमरविवासरे क्षायिकभोग-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि स्वाहा।

अष्टम रविव्रत पञ्चम साल, हरे सकल जग के जजाल।
भव सहारक व्रत रविवार, तक्र सहित ओदन आहार।।

ॐ ह्री रविवारव्रते पञ्चमवर्षे अष्टमरविवासरे क्षायिकोपभोग-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

नवमा रविव्रत व्योम मयक, हरे सकल आतक कलक।
पथ निर्धारक व्रत रविवार, तक्र सहित ओदन आहार।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रते पञ्चमवर्षे नवमरविवासरे क्षायिक-वीर्य-लब्धि-विभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं।

पचम वर्ष नवम व्रत धरे, रविव्रत भक्ति भाव से करे।
सुख विस्तारक व्रत रविवार, जजो पार्श्वप्रभु को नव बार।।

ॐ ह्रीं रविवार व्रते पञ्चमवर्षे नवसु आदित्यवारेषु नवलब्धि-विभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय महार्घ्यम् नि. स्वाहा।

रविवारव्रतोद्यापनस्य षष्ठ पूजा

छठवॉ वर्ष प्रथम रविवार, मास अषाढ शुक्ल पतवार।
इसमें रविव्रत नियम प्रमान, केवल एक अन्न अनुपान।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रते षष्ठवर्षे प्रथमरविवासरे क्षायिक-दर्शन-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

छठवाँ वर्ष दुतिय रविवार, ऋद्धि सिद्धि दाता अविकार।
इसमें रविव्रत नियम प्रमान, केवल एक अन्न अनुपान।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रते षष्ठवर्षे द्वितीयरविवासरे क्षायिकज्ञान-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

छठवॉ वर्ष तृतीय रविवार, ऋद्धि सिद्धि दाता अविकार।
इसमे रविव्रत नियम प्रमान, केवल एक अन्न अनुपान।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रते षष्ठवर्षे तृतीयरविवासरे क्षायिक-सम्यक्त्व-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

चौथा रविव्रत पुण्य प्रताप, इसमे निकट न आवे पाप।
इसमे रविव्रत नियम प्रमान, केवल एक अन्न अनुपान।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रते षष्ठवर्षे चतुर्थरविवासरे क्षायिकचारित्र-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पञ्चम रविव्रत नियम धर्म निकाय, शाति तलहटी इक मन जाय।
इसमे रविव्रत नियम प्रमान, केवल एक अन्न अनुपान।।

ॐ ह्री रविवारव्रते षष्ठवर्षे पञ्चमरविवासरे क्षायिकदान-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

छठवां रवि आतम उद्योत, क्षायिक भाव कलश कलधौत।
इसमे रविव्रत नियम प्रमान, केवल एक अन्न अनुपान।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रते षष्ठवर्षे षष्ठरविवासरे क्षायिकलाभ-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

सप्तम रवि आतम हितरूप, धर्मोपार्जन के अनुरूप।
इसमे रविव्रत नियम प्रमान, केवल एक अन्न अनुपान।।

ॐ ह्री रविवारव्रते षष्ठवर्षे सप्तमरविवासरे क्षायिकभोग-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अष्टम रविव्रत अपरम्पार, मगल मयी धर्म गुजार।
इसमें रविव्रत नियम प्रमान, केवल एक अन्न अनुपान।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रते षष्ठवर्षे अष्टमरविवासरे क्षायिकोपभोगलब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

षष्ठ वर्ष व्रत नवम प्रधान, यह अनशन तप का सोपान।
इसमें रविव्रत नियम प्रमान, केवल एक अन्न अनुपान।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रते षष्ठवर्षे नवमरविवासरे क्षायिकवीर्यलब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

षष्ठवर्ष नव रवि आयाम, पार्श्व प्रभु को कोटि प्रणाम।
इसमें रविव्रत नियम प्रमान, केवल एक अन्न अनुपान।।

ॐ ह्री रविवारव्रते षष्ठवर्षे नवसु आदित्यवारेषु नवक्षायिकलब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय महार्घ्यं नि स्वाहा।

रविवारव्रतोद्यापनस्य सप्तमपूजा

सित अषाढ पहिला रविवार, करो सविधि व्रत को स्वीकार।
रविव्रत सप्तम वर्ष महान, इसमे गोरस त्याग प्रधान।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रते सप्तमवर्षे प्रथमरविवासरे क्षायिकज्ञानलब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

मगलमय द्वितीय रविवार, रखो सविधि आचार विचार।
रविव्रत सप्तमवर्षे महान, इसमे गोरस त्याग प्रधान।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रते सप्तमवर्षे द्वितीयरविवासरे क्षायिकदर्शनलब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

सुखदायक तीजा रविवार, धर्मामृत का पारावार।
रविव्रत सप्तमवर्षे महान, इसमे गोरस त्याग प्रधान।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रते सप्तमवर्षे तृतीयरविवासरे क्षायिक-सम्यक्त्वलब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

ऊनोदर चौथा रविवार, धार्मिक पुरस्कार उपहार।
रविव्रत सप्तमवर्षे महान, इसमें गोरस त्याग प्रधान।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रते सप्तमवर्षे चतुर्थरविवासरे क्षायिकचारित्र-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि स्वाहा।

जडता हर पचम रविवार, मन्य शील चारित्र सुधार।
रविव्रत सप्तमवर्षे महान, इसमे गोरस त्याग प्रधान।

ॐ ह्री रविवारव्रते सप्तमवर्षे पंचमरविवासरे क्षायिकदान-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि स्वाहा।

अधिपाकी छठवॉ रविवार, धर्म पुष्प की महक अपार।
रविव्रत सप्तमवर्षे महान, इसमे गोरस त्याग प्रधान।।

ॐ ह्री रविवारव्रते सप्तमवर्षे षष्ठरविवासरे क्षायिकलाभ-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि स्वाहा।

आकिचन सप्तम रविवार, शोधक अन्तर्बल दातार।
रविव्रत सप्तमवर्षे महान, इसमे गोरस त्याग प्रधान।।

ॐ ह्री रविवारव्रते सप्तमवर्षे सप्तमरविवासरे क्षायिकभोग-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यम् नि स्वाहा।

निराकुलित अष्टम रविवार, विधिवत कीजे अल्पाहार।
रविव्रत सप्तमवर्षे महान, इसमे गोरस त्याग प्रधान।।

ॐ ह्री रविवारव्रते सप्तमवर्षे अष्टमरविवासरे क्षायिकोपभोग-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि स्वाहा।

अनशन तप नवमा रविवार, पाप विनाशक मगलकार।
रविव्रत सप्तमवर्षे महान, इसमे गोरस त्याग प्रधान।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रते सप्तमवर्षे नवमरविवासरे क्षायिकवीर्य-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

रसना लोभ न रखिये लेश, यही पार्श्वप्रभु का सन्देश।
रविव्रत सप्तमवर्षे महान, इसमे गोरस त्याग प्रधान।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रते सप्तमवर्षे नवसुआदित्यवारेषु नवक्षायिक-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय महार्घ्यं नि. स्वाहा।

रविवारव्रतोद्यापनस्य अष्टम पूजा

अष्टम वर्ष अषाढ विशेष, महिमा मण्डित ज्ञान विशेष।
शुक्लपक्ष पहिला रविवार, इसमे नीरस ले आहार।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य अष्टमवर्षे प्रथमरविवासरे क्षायिकज्ञान-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अष्टम वर्ष दुतिय रविवार, करे विषमता का परिहार।
धर्म कर्म निशि वासर धार, इसमे नीरस ले आहार।।

ॐ ह्री रविवारव्रतस्य अष्टमवर्षे द्वितीयरविवासरे क्षायिकदर्शन-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अष्टम वर्ष तृतीय रविवार, मिथ्या दर्शन करे निवार।
धर्म कर्म निशि वासर धार, इसमे नीरस ले आहार।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य अष्टमवर्षे तृतीयरविवासरे क्षायिकसम्यक्त्व-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अष्टम वर्ष तुरिय रविवार, मिथ्या चारित करे परिहार।
धर्म कर्म निशि वासर धार, इसमे नीरस ले आहार।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य अष्टमवर्षे चतुर्थरविवासरे क्षायिकचारित्र-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं।

अष्टम वर्ष पचम रविवार, दान विघ्न पर करे प्रहार।
धर्म कर्म निशि वासर धार, इसमें नीरस ले आहार।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य अष्टमवर्षे पंचम-रविवासरे क्षायिकदान-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि स्वाहा।

अष्टम वर्ष षष्ठ रविवार, लाभ विघ्नहर्त्ता निर्धार।
धर्म कर्म निशि वासर धार, इसमें नीरस ले आहार।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य अष्टमवर्षे षष्ठरविवासरे क्षायिकलाभ-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अष्टम वर्ष सप्त रविवार, भोग विघ्न का नाशन हार।
धर्म कर्म निशि वासर धार, इसमें नीरस ले आहार।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य अष्टमवर्षे सप्तरविवासरे क्षायिकभोग-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अष्टम वर्ष अष्टम रविवार, विघ्न पुनर्भोगन हर्तार।
धर्म कर्म निशि वासर धार, इसमें नीरस ले आहार।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य अष्टमवर्षे अष्टमरविवासरे क्षायिकोपभोग-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि स्वाहा।

अष्टम वर्ष नवम रविवार, वीर्य विघ्न हर सुख सचार।
धर्म कर्म निशि वासर धार, इसमें नीरस ले आहार।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य अष्टमवर्षे नवमरविवासरे क्षायिकवीर्य-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

अष्टम वर्ष नवम रविवार, क्षायिकलब्धि सुमति दातार।
धर्म कर्म निशि वासर धार, इसमे नीरस ले आहार।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य अष्टमवर्षे नवसु आदित्यवारेषु नवक्षायिक-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय महार्घ्यं नि. स्वाहा।

रविवारव्रतोद्यापनस्य नवमपूजा

नवम वर्ष पहिला रविवार, मास अषाढ शुक्ल अविकार।
त्याग भावना मन में धरे, प्रथम परोसा भोजन करे।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य नवमवर्षे प्रथमरविवासरे क्षायिकज्ञान-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

नवम वर्ष दूजा रविवार व्रत सयम मे हृदय पखार।
दुख दायक भवसागर तरे, प्रथम परोसा भोजन करे।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य नवमवर्षे द्वितीयरविवासरे क्षायिकदर्शन-लब्धिविभूषिताय श्रीपाश्र्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

नवम वर्ष तीजा रविवार, करता स्वात्मा का उपकार।
आत्मानन्द रूप अनुसरे, प्रथम परोसा भोजन करे।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य नवमवर्षे तृतीयरविवासरे क्षायिक-सम्यक्त्व-लब्धिविभूषिताय श्रीपाश्र्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

नवम वर्ष चौथा रविवार, स्वर्ग सम्पदा का दातार।
बोध सुबोध भाव विस्तरे, प्रथम परोसा भोजन करे।।

ॐ ही रविवारव्रतस्य नवमवर्षे चतुर्थरविवासरे क्षायिकचारित्र-लब्धिविभूषिताय श्रीपाश्र्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

नवम वर्ष पचम रविवार, आत्मोत्थान स्वर्ग का द्वार।
आस्रवजन्य अशुचिता हरे, प्रथम परोसा भोजन करे।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य नवमवर्षे पचमरविवासरे क्षायिकदान-लब्धिविभूषिताय श्रीपाश्र्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि स्वाहा।

नवम वर्ष छठवॉ रविवार, धर्मोपार्जन सुख सचार।
शुद्धाचरण क्रियाएँ करे, प्रथम परोसा भोजन करे।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य नवमवर्षे षष्ठरविवासरे क्षायिकलाभ-लब्धिविभूषिताय श्रीपाश्र्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

नवम वर्ष सप्तम रविवार, व्रत धर करे सुभग सस्कार।
व्रत के नियम भग से डरे, प्रथम परोसा भोजन करे।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य नवमवर्षे सप्तमरविवासरे क्षायिकभोग-लब्धिविभूषिताय श्रीपाश्र्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

नवम वर्ष अष्टम रविवार, तृष्णाओ पर करे प्रहार।
अन्तस्थल श्रद्धा से भरे, प्रथम परोसा भोजन करे।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य नवमवर्षे अष्टमरविवासरे क्षायिकोपभोग-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

नवम वर्ष नवमा रविवार, अगम सिन्धु सा अपरम्पार।
विघ्न हरे कर्मास्रव झरे, प्रथम परोसा भोजन करे।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतस्य नवमवर्षे नवमरविवासरे क्षायिकवीर्य-लब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

दोहा- नवम वर्ष मे जो करे, यह रविव्रत हर्षाय।
सुख सम्पत्ति- वर्धन करे, मनवाछित फलदाय।।

ॐ ही रविवारव्रतस्य नवमवर्षे नवसु आदित्यवारेषु नवक्षायिक-लब्धि-विभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय महार्घ्यं।

जाप मंत्रा

ॐ ह्रीं नवक्षायिकलब्धि-विभूषिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः

(इस मन्त्र की 108 जाप करे।)

जयमाला

दोहा- जिनके सुमरण से बने, अन्त करण निहाल।
ऐसे पार्श्व जिनेश की, यह विशाल जयमाल।।

चौपाई- पार्श्वनाथ करुणा अवतारी, भक्तजनो के सकटहारी।
सुर किन्नर गणधर गुण गाते, पूजक मनवाछित फल पाते।
ज्ञाता दृष्टा रूप तुम्हारा, तुमने आत्म स्वरूप निखारा।
विषय कषायो पर जय पाई, दुर्लभ मुक्ति रमा परणाई।।
जन्म-मरण आवरण हटाया, उत्तम शुद्धातम प्रगटाया।
जीवाजीव द्रव्य पहिचाना, इन्द्रिय सेना से रण ठाना।।

दिव्य नीलमणि छटा तुम्हारी, धर्मामृत वर्षक त्रिपुरारी।
भव दावानल अन्तर्ज्वाला, तप से भस्मसात कर डाला।।
नवों लब्धियो के स्वामी हैं, ज्ञानानन्द पारगामी है।
वरदानी केवलज्ञानी हैं, जिनवाणी वीणा पाणी है।।
क्रूर कमठ ने बैर निकाला, धधकाई पिशाच ने ज्वाला।
जल ककड पत्थर बरसाये, घोर भयकर दृश्य दिखावे।।
पद्मावति धरणेन्द्र पधारे तुम पर फण मण्डप विस्तारे।
केवलज्ञान हुआ यश पाया, जय जयकार जगत मे छाया।।
असफल कमठाचर पछताया, चरण कमल मे शीश नवाया।
हम सेवक है रविव्रत धारी, सुनिये नाथ पुकार हमारी।।
जो भी आया शरण तुम्हारी, पूजा की आरती उतारी।
सुनते है हे करुणाधारी, एक बन गये पूज्य पुजारी।।

ॐ ह्रीं रविवारव्रतोद्यापने नवक्षायिकलब्धिविभूषिताय श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं।

दोहा-पूर्ण करे नव वर्ष तक, यह व्रत चित हर्षाय।
रविव्रत सुख मिचित करे, मनवाछित फलदाय।।
आज हुआ सम्पूर्ण यह, रविव्रत पाठ विधान।
'शशि' को आत्मप्रकाश दो, पार्श्वनाथ भगवान।।

इत्याशीर्वादः।

रत्नत्रय विधान

चौपाई- सरधो जानो पालो भाई, तीनों कर राग जुदाई।।
लै लै नीका द्रव्य सुमारा, पूजो पाओ मोक्षागारा।

नाराच

भला सुज्ञान दर्शना-चरित्तरा सुसार है।
भवसमुद्र नाव मोक्ष-पन्थ का अधार है।।
यही जु पन्थ सिद्धि का, नही जु और जानिये।
जजों सुदर्श ज्ञान वा, चरित्र भक्ति आनिये।।
सार येहि तीन रत्न, पारखी मुनीन्द्र है।
लहे जु राज छाडि या, बिना गुणी न सोह है।।
नही जु राग द्वेष ताहि, पाइये कदा सही।
तीन रत्नरूप वस्तु, चित्त में जिन्हो लही।।
मुनीन्द्र याहि पायके, न पाय फिर भवा सही।
जिनेन्द्र याहि पायके, प्रिया शिवा तिया गही।।
यही जु तीन मानका, जु मोक्षपन्थ जानका।
यही जु ज्ञान केवला, निकट्ठ वेग आनका।।
यही जु तीन रत्न इन्द्र, चन्द्र को नही मिलें।
खगा फणीन्द्र चक्रि को, न भूप को धरा तले।।
मुनी बिना सराग के, न पाइये कभी सही।
जु तीन होय एकठे, जिनेन्द्र के गुणा यही।।
नमों जु ज्ञान दर्शना, चरित्र जो शिला यथा।
रहे सदा हिये सुभक्ति, मो तनें इन्ही कथा।।
भवान्तरे मिल सु मोहि, तीन रत्न आयकें।
चाह और मोय ना, सुनों जु अर्ज ध्यायकें।।

गीतिका- ये तीन रत्न अपार मौलिक, पारखी बिरला सही।
जिय मोह अन्ध न भेद पावे, खेद जो बहुतो लही।।
होवे निकट भव अब्धि जाके, सो लहे सहजहि भया।
मुनि होय राज्य विहाय पावे, शाश्वतो पद इन दया।।
इन्ही प्रभाव मोक्ष पावे, कर्म नाशे भवकरा।
सुख होय सब दुख खोय, सहजहि स्वर्ग पावे मनहरा।।
ये ज्ञान सम्यक्दर्श चारित, तीन ही सुखदाय है।
इन धार जग मे पूज्य पदवी, लहे जिनधुनि गाय हैं।।

अडिल्ल- रत्नत्रय भव हरे, स्वर्ग शिवदाय जी।
रत्नत्रय आभूषण, नही दिखाय जी।।
याकी महिमा देख, इन्द्र से पग परे।
ये त्रय ज्ञान बढाय, सिद्धथल ले धरे।।

चौपाई- रत्नत्रय बिन भव भरमाय, रत्नत्रय तजि पाप कमाय।
अब हम उर वाञ्छा यो थही, मिले हितू रत्नत्रय सही।।

सोरठा- यह रत्नत्रय सार, शरण मिल्यो हमको सही।
भवदधि तारन हार, ताते मे पल पल नमो।।

दोहा- रत्नत्रय जग में कहा, मुक्ति महा फलदाय।
योग शुद्ध करके नमो, भवदधि लेहुँ नमाय।।

समुच्चय पूजा

गीतिका- सत्य दर्शन ज्ञान चारित, मोक्ष मारग जिन कहे।
मोक्षाभिलाषी धरें इनको, इन बिना शिव ना लहे।।
यों जानि तीनों रत्न पूजों, ध्याय के इस ही धरा।
उर भक्ति धर मन वचन काया, ता फलें सब अघ हरा।।

ॐ ह्रीं श्रीसम्यग्दर्शनज्ञानचारित्ररूपरत्नत्रयधर्म! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं श्रीसम्यग्दर्शनज्ञानचारित्ररूपरत्नत्रयधर्म ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीसम्यग्दर्शनज्ञानचारित्ररूपरत्नत्रयधर्म ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(चाल मुनियानन्दी)

नीर निरमल पद्म, कुण्ड को सार जी।
उज्ज्वलो क्षीर सम, सरस या धार जी।।
रत्नझारी विषे, लेय गुण गाय के।
जजों दरशन सुज्ञान, वृत्त हरषाय के।।

ॐ ह्रीं श्रीसम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।

बावनो चन्दना, अगर शुभ लाइये।
नीर निरमल थकी, घसि सुरभि लाइये।।
कनक पियाले विषे, धरि सुगुन गाय के। जजों ।

ॐ ह्री श्रीसम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्य· संसारताप-विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्वेत अक्षत सुभग, शुद्ध नख शिख सही।
गन्धधर यों यथा, फूल कुन्दा कही।।
थार पातर विषें, आप कर लायके। जजो ।

ॐ ह्री श्रीसम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।।

फूल कल्पवृक्ष के, रग नाना धरे।
गन्ध आपनी थकी, भ्रमर मन वश करें।।
पुष्प ऐसे तनी, माल कर लाय के। जजो ।

ॐ ह्रीं श्रीसम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यः कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।

सुभग नैवेद्य जो, भले रस धार जी।
सद्य मोदक घने, स्वाद करतार जी।।
यों चरु कचन के, पात्र धर लाय के। जजों ।

ॐ ह्रीं श्रीसम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यः क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

दीप मणिमय महा, ज्योतिकर्ता सही।
तेज ताके कने, ध्वान्त भागे सही।।
धार शुभपात्र में, दीप कर लाय के। जजों ।

ॐ ह्रीं श्रीसम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।

धूप दशधा महा, गन्ध पूरित कही।
बहु चन्दनादि शुभ, द्रव्य सयुत सही।।
लेय कर धूप यो अगनि में लाय के। जजों ।

ॐ ह्रीं श्रीसम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो अष्टकर्म-विनाशनाय धूप निर्वपामीति स्वाहा।।

लौग खारक भले, श्रीफला सार जी।
सुभग बादाम पुगी, फलाधार जी।।
इन आदि लेय फल, आप कर लाय के। जजों ।

ॐ ह्रीं श्रीसम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो मोक्षफल-प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।

नीर चन्दन अखत, फूल चरु जानिये।
दीप अरु धूप फल, अर्घ्य कर आनिये।।
धारि उर भक्ति गुन, गाय सुख पाय के। जजों ।

ॐ ह्रीं श्रीसम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो अनर्घपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

दरश ज्ञान वृत्त ये, रत्न शुभ है सही।।
यही तीन रत्न शिव, लोक की दे मही।
जान यों अर्घ्य ले, आय उमगाय के।
जजों दरशन सुज्ञान, वृत्त हरषाय के।।

ॐ ह्रीं श्रीसम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा- तीन रत्न मुनिराज धन, अविनाशी बिन छेह।
इन्द्र स्तुति वाँछा करे, कवि मागत है येह।।

त्रिभंगी छन्द

सम्यक् दृग जाके, हो शिव ताके,दोष न बाके, होय कदा।
सम्यक् शुध ज्ञानो, हो भ्रम हानो,तत्व पिछानो, मोक्ष पदा।।
चारित शुध धारे, सम्यक् लारे, भवदधि तारे, नाम जिसो।
यह तीनों रत्ना, कर इन यत्ना, गुरुवच इतना, पूज तिसो।।
यह सम्यक् धारा, सबको प्यारा, अघ तै न्यारा, धर्म धरे।
शुभ ज्ञान उपावा सो, शुध भावा, शिवमारग धावो, कर्म हरे।।
शुध चारित नीका, सुखदा जियका, शिवतिय पियका, मीत जिसो।।यह।
तिस सम्यक् पाया, दोष उडाया, जिनगुण गाया, ज्ञान धरे।
ले सम्यक् ज्ञानी, अमृत पानी, भवतप हानी, पुष्ट करें।।
चारित भवसागर, नाव उजागर, पार उतारन, जान तिसो। यह ।
सुध सम्यक् सार, भवि जिय धार, है भव तार, सिद्ध थल।
यह सम्यक् ज्ञान, भ्रमतम हान, सब विध जानो, युक्त फल।।
चारित शुध सोई, शिवमग जोई, तारक जो हो, नाव जिसो। यह ।
सम्यक् परभावा, नहि भवदावा, मरण मिटावा, सुखकारी।
जो सम्यग्ज्ञानी, दया निधानी, सब विधि जानी, गुणधारी।
सम्यक् चारित्ता, जग जिय मित्ता, सज्जन चित्ता, मित्र तिसो।यह ।

सम्यक् धन जाके, सुर नत वाके। कमी न वाके, धन भारी।
जे सम्यग्ज्ञानी, मिथ्याहानी, ज्ञान पिछानी, सुखकारी।
चारितधर जोगी, शिवतिय भोगी, मोक्षनियोगी, जीव जिसो।
यह तीनों रत्ना, कर इन यत्ना, गुरुवच इतना, पूज तिसो।।
सम्यक् शुध सो ही, लखे न मोही, सत्य जु सो ही, कर्म हरे।
जिन भाषित ठाने, निज पर जाने, सम्यग्ज्ञाने, सोहि धरो।।
जो चारित धारे, कर्म निवारे, आत्म सुधारे, ध्यान जिसो। यह ।
सम्यक् सरधाना, कुगुरु छुडाना, बुध परधाना, मोक्ष चहा।
सो सम्यग्ज्ञानी, जिनध्वनि जानी, सब विध मानी, और कहा।।
जे चारित धारी, निज अघहारी, पुण्य भण्डारी, जान जिसो। यह।

दोहा- सम्यग्दर्शन ज्ञान सह, चारित देहु मिलाय।
तीनो शिवमग जिन कहे, जो होते शिवदाय।।

ॐ ह्रीं श्रीसम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रेभ्यो जयमालार्घ्यं नि. स्वाहा।

सम्यग्दर्शन पूजा

अडिल्ल- सम्यग्दर्शन सोय, जहाँ वसुमद नहीं,
शकादिक वसुदोष, रहें जामें नहीं।
नही मूढता तीन, अनायतन षट् नहीं,
या विध समकित थाप, जजों शुभफल मही।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टांगसम्यग्दर्शन ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं श्री अष्टांगसम्यग्दर्शन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री अष्टांगसम्यग्दर्शन ! अत्र मम सन्निहितं भव भव वषट् सन्निधिकरणम् परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि।

अष्टकम् गीताछन्द

वर नीर सागर क्षीर जै सो, उज्ज्वलो सुखदाय जी।
शुभगन्ध निर्मल स्वाद या को, सद्य शुद्ध सुल्याय जी।।
धरि रतनझारी हाथ ले निज, भक्ति उर मे बहु धरी।
मैं जजो सम्यक् दरश मल बिन, भाव सो थुति उच्चरी।।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनाय जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं नि स्वाहा।

बावनो चन्दन सुगन्ध सु, नीर सग घसि लाय हों।
शुभ अगर आदि मनोज्ञ गन्ध, सु तात में मिलवाय हों।।
ले कनक पातर भाव शुभ तै, भक्ति-धन लक्षहि धरी। मै ।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनाय संसारताप-विनाशनाय चंदनं नि.स्वाहा।

अक्षत अखण्डित बीन नख शिख, शुद्ध उज्ज्वल लाय जी।
शुभ गन्धमय अति धोय नीके, आप कर सुखदाय जी।।
कर भले पातर माहि तिनको, भक्ति शुभ फलदा करी। मै ।

ॐह्रीं सम्यग्दर्शनाय अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।।

फूल शुभतर वरन नाना, जाति हू बहुविध सही।
अतिगन्ध युत सुरवृक्ष के शुभ, जाय उपमा ना कही।।
कर माल तिनकी हाथ ले निज, भावना सुध उर धरी। मैं ।

ॐह्रीं सम्यग्दर्शनाय कामबाण-विध्वंशनाय पुष्पं नि. स्वाहा।।

नैवेद्य मोदक आदि नीके, और भी बहुविध कही।
तिन माहि नाना मेल रस को, स्वाद की मानों मही।।
चरु करी या विध धारि पातर, भक्ति मन वच तन धरी।मैं ।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनाय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्य नि. स्वाहा।।

कर दीप मणिमय ज्योति धारी, नाश-कर तम को सही।
धर मध्य पातर हेम के शुभ, आरती करनी चही।।
उर भक्ति मन वच काय धरि करि, विनय तें मुख थुति करी।मै।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनाय मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं नि.स्वाहा।।

धूप दशधा द्रव्य ले के, करी है सुखकार जी।
तिस माहि गन्ध अपार प्रसरत, भ्रमर शब्द उचार जी।।
इस जाति की शुभ धूप लेकर, अग्नि में थुति कर धरी।
मैं जजों सम्यक् दरश मल बिन, भाव सो थुति उच्चरी।।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनाय अष्टकर्म-विनाशनाय धूपं नि. स्वाहा।।

श्रीफल सुपारी लौंग खारक,चोच मोच बदाम जी।
इन आदि और अनेक फल ले, महाशुभ के धाम जी।
ले भक्ति कर धर सुभग बासन, आपने कर ले धरी। मै ।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनाय मोक्षफल-प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।

जल गन्ध अक्षत पुष्प चरु ले, दीप धूप सु फल सही।
सब मेल अर्घ्य बनाय नीको, भले पातर मे लही।
उर भक्ति मन वच काय करके, एक ध्यान सु उच्चरी। मै ।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनाय अनर्घपद-प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।।

प्रत्येकार्घ्य

त्रिभंगी छन्द

मम नाना मामा, अतिबल ठाना, धन के धामा, सुखदाई।
तिन राज सुमानें, सब जग माने, वचन प्रमानें, सब भाई।।
यह 'जाति' समुद्दा, जानि निषिद्दा, अघ की हद्दा, जान हिये।
याको जु निवारे, सम्यक् सारे, शिवपद धारे, जजि थुति ये।।

ॐ ह्रीं जातिमदरहिताय सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।1।।

है बाप हमारा, सुत धन बारा, सब को प्यारा ज्ञानमई।
सुत दारा मेरा, नृप ढिग केरा, काम करेरा, जान सई।।
यह 'कुलमद' जानो, अघ की खानो, तज वच मानो, बात हिये।
सम्यक् या बिन सो, मोक्ष करन सो, जजि भवि मन सों, भक्ति दिये।।

ॐ ह्रीं कुलमदरहिताय सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।2।।

मैं बहुत कमाऊँ, द्रव्य उपाऊँ, सब दिशि जाऊँ, खेप लई।
मो में बुध नीको, बनज करे की, युक्ति धरे की, बात सई।।
जहँ ही मैं जाऊँ, आदर पाऊँ, नव-निधि लाऊँ, जान हिये।
यह 'धन' का मद्दा, जान निषिद्दा, सम्यक् शुद्धा, जजि थुति ये।।
ॐ ह्रीं धनमदरहिताय सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।3।।
जो रूप हमारो, और न धारो, मोसो हारो मदन जिसो।
सुर हू लखि लज्जे, यों छवि छज्जे, बहु कहा कहिज्जे, जान इसो।।
यह 'रूप मदा है' ज्ञान जुदा है, सम्यक् दाहै, आप मई।
तज याको भाई, जजि थुति लाई, सम्यक् पाई, मोक्ष सई।।
ॐ ह्रीं रूपमदरहिताय सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।4।।
मै तपसी भारी, शक्ति अपारी वास धरारी वरष मई।
चचल मन जीत्या, भवभय भीत्या, नहि तन मीत्या, जान मई।
यह 'तपमद' जानो, अघ को थानो, दोष बडानो, कर हानी।
सम्यक् सुध मोई, जजि अघ खोई, जिनध्वनि जोई, मुनि मानी।।
ॐ ह्री तपोमदरहिताय सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि स्वाहा।।5।।
हम बहु बलवाना, मल्ल समाना, गजमद हाना, जोध सही।
मेरे बल आगे, अरिभय लागे, को मो आगे, धीर कही।।
यह 'बल' को मद है, अघ को हद है, सब हित रद है, करि हानि।
सम्यक् सुध सोई, जजि अघ खोई, जिनध्वनि जोई, मुनि मानी।।
ॐ ह्रीं बलमदरहिताय सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।6।।
मै बहुश्रुत जोई, भरम न कोई, चर्चा जोई, बात करो।
मै षट् मत जोये, पण्डित होये, सब मत धोये, ज्ञान धरों।
'विद्यामद' ये ही तजि भवि जेही, सरधा ये ही जिनवानी।
सम्यक् सुध सोई, जजि अघ खोई, जिनध्वनि जोई, मुनि मानी।।
ॐ ह्रीं विद्यामदरहिताय सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।7।।

मोकों नृप जाने, मुखिया माने, जग सन्माने, हुकुम घनों।
चाहों मैं मारों, तथा उघारों, वचन उचारों, सोइ ठनों।।
यह मद 'अधिकारी' तज भवधारी, भाव सम्हारी, धुनि ठानी।
सम्यक् सुध सोई, जजि अघ खोई, जिनध्वनि जोई, मुनि मानी।।
ॐ ह्रीं अधिकारमदरहिताय सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।8।।

जहँ शका आवे, धरम नशावे, पाप बढावे, दुखदाई।
शका जब होई, सम्यक् खोई, सरधा बोई, मनलोई।।
यह 'शका' मल है, फल अति खल है, त्याग सु-कंल है, मन आनी।।
सम्यक् सुध सोई, जजि अघ खोई, जिन ध्वनि जोई, मुनि मानी।।
ॐ ह्रीं शंकामलरहिताय सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।9।।

जो वृष-रस चाखे, फल अभिलाखे, जगसुख भाखे, मोहि मिले।
मै जिनवृष सेऊँ, खग थल लेऊँ, सुरसुख बेऊँ, चाह फले।।
यह वाञ्छा जानो, काछा मानो, तज वच आनो, जिनवानी।
सम्यक् सुध सोई, जजि अघ खोई, जिनध्वनि जोई, मुनि मानी ।।
ॐ ह्रीं कांक्षामलरहिताय सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।10।।

पर वस्तु सु जोवे, घिन चित्त बोवे, अरति बढोवे, मन माहीं।
यह वस्तु बुरी है, क्यों जु धरी है, कौन करी है, दुखदाई।।
यह दोष विचिकित्सा, अघ को अशा, त्यागो मनसा, श्रुतज्ञानी।
सम्यक् सुध सोई, जजि अघ खोई, जिन ध्वनि जोई, मुनी मानी।।
ॐ ह्रीं विचिकित्सामलरहिताय सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।11।

जो भेद न पावे, शीश नवावे, भक्ति बढावे, वेद कही।
सब को गुरु माने, ज्ञान न आने, धर्म न जाने, शुद्ध सही।।
यह मूढ स्वभावा, पाप बढावा, तज सुख दावा, मन आनी।
सम्यक् सुध सोई, जजि अघ खोई, जिनध्वनि जोई, मुनि मानी।।
ॐ ह्रीं मूढतामलरहिताय सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।12।।

पर अवगुण जोई, ढके न सोई, मुख कह कोई, पाप धरा।
पर के छल देखे, कहत विशेखे,सो अघ भेखे, जान खरा।
दोष पराया, यह अघ भाया, त्याग सुभाया, बुध आनी।
सम्यक् सुध सोई, जजि अघ खोई, जिनध्वनि जोई, मुनि मानी।।
ॐ ह्रीं अनुपगूहनमलरहिताय सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।13।
लख धर्म पराया, दोष बढाया, पाप उपाया, मन ल्याई।
या धर्म बढाऊँ, सो विधि लाऊँ, ज्ञान बढाऊँ, चित ल्याई।।
यह अवगुण जानो, अनिथि सुमानो, तजि हित आनो, शुभ जानी।
सम्यक् सुध सोई, जजि अघ खोई, जिनध्वनि जोई, मुनि मानी।।
ॐ ह्री अस्थितिकरणमलरहिताय सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं ।।14।।
धर्मी जन जोवे, हरष न होवे, समचित सोवे, अघ हारी।
वृषथान निहारे, नेह न धारे, सकति सम्हारे, अधिकारी।।
यह वत्सल नाही, पाप बढाई, तज मन लाई, बुध आनी।
सम्यक् सुध सोई, जजि अघ खोई, जिनध्वनि जोई, मुनि मानी।।
ॐ ह्रीं अवात्सल्यमलरहिताय सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।15।
उत्सव नहि जाने, हरष न आने, नाहि सुहाने, मन माही।
नहि ताहि सरावे, जस नहि गावे, पाप कमावे, चित ठाही।।
यह दोष बढा है, त्याग जुडा है, धर्म बढा है, मन आनी।
सम्यक् सुध सोई, जजि अघ खोई, जिनध्वमि जोई, मुनि मानी।।
ॐ ह्रीं अप्रभावनामलरहिताय सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।16।

चौपाई छन्द

ना सर्वज्ञ न तारन हार, ताको पूजत देव निहार।
सो यह देवमूढता जोय, इस बिन जजि सुध समकित सोय।।
ॐ ह्रीं देवमूढतारहिताय सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।17।।

धर्म दया बिन सो है सही, धारण करे प्रतिज्ञा नहीं।
सो यह धर्ममूढता सोय, इस बिन जजि सुध समकित सोय।।
ॐ ह्रीं धर्ममूढतारहिताय सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।18।।
वीतराग नहि नगन शरीर, सेवे कुगुरु राग धर धीर।
सो यह गुरुमूढता जोय, इस बिन जजि सुध समकित सोय।।
ॐ ह्रीं गुरुमूढतारहिताय सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।19।।
कर्मनाश बिन देव कहाय, तिनको परशसै थुति लाय।
यह अनायतन दोष सुजोय, इस बिन जजि सुध समकित सोय।।
ॐ ह्रीं कुदेवप्रशंसानायतनदोषरहित सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं।।20।।
ताहि कुदेव सेवक हूँ जान, परशसै मन मे हित आन।
यह आयतन दोष जु होय, इस बिन जजि सुध समकित सोय।।
ॐ ही कुदेवसेवकप्रशसानायतनदोषरहितसम्यग्दर्शनायअर्घ्यं।21।
दयारहित ही धर्म सु मान, फिर ताकी परशसा ठान।
यह अनायतन दोष जु होय, इस बिन जजि सुध समकित सोय।।
ॐ ह्रीं कुधर्मप्रशसानायतनदोषरहितसम्यग्दर्शनायअर्घ्यं।।22।।
हिसाधर्म सेवकी जान, ताको परशसै शुभ मान।
यह अनायतन दोष जु होय, इस बिन जजि सुध समकित सोय।।
ॐ ही कुधर्मसेवकप्रशसानायतनदोषरहितसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं।23।
राग द्वेष धर प्रज्ञावान, ये गुरु परशसै बिन ज्ञान।
यह अनायतन दोष जु होय, इस बिन जजि सुध समकित सोय।।
ॐ ह्रीं कुगुरुप्रशंसानायतनदोषरहितसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं।।24।।
कुगुरुन की सेवा जो करे, ताकी परशसा चित धरे।
यह अनायतन दोष जु होय, इस बिन जजि सुध समकित सोय।।
ॐ ह्रीं कुगुरुसेवकप्रशसानायतनदोषरहितसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं।25।

यह द्यूत व्यसन है पाप-मूल, यह खेल लहे जिय दु खशूल।
दे अपयश वध बन्धन सु जोय, इस बिन जजि सुध सम्यक्त्व सोय।।
ॐ ह्रीं द्यूतव्यसनरहितसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।26।।
आमिष खाये मन अशुचिवान, हिंसा या सम होवे न आन।
तिस देखत ही मन मलिन होय, इस बिन जजि सुध सम्यक्त्व सोय।।
ॐ ह्रीं आमिषव्यसनरहितसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।27।।
पीके मदिरा मूर्छा लहाय, सब सुध बुध अपनी दे गमाय।
यह मदिरा व्यसन सधर्म खोय, इस बिन जजि सुध सम्यक्त्व सोय।।
ॐ ह्रीं मदिराव्यसनरहितसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।28।।
गणिका गिन पातल जूँठ जेम, अति लोकनिन्द्य परसिद्ध येम।
यह व्यसन नरकपद दाय जोय, इस बिन जजि सुध मम्यक्त्व सोय।।
ॐ ह्रीं गणिकाव्यसनरहितसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि स्वाहा।।29।।
जे जीव घास खा वन बसाय, तिनको मारे पारधि कुभाय।
यह व्यसन नरक मारग सुजोय, इस बिन जजि सुध सम्यक्त्व सोय।।
ॐ ह्रीं आखेटव्यसनरहितसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।30।।
परद्रव्य हरें दुठ चोर जान, लहि वध बन्धन जगनिन्द्य थान।
यह चौर्यव्यसन दुखदाय जोय, इस बिन जजि सुध सम्यक्त्व सोय।।
ॐ ह्रीं चौर्यव्यसनरहितसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।31।।
परनारि व्यसन दुठ जीव धार, सो लहें नरकदुख पापभार।
यह व्यसन महादुखदाय जोय, इस बिन जजि सुध सम्यक्त्व सोय।।
ॐ ह्रीं परनारीव्यसनरहितसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।32।।

चौपाई छन्द

किय दान सक्रान्ति सुजान, होय सुखी नाहीं दुख मान।
ऐसो भरम जहाँ नहि होय, इस विध जजि सुध समकित सोय।।
ॐ ह्रीं कुपर्वदानदोषरहितसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।33।।

ग्रह पूजे सुख साता मान, नहि पूजें दुखकूप बखान।
ऐसो भरम जहाँ नहि होय, इस विध जजि सुध समकित सोय।।
ॐ ह्रीं चन्द्रसूर्यादिग्रहपूजारहितसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं ।।34।।
पूजें भूमी भूपति थाय, इस विधि मिथ्याभाव उपाय। ऐसो भरम
ॐ ह्रीं भूमिपूजारहितसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।35।।
हिंसागम जो सेव कराय, मिथ्या मन्त्र जन्त्र पूजवाय। ऐसो भरम
ॐ ह्रीं कुधर्मसेवारहितसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।36।।
पर्वत पूजें दीरघ जान, जाके जजे होय हित मान। ऐसो भरम
ॐ ह्रीं पर्वतादिपूजामलरहितसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।37।
उदधि नदी सपर्रे अघ जाय, होय पुण्य जिय को सुखदाय।ऐसो भरम
ॐ ह्रीं उदधिस्नानमलरहितसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।38।
अग्नि माहि जीवित जर जाय, देवपना वे जीव लहाय। ऐसो भरम
ॐ ह्रीं अग्निपातमलरहितसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।39।।
कुगुरु सेवते साता पाय, यह दे ऋद्धि परम सुखदाय। ऐसो भरम
ॐ ह्रीं कुगुरुसेवामलहितसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।40।।
अग्निदेव कर मानें सही, पूजे दीपक है शुभ कही। ऐसो भरम
ॐ ह्रीं अग्निसेवामलरहितसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।41।।
गायमूत्र अतिपूत बताय, या लागे तन निर्मल थाय। ऐसो भरम
ॐ ह्रीं गोमूत्रसेवामलरहितसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।42।।
गज घोटक वृष सेव कराय, इन सेये इन लाभ लहाय। ऐसो भरम
ॐ ह्रीं वाहनसेवामलरहितसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।43।।
असि बरछी भाला बन्दूक, पूजें शक्ति लहे ना चूक। ऐसो भरम
ॐ ह्रीं शस्त्रपूजामलरहितसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।44।।
बालक पूजें देव सु मान, सो सब मिथ्यातम मतिमान। ऐसो भरम
ॐ ह्रीं बालकपूजामलरहितसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।45।।

गिरि तें पडतो काय छुडाय, तो वाछितसुख को जन पाय। ऐसो भरम

ॐ ह्रीं गिरिपतनमलरहितसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।46।।

हिंसकदेव दया बिन जान, देखत क्रूर जजें सुख मान। ऐसो भरम

ॐ ह्रीं हिंसकदेवसेवामलरहितसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।47।

निश आहार करे नहि जोय, जाके उर करुणा बहु होय।

मासाहारी निशि को खाय, या बिन जजि सुध समकित भाय।।

ॐ ह्रीं निशाहारमलरहितसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।48।।

अनगाल्यो जल पीवे नाहि, दयासहित उर धर्म सुहाई।

ऐसो गुण जाके बहु होय, सो समकित पूजे सुख होय।।

ॐ ह्री अनगालितजलपानमलरहिताय सम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं।49।

इत्यादिक गुणजुत जो होय, कहे दोष ते एक न जोय।

निश्चय अरु व्यवहार सुधाय, सो समकित पूजो थुति लाय।।

ॐ ही सर्वदोषरहित-सम्यग्दर्शनाय महार्घ्यं नि स्वाहा।।50।।

जयमाला

दोहा- समकित साचा धर्म है, मोक्षवृक्ष को मूल।
श्रद्धा करना गाढ उर, हरे विषय अघशूल।।

बेसरी छन्द

समकित सार धर्म का बीजा, याते पापमैल सब छीजा।
याही ते जगपूज्य कहावे, यो ही जामनमरण मिटावे।।
समकित सा नाही धन कोई, समकित कल्पवृक्ष सम होई।
समकित के गुण मुनिगण गावें, समकित जामनमरण मिटावे।।
समकित ही सब कारज सारे, समकित मिथ्यारोग निवारे।
समकित शुद्ध धर्म कहलावे, समकित जामनमरण मिटावे।।
समकित रतन जास मन माही, ता सम आभूषण जग नाही।
समकित सुर-शिव थान दिखावे, समकित कल्पवृक्ष सम होई।

समकित बिन मुनि को शिव नाही, समकित सहित जीव शिव पाही।
समकित देव धर्म बतलावे, समकित कल्पवृक्ष सम होई।
समकित अग्नि कर्म निज जारे, समकित मोह-मल्ल को मारे।
समकित ही भ्रम दूर हटावे, समकित कल्पवृक्ष सम होई।
समकित ते हरि को पद होई, समकित फल अहमिन्द्र सु होई।
समकित सहित मुक्तिपद पावे, समकित कल्पवृक्ष सम होई।

दोहा- समकित मेरे शीश पर, करो वास यह आस।
समकित गुण ही मुख रहे, जब तक तन मे श्वास।।

ॐ ह्री अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यग्ज्ञान पूजा

चौपाई छन्द

मति श्रुत अवधिज्ञान मन लाय, मनपर्यय केवल समुझाय।
ये ही पाँचो सम्यग्ज्ञान, पूजो थाप यहॉ हित आन।।

ॐ ह्री अष्टदिधसम्यग्ज्ञान ! अत्र अवतर अवतर सवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

भुजगप्रयात छन्द

लिया नीर चोखा पद्म कुण्ड केरा।
महा निर्मला गन्ध जुत भर्म हेरा।।
भरयो स्वर्ण झारी घनी भक्ति लाई।
जजो ज्ञान सम्यक् घना सौख्यदाई।।

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि.स्वाहा।

भरा गन्ध झारी लिया चन्दना है।
घिसा नीर से फेर कर वन्दना है।।
धार भक्ति उर में भले पात्र लाई।
जजों ज्ञान सम्यक् घना सौख्यदाई।।

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय संसारताप-विनाशनाय चदनं नि.स्वाहा।।

भले तन्दुला ऊजरे खण्ड नाहीं।
धरे गन्ध नीकी भली शोभ मही।।
लिये हाथ अपने घनी भक्ति लाई।। जजों ।।

ॐ ह्रीं श्रीसम्यग्ज्ञानाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि. स्वाहा।।

भले गन्धयुत फूल ले माल कीनी।
घने वर्ण को भली भक्ति चीनी।।
धरे हाथ माही भली भक्ति गाई। जजों ।।

ॐ ही सम्यग्ज्ञानाय कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।।

नैवेद्य नीका हितु जान जिय का।
भले मोदकादि रस डारि नीका।।
धरे पात्र मे हाथ ले भक्ति गाई।। जजों ।।

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्य नि. स्वाहा।।

करे दीप तमनाश शुभ रत्न केरा।
धरे थाल माही खुशी चित्त मेरा।
करी आरती हर्ष सह भक्ति भाई।। जजों ।।

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।।

धरी धूप दशधा भली गन्ध धारी।
लिये चन्दनागरु सुगन्धि है भारी।।
करो वीनती अग्नि में खेय भाई।। जजो ।।

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय अष्टकर्म-विनाशनाय धूप नि. स्वाहा।।

लिये श्रीफला लौंग खारक बदामा।
इन्हें आदि फल और बहु जान कामा।।
धरे पात्र माही घनी भक्ति लाई।
जजों ज्ञान सम्यक् घना सौख्यदाई।।

ॐ ह्रीं श्रीसम्यग्ज्ञानाय मोक्षफल-प्राप्तये फलं नि. स्वाहा।।

लिया नीर चन्दन अखत पुष्प जानो।
नैवेद्य फल दीप अरु धूप मानो।।
करो अर्घ्य सुन्दर घनी भक्ति गाई।। जजो ।।

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय-अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

प्रत्येकार्घ्य

बेसरी छन्द

सपरस इन्द्रिय ते सब जाने। विषय आठ ताकी विधि माने।।
सम्यक् सहित ज्ञान जो होई। सो मतिज्ञान जजों मद खोई।।

ॐ ह्रीं स्पर्शनेन्द्रियद्वार-सम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं नि स्वाहा।।1।।

रसना ते जो विषय पिछाने। पॉच भेद सब अश सु आने।।
सम्यक्-सहित ज्ञान जो होई। सो मतिज्ञान जजों मद खोई।।

ॐ ह्रीं रसनेन्द्रियद्वार-सम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

घ्राणेन्द्रिय जाने जो भाई। दोय भेद ताकी विधि गाई।।
सम्यक् सहित ज्ञान जो होई। सो मतिज्ञान जजों मद खोई।।

ॐ ह्रीं घ्राणेन्द्रियद्वार-सम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं नि स्वाहा।।3।।

चक्षु विषय पञ्चविध जाने। लाल पीत श्यामादिक माने।।
सम्यक्-सहित ज्ञान जो होई। सो मतिज्ञान जजों मद खोई।।

ॐ ह्रीं नेत्रेन्द्रियद्वार-सम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

श्रोत्रेन्द्रिय तो शब्द पिछाने। तीन भेद ताके पहिचाने।।
सम्यक्-सहित ज्ञान जो होई।। सो मतिज्ञान जजो मद खोई।।

ॐ ह्रीं श्रोत्रेन्द्रियद्वार-सम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।5।।

जो जो मन विकलप तें जोवे। भई होयगी अब जो होवे।।
सम्यक् सहित ज्ञान तें होई। सो मतिज्ञान जजो मद खोई।।

ॐ ह्रीं मनोद्वार-सम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

ग्यारह अग पूर्वादि सु जान। अग बारहो शास्त्र बखान।।
ये सब सम्यक् सहित सुभाय। सो श्रुतज्ञान जजो हर्षाय।।

ॐ ह्रीं अंगपूर्वश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

खावे जतन जतन ते चले। बोले जतन जतन ते हले।।
आचाराग क्रिया यो कही। सो श्रुत सम्यक् पूजो सही।।

ॐ ह्रीं आचारागश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

अध्ययन विधि विनयादिक और। निज परिणति वेदन जग मौर।।
सूत्रकृताग विषे यो कही। सो मतिज्ञान जजों मद खोई।।

ॐ ह्रीं सूत्रकृतागश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

जीव थान उन्नीस बताये। तथा चार सौ षट् श्रुत गाये।।
अग स्थान माहि यो कही। सो मतिज्ञान जजो मद खोई।।

ॐ ह्रीं श्रीस्थानागश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।10।।

होवे जो जो धर्म समान। द्रव्य क्षेत्र कालादिक मान।।
समवायाग यथाविधि कही। सो मतिज्ञान जजों मद खोई।।

ॐ ह्रीं समवायागश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।11।।

अस्ति नास्ति आदिक स्याद्वाद। एकानेक करे जो वाद।।
व्याख्याप्रज्ञप्ति अग यों कही। सो मतिज्ञान जजों मद खोई।।

ॐ ह्रीं व्याख्याप्रज्ञप्तिश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।12।।

जिन अतिशय जिनध्वनि प्रगटाय। समवसरण आदिक गुण गाय।।
ज्ञातृकथा अग मे यों कही। सो मतिज्ञान जजो मद खोई।।

ॐ ह्रीं ज्ञातृकथाश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।13।।

एकादश प्रतिमा विधि जोय। और बहुत श्रावक विधि होय।।
अग उपासक में यों कही। सो मतिज्ञान जजों मद खोई।।

ॐ ह्रीं उपासकाध्ययनांगश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि स्वाहा।।14।।

एक एक जिन-समय मॅझार। अन्त कृत केवलिषट् चार।
अन्त कृताग माहि यो कही। सो श्रुत सम्यक् पूजों सही।।

ॐ ह्रीं अन्तःकृतदशांगश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि स्वाहा।।15।।

एक एक जिन वारे सोय। दश दश मुनि अहमिन्द्र जु होय।।
अग अनुत्तर मे यो कही। सो मतिज्ञान जजों मद खोई।।

ॐ ह्रीं अनुत्तरोत्पादकदशांगश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।16।।

गई वस्तु लिख मूठी मॉहि। पूछे प्रश्न कहे मुनि ठॉहि।।
प्रश्न व्याकरण अग यो कही। सो मतिज्ञान जजो मद खोई।।

ॐ ही प्रश्नव्याकरणश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।17।।

शुभ अरु अशुभ कर्मफल जान। तीव्र जु मन्द विपाक बखान।।
सूत्रविपाक अग यों कही। सो मतिज्ञान जजो मद खोई।।

ॐ ह्रीं विपाकसूत्रांगश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।18।।

अडिल्ल- व्यय ध्रौव्य अरु उत्पाद द्रव्य लक्षण सही।
गुण पर्यय द्रव्य माहि, और बहुविध कही।।
यह पूरब उत्पाद, माहि व्याख्यान है।
सो श्रुत सम्यक् ज्ञान, जजो थुति आन है।।

ॐ ह्रीं उत्पादपूर्वश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।19।।

जामे दुर्नय तथा, सुनय व्याख्यान है।
अस्तिकाय अरु द्रव्य, तत्त्व शुभ ज्ञान है।।
अग्रायण पूरब में, यों व्याख्यान है। सो ।।

ॐ ह्रीं अग्रायणीयपूर्वश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।20।।

द्रव्य आत्म पर वीर्य, काल वीरज सही।
वीरज उभय अपार, तपो वीरज कही।।
वीरज गुण अनुवाद, माहि यो ज्ञान है।
सो श्रुत सम्यक् ज्ञान, जजों थुति आन है।।

ॐ ह्रीं वीर्यानुवादपूर्वश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।21।।

अस्ति नास्ति वस्त्वादि, स्वभाव विषें सही।
नित्यानित्य अनेक, एक आदिक कही।।
अस्ति नास्ति पूरब में, ऐसो ज्ञान है।। सो ।।

ॐ ह्रीं अस्तिनास्तिप्रवादपूर्वश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि स्वाहा।।22।।

आठ ज्ञान फल विषय, नाम वर्णन सही।
और अवान्तर भेद, ज्ञान के सब कही।।
ज्ञानप्रवाद सु पूरब, मे व्याख्यान है।। सो ।।

ॐ ही ज्ञानप्रवादपूर्वश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।23।।

भेद वचन सत असत, उभय अनुभय सही।
वचनगुप्ति अरु भाषा, द्वादश जो कही।।
सत्प्रवाद सु पूरब, इहविध ज्ञान है।। सो ।।

ॐ ह्रीं सत्प्रवादपूर्वश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।24।।

निश्चय आत्म अभेद, भेद व्यवहार है।
जीव पूज्य वा नही, पूज्य निर्धार है।।
इस विधि आत्मप्रवाद, पूर्व में ज्ञान है। सो ।।

ॐ ह्रीं आत्मप्रवादपूर्वश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।25।।

कर्मभेद तिन नाम, बन्ध चव विध सही।
उदय सत्व को आदि, कर्मरचना सही।।
पूरब कर्म प्रवाद, माहि व्याख्यान है।। सो ।।

ॐ ह्रीं कर्मप्रवादपूर्वश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।26।।

जामें समिति गुप्ति, अनुप्रेक्षादिक कही।
पाप त्यागविधि और, महातप अघ नहीं।।
प्रत्याख्यान सु पूरब, इस विधि ज्ञान है।।
सो श्रुत सम्यक् ज्ञान, जजों थुति आन है।।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानपूर्वश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।27।।

विद्या-साधन मन्त्र, जन्त्र विधि जानिये।
स्वर लक्षण अरु स्वप्न, आदि विधि मानिये।।
पूरब यह विद्यानुवाद, शुभ थान है।। सो ।।

ॐ ह्रीं विद्यानुवादपूर्वश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।28।।

जिन कल्याणक उत्सव, त्रेसठ पद सही।
ज्योतिष गमन विचार, शकुन आदिक कही।।
यो पूरब कल्याण, वाद में ज्ञान है।। सो ।।

ॐ ह्रीं कल्याणपूर्वश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।29।।

आयुर्वेद सु मन्त्र, जन्त्र तन्तर घने।
इन साधन की कला, और महिमा भने।।
पूरब प्राणानुवाद, माहि बहुज्ञान है। सो ।।

ॐ ह्रीं प्राणानुवादपूर्वश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।30।।

छन्द तथा व्याकरण, सगीत कला सही।
चौसठ तिय की कला, काव्य की विधि कही।।
क्रियाविशाल सु पूरब, मति को थान है। सो ।।

ॐ ह्रीं क्रियाविशालपूर्वश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।31।।

तीन लोक का कथन, मोक्ष व्याख्या सही।
गणितशास्त्र के सूत्र और सब विधि कही।।
त्रिलोक बिन्दु यह पूर्व, महासुख थान है। सो ।।

ॐ ह्रीं त्रिलोकबिन्दुपूर्वश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।32।।

जोगीरासा छन्द

समताभाव सकल जीवन पै, सम दम सयम भावे।
आरत रौद्र ध्यान निरवारे, धर्म शुक्ल उर लावे।।
ऐसो कथन कियो जिस माही, सो सामायिक जानो।
यही अग को लेय अर्घ्य कर, पूजो मन वच आनो।।

ॐ ह्रीं सामायिकप्रकीर्णकांगश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि0 स्वाहा।।33।।

जामे चौबीसो जिन स्तवन, अतिशय की विधि गाई।
गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष की, और घनी विधि आई।।
अग चतुर्विंशति स्तवन मे जिन चर्चा पहिचानो। यही ।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिस्तवप्रकीर्णकागश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि0।।34।।

जिनप्रतिमा जिन मान लीजिये, भक्ति घनी मन लाई।
तीर्थंकर इक को सिर नावत, हाथ जोडिकर भाई।।
वन्दनाग ये नाम जाम को, तामे या विधि जानो। यही ।

ॐ ह्रीं वन्दनाप्रकीर्णकागश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि0 स्वाहा।।35।।

जो परमाद थकी अघ उपजे, ताके मेटनभाई।
पश्चाताप विधि ईर्यापथ, पाक्षिक वार्षिक गाई।।
कहा अग प्रतिक्रमण प्रभू ने, दोषहरण को थानो। यही ।

ॐ ही प्रतिक्रमणप्रकीर्णकागश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि0 स्वाहा।।36।।

दर्शन ज्ञान चरित्र सुतप की, विनय कीजिये भाई।
गुरुजन गुणिजन की भी कीजे, विनयभाव शुभ लाई।।
इत्यादिक इस विनय अग मे, विनयाचार बखानो।

ॐ ह्रीं विनयप्रकीर्णकागश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि0 स्वाहा।।37।।

नर देवों के वन्दन की विधि, नति आवर्त सु भाई।
पर दक्षिण शुद्धी आदिक भी, श्रुति जैसी बतलाई।।
क्रम-क्रम सकल कही है यामे, शुभदायक सुखदानो। यही ।

ॐ ही कृतिकर्मप्रकीर्णकागश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि0 स्वाहा।।38।।

मुनियों भोजन पानी लेवें, यों चालें यों सोवें।
ऐसे वचन कहें मुख सेती, ऐसे अघ मल धोवें।।
मुनि आचार भनो मन माही, दश वैकालिक मानो।
यही अग को लेय अर्घ्य कर, पूजो मन वच आनो।।

ॐ ह्रीं दशवैकालिकप्रकीर्णकागश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि.।।39।।

मुनी महें बाईस परीषह, तिन फल सकल जताये।
देव अचेतन नर तिर्यक्कृत, जो उपसर्ग बताये।।
उत्तराध्ययन प्रकीर्णक माही, सकल शुभाशुभ जानो। यही ।

ॐ ह्रीं उत्तराध्ययनप्रकीर्णकागश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि.।।40।।

यह आचार मुनीश्वर जोगा, यह जोगा है नाही।
हो अयोग्य आचरण कभी तो, दण्डनीय मुनि माही।।
इत्यादिक अग कल्पविहारै, कहो सकल चित मानो। यही ।

ॐ ह्रीं कल्पव्यवहारप्रकीर्णकांगश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि ।।41।।

मुनि की किरिया द्रव्यक्षेत्र पुन, काले भाव यो जोगा।
सो ही विधि योगीश्वर ठाने, उपजे आत्म प्रयोगा।।
कल्पाकल्प प्रकीर्ण अग मे, ऐसी वार्ता जानो। यही ।

ॐ ह्रीं कल्पाकल्पप्रकीर्णकांगश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि० स्वाहा।।42।।

जिनकल्पी अरु स्थविरकल्पी, शिक्षा दीक्षा दानी।
गोषण आतम शुद्धि समाधी, किरिया सकल बखानी।।
उत्तमचर्या या आराधन, और घनीविध जानो। यही ।

ॐ ह्रीं महाकल्पप्रकीर्णकांगश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि० स्वाहा।।43।।

चतुर्निकाय देवकुल मे ज्यों, पावे सुरतन भाई।
पूजा ज्ञान तपस्या समकित, निर्जर हेतु बताई।।
पुडरीक अग माहि कह्यो यह, कथन जीव सुखदानो। यही ।

ॐ ह्रीं महापुण्डरीकप्रकीर्णकांगश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि.।।44।।

किस तप ध्यान थकी मुनि उपजे, अहमिन्दर पद भाई।
किस तपतें वा कौन ध्यानतैं, इन्द्रादिक हों भाई।।
इत्यादिक विधि जामें गाई, पुण्डरीक सो जानो।
यही अग को लेय अर्घ्य कर, पूजो मन वच आनो।।

ॐ ह्रीं महापुण्डरीकप्रकीर्णकांगश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि.।।45।।

जो जो अघ परमाद बढावे, ता नाशन विधि गाई।
जो जो पाप मिटे जा विधिते, सो सो सकल बताई।।
नाम निषिधका कहा तास का, ज्ञानागार बखानो। यही ।

ॐ ह्रीं निषिद्धिकाप्रकीर्णकागश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि.।।46।।

गीतिका छन्द

है आठ भेद निमित्त के सो, ज्ञान अद्भुत है सही।
तिसज्ञान की महिमा लखत ही, भाव मिथ्या ना रही।।
यह भलो ज्ञान अनूप फलदा, होय सम्यक् सहित जी।
सो जजो मन वच काय यह श्रुत, अरघ तै थुति कहत जी।।

ॐ ह्री अष्टांगनिमित्तश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि० स्वाहा।।47।।

आकाश में रवि चन्द्र तारा, मेघ-पटलादिक सही।
सध्यासमय के चिह्न और, अनेक बातन को कही।।
जो होय इनके निमित सेती, शुभाशुभ सो जानिये।
अन्तरिक्ष हेतुक ज्ञान पूजो, श्रेष्ठ सम्यक् मानिये।।

ॐ ही अन्तरिक्षनिमित्तश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि० स्वाहा।।48।।

भूमि मे रत्नादि कचन, धातु खानि सुजान है।
इन आदि और अनेक रचना, भूमि की पहिचान है।।
सो लखे ऐसो निमित्त ज्ञानी, शुभाशुभ जाने सही।
भौम को यह निमित लखिकरि, जजों सम्यक् श्रुत सही।।

ॐ ह्रीं सम्यग्भौमनिमित्तश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि० स्वाहा।।49।।

मनुज तिर्यक देह के शुभ, अशुभ चिह्न सु जानिये।
नख सुकेशादिक सुलखि कर, इष्ट अनिष्ट बखानिये।।
यह अग निमित्तज्ञान अद्‌भुत, महासुखदा जोय जी।
मैं जजों अग निमित्त सम्यक्, ज्ञान श्रुत सो होय जी।।

ॐ ह्रीं सम्यक्निमित्तश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि० स्वाहा।।50।।

सुन शब्द नर तिर्यञ्च के जो, शुभाशुभ जाने सही।
खर शब्द घूघू काक श्याल, सु सेहिका की ध्वनि कही।।
इन आदि वच सुन कहै सुखदुख, निमित्तस्वर सो जानिये।
मै जजो यह श्रुतज्ञान सम्यक्, अर्घ्य मन वच ठानिये।।

ॐ ह्रीं सम्यक्सारनिमित्तश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि० स्वाहा।।51।।

तिल मसा भोरी गाँठ रेखा, पॉव कर में जोय है।
तिस निमित्तज्ञानसु सकलजानें, शुभाशुभ जो होय है।।
यह ज्ञान व्यजन निमित नीको, शुभाशुभ निर्धार जी।
मैं जजो यह श्रुतज्ञान सम्यक्, अर्घ्य मन वच काय जी।।

ॐ ह्रीं सम्यग्व्यञ्जननिमित्तश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि० स्वाहा।।52।।

तन वृषभ स्वस्तिक कलश बज्र, सुमच्छ इन आदिक सही।
सब जोय लक्षण देखि इनको, शुभाशुभ भाषे यही।।
यह ज्ञान लक्षण निमित्त आछो, भले फल को दाय है।
मैं जजों यह श्रुतज्ञान सम्यक्, अरघ ले सुख पाय है।।

ॐ ह्रीं सम्यग्लक्षणनिमित्तश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि० स्वाहा।।53।।

तहँ पट सु भूषण शीश के कर, वर पगों के जान जी।
तिनको जु काटे मूषकादिक, भेद तिनको आन जी।।
यह भेद शुभ अर अशुभ भाखै, देखि के सुख दुख कहे।
यह छिन्न निमित्त सुज्ञान नीको, पूज्य मन वच तन चहे।।

ॐ ह्रीं सम्यक्छिन्ननिमित्तश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि० स्वाहा।।54।।

लो लखे सुपना शुभाशुभ को, भेद सुख दुख आन जी।
इन आदि अग अनेक समझे, सकल भेद सु आन जी।।
यह ज्ञान निमित्तनिमित्त जी को, बढे अतिशय धार जी।
सो जजो सम्यक् सहित मनवच, ज्ञानश्रुत सु सार जी।।

ॐ ह्रीं सम्यक्स्वप्ननिमित्तश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि० स्वाहा।।55।।

जोगीरासा छन्द

ये ही आठों निमित ज्ञान है, जग मे अचरजकारी।
तिनको देखि भरम सब जावे, और घने गुणधारी।।
सम्यक् जुत यह महाज्ञान नद, याको मुनि अवगाहे।
ऐसा लखि के मै भी मन वच, अर्घ्य जजो हरषाहे।।

ॐ ह्रीं सम्यक्निमित्तश्रुतज्ञानाय अर्घ्यं नि० स्वाहा।।56।।

लोक असखे क्षेत्र सुजाने, काल असखी भाई।
द्रव्य लखे परमाणु सूक्षम, गाँव आदि अधिकाई।।
ऐसो सर्वावधि ज्ञान लखि, मुनि बिन और न पावे।
ताते मै या ज्ञान जजत हो, याते मो ढिग आवे।।

ॐ ह्रीं सर्वावधिज्ञानाय अर्घ्यं नि० स्वाहा।।57।।

लोक असख्यो जाने क्षेत्रो, वरष असख्यो कालो।
कार्माण तन सुख मे जोवे, द्रव्य अपेक्षा वालो।।
परमावधि सु ज्ञान बडा है, सर्वावधि लघु पावे। ताते०

ॐ ह्रीं परमावधिसम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं नि० स्वाहा।।58।।

तीनो लोक क्षेत्र की जाने, काल पल्य परिमाने।
द्रव्य अपेक्षा कार्माण तन, भाव यथावत् जाने।।
अति उत्तम यह ज्ञान विषय है, देशावधि जनावे। ताते०

ॐ ह्रीं देशावधिसम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं नि० स्वाहा।।59।।

उपजे जबतें अवधिज्ञान उर, आप महा सुखदाई।
तबही तै बढे आयु लो, नाही कबहुँ घटाई।।
वर्धमान यह अवधिज्ञान है, समकित जुत मुनि पावे।
तातें मैं या ज्ञान जजत हों, याते मो ढिग आवे।।

ॐ ह्रीं हीयमानसम्यगवधिज्ञानाय अर्घ्यं नि0 स्वाहा।।60।।

हीयमान जो अवधि कह्यो है, ताको यह सोभावा।
उपजे तब ही ते घटवो कर, अंश सकल निरदावा।।
याका अंश बढे नहि कबहूँ, जिनवानी यों गावे। ताते0

ॐ ह्रीं वर्धमानसम्यगवधिज्ञानाय अर्घ्यं नि0 स्वाहा।।61।।

उपजे जो भव में उर आवे, अवधिज्ञान सुखकारी।
आयु अन्त तक रहे साथ मे, पीछे परभव लारी।।
अनुगामी है नाम इसी का, अवधिज्ञान कहलावे। तातें0

ॐ ह्रीं अनुगामिसम्यगवधिज्ञानाय अर्घ्यं नि0 स्वाहा।।62।।

अब जिस क्षेत्रर मे उपजे उर, ज्ञान अवधि सुखदाई।
तिसही थानक मे थिति जाकी, और क्षेत्र नहि जाई।।
अवधिज्ञान यह अननुगामिनी, परभव संग न जावे। तातें0

ॐ ह्रीं अननुगामिसम्यगवधिज्ञानाय अर्घ्यं नि0 स्वाहा।।63।।

जितने अंशो मे पैदा हो, उतना ही प्रिय भाई।
आयु अन्त लों तहॉ रहे थिर, घट बढ हो न कदाई।।
ज्ञान अवधि यह ज्ञान अवस्थित, सम्यक् रूप लहावे। तातें0

ॐ ह्रीं अवस्थितसम्यगवधिज्ञानाय अर्घ्यं नि0 स्वाहा।।64।।

अवधिज्ञान उपजे जबते उर, कबहुँ घट बढ जाई।
अंश बढे कबहूँ बहुजानो, कबहूँ अंश घटाई।।
यह अनवस्थित अवधिज्ञान है, सम्यक् जुत फल पावे। तातें0

ॐ ह्रीं अनवस्थितसम्यगवधिज्ञानाय अर्घ्यं नि0 स्वाहा।।65।।

सरलभाव मन विकलप जाने कुटिलभाव नहि जाने।
उत्तम सात आठ योजन भव, क्षेत्र काल की जाने।।
ऋतुमति मनपर्यय यों जाने, मनचिन्तित प्रिय भाई।
पर मन के विकलप जो जाने, ताहि जजों सुखदाई।।

ॐ ह्रीं ऋजुमतिमन·पर्ययसम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं नि० स्वाहा।।66।।

विपुलमती मनपर्यय ज्ञानी, पर के मन की पावे।
सरल गूढ जो मनके विकलप, सारे भेद लखावे।।
क्षेत्र अढाई द्वीप काल भी, पल्य असखो जानो।
ऐसे विकलप जाने पर मन, ज्ञान पूज्य सो जानो।।

ॐ ह्रीं विपुलमतिमनःपर्ययसम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं नि० स्वाहा।।67।।

तीनलोक नि सीम अलोक की, काल तीन की जाने।
जीव अजीव तत्त्व बरतेंगे, वर्ते बरतत जाने।।
गुण पर्याय लसें सो सो तब, जो जो स्वाग बनाये।
इत्यादिक सब जाने केवल, ज्ञान जजो थुति लाये।।

ॐ ह्रीं केवलज्ञानाय अर्घ्यं नि० स्वाहा।।68।।

ऐसे मतिश्रुत अवधिज्ञान लखि, मनपर्यय सुखदाई।
केवलज्ञान अनादि अपारी, जान्त खेद न पाई।।
याविध पाँचों ज्ञान सुसम्यक्, पूज्य कही जिनवानी।
ताते अर्घ्य बनाये जजों ये, मोहि मिले सुखदानी।।

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय पूर्णार्घ्यं नि० स्वाहा।।69।।

जयमाला

दीखे ज्ञान थकी सकल, ज्ञान भानु सो जान।
मैं पूजों मन वचन तन, मो उर प्रकटो आन।।

चाल मुनियानन्दी

ज्ञान की आन सब लोक परमान जी,
ज्ञान ही कर्म को मूल तें ढाय जी।
ज्ञान पुण्य पाप की राह बतलाय है,
ज्ञान यों जजो उर वसो मम आय है।।
ज्ञान ही देय शिवस्वर्ग थानक मही,
ज्ञान तै चक्रधर अर्धचक्री कही।
ज्ञान ही लोक मे सर्व सुखदाय है,
ज्ञान यो जजो उर वसो मम आय है।।
ज्ञान तै कर्म अरि जीतना ज्ञान है,
ज्ञान तै आपने पाप जिय हान है।
ज्ञान ही लोक का गुरु हितदाय है,
ज्ञान यो जजो उर वसो मम आय है।।
ज्ञान मे व्रत तप ध्यात शुभ होय जी,
ज्ञान ही सकल उर भरम को खोय जी।
ज्ञान अघमैल को धोय सुध लाय है,
ज्ञान यों जजो उर वसो मम आय है।।
ज्ञान चक्षु भले गूढ अर्थ जानिये,
ता थकी भेद शुभ वा अशुभ जानिये।
ज्ञान नद वारि तें पाप मल जाय है,
ज्ञान यों जजो उर वसी मम आय है।।
ज्ञान ही लोक का श्रेष्ठ रत्न जानिये,
ज्ञान ही धर्म सब जीव हित आनिये।
ज्ञान जग कर्मवन नाश करवाय है,
ज्ञान यों जजों उर वसो मम आय है।।

ज्ञान तै लोकदुःख जाय भय आन की,
ज्ञान तैं मोक्ष तिय वरत है जान जी।
ज्ञान रवि होय मिथ्यात्वतम जाय है,
ज्ञान यों जजो उर वसो मम आय है।।
ज्ञान मम कर्मक्षय कर नही जानिये,
मोहमद हरन को भलो भट मानिये।
ज्ञान सों सकल उर दुःख मिट जाय है,
ज्ञान यो जजो उर वसो मम आय है।।
ज्ञान जग भेद सब जान भ्रम भान जी,
ज्ञान तें मिटे उर क्रोध छल भान जी।
ज्ञान उर होय तब धर्म मन भाय है,
ज्ञान यो जजो उर वसो मम आय है।।
ज्ञान मति भेद शत तीन छत्तीस जी,
ज्ञान श्रुत अग पूर्व भेद सर्व ईश जी।
अवधि के भेद त्रय तथा बहु थाय है,
ज्ञान यो जजो उर वसो मम आय है।।
मनपर्यय ज्ञान के भेद दो जानिये,
ज्ञान शुद्ध केवला एकविध मानिये।
इन विषै गुन घना भलो फलदाय है,
ज्ञान यो जजों उर वसो मम आय है।।

दोहा- देव धर्म गुरुज्ञान तै, पावे जिये शिवधाम।
तातै मै शुधज्ञान को, मन वच करों प्रणाम।।

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय जयमालार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इति सम्यग्ज्ञानपूजासमाप्तः।

सम्यक्चारित्र पूजा

अडिल्ल- पञ्च महाव्रत सार समिति पॉचों सही,
गुप्ति तीन मिल तेरहविध जिनध्वनि कही।
यों ही शुभ चारित्र भवोदधि नाव है,
सो मै पूजो थाप यहॉ कर चाव है।।

ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्री सम्यक्चारित्र ! अत्र तिष्ठ ठः ठःस्थापनम्।

ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्र ! अत्र मम सन्निहितं भव भव वषट् सन्निधिकरणम् परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपामि

जोगीरासा की चाल

क्षीरसमान मनोज्ञ सुनिर्मल, त्रस जीवन बिन जानो।
उज्ज्वल क्षीरोदधि को जल ले, देखत उर हरषानो।।
कनक झारि मे धरकर लायो, भक्ति धार सुखदाई।
पूजो सम्यक्चारित मन वच, काय अग सब नाई।।

ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्राय जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा।।

बावन चन्दन अगर मिलाओ, नीर सुसग घिसायो।
ताकी गध मत्त हो अलिगण, चउ-दिश में उड आयो।।
ऐसा चन्दन गन्ध सहित जो, कनकपात्र धरि लाई। पूजों

ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्राय ससार7ताप-विनाशनाय चदनं नि. स्वाहा।

अक्षत उज्ज्वल मुक्ताफल से, खण्ड बिना चुनवाये।
श्रेष्ठ सुगन्धित विविध जाति के, जो मन अतिहरषाये।।
ऐसे अक्षत कनकथाल धरि, प्रचुर भक्ति उर लाई। पूजों

ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्राय अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतान् नि. स्वाहा।।

फूल मनोहर अति सुखदाई, नाना रग के प्यारे।
गन्ध महा जिन मॉहि घनी है, धार सुभग आकारे।।
तिन फूलन की माला करि मैं, भक्ति घनी मन लाई। पूजों
ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्राय कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।।
नानारस मिलवाय बनाये, चरु अति ही सुखदाई।
मोदक आदि मनोहर जानो, ज्यों नैवेद्य सुगाई।।
सो हम नीके पातर में धरि, विनय सहित पुनदाई। पूजों
ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्राय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।।
दीपक रतन तने करि लीने, घनी ज्योति बहु धारी।
कनकथाल भरि निजकर लायो, करन आरती भारी।।
मन वच तन शुभ भावन से मै, भक्ति हिये बहु लाई। पूजो
ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्राय मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।।
धूप भली दाहै तन वह्नि, ताते भगति पियारी।
नानागध तिस माहि मेलि के, कीनी अति सुखकारी।।
ऐसी दशधा धूप हाथ ले, अग्नी माहि जलाई। पूजों
ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्राय अष्टकर्म-विनाशनाय धूपं नि. स्वाहा।।
श्रीफल लौग बदाम सुपारी, खारक पिस्ता जानो।
और अनेक भले फल करले, आयो अति हरषानो।।
नीके पात्र धार के तन मन, भाव भक्ति सब लाई। पूजों
ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्राय मोक्षफल-प्राप्तये फल नि. स्वाहा।।
जल चन्दन अक्षत सुपहुप चरु, दीप धूप फल प्यारे।
मिला सर्व को अर्घ्य बनायो, सुन्दर पात्र पसारे।।
अपने कर ले करों आरती, नानाविध गुण गाई। पूजों
ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्राय अनर्घपद-प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।।

प्रत्येकार्घ्य

चाल-जोगीरासा

जिन आज्ञा जुत मुनि वचन बोलें, सुन सब जिये सुख पावें।
हिंसा वचन नहीं ऋषि भाखें, करुणा अति मन ल्यावें।।
शुद्ध अहिंसाव्रत तब होवे, वच अपने वश राखें।
या जुत सम्यक्चारित सोई, पूजों व्रत अभिलाखे।।

ॐ ह्रीं वचनाहिंसामहाव्रतसहितसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं नि.।।1।।

मन से हिंसाभाव निवारें, करुणाजुत मन धारी।
महावरत तब होय अहिंसा, मन राखें हितकारी।।
मुनि किरपानिधि सब जगबधू, मन तें दोष न भाखे। या जुत

ॐ ह्रीं मनोहिंसारहिताहिंसामहाव्रतसहितसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

षट्कायिक जीवन पीडाहर, मारग देख सु चालें।
सूक्षम बादर सब पर करुणा, चार हाथ लखि हाले।।
शुद्ध अहिंसा व्रत तब होवे, यह जिनवाणी भाखे। या जुत

ॐ ह्रीं ईर्यासमितिसहिताहिंसामहाव्रतयुतसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

पिछी कमडलु पुस्तक निज कर, जोवें धरे उठावे।
दयाभाव सब जीवन ऊपर, ताते यह विधि लावें।।
महावरत तब शुद्ध अहिंसा, त्रस थावर ही राखें। या जुत .

ॐ ह्रीं आदाननिक्षेपणसमितियुताहिंसामहाव्रतयुतसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

जीवदया के हेतु महामुनि, दोष हटा कर खावें।
समतासागर सब जियबन्धु, खान-पान सुध पावें।।
तबहि अहिंसा व्रत की शुद्धी, होय इसी विधि राखे।। या जुत

ॐ ह्रीं एषणासमितिसहिताहिंसामहाव्रतयुतसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

प्रथम महाव्रत जान अहिंसा, सो या विधि समझायो।
पाँच भावना ताकी ऐसी, इनसे शुद्ध बतायो।।
यही अहिंसा महासुव्रत है, सब जीवन पत राखे।
या जुत सम्यक्चारित सोई, पूजों व्रत अभिलाखे।।

ॐ ह्रीं पञ्चभावनायुताहिंसामहाव्रतसहितसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं।।6।।

क्रोध सहित वच असत कहा है, करे प्रतीति न कोई।
ताते क्रोध बिना सच भाषे, वचन महाशुभ होई।।
ऐसो सत्य महाव्रत धारी, जग गुरुराज सुभाखे। या जुत

ॐ ह्रीं क्रोधरहितसत्यमहाव्रतसहितसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं।।7।।

लोभ तनै वश साँच न बोले, ना परतीति सुभाई।
लोभ बिना परमारथ भाषे, सत्य वचन सुखदाई।।
या विध सत्य महाव्रत उत्तम, भवदधि परता राखे। या जुत

ॐ ह्रीं निर्लोभभावनायुतसत्यमहाव्रतसहितसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

भयजुत प्राणी साँच न बोले, कहे झूठ उकताई।
भय से भीत अन्यथा भाषे, यह निश्चय लखि भाई।।
भीति बिना जो होय महाव्रत, सो जिय का सत राखे। या जुत

ॐ ह्रीं भयरहितसत्यमहाव्रतसहितसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं नि।।9।।

हास्य विषें वच साँच न जाने, हास्य सत्य को घाते।
हास्य तहाँ सतवैन न उपजे, हास्य बिना सत पावे।।
ताते हास्य बिना जु महाव्रत, शुद्ध होय जिन भाखे। या जुत

ॐ ह्रीं हास्यरहितसत्यमहाव्रतसहितसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं।।10।।

वच शास्त्रानुकूल ही कहना, वच अनुवीचि प्रमानो।
शास्त्रविरुद्ध कहे नहि कबहूँ, सत्य विरतधर मानो।
जो अनुवीचि वच प्रिय होवे, सत्य महाव्रत भाखे। या जुत

ॐ ह्रीं अनुवीचिभाषणयुतसत्यमहाव्रतसहितसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।11।।

पाँच भावना सत्यविरत की, पाल कहे सच वयना।
सत्यमहाव्रत सहित भावना, पाप हरे सुख झरना।।
ऐसे सत्य महाव्रत की जो, पल पल महिमा राखे। या जुत
ॐ ह्रीं पञ्चभावनायुताहिंसामहाव्रतसहितसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।12।।

सूने घर में नाही जावे, जानें चोरी त्यागी।
भूमि परी विसरी पर वस्तू, लेय नहीं विनरागी।।
सो अचौर्य महाव्रत धर यति, भाव प्रतिज्ञा राखे। या जुत
ॐ ह्रीं शून्यगृहप्रवेशरहिताचौर्यमहाव्रतयुतसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।13।।

ऊजडगृह मे वास करे तो, चोरी दूषण पावे।
ताते छोडे घर के माही, मुनि नहि ध्यान लगावे।।
व्रत अचौर्य यह जान महाव्रत, निजमन वश मे राखे। या जुत
ॐ ह्रीं निर्जनगृहवासरहिताचौर्यमहाव्रतयुतसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।14।।

निजथल पर का आना रोके, सो चोरी अघ पावे।
व्रत अचौर्य मे यातें यतिजन, औगुण मोटो लावे।।
शुद्ध अचौर्य महाव्रत जानो, जो यह दोष न राखे। या जुत
ॐ ह्रीं परोपरोधाकरणयुताचौर्यमहाव्रतयुतसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।15।।

दाता दे सो भोजन ले मुनि, आप न सेन बतावे।
देय इशारा भोजन लें तो, चोरी दूषण पावे।।
दोष बिना लीये शुध भोजन, सो अचौर्य व्रत भाखे। या जुत
ॐ ह्रीं भैक्ष्यशुद्धियुताचौर्यमहाव्रतयुतसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं।।16।।

आपस माहीं धर्मी जनसों, विसवाद ना करही।
समता धार त्याग यह दूषण, व्रत अचौर्य मन धरहीं।।

धर्मी से गौवत्सप्रीतिसम, प्रीति किये सुख चाखे।
या जुत सम्यक्चारित सोई, पूजों व्रत अभिलाखे।।

ॐ ह्रीं सधर्माविसंवाददोषरहिताचौर्यमहाव्रतयुतसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।17।।

पञ्च भावना ऐसी इन जुत, वृत्त अमल सु कहावे।
इन्हें भुलाये चोरि दोष हो, नहि निमित्त मिलावे।।
दोष गये शुध होय अचोरी, महाविरत ध्वनि भाखे। या जुत

ॐ ह्रीं पञ्चभावनायुताचौर्यमहाव्रतसहितसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।18।।

नारिकथा सुनके जो मनमे, तिय अनुराग बढावे।
ताको शील न लहे दूषण को, या बिन शील रहावे।।
रामाराग कथा से वर्जित, ब्रह्मचर्य शुभ भाखे। या जुत

ॐ ह्रीं स्त्रीरागकथाश्रवणदोषरहितब्रह्मचर्यमहाव्रतसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।19।।

अतिसुन्दर नारीतन देखे, बार बार धरि रागा।
ताके शील सुरत्न विरत को, मोटो अवगुन लागा।।
ऐसे दोष बिना सुशील व्रत, भवदधि परता राखे। या जुत

ॐ ह्रीं स्त्रीमनोहरांगनिरीक्षणदोषरहितब्रह्मचर्यमहाव्रतसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।20।।

मुनिपद पहले राजसमय में, भोग किये थे भारी।
तिनकी याद किये से दूषण, शील लहे दुखकारी।।
पूर्वरतानुस्मरण रहित यों, शील महाव्रत राखे। या जुत

ॐ ह्रीं पूर्वरतानुस्मरणरहितब्रह्मचर्यमहाव्रतसहितसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।21।।

भोजन नाहि गरिष्ट करें मुनि, शील सुरक्षा काजे।
दधि घृत मेवादिक के खाये, ब्रह्मचर्य व्रत लाजे।।

तातैं ऐसा भोजन तजि के, शील महाव्रत राखे।
या जुत सम्यक्चारित सोई, पूजों व्रत अभिलाखे।।

ॐ ह्रीं वृष्येष्टरसत्यागसहितब्रह्मचर्यमहाव्रतसहितसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।22।।

अपने तन के मर्जन चूरन, न्हृन धोवना लावे।
ऐसी किरिया जो मुनि राखे, शील दोष को पावे।।
तातें तन श्रृंगाररहित जो, शील महाव्रत राखे। या जुत

ॐ ह्रीं स्वशरीरसंस्काररहितब्रह्मचर्यमहाव्रतसहितसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।23।।

पञ्च भावना ऐसी पाले, शील करत शुध भावे।
ताकी मुक्ति मनोहर रमणी, वेगहि पास बुलावे।।
ऐसो शील महाव्रत नीको, जो मुनि दृढ करि राखे। या जुत

ॐ ह्रीं पञ्चभावनायुतब्रह्मचर्यमहाव्रतसहितसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।24।।

कोमल कठिन चीकनो रूखो, लघु शीतोष्ण महानो।
ऐसे आठ विषय सों विरकत, परिग्रहत्याग सुजानो।।
आतम के अनहित के कारण, तामे मन नहि राखे। या जुत

ॐ ह्री स्पर्शनेन्द्रियशुभविषयरहितग्रहत्यागमहाव्रतसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।25।।

खट्टा मीठा कड़ुवा जानो, अरु कषायलो भाई।
और चरपरा पाँच विषय में, रसना बहु ललचाई।।
ये रसना के भोग शुभाशुभ, भोग परिग्रह राखे। या जुत

ॐ ह्रीं रसनेन्द्रियशुभविषयरहितपरिग्रहत्यागमहाव्रतयुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।26।।

नासा इन्द्रिय विषय शुभाशुभ, भोग परिग्रह सोई।
गध विषय ललचाय जीव ते, परिग्रही अतिमोही।।

तातै इनके त्यागि भये जे, परिग्रहत्यागी सुभाखे।
या जुत सम्यक्चारित सोई, पूजों व्रत अभिलाखे।।

ॐ ह्रीं घ्राणेन्द्रियशुभाशुभविषयरहितपरिग्रहत्यागमहाव्रतयुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।27।।

नेत्र सुजानै लाल पीत वा, श्याम सब्ज अरु श्वेत।
तामें राग द्वेष उपजावे, परिग्रही जन चेत।।
इनि को त्याग सुत्याग परिग्रह, मन वच तन कर राखे। या जुत

ॐ ह्रीं नेत्रेन्द्रियशुभाशुभविषयरहितपरिग्रहत्यागमहाव्रतसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।28।।

तीन शब्द है सचित अचित अरु, मिश्र शब्द सुखदाई।
इनमे राग रु द्वेष करे मुनि, सोइ परिग्रह भाई।।
ताते इनके त्यागे परिग्रह, त्याग महाव्रत भाखे। या जुत

ॐ ह्रीं श्रोत्रेन्द्रियशुभाशुभविषयरहितपरिग्रहत्यागमहाव्रतसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।29।।

पॉच भावना पञ्चम व्रत की, त्याग कहो इन माहीं।
इन जुत परिग्रहत्याग महाव्रत, शुद्ध होत शक नाहीं।।
पॉच भावना सहित होय जो महाव्रती मुनी भाखे। या जुत

ॐ ह्रीं पञ्चभावनायुतपरिग्रहत्यागमहाव्रतसहितसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।30।।

अडिल्ल छन्द

चार हाथ भू शोध, पाँव मुनिवर धरें।
इत उत देखन त्याग, काय निज वश करे।।
सो शुध ईर्यासमिति, महा सुखदाय है।
या जुत सम्यक् व्रत, जजों शिवदाय है।।

ॐ ह्रीं यत्रतत्रावलोकन दोषरहितेर्यासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।31।।

जब मुनि करें विहार, दयानिधि सार जी।
चालें नही सुताव, बडे डग धार जी।।
ऐसो दोष निवार, समिति पग धार है। या जुत०

ॐ ह्रीं शीघ्रगमन-दोषरहितेर्यासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।32।।

रागवचन सुन यती, राह चलते नही।
राग द्वेष कर चचल, चित करते नही।।
तातें ईर्यासमिति, शुद्ध सुखदाय है। या जुत०

ॐ ह्रीं पंथगमनकालरागवचन-श्रवणचित्तचांचल्यदोषरहितेर्या-समितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।33।।

राह चलत वच दुष्ट, श्रवण करके सही।
द्वेषभाव करि करे, चित्त को चल नही।।
तब शुध ईर्यासमिति, होय हितदाय है। या जुत०

ॐ ह्रीं मार्गगमनकालदुष्टवचन-श्रवणद्वेषरहितेर्यासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।34।।

राह चलत श्री मुनिवर, कबहुं न यों करें।
पडी वस्तु पग कर ते, कबहुं न यों धरे।।
सो यह दोष निवार, समिति सुध लाय है। या जुत०

ॐ ह्रीं मार्गस्थवस्तुग्रहण-दोषरहितेर्यासमितिसहित-सम्यक्- चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।35।।

सर्व दोष ते रहित, मुनी मग जाय है।
जू्ा के परमान, भूमि दिखवाय है।।
ऐसी समिति दयालु, भाव कर लाय हैं। या जुत०

ॐ ह्रीं सर्वदोषरहितेर्यासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं।।36।।

जो जिस देश मझार, वस्तु को नाम है।
सो ही कहना सत्य, वचन शुभधाम है।।

जनपद सत् कथनीय, समिति सुखदाय है।
या जुत सम्यक् व्रत, जजो शिवदाय है।।

ॐ ह्रीं जनपदसत्यभाषासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।37।।

रौढक जाको नाम, सकल जन यों कहे।
सोई कहना सवृति. सत सुधि में रहे।।
ऐसो भी वच भाषा, समिति सु जानिये। या जुत0

ॐ ह्रीं सवृतिसत्यभाषासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं।।38।।

चित्र मनुज हय हाथी, वृष के कीजिये।
फिर तिनको नर पशु, नाम रख लीजिये।।
यही स्थापना सत्य, समिति वच जानिये। या जुत0

ॐ ही स्थापनासत्यभाषासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।39।।

जाको जग मे नाम, प्रसिद्ध सुगाइये।
सोई कहना नाम, दोष नहि पाइये।।
नाम सत्य यह सार, समिति वच जानिये। या जुत0

ॐ ह्रीं नामसत्यभाषासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं।।40।।

यह रग काला पीला, लाल हरा सही।
ऐसा कहना रूप, सत्य भाषा सही।।
ये ही भाषा सत्य, वचन मन आनिये। या जुत0

ॐ ह्रीं रूपसत्यभाषासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं।।41।।

यहै पदारथ बडा, यहै छोटा सही।
कहे अपेक्षा वचन, घने परगट मही।।
यही सत्य परतीति, समिति वच जानिये। या जुत0

ॐ ह्रीं प्रतीत्यसत्यभाषासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं ।।42।।

नैगमनय की रीति, वचन सो भाषिये।
कर मन ठीक जु वस्तु, हिये में राखिये।।
सत है सो व्यवहार, समिति वच आनिये। या जुत०

ॐ ह्रीं व्यवहारसत्यभाषासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।43।।

शक्र विषे बल ऐसा, भू उल्टी करे।
भूमि जान अनादि, नाहि कबहूँ टरे।।
ऐसा कहना सम्भावित, सत जानिये। या जुत०

ॐ ह्रीं सम्भावनासत्यभाषासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।44।।

मेरु असखे द्वीप नरक सुरथल सही।
कदमूल मे जीव, अनते जिन कही।।
भावसत्य सजोय, समिति वच जानिये। या जुत०

ॐ ह्रीं भावसत्यभाषासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।45।।

का को किसकी उपमा, देकर भाषिये।
ज्यों दानी सुरवृक्ष, जगत में आकिये।।
सो उपमा सत जान, समिति वच ठानिये। या जुत०

ॐ ह्रीं उपमासत्यभाषासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।46।।

प्राण जाय तो जाय, असत भाषें नहीं।
भाषे तो सत्य वैन, जिसे जिनध्वनि कही।।
सो ही भाषासमिति, भव्य उर आनिये।
या जुत सम्यक् व्रत, जजों शिवदाय है।।

ॐ ह्रीं भाषासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।47।

पात्र निमित्त सु भोजन, जो दाता पचे।
तो यह दोष उद्देशिक, दाता सिर रचे।।
सो भोजन मुनि तजें, एषणा लाय जी। या जुत०

ॐ ह्रीं औद्देशिकदोषरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।48।।

पात्र जनों को देख, रसोई जो करे।
दाता अध्यदि दोष, आपने सिर धरे।। सो ।।

ॐ ह्रीं अध्यदिदोषरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।49।।

जो मुनि को दे भोजन, अचित मिलायकें।
'पूतिकर्म' यह दोष, सुदातृ उपाय के।। सो ।।

ॐ ह्रीं पूतिकर्मदोषरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।50।।

मुनि को भोजन देय, असयमि साथ जी।
तो दाता के दोष, 'मिश्र' विख्यात जी।। सो ।।

ॐ ह्रीं मिश्रदोषरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।51।।

थानान्तर भोजन दे, मुनि को लायके।
तो स्थापित ले दोष, दातृ अधिकाय कें।। सो ।।

ॐ ह्रीं स्थापितदोषरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।52।।

देव पितर को कियो, मुनी को दे दही।
तो दाता 'बलि' दोष, आप सिर ले सही।। सो ।।

ॐ ह्रीं बलिदोषरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।53।।

वेग वेग वा धीरे, मुनि आहार दे।

'प्रावर्तित' अघ सोय, दातृ के सिर बँधे।। सो ।।

ॐ ह्रीं प्रावर्तितदोषरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।54।।

मुनिभोजन का थान, प्रकाशित जो करे।

'प्राविष्करण' सु दोष, दातृ निज सिर धरे।। सो ।।

ॐ ह्रीं प्राविष्करणादोषरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।55।।

विद्या-क्रीत आहार, मुनी को दान दे।

क्रीत दोष तब दाता, अपने शीश ले।। सो ।।

ॐ ह्रीं क्रीतदोषरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।56।।

ऋण कर कृत आहार, मुनी को दे सही।

सो दाता 'ऋण' दोष, आप सिर ले कही।। सो ।।

ॐ ह्री प्रामृष्यदोषरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।57।।

निजी अन्न बदलाय, दान मुनि को करें।

'परिवर्तन' अघ सोय, दातृ सिर पर धरे।। सो ।।

ॐ ह्रीं परिवर्तनदोषरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।58।।

अन्य ग्राम ते आय, दान मुनि को करे।

'अभिघट' कहिअघ सोय, आप सिर पर धरे।।

सो भोजन मुनि तजें, एषणा लाय जी।

या जुत सम्यक् व्रत, जजों शिवदाय है।।

ॐ ह्रीं अभिघटदोषरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।59।।

बँधी वस्तु मुख खोल, दान दे लाय जी।
'उद्भिन' अघ सिर दातृ, लेय अति भाय जी।।
सो भोजन मुनि तजें, एषणा लाय जी।
या जुत सम्यक् व्रत, जजों शिवदाय है।।

ॐ ह्रीं उद्भिन्नदोषरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।60।।

ऊपर खण की वस्तु, लाय मुनि दान दे।
'मालारोहण' नाम, दातृ अघ सिर सु ले।। सो ।।

ॐ ह्रीं मालारोहणदोषरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।61।।

त्रास और भयकार, दान मुनि को करे।
दोष 'अच्छेद्य' सुनाम, आपने सिर धरे।। सो ।।

ॐ ह्रीं अच्छेद्यदोषरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।62।।

जाको धनी न होय, दान दे और जी।
'अनीशार्थ' अघ दातृ, लहे तिस ठौर जी।। सो ।।

ॐ ह्रीं अनीशार्थदोषरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।63।।

षोडश दोष सुजान, मुनी आहार मे।
दाता पाले जान, सोय बुध सार में।। सो ।।

ॐ ह्रीं षोडशोद्गमनदोषरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।64।।

चाल जोगीरासा

जाय यती दाता के घर में, बालक नाहि खिलावे।
नहि श्रृगारे नहि पुचकारे, बालक को न रमावे।।

'धात्री' दोष तजें मुनिवर यह, समिति एषणा पाले।
या जुत सम्यक्चारित पूजों, सो मेरे अघ टाले।।

ॐ ह्रीं धातृदोषरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।65।।

दाता के घर जाय यतीश्वर, इत उत बात बतावे।
देशान्तर की कहे वार्ता, तो मुनि दोष बढावे।।
'दूत' दोष यह तजे महामुनि, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं दूतदोषरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।66।।

निमितज्ञान की बात कहे मुनि, दाता को सुखदाई।
भोजन फेर गहे घर वाके, तो सिर दोष चढाई।।
निमितदोष ऋषिराज तजे यह, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं निमित्तदोषरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।67।।

दाता के घर जाके मुनिवर, कह प्रभुता की बातें।
इस विधि से सुन्दरतम भोजन, कबहुँ यतीजन पाते।।
यह 'आजीवक' दोष तजें यति, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं आजीवकदोषरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।68।।

जो मुनि दाता को सुसुहावन, बात कहे घर जाई।
भोजन ताके आप करे ऋषि, तो अघ लेय उपाई।।
दोष 'वनीपक' तजि मुनि याको, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं वनीपकदोषरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।69।।

जो मुनि दाता के घर जाकर, औषधि भेद बतावे।
नाडी देख सुरोग बतावे, फिर भोजन को खावे।।

दोष 'चिकित्सा' होय त्याग के, समिति एषणा पाले।
या जुत सम्यक्चारित्र पूजो, सो मेरे अघ टाले।।

ॐ ह्रीं चिकित्सादोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।70।।

जो मुनि भोजन लेय क्रोधयुत, दाता के घर जाई।
तो मुनि के शिर दोष चढते है, सो भोजन दुखदाई।।
'क्रोध' दोष यह तजे मुनीश्वर, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं क्रोधदोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।71।।

हम तपसी दीरघकुल धारी, ज्ञान धरे अधिकाई।
यो कह भोजन ले दाता घर, मानसहित हो भाई।।
'मान' दोष यह तजे मुनीश्वर, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं मानदोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।72।।

भोजन को मुनि जाय नगर मे, दाता के घर जाई।
भोजन लेय कपट कर चित मे, नाना छल दिखलाई।।
'माया' दोष तजे इसको मुनि, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं मायादोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।73।।

लोभविवश हो दाता के घर, ले भोजन यति जाई।
स्वाद लम्पटी रसना पीड्यो, तो शिर दोष चढाई।।
लोभ दोष को तज के यतिवर, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं लोभदोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।74।।

भोजन पहले दाता की थुति, जों मुनिराज उचारे।
तो अपने तप सयम माही, दूषण ही निरधारे।।
पूरबथुति अघ को तज के यों, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं पूर्वस्तुतिदोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।75।।

भोजन दाता के घर ले मुनि, पीछे यह विधि लावे।
दाता की थुति करके भारी, आप दोष लिपटावे।।
पीछे थुति यह दोष त्याग मुनि, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं पश्चात्स्तुतिदोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।76।।

मुनि भोजन ले जिम दाता घर, तो प्रसन्नता काजे।
दाता अपनी विद्याएँ दिखला के, दोष आपको साजे।
विद्यादोष छोड यह मुनिवर, समिति एषणा पाले।
या जुत सम्थक्चारित पूजो, सो मेरे अघ टाले।।

ॐ ह्रीं विद्यादोषरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।77।।

मन्त्र तन्त्र जत्रादिक अतिशय, चमत्कार बतलावे।
पीछे भोजन लेय यतीश्वर, तो शिर पाप बँधावें।।
मन्त्रदोष यह तज के योगी, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं मन्त्रदोषरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।78।।

जो मुनि काजल नेत्रनि को दे, चूरण आदि बतावे।
यों कर भोजन ले दाता घर, तो सिर दोष बँधावे।।
'चूरण' अघ को छोड महामुनि, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं चूर्णदोषरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।79।।

वशीकरण आदिक की युक्ती, गृहियों को दिखलावे।
पीछे से मुनि भोजन लेवे, तो सयम मल पावे।।
'मूलकर्म' दूषण तज के यह, समिति एषणा पाले।
या जुत सम्यक्चारित पूजों, सो मेरे अघ टाले।।

ॐ ह्रीं मूलकर्मदोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।80।।

भोजन भक्ष्य अभक्ष्य किसो है, यो शका करि खाये।
तो मुनि अपने सजम में यों, शकित दोष लगावे।।
ऐसो 'शकित' दोष त्याग मुनि, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्री शंकितदोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।81।।

दाता के कर चिकने होवें, चिकने वासन जोवें।
तामे भोजन जो मुनि लेवे तो सदोष वे होवे।।
मृक्षितदोष तजे यह मुनिवर, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं मृक्षितदोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।82।।

सचित वस्तु का रक्खा भोजन, मुनिवर कबहुं न खावे।
अपने सजम भार लाभ या, सावधान चित लावे।।
यह निक्षिप्त दोष तजि के मुनि, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं निक्षिप्तदोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।83।।

भोजन ढाके सचित वस्तु सों, तो यति नाही खावे।
ऐसो कारण आय मिले तो, भोजन ही तज जावे।।
पिहित दोष को छोड यतीश्वर, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं पिहितदोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।84।।

पूरब नेह थकी भोजन ले, तो मुनि दूषण पावे।
मोहवचन मुख तैं आलापे, सो सजम खो जावे।।
हारदोष यह त्याग यतीश्वर, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं हारदोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं।।85।।

सूतक रोगी वृद्ध बाल जो, जलती अग्नि बुझावे।
गर्भवती तित होय नपुसक, इनि कर मुनि नहि खावे।।
दायक दोष तजे मुनिनायक, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं दायकदोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।86।।

ऑचल सो बालक तजनारी, जो मुनि को पडगाहे।
तो याके कर को भोजन ऋषि, आय कबहुं नहि खाहे।।
सव्यवहरण दोष तजि के मुनि, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्री संव्यवहरणदोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।87।।

वस्तु सचित्त अचित्त मिली जो, भोजन मे मुनि खावे।
तो उसके अतिदूषण लागे, जग में निन्दा पावे।।
मिश्रदोष यह तजे मुनीश्वर, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं उन्मिश्रदोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।88।।

जली और अधपक्की चीजे, वा अप्रासुक लाई।
भोजन में यतिवर को देवे तो लेवे न कदाई।।
दोष अपरिणत को मुनि त्यागे, समिनि एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं अपरिणतदोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।89।।

पात्र खड़ी हरताल गेरु से, यदि लिपटा हो भाई।
भाजी खिचडी कडी आदि या, लिपटी देय दिखाई।।
लिप्तदोष मानें सत साधु, समिति एषणा पाले।
या जुत सम्यक्चारित पूजों, सो मेरे अघ टाले।।

ॐ ह्रीं लिप्तदोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।91।।

वस्तु हाथ से द्रवित होय जो, या प्रदत्त तज खावे।
तो मुनि नायक अपने मयम, माही दोष लगावें।।
त्यजनदोष यह तजकें मुनिवर, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं त्यजनदोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपानीति स्वाहा।।92।।

उष्ण माहि शीतल शीतल मे, उष्ण मिला कर खावे।
तो अपनो सत सजम नीको, ताके दोष लगावे।।
दोष सयोजन नाम त्याग गुरु, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्री सयोजनदोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।93।।

बत्तिम ग्रास मुनी का भोजन सो ही उत्तम होई।
तासे अधिक न मुनिवर खावें, आज्ञा भग न सोई।।
अप्रमाण इस अघ को छोडे, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्री अप्रमाणदोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।94।।

मीठो भोजन रुचि से खावे, दाता को जु सरावे।
बहु आसक्त होय भोजन ले, सो सिर दोष मडावे।।
दोष अगार तजे गुरु याको, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्री अंगारदोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।95।।

जो भोजन मन चाहत नाही, खावत अरुचि कराहे।
दाता की निन्दा फिर ठानें, तो निज सजम दाहे।।
धूमदोष याको मुनि त्यागे, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ही धूमदोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।96।।

दोहा-ऐसे तेइस दुगुन मल, टालत है मुनिराय।
तब भोजन करते सही, ते गुरु जजो सुभायँ।।

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद्दोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।97।।

मुनि के भोजन करते नभ से, काक वीट कर जावे।
देखे मुनि जो भोजन छाँडे, हिये खेद ना पावे।।
काकदोष यह तजे यतीश्वर, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं काकान्तरायरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।98।।

अपने पग जो अशुभ वस्तु से, लिपटे होय कदाई।
देखे मुनि तो भोजन छॉडे, अतराय गिन भाई।।
दोष अशौच्य तजे मुनि याको, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं अशौच्यान्तरायरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।99।।

जो मुनि भोजन को मग जाते, करता वमन निहारे।
तो तादिन आहार तजे यह, अन्तराय सु विचारे।।
छर्दि दोष को तजके मुनिवर, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं छर्दन्तरयराहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।100।।

रुदन करन्ते परको देखे, भोजन बेला कोई।
अन्तराय तो होय मुनी को, भोजन करे न सोई।।
'रुदनदोष' यह तजे महामुनि, समिति एषणा पाले।
या जुत सम्यक्चारित पूजो, सो मेरे अघ टाले।।

ॐ ह्रीं रुदनान्तरायरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।101।।

निज पर की मुनि लाहू देखे, भोजन बेला कोई।
अन्तराय तो लहे सुगुरुवर, समताधर जित सोई।।
रुधिर दोष यह तजे मुनीश्वर, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्री रुधिरदोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।102।।

अश्रुपात निज पर के देखे, भुक्तिकाल मुनिराई।
अन्तराय तो गिने जगद्गुरु करुणासागर भाई।।
अश्रुपात दूषण, यह तजके, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्री अश्रुपातान्तरायरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।103।।

भोजन हेतु पात्र को जघा, ऊपर गेहि चढावे।
तो मुनिनाथ तजे भोजन को, अन जल पिये न खावे।।
जघानाम दोष तजकें यति, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं जघास्पर्शान्तरायरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।104।।

साधु हाथ यदि घुटने नीचे, का अस्पर्श लहावे।
अन्तराय तो माने यतिवर, भोजन-गृद्धि हटावे।।
तज 'प्राव्रत्यदोष' को निश्चय, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं प्राव्रत्यान्तरायरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।105।।

शिर नाभीतल नीचा करके, द्वार निकाल बुलावे।
अन्तराय तो माने यति जो, आगमविधि को ध्यावे।।
नाभ्योधनिर्गमन दोष तजि, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं नाभ्योधनिर्गमनरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।106।।

तजी वस्तु भोजन में आई, निश्चय से जब जानें।
अन्तराय मानें सत्साधू, आकुलता नहि आनें।।
प्रत्याख्यान जु दोष तजे यह, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानान्तरायदोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।107।।

जीवघात निज पर कर सेती, भोजन बेला होई।
तो मुनि देख तजें भोजन को, दयाभाव धर सोई।।
जन्तुवधदूषण तज के मुनि, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं जन्तुवधान्तरायरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।108।।

भोजन करते हाथों में से, काक ग्रास ले जावे।
तो मुनिनाथ तजें भोजन को, ता दिन फेरि न खावे।।
काकपिण्ड यह दोष तजे मुनि, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं काकपिण्डान्तरायरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।109।।

भोजन करते ग्रास पडे भू, दातृ पात्र कर सेती।
तो मुनि जीमन नाहि करे फिर, है मर्यादा येती।।
पाणिपात दूषण तज के मुनि, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं पाणिपातान्तरायरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।110।।

भोजन करते पाणिपात्र मे, जीव मरे यदि आई।
तो ऋषिराज तजें भोजन को, करुणाभाव उपाई।।
पाणिपात्र जियघात दोष तज, समिति एषणा पाले।
या जुत सम्यक्चारित पूजों, सो मेरे अघ टाले।।

ॐ ह्रीं पाणिपात्रजन्तुघातान्तरायरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।111।।

भोजन बेला आमिष देखे, तो भोजन गुरु छॉडे।
तन विरकत सयम के लोभी, पर में राग न मॉडे।।
आमिषदर्शन दोष त्याग के, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं आमिषदर्शनान्तरायरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।112।।

भोजन बेला जगद्गुरु को, होय उपद्रव आई।
अन्तराय माने जीमन मे, समताभाव समाई।।
दोषोपसर्ग त्याग के मुनिवर, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं उपसर्गान्तरायरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।113।।

भोजन करते पगो बीच से, पञ्चेन्द्रिय निकसावे।
तो आहार न लेवे गुरुवर, सयम नाहि गमावे।।
पादान्तरजीवगमन दोष तजि, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं पादान्तरजीवगमनान्तरायरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।114।।

भोजन करत दाता कर से, पात्र यदि गिर जावे।
तो आहार तजे गुरु ज्ञानी, सयम भाव पलावे।।
पात्रसम्पतन दोष त्याग के, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं भोजनपात्रसम्पतनान्तरायरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।115।।

भोजन करते अपने तन से, मुनि जो मल निकसावे।
तो आहार तजे गुरु ज्ञानी, जिन आज्ञा उर ध्यावे।।
दोष उचार त्याग वृषलोभी, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं उच्चारत्यागान्तरायरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।116।।

भोजन करते अपने तन से, निकले मूत्र अजाने।
तो आहार तजे गुरु ज्ञानी, जिनधुनि रहस पिछाने।।
दोष प्रसार त्याग के मुनिवर, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं प्रसारान्तरायरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।117।।

भोजन हेतु भूल से यदि मुनि, शूद्र गेह में जावे।
तो गुरुदेव तजे जीमन को, तिस दिन अनशन लावें।।
दोष अभोजनगृह प्रवेश तज, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं अभोजनगृहान्तरायरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।118।।

मूर्च्छा खाय गिरे यति अथवा, पर को मूर्च्छित देखे।
भवसागर के तीर गये यति, भोजन भक्ष्य न लेखे।।
पतनदोष को त्याग मुनीश्वर, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं पतनान्तरायरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।119।।

भोजन करते कर्मयोग भू, बैठ जाँय मुनिराजा।
अन्तराय माने भोजन में, वास करे हित काजा।।
उपवेशन यह दोष त्याग गुरु, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं उपवेशनान्तरायरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।120।।

कूकर आदिक हिंसक प्राणी, दश करत यति जोवे।
अन्तराय मानें गुरुनायक, कायर चित्त न होवें।।
श्वादिदश यह दोष त्याग के, समिति एषणा पाले।
या जुत सम्यक्चारित पूजों, सो मेरे अघ टाले।।

ॐ ह्रीं श्वादिदंशान्तरायरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।121।।

भोजन बेला सिद्धभक्ति को, कर मुनि शीश नवावे।
कर से यदि भूमी छू जावे, अन्तराय तब ध्यावे।।
भूमिस्पर्श दोष तज करके, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं भूमिस्पर्शान्तरायरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।122।।

भोजन बिरियाँ अपना परका, यदि खकार लख लेई।
अन्तराय माने गुरु ज्ञानी, जिनवाणी जिन सेई।।
निष्ठीवन यह दोष छॉड मुनि, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं निष्ठीवनान्तरायरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।123।।

भोजन काल निजोदर से यदि, कृमि निकली यदि जाने।
अन्तराय भोजन मे माने, खेद नही उर आने।।
उदरकृमि निर्गमन दोष तज, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्री उदरकृमिनिर्गमनान्तरायरहितैषणासमितिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।124।।

दाता के बिन दीने भोजन, मुनि चाहे मनमाहीं।
अगीकार करे तन मन से, तो शिर दोष बढाहीं।।
दोष अदत्तग्रहण तज के मुनि, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं अदत्तान्तरायरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।125।।

भोजन बेला यति वा पर पै, वार करे यदि कोई।
तो मुनि ता दिन अनशन धारे, कर्मविजय हित सोई।।
दोष प्रहार तजे मुनिनायक, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्री प्रहारान्तररहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।126।।

भोजन को जाते यदि पुर मे, अग्नि लगी हो भाई।
अन्तराय तो गिने यतीश्वर, भोजन नाहि कराई।।
ग्रामदाह यह दोष त्याग के, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्री ग्रामदाहान्तरायरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।127।।

मार्ग पडी पग अडी वस्तु जो, ले मुनिराज उठाई।
तो उनके वर सयम मॉही, दोष लगे अधिकाई।।
पादग्रहण यह दोष दूर कर, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्रीं पादग्रहणान्तरायरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।128।।

राह पडी जो वस्तु आप कर, ले मुनिराज उठाई।
अन्तराय तो गिने जैन गुरु, लोभ धरें न कदाई।।
कर ग्रहण यह दोष त्याग के, समिति एषणा पाले। या जुत

ॐ ह्री करग्रहणान्तरायरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।129।।

ऐसे बत्तिस अन्तराय जो, भोजन कालिक पाले।
तो मुनि सयम पाले अपने, गुणलोभी अघ टाले।।
समिति एषणा ताके शुध हो, स्वर्ग मोक्ष सुखदाई। या जुत

ॐ ह्रीं द्वात्रिंशदन्तरायरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।130।।

चौपाई छन्द

भोजन में नख निकले सोय, अन्तराय तो गुरु को होय।
समिति एषणा तब शुध जान, या जुत चारित पूज्य सुमान।।

ॐ ह्री नखमलरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।131।।

केश नीसरे भोजन मॉय, अन्तराय तो यती मनॉय। समिति

ॐ ह्री केशमलरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।132।।

मृत प्राणी भोजन मे जोय, तो मुनि भोजन छॉडे मोय। समिति

ॐ ह्रीं मृतजीवदर्शनदोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।133।।

भोजन समय अस्थि यदि जोय, तो यति भोजन त्यागे सोय। समिति

ॐ ह्रीं कीकशदर्शनमलरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।134।।

जीमत राध नजर जो आय, तो योगी आहार न पाय। समिति

ॐ ह्री पूयामलरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।135।।

भोजन करत चर्म दिखलाय, तो योगी आहार न पाय। समिति

ॐ ह्री चर्मदर्शनरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।136।।

जीमत यदि रुधिर अवलोय, तो आहार तजे यति मोय। समिति

ॐ ह्रीं रुधिरदर्शनरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।137।।

भोजनबेला आमिष जोय, तो मुनि भोजन नाही होय। समिति

ॐ ह्रीं आमिषदर्शनरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।138।।

भोजन में यदि कणा दिखाय, तो मुनि भोजन नाही खाय। समिति

ॐ ह्रीं कणदर्शनमलरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।139।।

जीमत तिल के अश दिखाय, तो मुनिवर आहार न पाय। समिति

ॐ ही तिलदर्शनरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।140।।

भोजन में यदि बीज दिखाय, तो भोजन नाहीं यति खाय। समिति

ॐ ह्रीं बीजदर्शनरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।141।।

साबित फल भोजन मे आय, ऋषि अनशन धारे हरषाय। समिति

ॐ ह्रीं फलदर्शनदोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।142।।

कन्दवस्तु भोजन मे आय, अन्तराय माने मुनिराय। समिति

ॐ ह्रीं कन्दमूलदोषरहितैषणासमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।143।।

वस्तु देख के यती उठाय, समिति एषणा शुद्धि कराय। समिति

ॐ ह्रीं आदानसमितियुत-सम्यक्चारित्रायऽर्घ्यं।।144।।

मुनि जो वस्तु भूमि में धरे, जियरक्षा तब चित में धरें।
निक्षेपणसमिति चित लाय, या जुत चारित जजो सुखाय।।

ॐ ह्रीं निक्षेपणसमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं नि.।।145।।

तनमल जहँ भू क्षेपे यती, भूशुद्धि देख शुभमती।
यह व्युत्सर्ग समिति मन लाय, या जुत चारित पूज्य सुभाय।।

ॐ ह्रीं व्युत्सर्गसमितियुत-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं नि.।।146।।

मनविकल्प जिनध्वनिसम करें, और ठौर नाहीं मन धरें।
मनोगुप्ति धारे मुनिराय, या जुत व्रत जजों सत भाय।।

ॐ ह्रीं मनोगुप्तिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं नि.।।147।।

मुनिवच जिन आज्ञा सम होय, तातें पाप लगे ना कोय।
वचनगुप्ति पालें मुनिराज, या जुत व्रत जजों शिर नाय।।
ॐ ह्रीं वचनगुप्तिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं नि.।।148।।
तनको मुनि वश राखें सोय, बिना प्रयोजन चल ना होय।
कायगुप्ति सो जानो सही, या जुत व्रत जजों शुभ मही।।
ॐ ह्रीं कायगुप्तिसहित-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं नि.।।149।।
पाँच महाव्रत समिति जु पॉच, तीन गुप्ति मिल चारित साँच।
यों तेरहविध चारित जान, पूजो मन वच अर्घ्य सुआन।।
ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशप्रकार-सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं नि.।।150।।

जयमाला

दोहा- सम्यक्चारित मोक्ष को, कारण और न कोय।
पापपन्थ तज सर्व ही, चारित की विधि जोय।।

बेसरी छन्द

सम्यक्चारित भवदधिनावा, सिद्धक्षेत्र धरि देन स्वभावा।
परिग्रह धारि लहे ना याको, मैं पूजो मन वच तन ताको।।
मोहराय जीतन को जावे, जो चारित्र कवच तन लावे।
ध्यावत है सुर खग नर याको, मै पूजों मन वच तन ताको।।
मम्यक्चारित मोक्ष निशाना, या बिन होय न कर्मन हाना।
या बिन मोक्ष न होवे काको, मै पूजो मन वच तन ताको।।
चारितग्रहण वीर का कामा, कायर पै न सधे गुणधामा।
निर्मोही धारत हैं याको, मै पूजो मन वच तन ताको।।
शकासहित जीव बलहीना, ते कह धार सकें यह दीना।
महापुरुष धारत हैं याको, मै पूजो मन वच तन ताको।।
कामीजन तो देखत लज्जें, शीलवान धर्मी जन सज्जें।
चारित उपमा दीजे काको, मै पूजों मन वच तन ताको।।

चारित को चक्रीधर चाहे, सुर खग इन्द्र भावना माहें।
निकटभव्य धारत है याको मै पूजो मन वच तन ताको।।
चारित चरमशरीरी धारे, चारित से कर्मारि विदारें।
कामदेव से धारत याको, मै पूजो मन वच तन ताको।।
चारित नाम सुनत हरषावे, सो जिय चारित महिमा पावे।
चारित धारत है धनि वाको, मै पूजो मन वच तन ताको।।
यह चारित पीडाहर भाई, धारक शक्र विभव को पाई।
शिववाछक सेवत है याको, मै पूजो मन वच तन ताको।।
चारित सर्वहितू लखि भाई, चारित सर्वोत्तम सुखदाई।
मुनिजन पूजन ध्यावत याको, मै पूजो मन वच तन ताको।।
चारित को हम भी ललचावे, क्या जाने किस भव मे पावे।
इस भव करत भावना याको, मै पूजो मन वच तन ताको।।
चारित का शरणा जिन पाया, ताने निजभव सफल बनाया।
शक्तिप्रद हितकर गिन याको, मै पूजो मन वच तन ताको।।

दोहा- सुर नर पूजन ताहि को, जो चारित्र लहाय।
सो चारित महिमा अतुल, नमो सदा शिरनाय।।

ॐ ह्रीं श्रीसम्यक्चारित्राय-जयमालाऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय जयमाला

दोहा- सम्यग्दर्शन ज्ञान सह, चारित लेहु मिलाय।
मोक्षमार्ग ये तीन ही, मै पूजो शिर नाय।।

चौपाई- रत्नत्रय शिवमारग जान, या बिन मोक्षमार्ग ना आन।
ये ही शिवदायक मन लाय, मोको भवहर होय सहाय।।

चाल मुनियानन्दी की

भुवन त्रय मुकुट शुभ, रतन त्रय जानिये।
तीन जग जीव थुति, करे हित मानिये।।

तास फल पापमल, धोय निज शुध करें।
मै जजो भाव तै, कार्य वाछित सरे।।
तीन जग भ्रम्या बिन, रतनत्रय पाय जी।
मिली नहि सेवकी, कहुँ सुखदाय जी।।
अबै शुभ दिन भयो, भक्ति इनकी करे। मै जजो०
चक्रि नरराज से, रतनत्रय काज जी।
तर्जे सब जगत सुख, दाय बहुराज जी।।
छोडी सब परिग्रह, वास वन मे करे।। मै जजो०
बिना रतनत्रयी, तीर्थकर देव जी।
सिद्ध पद ना लहे, करें बहु सेव जी।।
तास ते रतन त्रय, एक शिवफल करे।। मै जजो०
भये रतन त्रय पाय, देव गणधर सही।
रतनत्रय लाभ तै, पदवि मुनि की लही।।
सकल सुख देय कर, रतनत्रय अध हरे।। मै जजो०
रतनत्रय तीर्थसम, जगत मे सार जी।
रतनत्रय देय भव, नार अविकार जी।।
रतनत्रय गुरु हम, पाय तप को करे।। मै जजो०
रतनत्रय धर्म सब, हरे सब कर्म जी।
रतनत्रय ज्योति तै, मिटे बहु भर्म जी।।
रतनत्रय रूप लखि, मुकतिनार वर करे।। मैं जजो०
रतनत्रय छत्रता, शिर फिरे आय जी।
जीव मो जगत तजि, मुक्तिराज्य पाय जी।।
रतनत्रय लक्ष्मी की, चाह हरि सुर करे।। मै जजो०
रतनत्रय रविसदृश, रागतम नाशि हे।
रतनत्रय नेत्र तै, तत्त्व सुप्रकाश है।।
रतनत्रय मुकुट शिव, नाम बल्लभ करे।। मैं जजों०

रतनत्रय राह को, नग्न जावे सही।
किन्तु जो परिग्रही, तास निभतो नही।।
रतनत्रय देहि भजि, आपसम जो करे।। मै जजों०
रतनत्रय एक जग, माँहि है सार जी।
कीजिये कहा कहों, और निरधार जी।।
रतनत्रय नाव भव, अब्धि पारे करे।। मै जजो०
विरत यह रतन त्रय, करे धन्य सोय जी।
या थकी फेर ना, जन्ममृत्यु होय जी।।
विरत यह रतनत्रय, मोक्ष दे हित करे।। मै जजो०
करो भवि रतनत्रय विरत मन लाय जी।
ममय यह कठिन कर, मिलो शुभ आय जी।
मनुप तन उच्चकुल, याहि सों ही करे।। मे जजो०
विरत की विधि यो, आर्ष बतलाय जी।
वासत्रय आदि अन्त, एकभुक्ति पाय जी।।
रीति उत्कृष्ट सो, भव्य मन में धरे।। मै जजो०
होय ना शक्ति उत, कृष्ट की तो सुनो।
आदि जुग मान इक, पारणा दिन गुनो।।
नाहि मध्य शक्ति अत, आदि अनशन करे।। मै जजो०
होय अल्पशक्ति तो, वह करे येम जी।
मध्य इक वास अन्त, पारना जीम जी।।
वास ना शक्ति तो, अल्प भोजन करे।। मै जजों०
विरत ऐसे करे, वर्ष तेरह सही।
तथा वर्ष नौ त्रय, विरत कर ध्वनि कही।।
अन्त उद्यापना, या दुगुन व्रत करे।। मैं जजों०

शक्तिसम द्रव्य ले, फेरि जिन पूजिये।
दीजिये दान पर, भावना कीजिये।।
और घनी विधि जिन, वानि लखि के धरें।। मै जजो०
विरत ऐसे किये, कर्म अरि को हरे।
भव्य व्रत धार यो, भावना मन धरे।।
रतनत्रय विरत की, सेव शिवसुख करे।। मै जजो०

दोहा-रत्नत्रय की सेव कर, रत्नत्रय गुण गाव।
रत्नत्रय की भावना, कर पल पल शिर नाव।।

ॐ ह्रीं श्रीसम्यक्रत्नत्रयाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वहा।

इति रत्नत्रयविधान संपूर्णम्

व्रतों का हम मात्र अधानुकरण न करे अपितु उसकी उपयोगिता, वैज्ञानिकता को समझें, इस हेतु समस्त व्रतो की वैज्ञानिकता एव प्रामाणिकता को ग्रन्थ में शिलालेखों, एव पाण्डुलिपियों के आधार पर प्रस्तुत किया है यह इस ग्रन्थ की श्रेष्ठता है।

व्रत जीवन को पवित्र, सयमी बनाते है। साधना पथ मे व्रत सर्वाधिक प्रभावपूर्ण तप की ओर ले जाते है। वास्तव में इद्रियों पर लगाम इन्ही व्रतों से लगाई जा सकती है। इन व्रतों के पालन से देह शुद्धि, यम शुद्धि होने मे आत्मा कषायों से मुक्त होती है। साधक मुक्ति पथ की ओर अग्रसर होता है। बस आवश्यकता है कि साधक या व्रती व्रत को पूर्णरूपेण समझ कर प्रसन्नता एव निष्ठा के साथ उनका पालन करे।

डॉ शेखर चन्द जैन, अहमदाबाद

लब्धि-विधान

श्री वर्द्धमान पूजा

पद्धड़ि- वर्द्धमान महावीर वीर अति वीर हो,
सन्मति पच जू नाम सुगुण गभीर हो।
ज्ञान लब्धि नव हेत करूँ यहाँ थापना,
मम उर तिष्ठो आय देहु गुण आपना।।

ॐ ह्रीं अर्हन् पञ्चनामांकित-परम-देवाधिदेव-श्री-वर्द्धमान जिनेन्द्र! अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं अर्हन् पञ्चनामांकित-परम-देवाधिदेव-श्री-वर्द्धमान जिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः‌ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं अर्हन् पञ्चनामांकित-परम-देवाधिदेव-श्री-वर्द्धमान जिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अष्टक (छन्द-हीरक)

तीर्थोदक शुचि ल्याइयो, मणि भृग भराई।
जन्म जरा मृत नाशने, त्रय धार चढाई।।
नवो लब्धि मोहि दीजिये, सन्मति जिनराई।
पूजों मन वच कायतें, मोह मल्ल हराई।।

ॐ ह्रीं श्री वर्द्धमानजिनेन्द्राय जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

चन्दन बावन पावनो, करपूर घसाई।
भव तप नाशन कारने, लायो हरषाई।।नवो लब्धि ।।

ॐ ही श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय संसारताप-विनाशनाय चदनं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

इन्दु कुन्द द्युति को हरै, मुक्ता सम थाई।
अक्षत हाटक थाल भरि, तव अग्र धराई।।
नवो लब्धि मोहि दीजिये, सन्मति जिनराई।
पूजों मन वच कायतें, मोह मल्ल हराई।।

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

चम्पा जूही केतकी, बहु सुमन सुहाई।
स्वर्ण थाल भर लाइयो, सर मदन पलाई।।नवों लब्धि ।।

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

चन्द्रकला खाजा लहे, घेवर रस पाई।
क्षुधा हरै मन शुचि करे, कनक थाल भराई।।नवो लब्धि ।।

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

रत्न दीप उद्योत तैं, दश दिशि छवि छाई।
करूँ आरती जासतें, अज्ञान नशाई।।नवो लब्धि ।।

ॐ ही श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय मोहान्धकार-विनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

धूप दशागी खेय के, सब दिशि महकाई।
अष्ट करम ईंधन जरे, तसु धूम उडाई।।नवो नब्धि ।।

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अष्टकर्म-विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

श्रीफल लौग इलायची, बहु विधि सुखदाई।
मोक्ष महाफल कारणै, तव भेट कराई।।नवों लब्धि ।।

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय मोक्षफल-प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

जल आदिक वसु द्रव्य ले, शुभ अर्घ सजाई।
जय जय जय जिन गाय के, वादित्र बजाई।।
नवों लब्धि मोहि दीजिये, सन्मति जिनराई।
पूजों मन वच कायतें, मोह मल्ल हराई।।

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अनर्घपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

सोरठा- दान लाभ अरु भोग, पुनि उपभोग सु पाइयो।
वीर्य अनन्त सुयोग, दर्शन केवल थाइयो।।1।।
क्षायक सम्यक् पाय, क्षायक चारित जिन लह्यो।
पूजों अर्घ चढाय, जोरि जुगल कर सिर नयो।।2।।

ॐ ह्रीं श्री वर्द्धमानजिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

1 दान लब्धि पूजा

दोहा- अन्तराय विधि अन्त कर, दान लब्धि प्रकटाय।
नमूँ जास पद शीश धर, जजो थापि हरषाय।।

ॐ ह्रीं परमब्रह्मपरमेश्वर-दानलब्धिधारक-जिनेन्द्र। अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं परमब्रह्मपरमेश्वर-दानलब्धिधारक-जिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठ. स्थापनम्।

ॐ ह्रीं परमब्रह्मपरमेश्वर-दानलब्धिधारक-जिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

सोरठा

उज्ज्वल वारि सुधार, कचन भृग भराइया।
जन्म जरा मृत्यु हार, दान लब्धि धर जिन जजों।

ॐ ह्रीं दानलब्धि-धारक-जिनेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

चन्दन सार घसाय, कनक कटोरी में धरूँ।
भव आताप नशाय, दान लब्धि धर जिन जजों।।
ॐ ह्रीं दानलब्धि-धारक-जिनेभ्यः चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।
तन्दुल श्वेत अनूप, स्वर्ण थाल भर लाइयो।
देहु अक्षय पद भूप, दान लब्धि धर जिन जजों।।
ॐ ह्रीं दानलब्धि-धारक-जिनेभ्यो अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।।3।।
कुन्द गुलाब मँगाय, सुर तरु सुमन सुहावने।
वाण मनोज हराय, दान लब्धि धर जिन जजो।।
ॐ ह्रीं दानलब्धि-धारक-जिनेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।
षट् रस युक्त बनाय, नेवज बहु विधि पाइया।
जजूँ क्षुधा हराय, दान लब्धि धर जिन जजों।
ॐ ह्रीं दानलब्धि-धारक-जिनेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।
माणिक दीप सुहाय, स्वर्ण रकाबी धारिया।
मिथ्या-ध्वात नशाय, दान लब्धि धर जिन जजों।।
ॐ ह्रीं दानलब्धि-धारक-जिनेभ्यो दीप निर्वपामीति स्वाहा।।6।।
धूप सुगन्ध बनाय, धूपायन में खेइयो।
आठों कर्म जराय, दान लब्धि धर जिन जजों।।
ॐ ह्रीं दानलब्धि-धारक-जिनेभ्यो धूप निर्वपामीति स्वाहा।।7।।
श्रीफल लौंग अनार, पुगी पिस्तादिक सबै।
शिवफल दाय निहार, दान लब्धि धर जिन जजों।।
ॐ ह्रीं दानलब्धि-धारक-जिनेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।
जल गधादिक सार, वसु विधि अर्घ बनाइया।
आवागमन निवार, दान लब्धि धर जिन जजों।।
ॐ ह्रीं दानलब्धि-धारक-जिनेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

प्रत्येक अर्घ (छन्द-चौपाई)

सप्त व्यसन मिथ्यात्व महान, ये ही महापाप की खान।
इनको निराकरण उपदेश, दान लब्धि धर जजो जिनेश।।

ॐ ही मिथ्यात्वादिसप्तव्यसन-निराकरण-उपदेशक-दानलब्धि-धारकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

धर्म विषै सम्मुख करतार, दे उपदेश भये भवपार।
ऐसी दान ऋद्धिधर देव, अर्घ चढाय जजूं शुभ भेव।।

ॐ ह्रीं धर्मसम्मुखीकरण-उपदेशक-जिनेन्द्र-दानलब्धिधारकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

पच अणुव्रत है सुख खान, सो उपदेशक शक्ति महान।
अणुव्रत उपदेशन गुण धार, जर्जो दान ऋद्धि भेद विचार।।

ॐ ह्रीं अणुव्रतोपदेशधारक-दानलब्धिप्राप्त-जिनेन्द्राय अर्घ्यं।।3।।

महाव्रत पच तणो उपदेश, दान ऋद्धि को भेद विशेष।
मुनिव्रत उपदेशक जिनराय, जजो चरण द्वय अर्घ चढाय।।

ॐ ही महाव्रत-उपदेशधारक-दानलब्धिप्राप्त-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

यथाख्यात चारित्र प्रधान, ताको ही उपदेश महान।
धरत दान ऋद्धि को यह भेद, सो जिन जजो हरो भव-खेद।।

ॐ ह्रीं यथाख्यातचारित्रोपदेशधारक-दानलब्धिप्राप्त-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

स्थविर कल्प मुनि धर्म बखान, दान ऋद्धि को भेद सुजान।
या धारक जिन गुण गभीर, जर्जो चरण मेटो भव पीर।।

ॐ ह्रीं स्थविरकल्पमुनिधर्मोपदेशप्राप्त-भगवज्जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

मुनि जिनकल्प तणों जो धर्म, सो उपदेश दियो शिव शर्म।
दान ऋद्धि धर यह जिनराय, सो मै जजूँ भावना भाय।।

ॐ ह्रीं जिनकल्पमुनि-धर्मोपदेशप्राप्त-भगवज्जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

शुद्धात्मैक ध्यान से लीन, होने को उपदेश सु कीन।
दानलब्धि का भेद निहार, या धारक जिन नमि दुख टार।।

ॐ ह्रीं शुद्धात्मधर्मोपदेशप्राप्त-भगवज्जिनेन्द्राय अर्घ्यं।।8।।

शुद्धातम पद प्राप्ति हेत, उपदेश्यो व्रत अर्थ समेट।
दान ऋद्धि जो है अधिकार, पूजूँ पूरण अर्घ उतार।।

ॐ ह्रीं शुद्धात्मपदप्राप्त उपदेशधारक-दानलब्धिप्राप्त-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

जयमाला

दोहा- अभय दान सबको दियो, परमातम पद पाय।
दान लब्धि के हेतु मैं, नमि जयमाल सु गाय।।

मोतियदाम

नमो नित वीर जिनेश्वर पाय, नमै नित आय सुरासुर राय।
सुनी तब वीर जिनेश्वर राय, नमै नित आय सुरासुर धाय।।1।।
मुनीन्द्र गणेन्द्र करै गुणगान, लहै तब मुक्ति रमा अमलान।
अहो जिन केवल रूप अनूप, तुही जग में शिव लायक भूप।।2।।
तुही दुख नाशन शासन शुद्ध, अलोभ अमान अशल्य अक्रुद्ध।
अराग अरूप अमूरति सत, अदोष अखड सदा जयवत।।3।।
जगत्त्रय शासक भाषक ज्ञान, हन्यो जिन ने जग जीव अज्ञान।
जपूँ गुण धाय हिये शुचि सार, प्रभो हमको भवसागर तार।।4।।

दोहा-अष्ट द्रव्य कर धार के, आयो तुम दरबार।
"चन्द" मिथ्यात निवारिये, पूजों अर्घ उतार।।

ॐ ह्रीं दान-लब्धिधारक-भगवज्जिनेन्द्राय जयमालार्घ्यं।

दोहा-दान लब्धि पूजा करे, जो नर मन वच काय।
शक्र चक्र सुख भोग के, लहे मोक्ष थल जाय।।

इत्याशीर्वादः

2 लाभ लब्धि पूजा

दोहा-लाभ लब्धि नव भेद हे, ता धारक जिनराय।
आह्वानम् विधि ठान के, जजो यापि हरषाय।।

ॐ ह्रीं लाभलब्धिधारक-भगवज्जिनेन्द्र! अत्रावैतरावतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्री लाभलब्धिधारक-भगवज्जिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ· ठः स्थापनम्।

ॐ ह्री लाभलब्धिधारक-भगवज्जिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

सोरठा- पद्म द्रह को नीर, भर झारी त्रय धार दे।
नशै जन्म मृत पीर, लाभ लब्धि धर जिन जजो।।

ॐ ह्रीं लाभलब्धि-धारक-भगवज्जिनेन्द्राय जल नि. स्वाहा।।1।।

चदन धसि घनसार, कुकुमरग मिलाइया।
भव आताप निवार, लाभ लब्धिधर जिन जजों।।

ॐ ह्रीं लाभलब्धि-धारक-भगवज्जिनेन्द्राय चंदन नि.।।2।।

शालि अखण्ड विशाल, रत्न थाल भर लाइयो।
देहु अक्षय सुख हाल, लाभ लब्धिधर जिन जजों।।

ॐ ह्रीं लाभलब्धि-धारक-भगवज्जिनेन्द्राय अक्षतान् नि० स्वाहा।3।

सुमन सुगध अपार, पारिजात मदार है।
बाण मनोज प्रहार, लाभ लब्धिधर जिन जजों।।

ॐ ह्रीं लाभलब्धि-धारक-भगवज्जिनेन्द्राय पुष्पं नि. स्वाहा।।4।।

मोदक खाजे धार, ताजे सरस बनाइया।
क्षुधा वेदनी टार, लाभ लब्धिधर जिन जर्जो।।

ॐ ह्रीं लाभलब्धि-धारक-भगवज्जिनेन्द्राय नैवेद्यं नि.स्वाहा।5।

दीप प्रकाश महान, कनक रकाबी धारिये।
नाशै तिमिर अज्ञान, लाभ लब्धिधर जिन जर्जो।।

ॐ ह्रीं लाभलब्धि-धारक-भगवज्जिनेन्द्राय दीपं नि. स्वाहा।।6।।

चदन अगर कपूर, स्वर्ण धूपायन मे भरे।
अष्ट करम कर चूर, लाभ लब्धिधर जिन जर्जो।।

ॐ ह्रीं लाभलब्धि-धारक-भगवज्जिनेन्द्राय धूप नि. स्वाहा।।7।।

पुगी खारक लाय, लौग जायफल श्रीफला।
शिव फल हेत चढाय, लाभ लब्धिधर जिन जर्जो।।

ॐ ह्रीं लाभलब्धि-धारक-भगवज्जिनेन्द्राय फलं नि. स्वाहा।।8।।

जल गधादि मिलाय, अरघ धार कर सिर नवो।
आवागमन मिटाय, लाभ लब्धिधर जिन जर्जो।।

ॐ ह्री लाभलब्धि-धारक-भगवज्जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।9।

प्रत्येक अर्घ

चौपाई

सहित मिथ्यात कषाय महान। अनतानुबधी चव हान।
उपशम मिश्र मिथ्यात कराय। सत प्रकृति को उपशम धाय।।
यह लब्धी शुभ लाभ मझार। क्षयोपशम तमु नाम निहार।
ता धारक जिनवर अधिकार। जजूँ चर्ण जुग अष्ट प्रकार।।

ॐ ह्रीं क्षयोपशमलब्धि-धारक-जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।1।।

सर्वोत्कृष्ट सु मन वच काय। योग राग अरु द्वेष तजाय।
सप्त प्रकृति क्षय करि समभाव। लब्धि विशुद्ध जजूँ धर चाव।।

ॐ ह्रीं विशुद्धिलब्धि-धारक-जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।2।।

सप्त तत्व नव पद षट् दर्व। पचासती काय ये सर्व।
इन स्वरूप गुरुमुख उपदेश। ग्रहण देशना लब्धि जिनेश।
लाभमाहि यह भेद विचार। जजूँ जलादि द्रव्य भरि थार।
हे करुणानिधि भवदधि तार। शरण लह्यो लखि अधम उधार।

ॐ ह्रीं देशनालब्धि-धारक-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

आर्य क्षेत्र मानुष भव पाय। पुरुषलिग भवि भाव जु थाय।।
मन वच काय योग उत्कृष्ट। ता प्रभाव ता क़ाल विशिष्ट।।
कर्म मोहादिक स्थिति बिनु आप। कोटाकोटी अन्तदधिधाय।।
बध प्रदेश बध थिति जान। यह जुग तिष्ठत है तिहि थान।।
सोही नाम लब्धि प्रायोग्य। लाभ माहि यह भेद मनोग्य।।
ता धारक जिनवर भव हार। पूजूँ द्रव्य जलादिक धार।।

ॐ ह्रीं प्रायोग्यनामलब्धि-धारक-जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।4।।

क्षायक सम्यक् की उत्पत्त, क्षायक भाव सु कारण सत्य।।
करण लब्धि ये लाभ सु जान। सो धर जिन पूजूँ भव हान।।

ॐ ह्रीं करणलब्धि-धारक-जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।5।।

काल अनादि सम्बन्धी भाव। औदायिकादिक जीव लहाव।।
अध करण सो लब्धि महान। पाई जिन पद जजि सुख खान।

ॐ ह्रीं अधःकरणलब्धि-धारक-जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।6।।

नरक निगोदादिक भव माहि। चहुँगति भ्रम तन भाव धराहि।
सो अपूर्व जिन भाव लभत। लब्धि अपूरब कर्ण यजत।।

ॐ ह्रीं अपूर्वकरणलब्धि-धारक-जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।7।।

क्षायिक सम्यक्तादि सु भाव। वर्तमान सो नाहि चलाव।।
अनिर्वृतिकरण सु लब्धि धरत। पूजूँ शीश नाय अर्हन्त।।

ॐ ह्रीं अनिर्वृत्तिकरणनामलब्धि-धारक-जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि।।8।।

सर्वोत्कृष्ट भाव अमलान। निश्चै परमातम को ध्यान।।
ये अधिकरण लब्धि सो पाय। तिन पद पूजूँ मनवचकाय।।

ॐ ह्रीं अधिकरणनामलब्धि-धारक-जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।9।।

जयमाला

दोहा- चार घाति हनि पाइयो, केवलज्ञान अनन्त।
लाभ लब्धि के हेत मै, नमि जयमाल कहन्त।।

छन्द लक्ष्मीधरा

जयति जिनदेव तव सेव शक्री करै।
नमन मुनि ईश पद शीश चक्री धरै।।
दर्श करि आज आनन्द मै, पाइयो।
मानु चिन्तामणी रक कर आइयो।।
जयति अजरामरा बुद्ध शिव शकरा।
क्रोध मद मोह दल काम माया हरा।।
अष्टगुण पाइया लोकत्रय धाइया।
सिद्धपद पायके नाहि जग आइया।।
नाथ अरजी सुनो दु ख मेरो हनो।
तारिये तार अब दास लखि आपनो।।
और कछु ना चहूँ जोलों शिव ना लहूँ।
तोलों निज सेव मुझ दीजिये यह कहूँ।।

दोहा-उदकादिक वसु द्रव्य ले, कचन थाल भराय।
मन वच तन पूजा करू, "चन्द" मुक्ति बकसाय।।

ॐ ह्रीं लाभलब्धि-धारक-भगवज्जिनेन्द्राय जयमालार्घ्यं।।

सोरठा- जो पूजै सागार, लाभ लब्धि धर जिनवरा।
सो सुर नर पदधार, शिव थल जावै दुख हरा।।

इत्याशीर्वादः।

3. भोगलब्धि पूजा

स्थापना-अडिल्ल

भोग विषै विधि अन्तराय जो है सही।
नाहि नाश जिन भोग लब्धि सुखदा लही।।
मो मन तिष्ठो आय करूँ यहाँ थापना।
आह्वानम् विधि ठानि जान हित आपना।।

ॐ ह्रीं श्री परमब्रह्म-अनन्त-भोगलब्धिधारकजिन्! अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वानं।

ॐ ह्री श्री परमब्रह्म-अनन्त-भोगलब्धिधारकजिन! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ. ठः स्थापनं।

ॐ ह्री श्री परमब्रह्म-अनन्त-भोगलब्धिधारकजिन! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अष्टक (सोरठा)

शीतल निरमल नीर, भर मणि झारी धार दे।
हरो जनम मृत पीर, भोग लब्धिधर जिन जजूँ।।

ॐ ह्री भोग-लब्धि-धारक-जिनेभ्यो जन्म-जरामृत्यु-विनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

चन्दन केसर सार, कनक कटोरी मे भरूँ।
भव आताप निवार, भोग लब्धिधर जिन जजूँ।।

ॐ ह्रीं भोग-लब्धि-धारक-जिनेभ्यः संसार-ताप-विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

अक्षत उज्ज्वल लाय, इन्दु कुन्दु से मनहरा।
परम अखय पद दाय, भोग लब्धिधर जिन जजूँ।।

ॐ ह्रीं भोग-लब्धि-धारक-जिनेभ्यो अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

पुष्प अनेक मँगाय, मन सुख-दायक पावने।
मन्मथ पीर हराय, भोगलब्धि धर जिन जजूँ।।

ॐ ह्रीं भोग-लब्धि-धारक-जिनेभ्यः कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

ताजा तुरत बनाय, फेणी गुञ्जा मन हरै।
भरि कनक थाल चढाय, भोगलब्धि धर जिन जजूँ।।

ॐ ह्रीं भोग-लब्धि-धारक-जिनेभ्यः क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

दीप ज्योति तम हार, रत्न थाल भर लाइया।
मिथ्या मोह विडार, भोगलब्धि धर जिन जजूँ।।

ॐ ह्रीं भोग-लब्धि-धारक-जिनेभ्यो अष्टकर्म-विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

देवदार कर्पूर, धूप सुगन्ध सुहावनी।
खेऊँ वसु विधि चूर, भोगलब्धि धर जिन जजूँ।।

ॐ ह्री भोग-लब्धि-धारक-जिनेभ्यो अष्टकर्म-विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

एला लौग बदाम, मिष्ट सुष्ट रस तें भरे।
शिव फलदाय लखाय, भोगलब्धि धर जिन जजूँ।।

ॐ ह्री भोग-लब्धि-धारक-जिनेभ्यो मोक्षफल-प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

जल फल आदि मिलाय, उत्तम अर्घ बनाइया।
भव दधि पार लगाय, भोगलब्धि धर जिन जजूँ।।

ॐ ह्रीं भोग-लब्धि-धारक-जिनेभ्यो अनर्घपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

प्रत्येक अर्घ

अडिल्ल- मोह कर्म की प्रकृति सात मिथ्यात है।
ता उपशमतै उपशम सम्यक् पात है।।
ताहि यथावत शुद्ध भुञ्जयन्ते जिना।
भोग लब्धि के हेत जजूँ मै निश दिना।।

ॐ ह्रीं प्रथमाभोग-नामलब्धि-धारक जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।।1।।

क्रोध लोभ छल मान अप्रत्याख्यान है।
उपशमात दृग सहित देश व्रत ठान है।।
भुञ्जयन्ति सा भोग भाव लब्धी यही।
पूजूँ अर्घ चढाय देहु शिव की मही।।

ॐ ह्रीं द्वितीयाभोग-नाम-लब्धि-धारक जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि।।2।।

अप्रत्याख्यान क्रोधादि चतुष्क खिपाय है।
मुनिव्रत धारण शक्ति भई सुखदाय है।।
सदा लब्धि यह धरत भोग अविकार है।
तिनके पद नित जजूँ अर्घ भरि थार है।।

ॐ ह्रीं तृतीयाभोग-नाम-लब्धि-धारक जिनेन्द्राय अर्घ्यं।।3।।

पद्रह भेद प्रसाद रहित परिणाम है।
अन्तर-महूरत शुद्ध रहै इस ठाम है।।
ऐसे भाव विशुद्ध भोग लब्धी धरी।
जिन पद पूजूँ सार मोह ममता हरी।।

ॐ ह्रीं चतुर्थीभोग-नाम-लब्धि-धारक जिनेन्द्राय अर्घ्यं।।4।।

पूरब भव परिणाम शुक्ल नाहीं भये।
ते अपूर्व परिणाम सु क्षायिक भाव ये।।
भुञ्जयति सो भोग लब्धि धर जिनवरा।
जजूँ अर्घ कर धार मोक्ष लक्ष्मी करा।।

ॐ ह्रीं पंचमीभोग-नाम-लब्धि-धारक जिनेन्द्राय अर्घ्यं।।5।।

जे अष्टम गुणस्थान लब्धि भावातमा।
ते अच्युवन करणे सु अनिवृति गुणसमा।।
भुक्ति भोग की लब्धि धरै जिनराज जी।
नमूं जन्म दुख मेट सुधारो काज जी।।

ॐ ह्रीं षष्ठीभोग-नाम-लब्धि-धारक-जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि।।6।।

मोक्ष तणी अभिलाष भाव बरते रुही।
सो सज्वलन कषाय उदय ही तै रही।।
ऐसे भाव जु भोग भोगलब्धी धरै।
जिन पद जजूं अबार सकल कारज सरै।।

ॐ ह्रीं सप्तमीभोग-नाम-लब्धि-धारक-जिनेन्द्राय अर्घ्यं।।7।।

अष्टाविशति प्रकृति मोहनी कर्म की।
उपशमात ये उपशम भाव जु शर्म की।।
भुञ्जयति सो भोग लब्धि को भेद है।
तिन पद पूजूं सार हरो भव खेद है।।

ॐ ह्रीं अष्टमीभोग-नाम-लब्धि-धारक-जिनेन्द्राय अर्घ्यं।।8।।

किंचित् कर्मन प्रकृति सूक्ष्मी करण ये।
भाव भुञ्जयति भोग लब्धि सो धरण ये।।
ऐसे जिनको नमूँ उभय कर जोर ही।
पूजूँ अरघ चढाय करम सबते रही।।

ॐ ह्रीं नवमीभोग-नाम-लब्धि-धारक-जिनेन्द्राय अर्घ्यं।।9।।

जयमाला

दोहा- शुभ अतिशय चौबीस है, जीवन मुक्त जिनेश।
समवसरण लक्ष्मी धरै, पूजित चक्रि सुरेश।।

छन्द पद्धड़ि

जै जै जै जै जै त्रिजगराय, सुर नर खग पूजि शीश नाय।
तुम स्वय-बुद्ध शिव रूप देव, तुम विश्व प्रकाश्यो तत्त्व भेव।1।
तुम अलख निरजन अचल रूप, तुम चहुँगति वर्जित मुक्ति भूप।
तुम वीतराग अविकार शुद्ध, तुम ब्रह्मा विष्णु महेश बुद्ध।2।
मुनिगण नित तुमरो ध्यान धार, सुख पावत हैं भव सिधु पार।
धनि आज दिवस मैं दरश पाय, अब चरण जजूँ भवदुख नशाय।

घत्ता- जयगुण गण धारी, हो त्रिपुरारी, शिवमगचारी सुखकारी।
जयमाल उचारी, अर्घ करारी, "चन्द" लही शरणा थारी।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमब्रह्मभ्यः भोगलब्धिधारक-जिनेभ्यः पूर्णाऽर्घ्यं।

इत्याशीर्वादः

4 उपभोग लब्धि-पूजा

उपभोग विषै जो अतराय, तिन नाश ठानि लो लब्धि पाय।
तिनके पद पूजूँ शीश नाय, आह्वानम् कर उर में बसाय।।

ॐ ह्रीं उपभोगलब्धि-धारक-जिन ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं उपभोगलब्धि-धारक-जिन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं उपभोगलब्धि-धारक-जिन ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

अष्टक-सोरठा

गगाजल भरलाय, उज्ज्वल मुनि चित सारसो।
जजूँ चरण जिनराय, हेत लब्धि उपभोग के।।

ॐ ह्रीं उपभोगलब्धिधारक-जिनेभ्यो जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

कुकुम घसि घनसार, ताप हरे शीतल करे।

जिन पदतर दे धार, हेत लब्धि उपभोग के।।

ॐ ह्रीं उपभोगलब्धिधारक-जिनेभ्यः संसारताप-विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

तदुल अमल निहार, रत्नथाल कर धारिके।

पूजूँ जिन पद सार, हेत लब्धि उपभोग के।।

ॐ ह्रीं उपभोगलब्धिधारक-जिनेभ्यो अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

पुष्प मनोहर लाय, गुञ्जत अलिगण गधतैं।

जिन पद पूज कराय, हेत लब्धि उपभोग के।।

ॐ ह्रीं उपभोगलब्धिधारक-जिनेभ्यः कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

बहु पकवान बनाय, क्षुधा हरण भरि थाल में।

पूजूँ जिन पद ध्याय, हेत लब्धि उपभोग के।।

ॐ ह्रीं उपभोगलब्धिधारक-जिनेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

दीपक ज्योति महान, तिमिर हरण जगमग करे।

पूजूँ पद भगवान, हेत लब्धि उपभोग के।।

ॐ ह्रीं उपभोगलब्धिधारक-जिनेभ्यो मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

धूप करम क्षयकार, मणि धूपायन में भरूँ।

पूजूँ जिन दुखहार, हेत लब्धि उपभोग के।।

ॐ ह्रीं उपभोगलब्धिधारक-जिनेभ्यो अष्टकर्म-विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

सुर तरु है सुख दाय, कञ्चन थाल भराईया।
पूजूँ शीश नमाय, हेत लब्धि उपभोग के।।

ॐ ह्रीं उपभोगलब्धिधारक-जिनेभ्यो मोक्षफल-प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

सुन्दरी छन्द

उदक चन्दन तन्दुल सार है, सुमन नैवज दीप सुधार है।
धूप फल ले अर्घ सजाइयो, जिन जजूँ उपभोग सु पाइयो।।

ॐ ह्रीं उपभोगलब्धिधारक-जिनेभ्यो अनर्घपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

प्रत्येक अर्घ

छन्द जोगीरासा

अशुभ ध्यान युग त्यक्त्वा मनतें, शुभ सन्मुख कर भावा।
बार-बार तसु करत चितवन, तो उपभोग लहावा।।
जिन पद पूजूँ मन वच शुध कर, उत्तम अर्घ चढाई।
लब्धि हेत मैं अरज करत हूँ, देहु मोक्ष ठकुराई।।

ॐ ह्रीं अप्रशस्तध्यानं त्यक्त्वा प्रशस्तध्यान-सन्मुखीकरणेतत्परा एषा उपभोगनाम-लब्धि-धारक जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।।1।।

वीतराग के वचन यथावत, जो श्रद्धान कराई।
धर्म ध्यान के भेद मध्य सो, आज्ञा विचय कहाई।।
ताहि सहित जो भाव चितवन, शक्ति जिनेश्वर पाई।
लब्धि सार उपभोग माहि ये, पूजूँ शीश नमाई।।

ॐ ह्रीं वीतरागवचनेषु यथावच्छ्रद्धानकरणे समर्थ-आज्ञाविचय धर्मध्यानसहित-उपभोग-लब्धिधारक जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।।2।।

विधि के नाशन हेतु मुहुर्मुहु चितन ध्यान सु ध्याई।
द्वितिय भेद अपाय विचय है, धर्म ध्यान श्रुत गाई।।

ता युत श्री जिनराज विराजित, पूजत पुण्य बढाई।
लब्धि नाम उपभोग सार धर, तीन शल्य कहवाई।।

ॐ ह्रीं कर्मणां नाश-हेतुत्व-मुहुर्मुहुयत् चिन्तवनं तत् अपाय-विचयनाम धर्मध्यानसहितउपभोग-लब्धि-धारक जिनेन्द्राय अर्घ्यं।3।

पूर्वोपार्जित कर्म उदयतैं, सुख वा दुख उपजावे।
बार-बार तसु करत चितवन, विचय विपाक कहावे।।
धर्मध्यान को तृतीय भेद यह, श्री जिनराज धरावे।
सो उपभोग विहार लब्धि हम, पूजि परम पद पावै।।

ॐ ह्रीं पूर्वोपार्जितकर्मणां उदयेन सुख दुखं वां यत् मुहुर्मुहुः चिंतवनं विपाकविचयनाम-धर्मध्यानसहित-उपभोगलब्धि-धारक जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

लोकालोक स्वरूप चितवन, ध्यानमाहि ठहराई।
तूर्य भेद शुभ ध्यान तणों सस्थान विचय यह पाई।।
लब्धि सार उपभोग नाम जिन धारत कर्म क्षपाई।
ऐसे जिनवर के पद पूजूँ, हरष हरष गुण गाई।।

ॐ ह्रीं लोकालोक-स्वरूप-चिंतवनकारक-संस्थान-विचयनाम धर्मध्यान-सहित उपभोग-लब्धि-धारक जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।।5।।

क्षपक श्रेणि गुणस्थान माहि जिंन, शुक्ल ध्यान प्रकटाई।
शब्द शब्दान्तर अर्थ अर्थान्तर, योग योगान्तर ध्याई।।
तास वरण चित पतित मुहुर्मुहु, भाव शुकल सुखदाई।
जजूँ पृथकत्ववितर्कवीचार जू, जिन उपभोग सु ध्याई।

ॐ ह्रीं क्षपकश्रेणि गुणस्थाने शब्दात् शब्दान्तरं, अर्थात् अर्थान्तरं, योगात् योगान्तरं यत् वर्णचिंतवन-मिदृशं पृथक्त्ववितर्क-वीचार शुक्लध्यानसापेक्षं उपभोग-लब्धि-धारक-जिनेन्द्राय अर्घ्यं।।6।।

क्षीण मोह गुणस्थान माहि जिन, वर्णादिक के त्यक्ता।
एक एक वरण जो ध्यावत, भाव मुहुर्मुहु चित्वा।।
सो एकत्व वितर्क वीचार जु, ध्यान शुकल भव-हानो।
धारन केवल ज्ञान जिनेश्वर, सो उपभोग बखानो।।

ॐ ह्रीं क्षीणमोहगुणस्थाने एकै वर्ण-मात्र-विचार-मुहुर्मुहुः चिन्तवनं नाम क्षायिक-उपभोग-लब्धि-धारक जिनेन्द्राय अर्घ्यं।।7।।

सहित योग गुणस्थान सयोगी, सूक्ष्मी भूत शरीर।
तस्या हलन चलनादि क्रियाणा, अप्रतिपातस्हीर।।
यत् निर्वाशन तस्य स्वरूप शुद्धातम लवलाई।
सूक्ष्म क्रिया- प्रतिपात ध्यान, जिन जजोपभोग लहाई।।

ॐ ह्रीं सयोग-गुणस्थाने सूक्ष्मीभूत-शरीरस्य हलन चलनादि-क्रियाणा अप्रतिपात-स्वरूप -सूक्ष्मक्रियाप्रतिपात-शुक्लध्यान सहित उपभोग-लब्धि-धारक-जिनेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

योगरहित गुणस्थान अयोग जु, तहँ सब योग नशाई।
समुद्घात किरिया करने थित, लघु पन अक्षर थाई।।
ध्यान जो व्युपरत क्रिया निवृत्ति, सो जिन आतमध्याई।
तत् स्वरूप उपभोग धार जिन, पूजूँ ध्यान लगाई।।

ॐ ह्रीं संयोगगुणस्थाने व्युपरतक्रियानिवृति-नाम शुक्लध्यानसहित उपभोग-लब्धि-धारक-जिनेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

जयमाला

दोहा- ध्यान कृपाण सु धारि के, मोहमल्ल जिन मार।
गुण अनन्त युत ह्वै रहे, नमूँ ताहि उर धार।।

छन्द मोतियादाम

नमो जिनदेव करे सुर सेव, नमो पद तोहि टरे अघटेव।
नमो मिथ्यातम नाशन भान, नमो शिवरूप सदा अमलान।।
नमैं मुनिराय सदा गुण गाय, लहै तब मोक्ष रमा शिव जाय।
धरे तुम पचकल्याण अनूप, सुतत्त्व प्रकाशन शुद्ध स्वरूप।2।

तुही भव वारिधि तार तरंड, अबध कषाय अरूप अखंड।
विकार विवर्जित तर्जित काम, रमा शिव संग बसे शिव धाम।
नहीं गुण अन्त लहे श्रुतवंत, कहाँ हम अल्पमती वरनंत।
अहो जिनराज दया उर धार, हरे दुख "चन्द" करो भवपार।

घत्ता

जय जय जगनामी, त्रिभुवन स्वामी, चक्र नमामि तव चरण।
मैं पूजन आयो, अर्घ चढायो, शीश नवायो हर मरण।।

ॐ ह्रीं उपभोग-लब्धिधारक-जिनेभ्यः पूर्णार्घ्यं।

दोहा-शुद्ध द्रव्य शुभ भावतैं, पूज करै जो जीव।
निश्चय सुर पद पाय के, होवे शिव तिय पीव।।

इत्याशीर्वादः

(5) वीर्य-लब्धि पूजा

दोहा-वीर्य अनन्त जु धारि यों, अंतराय कर अंत।
आह्वानम् विधि ठानि के, स्थापि जजूँ अरहंत।।

ॐ ह्रीं वीर्यलब्धिधारकजिन ! अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वानं।
ॐ ह्रीं वीर्यलब्धिधारकजिन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं वीर्यलब्धिधारकजिन ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

अष्ट जोगीरासा

हेमाचल निर्गत सरिता जल, कंचन कुम्भ भराई।
जनम जरा मृत नाशन कारण, धार देत हरषाई।।
वीर्य लब्धिधारक जिन स्वामी, सुर नर पूजैं पाई।
पूजूँ मन वच शीश नाय, निज वीर्य लब्धि बखसाई।।

ॐ ह्रीं वीर्यलब्धिधारक-जिनेभ्यो जन्म-जरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

मलयागिरि चन्दन कुकुम, ले घसि करपूर मिलाई।
भव आताप नाश करने को तुम पद भेंट चढाई ।। वीर्य ।।

ॐ ह्रीं वीर्यलब्धिधारक-जिनेभ्यो संसार-ताप-विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

खड विवर्जित निशिपति तर्जित, तदुल शुद्ध मँगाई।
शिव थल कारण कर्म निवारण, पुज धरूँ गुण गाई।।वीर्य ।।

ॐ ह्रीं वीर्यलब्धिधारक-जिनेभ्यो अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

कमल केतकी कुद मालती, आदि सुमन सुखदाई।
काम हरण निज ब्रह्म धरण हित, तुव पद भेंट कराई।।वीर्य ।।

ॐ ह्रीं वीर्यलब्धिधारक-जिनेभ्यः कामबाण-विध्वशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

घेवर खाजा फेनी ताजा, नेवज विविध बनाई।
स्वर्ण थाल धर पूजन आयो, रोग क्षुधा विनशाई।।वीर्य ।।

ॐ ह्रीं वीर्यलब्धिधारक-जिनेभ्यः क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

रत्न दीप अथवा घृत पूरित, उज्ज्वल जोति जगाई।
मोह महा-तम-नाशक लखि प्रभु निकट धरूँ हुलसाई।।वीर्य ।।

ॐ ह्रीं वीर्यलब्धिधारक-जिनेभ्यो मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

धूप सुगधित कृष्णा गरु की, खेऊँ अग्नि जराई।
अष्टकरम जारन के कारण तुम पद पद्म पुजाई।।वीर्य ।।

ॐ ह्रीं वीर्यलब्धिधारक-जिनेभ्यो अष्टकर्म-विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

सुरनर मनहर फल बहु विधि के, कञ्चन थाल भराई।
मोक्ष महाफल कारक हो तुम, पूज करौं गुण गाई।।

वीर्य लब्धिधारक जिन स्वामी, सुर नर पूजें पाई।
पूजूँ मन वच शीश नाय, निज वीर्य लब्धि बखसाई।।

ॐ ह्रीं वीर्यलब्धिधारक-जिनेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

जल फल आदिक अर्घ चढाऊँ, आठों अग नमाई।
अष्टम थिति के राज करण कूँ, अरज करूँ जिनराई।।वीर्य ।।

ॐ ह्रीं वीर्यलब्धिधारक-जिनेभ्यो अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

प्रत्येक अर्घ

अडिल्ल छन्द

ज्ञानावरणी कर्म तनी थिति जानियो।
त्रिशत् कोटाकोटी सागर मानियो।।
ता हनि आतमशक्ति अचिन्त धरे सही।
पूजूँ पद जिन वीर्यलब्धि ऐसी लही।।

ॐ ह्रीं ज्ञानावरणकर्मणः त्रिंशत्कोटाकोटि-सागरोपम- स्थिति-नाशक अनंतशक्तिधारक वीर्यलब्धिप्राप्त जिनेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

कर्म दर्शनावरणी थिति ऐसी धरै।
त्रिशत् कोटाकोटि उदधि जिन क्षय करै।।
धारक ऐसा वीर्य जिनेश्वर देव जू।
पूजूँ अर्घ चढाय द्रव्य वसु भेव जू।।

ॐ ह्रीं दर्शनावरणस्य त्रिंशत्कोटाकोटि-सागरोपमस्थितिनाशक अनंतशक्तिधारक-वीर्यलब्धिप्राप्त-भगवज्जिनेभ्यो अर्घ्यं।।2।।

कर्म वेदनी दुविध असाता सात है।
त्रिशत् कोटाकोटि उदधि थिति पात है।।

जे तुम आतम शक्ति धरे जिनराज जी।
वीर्यनाम यह लब्धि जजूँ शिव काज जी।।

ॐ ह्रीं वेदनीयस्य त्रिंशत्कोटाकोटि-स्थितिनाशक-अनंतशक्ति-धारकवीर्यलब्धिप्राप्त-भगवत् जिनेभ्यो अर्घ्यं।।3।।

कर्म मोहनी निज पद दिया भुलाय है।
सत्तर कोटाकोटि उदधि थिति पाय है।।
ता नाशन निज आत्मभाव शक्ति धरा।
वीर्यलब्धि जिन लही जजूँ भव के हरा।।

ॐ ह्रीं मोहनीयस्य सप्ततिःकोटाकोटि सागरप्रमाणस्थितिनाशक-अनन्त-शक्तिधारक-वीर्यलब्धिप्राप्त-भगवत् जिनेभ्यो अर्घ्यं।।4।।

भव धारण को कारण कर्म जु आयु है।
थिति सागर तेतीस जिनेन्द्र नशाय है।।
धारत आतम शक्ति अनन्त स्वभाव सों।
क्षायिक वीर्य सु लब्धि जजौं मैं चाव सों।।

ॐ ह्रीं आयुकर्मणः त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमस्थितिनाशकानन्त-शक्तिधारक-वीर्यलब्धिप्राप्त-भगवत् जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

नाम कर्म बहु नाम धरावत लोक में।
विंशति कोटाकोटि उदधि थिति थोक में।।
ता हनि आतम शक्ति अनन्ती जे धरै।
अनन्त वीर्य यह लब्धि जजौं शिवतिय वरै।।

ॐ ह्रीं नानानामधारक-नामकर्मणः विंशति कोटाकोटि-सागरोपम-स्थितिनाशक-अनन्तशक्तिधारक-वीर्यलब्धिप्राप्त-भगवज्जिनेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

गोत्र कर्म कुल नीच ऊँच जनमात है।
उदधि विंशति कोटाकोटि रहात है।।

ताहि नाशि जिन आत्म स्वभाव प्रभावतैं।
वीर्य अनन्त जु धरै जजों हूँ भावतैं।।

ॐ ह्रीं गोत्रकर्मणः विंशतिकोटाकोटि-सागरस्थितिनाशक-अनंतशक्तिधारक-वीर्यलब्धिप्राप्त-भगवज्जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं।।7।।

शुभ कारिज में करै विघ्न अन्तराय है।
त्रिशति कोटाकोटि उदधि थिति थाय है।।
ताहि छेद निज आत्म शक्ति प्रकटाइयो।
गुण अनन्त धर वीर्यलब्धि हम ध्याइयो।।

ॐ ह्रीं अन्तरायकर्मणः त्रिंशतसागरोमस्थितिनाशक-अनंतशक्तिधारक-वीर्यलब्धिप्राप्त-जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।।8।।

द्रव्य भावविधि प्रकृतिरु स्थिति अनुभाग है।
बध प्रदेश नशाय कियो भव त्याग है।।
परम ज्योति परमातम पद वदों सदा,
वीर्यलब्धि क्षायिक धर मैं पूजूँ सदा।।

ॐ ह्रीं द्रव्यभावकर्मणां प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेश-बंध- क्षयकारक-वीर्यलब्धि-प्राप्त-भगवज्जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।।9।।

जयमाला

छन्द शार्दूल विक्रीडित

जय सिद्ध सु अनादि अत रहित त्रैलोक्यनाथ नुत।
लक्ष्मी बोध विराजित भव-हर भव्य सदा सतत।।
मिथ्या-मोह निशाहर दिनकर तत्त्वप्रकाश बुध।
वन्देऽहम् गुणमाल सार भणित त्वत्पादपद्म बुध।।

छन्दमोतियादाम

अहो जिन केवलभान प्रकाश, कियो तुम मोह महातम नाश।
धरे गुण सार निजातम रूप, हरे भव जाय भये शिव भूप।।

इसी ससार मझार अपार, सहे दुख मैं पन आवर्त धार।
सबै तुम जानत ज्ञान मझार, करो करुणा भवसागर तार।।
नमो पद दुर्गति नाशन जान, नमैं शत इन्द्र तुम्हैं नित आन।
अदभ अतृष्ण अदेश महेश, अनत सुखाकर नाम सुरेश।।
नमों तुम पाय अहो जिनराय, करूँ विनती भव दु ख नशाय।
जपूँ तुम नाम हिये बिच धार, कुदेव कुग्रन्थ सबै अतिछार।।

घत्ता

जै सिद्ध निरजन, बुध मनरजन, वसु विधि भजन, शिवधारी।
मैं पूजन आयो, अर्घ चढायो, 'चन्द' जनम मति, दुखहारी।।

ॐ ह्रीं अनंत-वीर्यलब्धिधारक-जिनेभ्यः पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।।

दोहा-वीर्य लब्धि धर जिन तणी, पूजा परम रसाल।
मन वच तन जो नर करै, पावै मोक्ष विशाल।।

इत्याशीर्वादः

क्षायिक सम्यक् लब्धि पूजा

सोरठा-मूल मिथ्यात नशाय, क्षायक सम्यक् पाइयो।
सो जिन तिष्ठो आय, मन वच तन स्थापन करूँ।।

ॐ ह्रीं क्षायिक-सम्यक्लब्धिधारक-जिन अत्र अवतर अवतर सवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं क्षायिक-सम्यक्लब्धिधारक-जिन अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं क्षायिक-सम्यक्लब्धिधारक-जिन अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अष्टक-सुन्दरी छन्द

अगल शीतल नीर सुधारिया, जनम मृत्यु जरा क्षय कारिया।
लब्धिक्षायक सम्यक् धारक, जिनवर युग पूजि पदाब्जक।।

ॐ ह्रीं क्षायिक सम्य0क्लब्धिधारक-जिनेभ्यो जन्म-जरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

मलय चंदन कुंकुम मिश्रित, घसि भवातप नाशन संश्रित।
लब्धि क्षायक सम्यक् धारक, जिनवर युग पूजि पदाब्जकं।।
ॐ ह्रीं क्षायिक-सम्यक्लब्धिधारक जिनेभ्यो संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

इंदु कुंद तुषार समुज्ज्वल, शुद्ध खण्ड विवर्जित तंदुल। लब्धिक्षायक।
ॐ ह्रीं क्षायिक-सम्यक्लब्धिधारक-जिनेभ्यो अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

मदन नाशन गंध सुलाइया, पद्म आदिक फूल मँगाइया। लब्धिक्षायक।
ॐ ह्रीं क्षायिक-सम्यक्लब्धिधारक-जिनेभ्यः कामबाण-विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

विविध नेवज सार बनाइया, सुरस कंचन थाल भराइया। लब्धिक्षायक।
ॐ ह्रीं क्षायिक-सम्यक्लब्धिधारक-जिनेभ्यः क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

रत्नदीप उद्योत महान है, हरन मोह प्रकाशन ज्ञान है। लब्धिक्षायक।
ॐ ह्रीं क्षायिक-सम्यक्लब्धिधारक-जिनेभ्यो मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

धूप सुन्दर अग्नि जराय है, अष्ट कर्म सु धूप उडाय है। लब्धिक्षायक।
ॐ ह्रीं क्षायिक-सम्यक्लब्धिधारक-जिनेभ्यो अष्टकर्म-विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

मिष्ट धारक लौंग बदाम है, फल मनोहर दे शिव धाम है।लब्धिक्षायक।
ॐ ह्रीं क्षायिक-सम्यक्लब्धिधारक-जिनेभ्यो मोक्षफल-प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

सलिल चंदन तंदुल पुष्पके, दीप नेवज धूप फलार्घके।लब्धिक्षायक।
ॐ ह्रीं क्षायिक-सम्यक्लब्धिधारक-जिनेभ्यो अनर्घपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

प्रत्येक अर्घ (अडिल्ल छन्द)

भाव जीव के नादिसात मिथ्यात्व है,
सो निसर्ग अधिगम द्वे कारण घात है।
सम्यक् सादृश सम्यक् प्रापति गुण सही,
अनेन वरतै मिथ्या तादृशता लही।।
ऐसी क्षायक सम्यक् लब्धि सुहावनी,
सो धारत जिनदेव परम गति पावनी।।
तिनके पद मै नमूँ शीश जिन नाय के,
आठों द्रव्य चढाय भावना भाय के।।

ॐ ह्री निसर्गजादि-मिथ्यात्वभावनिवारक-सम्यक्लब्धि-प्राप्त-भगवज्जिनेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

सम्यक् भाव सु अन्तर च्युत जो काल है,
सासादन आस्वाद यति सो हाल है।
धरत लब्धि यह श्री जिनवर पूजूँ सदा,
फेर भ्रमण जग माहि होय नाहीं कदा।।

ॐ ह्री सम्यक्त्वच्युते सति सासादन-भाव-वर्जित-सम्यक् लब्धिप्राप्त-भगवज्जिनेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

सम्यक् मिथ्या सहित मिले जो भाव है,
तिष्ठति यावत् काल सु मिश्र कहाव है।
ऐसी सम्यक् लब्धि धरै जिनदेव है,
तिन के पद नित जजूँ अर्घ वसु भेव है।।

ॐ ह्रीं सम्यक्मिथ्यात्व-मिश्रित-भाव-वर्जित-सम्यक्लब्धि प्राप्त-भगवज्जिनेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

मोह कर्म की सप्त प्रकृति जब उपशमैं,
उपशम सम्यक् धार मिथ्या मल को वमै।

सम्यक् लब्धि मझार भेद उपशम कह्यो,

सो धारक जिनराज नमो सब अघ दह्यो।।

ॐ ह्रीं मोहनीयकर्मणः सप्तानां प्रकृतीनां उपशमात् उपशम-सम्यक्त्व-प्राप्त-भगवज्जिनेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

प्रकृति मोह की किंचित् उदय अभाव है,

किंचित् उपशम सत्ता माहि रहाव है।

लब्धि धरी यह क्षयोपशम सम्यक सही,

पूजूँ श्री जिनदेव करो मंगल मही।।

ॐ ह्री क्षयोपशम सम्यक्त्वसहित-क्षयोपशमलब्धि-प्राप्त-भगवज्जिनेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

किंचित् मोह की प्रकृति मूल क्षय जात है।

क्षायक सम्यक् श्रद्धा तहँ जिय पात है।

ऐसी क्षायक सम्यक् लब्धि महान् है,

धारक श्री जिनदेव यजूँ सुख खान है।।

ॐ ह्रीं क्षायिक-सम्यक्त्वसहित-क्षायकलब्धि प्राप्त-भगवत् जिनेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

जो निश्चय एकांत वाक्य हरतार है,

स्याद्वाद नय आतम गुण विस्तार है।।

शुद्ध बुद्ध चिद्रूप करत श्रद्धान जू,

पूजूँ जिनवर क्षायिक सम्यक्वान जू।।

ॐ ह्रीं सम्यक्श्रद्धान-सहित-निश्चयनय-सम्यक्लब्धि-प्राप्त- भगवत् जिनेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

निराकार निरंजन अव्याबाध है,

सिद्ध समान जिनातम अनुभव साध है।

ऐसी निश्चय क्षायक सम्यक् लब्धि जू,
धारत है जिनराज जजूँ गुण अब्धि जू।।

ॐ ह्रीं निरंजन-निराकारा-अव्याबाध-सिद्धसमान-निजस्वरूप-ज्ञायक-निश्चय-सम्यक्-लब्धिधारक-जिनेभ्यो अर्घ्यं नि.।।8।।

निज आतम निज गुण में विचरत हैं सदा,
ऐसे निर्मल भाव नाहिं चलि है कदा।।
धन्य जिनेश्वर देव लब्धि ऐसी धरै,
पूजूँ अर्घ चढाय जजूँ भव दुख हरै।

ॐ ह्रीं आत्मगुणेषु विचरणरूपभावप्राप्त-क्षायिक-लब्धि-प्राप्त-अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

जयमाला

भव भ्रम हरि देव घाति कर्म विनाश।
सुरनर खग सेव्य मोक्ष लक्ष्मी निवास।।
अतुल गुण-समुद्र ध्यायत श्री मुनीन्द्रै।
निज पद शिव लब्धि हेत जयमाल 'चन्द्रै'।।

छन्द त्रोटक

नमो जिन सिद्ध निरजन रूप, तुही जग में विधि नायक भूप।
अजन्म अमर्ण अशर्ण सुशर्ण, अबध अवर्ण तुही सुखकर्ण।।
मुनीन्द्र गणेन्द्र धरैं तुव ध्यान, लहै तब मोक्ष रमा अमलान।
अखण्ड अरूप अजल्प, अनाकुल निर्मल नाश विकल्प।।
अलोभ अक्षोभ अमोह अमान, धरै गुण क्षायक सम्यक्ज्ञान।
अहो जग रक्ष सदा शिव रूप, सु तत्त्व प्रकाश हरी अघ धूप।।
विकार विवर्जित आतम शुद्ध, अनन्त गुणार्णव सार सुबुद्ध।
अहो मम किंकर ओर निहार, करूँ विनती भव ताप निवार।।

घत्ता

जै जै सुख सागर, सकल गुणाकर, मोक्ष रमावर, अविकारी।
मैं पूजन आयो, शीश नमायो, अर्घ चढायो, भरि थारी।।

ॐ ह्रीं क्षायक-सम्यक्त्वलब्धि-धारकजिनेभ्यः पूर्णार्घ्यं नि.।

सोरठा- सम्यक् लब्धि महान्, जो भवि पूजै भाव सो।
अष्ट कर्म कूँ हान, "चन्द्र" अचल है शिव लहै।।

इत्याशीर्वादः

(7) क्षायिक-दर्शन-लब्धि पूजा

दोहा-कर्म दर्शनावरण हनि, केवल दर्शन पाय।
स्थापन कर तिन पद जजूँ, मन वच काय लगाय।।

ॐ ह्रीं अर्हत् क्षायिकदर्शन लब्धि-धारक जिन! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं अर्हत् क्षायिकदर्शन लब्धि-धारक जिन! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं अर्हत् क्षायिकदर्शन लब्धि-धारक जिन! अत्र मम सन्निहितो भव भव सन्निधिकरणम्।।

(अष्टक) छन्द लक्ष्मीधरा।।

ल्याय गंगादिक तीर्थ जल सार है,
धार मणि भृंग जन्म मरण क्षयकार है।
देव जिनराज के चर्ण पूजूँ सही,
क्षायिका दर्शनी लब्धि जिनने लही।।

ॐ ह्रीं दर्शन-लब्धि-धारक-जिनेभ्यो जन्म-जरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

लाय कश्मीर घनसार चन्दन घसा,
स्वर्ण के पात्र में धार भव तप नशा।।

देव जिनराज के चर्ण पूजूँ सही,
क्षायिका दर्शनी लब्धि जिनने लही।।

ॐ ह्रीं दर्शन-लब्धि-धारक-जिनेभ्यो संसार-ताप-विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

अक्षत उज्ज्वल मुक्त उनहार है,
हेत पद शाश्वत धार कनक थार है।।देव. .

ॐ ह्रीं दर्शन-लब्धि-धारक-जिनेभ्यो अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

पच वर्ण रत्न के फूल बनवाइया।
नाशने अनग भाव शुद्ध कर ल्याइया।।देव .

ॐ ह्रीं दर्शन-लब्धि-धारक-जिनेभ्यः कामबाण-विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

घेवरा सु फेनिका मोदकादि आनिये।
सुष्ठु मिष्ट इष्ट सार भूख नाश मानिये।।देव

ॐ ह्रीं दर्शन-लब्धि-धारक-जिनेभ्यः क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

रत्न दीप मोह ध्वात नाशना सुहाइयो।
ज्ञान को उद्योत कर धार हरषाइयो।।देव .

ॐ ह्रीं दर्शन-लब्धि-धारक-जिनेभ्यो मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

धूप दस गध की बनाय सो अनूप है;
अग्नि माहि खेय वसु कर्म नाश रूप है।।देव

ॐ ह्रीं दर्शन-लब्धि-धारक-जिनेभ्यो अष्टकर्म-विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

कल्पवृक्ष आदि के मनोज्ञ सार पावने।
श्रीफला खारकादि मुक्ति के मिलावने।।

देव जिनराज के चर्ण पूजूँ सही,
क्षायिका दर्शनी लब्धि जिनने लही।।

ॐ ह्रीं दर्शन-लब्धि-धारक-जिनेभ्यो मोक्षफल-प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

नीर गध अक्षतादि सार द्रव्य धारिया।
नाय वसु अग नित मोक्ष साक्ष्य कारिया।।देव

ॐ ह्रीं दर्शन-लब्धि-धारक-जिनेभ्यो अनर्घपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

प्रत्येक अर्घ (**छन्द-लक्ष्मीधरा**)

लोक पाताल में नर्क भूव्यास है,
और आयाम जिनवर कहा जास है।
सर्व घनकार युत दर्शित शक्ति ये,
पूज जिन दर्शन लब्धिधर भक्ति ये।।

ॐ ह्रीं नरकादि-भूमि-आयाम-दर्शक-दर्शन-लब्धि-प्राप्त-भगवज्जिनेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

भवनवासी देव बसे पाताल है,
आय अरु काय उत्सेध अतराल है।
सुख अरु सपदा आदि जो देखिये,
लब्धिधारो जजूँ दर्शन पेखिये।।

ॐ ह्रीं भवनवासी देवानां भूमिकायां तेषां आयुकायोत्सेध-अंतराल सुख-संपदादि-दर्शन-स्वरूप दर्शनलब्धि-प्राप्तेभ्यो अर्घ्यं।।2।।

जानि नर लोक में व्यतरा वास जू,
भूमिका मेरु पर्वतादि आवास जू,

द्वीप दधि अत लो दर्शता ज्ञान मे,

सो जजूँ दर्शन लब्धि परि ध्यान मे।।

ॐ ह्री व्यतरदेवानां भूमिकायां मेरु-पर्वतादि-स्वयभूरमणसमुद्र पर्यन्त असख्यात-द्वीप-समुद्राणा ज्ञानदृष्टिना-अवलोकनं एषा-दर्शन-लब्धिप्राप्तेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

ज्योतिषी चन्द्र सूर्यादि पन भेद है,

भूमिका आयु अर काय उत्सेध है।

सुख साम्राज्य दृग ज्ञानतें जोइये,

दर्शना लब्धि धर पूजि अघ धोइये।।

ॐ ह्रीं ज्योतिर्देवानां भूमिकायां चन्द्रसूर्यादिपंचप्रकार- ज्योतिष्कानां आयुःकाय-शरीरोत्सेधसुख-संपदादिज्ञाननेत्रेण दर्शनं एषा-दर्शन-लब्धि-प्राप्तेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

प्रथम स्वर्गादि कल्प षोडश है सही,

ताम में देव की आयु सुख सर्व ही।

काय उत्सेध अरु सपदा जानियै,

दर्शना लब्धि धर पूजि उर आनिये।

ॐ ह्रीं कल्पवासिदेवानां प्रथमस्वर्गादि-षोडशस्वर्गपर्यंतदेवानां आयुः कायशरीरोत्सेधसुखसंपदादिदर्शनं एषा-दर्शनलब्धि- प्राप्तेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

ग्रैवका में सुरा कल्पनातीत है,

तास की आय पुनि आयु तो बीत है।

जानि उत्सेध सो ज्ञान अवगाहना,

दर्शना लब्धि धर पूजि है ते जिना।।

ॐ ह्रीं ग्रैवेयकवासिदेवानां आयुः कायशरीरोत्सेध-ज्ञानावगाहनादि-दर्शनं एषा-दर्शन-लब्धि-प्राप्तेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

लक्ष्य पैंताल जोजन सु विस्तार है,
सिद्ध सर्वार्थ सो नाम भूधार है।
देव अहमिद्र की आयु सुख काय जी,
ओ उत्सेध अतराल दर्शाय जी।।
क्षायिकादर्शनी लब्धि यह है सही,
देव जिन राज सुखकार ऐसी लही।
पूजि है शीश निज नाय तिन पाय जी,
अष्ट द्रव्य ल्यायके अर्घ कूँ चढाय जी।।

ॐ ह्रीं पचचत्वारिंशत्-क्षेत्र-योजन-प्रमित-सर्वार्थसिद्धि भूमिकायां अहमिन्द्र-देवानां आयुकायशरीरोत्सेध-अंतराल-सुखादि -दर्शनं एषा-दर्शनलब्धि-प्राप्तेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

अष्टमी मोक्ष भू जानि शिव थान है,
तास में वास श्री सिद्ध भगवान है।।
दर्शना देव ये दर्शनलब्धि धरै,
तास पद पूजि है मोक्ष लक्ष्मी वरै।।

ॐ ह्री अष्टम-मोक्ष-भूमिवासिसिद्धानां दर्शनं एतादृशी दर्शनलब्धि-प्राप्तेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

सुन्दरी छन्द

क्षेत्र लोक अलोकाकाश है, तिष्ठते सब द्रव्य सु भास है।
दर्शन धर लब्धि जिनेशजी, जजत हूँ शिवकार सुखेशजी।।

ॐ ह्रीं लोकाकाशे अलोकाकाश-समस्त-द्रव्य-दर्शनं सा देव दर्शनलब्धिप्राप्तेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

जयमाला

दोहा- मिथ्यातम हर दिनपती, भव्य कमल प्रफुलान।
षट्कायक रक्षक प्रभू, नमूँ आत्महित जान।।

पद्धड़ी - छन्द

जै पचकल्याणक धरण देव, शत इन्द्र करै तुव चरण सेव।
जै गर्भ प्रथम षट्मास जान, हरि धनपति कू आज्ञा बखान।।
सुन धनपति नग्र रच्यो विशाल, मणि वृष्टि कुवेर करै त्रिकाल।
जब जन्म होत सुरईश आय, गिरि न्होन रच्यो जल क्षीर लाय।।
पुन पिता सदन नृत गान ठान, सुरलोक गये इम कर कल्यान।
तजि राज जोग धारे जिनेश, धरि ध्यान खडे मनु हैं गनेश।।
चव घाति कर्म को नाश ठान, प्रकटयो केवल ज्ञान भान।
तब समवसरण रचना अपार, अद्भुत कुवेर कीन्हीं तैयार।।
मणि नीलपीठ पर धूलि शाल, चव मनस्थभ है मान टाल।
चव वापी अम्बुज युक्त जान, आगे खाई शोभायमान।।
पुनि पुष्प वाटिका मन सुहाय, प्राकार स्वर्णमय दृग लखाय।
चव गोपुर नृतशाला निहार चव वनवेदी घट धूप धार।।
कलधौत सात अतर अनूप, कहुँ सरिता कहुँ परवत स्वरूप।
चव गोपुर ठाडे द्वारपाल, बहु भाँति ध्वजा पकति रसाल।।
चहुँ दिश में तूप छतीस थाय, अरहत सिद्ध प्रतिमा सुहाय।
पुनि फटिक रूप आकार सार, चव गोपुर नव-नव निध सुधार।।
शत-शत तोरण युत मुक्ति माल, बहु मगल द्रव्य लसै सुहाल।
जहँ गधकुटी त्रय पीठ दीठ, सिहासन अबुज युक्त ईठ।।
तामें तुम राजत अतराल, वच मधुर खिरे सुनि मन खुस्याल।
गुणनत चतुष्टय प्रातिहार, महिमा अनन्त को लहै पार।।
पुनि शुक्ल ध्यानतै हनि अघात, निर्वाण लहै निरभय रहात।
अविनाशी आतम अचल रूप, गुण अतुल धरे हो त्रिजग भूप।।
मैं तुम बिन दुख जग में लहाय, भोग्या प्रावृत नहीं छोड़ पाय।
तुम चरण शरण लीनी अवार, दुख जनम मरण को 'चंद' हार।।

सोरठा- अष्टद्रव्य कर धार, बार-बार विनती करूँ।
शिव रमणी भरतार, जिनगुण सपति दीजिये।।

ॐ ह्री क्षायिकलब्धिधारकजिनेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा- जो पूजै मन ल्याय, सो नर भव सागर तिरै।
दर्शन लब्धि लहाय, बहुरि जनम वह न धरै।।

इत्याशीर्वाद·

(8) क्षायिकज्ञानलब्धि पूजा

स्थापना-दोहा

ज्ञानवरणी कर्म को, नाश कियो जिनदेव।
स्थापन कर तिन पद जजूँ, ज्ञान लब्धि के हेव।।

ॐ ह्रीं ज्ञानलब्धिधारकजिन ! अत्र अवतर अवतर सवौषट् आह्वानं।

ॐ ह्रीं ज्ञानलब्धिधारकजिन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं ज्ञानलब्धिधारकजिन ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

अष्टक छन्द लक्ष्मीधरा

क्षीर सागर तनो नीर निरमल वरन,
धारि मणि पात्र में कर्म को है हरन।
जन्म मरणादि क्षय रोग नशि जाय है,
सार सौख्य धार पूज ज्ञान ऋद्धि पाय है।।

ॐ ह्रीं ज्ञान-लब्धि-धारक-जिनेभ्यो जन्म-जरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

चदन कुकुम कर्पूर सार है,
धार सुखकार भवताप क्षयकार है।।जन्म ।।

ॐ ह्रीं ज्ञान-लब्धि-धारक-जिनेभ्यः ससारताप-विनाशनाय चंदन निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

श्वेत इन्दु कुद तैं अपार काति धार है,
खड वर्जित भरे तन्दुल थार है।।
जन्म मरणादि क्षय रोग नशि जाय है,
सार सौख्य धार पूज ज्ञान ऋद्ध पाय है।।

ॐ ह्रीं ज्ञान-लब्धि-धारक-जिनेभ्यो अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

भृग वृद गुजते सुगध पुष्प ल्याइयो,
कल्प वृक्ष आदि तें मनोज कूँ उडाइयौ।जन्म ।।

ॐ ह्रीं ज्ञानलब्धिधारक-जिनेभ्यः कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

इष्ट मिष्ट सुष्टु सार खज्जकादि नेवज,
हेम थाल धार भूख नाथ सेय देवज।।जन्म ।।

ॐ ह्रीं ज्ञानलब्धिधारक-जिनेभ्यः क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

मोह अन्धकार नाश दीप रत्न जोत है,
धरि हेम थाल में सुज्ञान को उद्योत है।।जन्म ।।

ॐ ह्रीं ज्ञानलब्धिधारक-जिनेभ्यो मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

धूप खेय धूप दान अग्नि सों जराय है,
अष्ट कर्म धूप नाश धूप सों उडाय है।।जन्म ।।

ॐ ह्रीं ज्ञानलब्धिधारक-जिनेभ्यो अष्टकर्म-विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

आम्र काम्र दाडिमादि स्वर्ग मानु लोक के,
सार फल सुख करा धार हेत मोक्ष के।।जन्म ।।

ॐ ह्रीं ज्ञानलब्धिधारक-जिनेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये-फलं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

अष्ट द्रव्य धार सार अष्ट अग नाइया।
अर्घ सों चढ़ाय शीश नाय भक्त भाइया।।
जन्म मरणादि क्षय रोग नशि जाय है,
सार सौख्य धार पूज ज्ञान ऋद्ध पाय है।।

ॐ ह्रीं ज्ञानलब्धिधारक-जिनेभ्यो अनर्घपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

प्रत्येक अर्घ छन्द लक्ष्मीधरा

जीव त्रस थावरा सूक्ष्म अरु बादरा,
आयु तिन काय उत्सेध उत्पति धरा।
स्थित्य व्ययात्म के ज्ञायते जे जिना,
क्षायक लब्धिधर पूजिहूँ मैं तिना।।

ॐ ह्रीं त्रसस्थावर सूक्ष्मबादर जीवानां आयुःकायशरीरोत्सेध-स्थित्युत्पत्त्यादि-ज्ञायक-भावप्राप्तेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।।1।।

व्योम धरमाधरम काल अरु पुदगला,
पच निरजीव के भेद जानो भला।
तास के रूप की ज्ञायक लब्धि है,
पूजहूँ ते जिना धार गुण लब्धि है।।

ॐ ह्रीं धर्माधर्माकाश-पुद्गलादीनां पंचप्रकाराजीवपदार्थ- स्वरूपानां ज्ञायकभाव-प्राप्तेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

आश्रवा सप्त पचास जे भेद हैं,
आदि मिथ्यात्व देव जीव कूँ खेद है।
जान समार में अशुभ शुभ रूप जू,
ज्ञान के लब्धि धारी जजूँ भूप जू।।

ॐ ह्रीं मिथ्यात्वादि-सप्तपंचाशदाश्रवादिभावानां स्वरूपानां ज्ञायकभावप्राप्तेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

जान मद तीव्र मध्य भेद जे कषाय है,
तासु भाव आश्रवा भव थिति बधाय है।
तास रूप ज्ञायक ज्ञान ऋद्धी धरे,
पूजि हूँ ते जिना बोध लक्ष्मी धरें।।

ॐ ह्रीं तीव्रमंदमध्यकषाय-ज्ञायकभाव-प्राप्तेभ्यो अर्घ्यं।।4।।

सप्त पचास है भेद सवर तने,
समिति गुप्त्यादिक आश्रवा रूँधने।
ताहि सब ज्ञायक भाव जो थाय है,
मैं जजूँ ते जिना लब्धि सो पाय है।।

ॐ ह्रीं समितिगुप्त्यादि-सप्तपंचाशत्-संवरस्य-भेद-ज्ञायक-भाव-प्राप्तेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

धार तप सवरा पूर्वक सार है,
जास-तै कर्मण जीरणाकार है।
ता स्वभाव रूप को ज्ञायक भाव है,
ते जिना मैं जजूँ कर्म को नशाव है।।

ॐ ह्रीं संवर-पूर्वक-तपः-करणज्ञायक-भाव-प्राप्तेभ्यो अर्घ्यं।।6।।

द्रव्य अरु भाव नोकर्म के नाशतें,
जीव के मोक्ष की प्राप्ति है जासतें।
ज्ञायक भाव ऐसो धरै सो सही,
पूजि हूँ ते जिना शीश नाऊँ मही।।

ॐ ह्रीं द्रव्यकर्म-भावकर्म-नोकर्म-क्षायिकस्वरूप-ज्ञायकभाव-प्राप्तेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

दर्शशुद्धादि जो षोडशी भावना,
प्रकृति ये पुण्य फल तीर्थ पद पावना।

ज्ञायक भाव सो धार जिनराज है,
तास पद मै जजो मोक्ष के काज है।।

ॐ ह्री दर्शन-विशुद्धयादि-पुण्यप्रकृतीना शुभाशुभफलाना ज्ञायक-भावप्राप्तेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

सहित मिथ्यात्व हिसादि पन पाप को,
फल बढे निगोद आदि शुभ्र सताप को।
ना स्वरूप ज्ञायक लब्धि धारी नमूँ,
जासु पद पूजतै सर्व अघ को वमूँ।

ॐ ह्रीं मिथ्यात्वसहित-हिसादिपचपापानां नरक-निगोदादि-फलानां ज्ञायकभावप्राप्तेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

जयमाला

दोहा-समवसरण लक्ष्मी धरै, त्रिभुवनपति जिनराय।
गुण अनन्त उर धार मै, नमि जैमाल सु गाय।।

छन्द पद्धरि

जय चिन्मूरत परमात्म रूप, जय दर्शन ज्ञान धरै अनूप।
जय एकानेक मुनीश ध्याय, जय शुद्ध बुद्ध चिद्रूप भाय।।
जय मौनी ध्यानी निर्विकल्प, जय इष्ट शिष्ट गुण हो अजल्प।
जय ब्रह्म विदावर शिव गनेश, अज्ञान तिमिर हरता जिनेश।।
जय पुरुष पुराण अलोभ सत, निर आयुध निरभै मुक्ति कत।
जय निकल निरवर कातिमान, जय सकल दिगम्बर हो पुमान।।
जय वीतराग सब विश्व जान, जय नित्य निरजन गुणनिधान।
जय वृष चक्री ध्वज दयावान, जय श्रीपति श्री करता महान।।
जय महाशील महा क्षमा युक्त, जय महादमी महादान जुक्त।
जय महा महा कीरति विशाल, जय पच महा कल्याण माल।।
जय यथाख्यात चारित धरत, जय महामतिर्महा-नीतिवत।
जय पुण्डरीक श्रीवत्स लक्ष, जय नाम पितामह जग प्रत्यक्ष।।

जय पावन गत त्राता पवित्र, जय स्वय बुद्ध निरबाध नित्त।
जय महा प्रातहारिज सुहाय, जय निराहार नि सक्रिय लखाय।।
जय जय इत्यादि अनत नाम, उर धारूँ तजि सब जगत काम।
मै करूँ वीनती जोर हाथ, भव तारण तरण निहार नाथ।।

घत्ता- इह गुण मणिमाल, परम रसाल, नमि तिरकाल, उर धरई।
करि अर्घ अनूप, जजि शिव भूप, 'चन्द' अनूप, सुख करई।

ॐ ह्रीं ज्ञायक-ज्ञान-ऋद्धि-धारक-जिनेभ्यो पूर्णार्घ्यं नि.।।

दोहा- ज्ञानलब्धि धर जिन तणी, पूजा परम विशाल।
द्रव्य भाव से जो करे, पावे शिव पद हाल।।

इत्याशीर्वादः

(9) क्षायिकचारित्रलब्धि पूजा

स्थापना-दोहा

मोह कर्म के नाशतै, क्षायिक चारित पाय।
तिनके पद उर धार के, जजूँ स्थापि हरषाय।।

ॐ ह्रीं क्षायिक-चारित्रलब्धिधारक-जिन! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानं।

ॐ ह्रीं क्षायिक-चारित्रलब्धिधारक-जिन! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं क्षायिक-चारित्रलब्धिधारक-जिन! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

अष्टक (चाल सोलह कारण पूजा)

गगा जल अति प्रासुक सार, कचन झारी भरकर धार।
सदाशिव होय, जय जिनराज सदा शिव होय।।
पूजूँ चरण लब्धि हरषाय, जन्म जरा मृत रोग नशाय।।सदा ।।

ॐ ह्रीं चारित्रलब्धिधारक-जिनेभ्यो जन्म-जरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

मलयागिर चदन कर्पूर, केसर सग घसूँ भरपूर।।सदा ।।
पूजूँ चरण लब्धि हरषाय, मेरी भव आताप हराय।।
सदाशिव होय, जय जिनराज सदा शिव होय।।
ॐ ह्रीं चारित्रलब्धिधारक-जिनेभ्यो ससारताप-विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।
श्वेत इन्दु मुक्ता उनहार, सालि अखड भरूँ कनथाल।।सदा ।।
पूजूँ चरण लब्धि हरषाय, देहु अखय पद मोक्ष सुहाय।।सदा ।।
ॐ ह्रीं चारित्रलब्धिधारक जिनेभ्यो-अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतान्।।3।।
रायबेल अरु जुही गुलाब, सुमन सुगध धरे बहु आब।।सदा.।।
पूजूँ चरण लब्धिधर पाय, मदन वाण नाशन जिनराय।।सदा ।।
ॐ ह्रीं चारित्रलब्धिधारक-जिनेभ्यः कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।
बहु विधि के पकवान बनाय, सुरस मिष्ट रसना मनभाय।।सदा ।।
पूजूँ चरण लब्धि हरषाय, रोग क्षुधा तत्काल नशाय।।सदा ।।
ॐ ह्रीं चारित्रलब्धिधारक-जिनेभ्यः क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।
रतन दीप अद्‌भुत उद्योग, स्वर्ण थाल में जगमग जोत।।सदा ।।
पूजूँ चरण लब्धि धर पाय, केवल ज्ञान देहु सुखदाय।।सदा ।।
ॐ ह्रीं चारित्रलब्धिधारक-जिनेभ्यो मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।
धूप सुगन्ध मनोहर खेय, मणि धूपायन माहि भरेय।।सदा ।।
पूजूँ चरण लब्धि हरषाय, अष्ट करम यह दुष्ट जराय।।सदा ।।
ॐ ह्रीं चारित्रलब्धिधारक-जिनेभ्यो अष्टकर्म-विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।
मिष्ट मनोहर फल सु मँगाय, रसना घ्राण नयन हरषाय।।सदा ।।
पूजूँ चरण लब्धि हरषाय, मोक्ष रमा हम कू बकसाय।।सदा ।।
ॐ ह्रीं चारित्रलब्धिधारक-जिनेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

अष्ट द्रव्य मय अर्घ बनाय, हरषि हरषि बहु नृत्य कराय।।सदा ।।
पूजूँ चरण लब्धि हरषाय, भव सागर तै पार लगाय।।सदा ।।

ॐ ह्रीं चारित्रलब्धिधारक-जिनेभ्यो-अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

प्रत्येक अर्घ-अडिल्ल छन्द

पचेन्द्रिय के विषय तणी जो वासना,
तातें विरक्ति भाव भये दुख नाशना।
ऐसी चारित लब्धि प्राप्त जो देव हैं।
तिन के पद मै जजूँ हरी अघ टेव हैं।।

ॐ ह्रीं पचेन्द्रिय-विषये विरक्तभाव-चारित्रलब्धि-प्राप्तजिनेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

एकेन्द्री आदिक त्रस थावर जीव है,
तिन सब की अनुकम्पा धार सदीव है।
ऐसे उत्तम भाव प्राप्त लब्धि लही,
ते जिन पूजूँ देहु हमें शिव की मही।।

ॐ ही एकेन्द्रियादिक-त्रसस्थावर-जीवानामनुकम्पाभाव-चारित्रलब्धि-धारक जिनेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

मनवचतन सावद्य योग निरवर्ति है,
तत् सामायिक चारित लब्धि सु धरति है।
ता स्वभाव की प्राप्ति जिन पूजूँ सदा,
सकल पाप क्षय जाय लहूँ शिव सपदा।

ॐ ही सर्वसावद्ययोगस्य विरति-सामायिक-चारित्रलब्धि-प्राप्तजिनेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

हिसादिक पन पाप प्रमाद बसाय जू,
जो अकृत्यकृत छेदन अर्थ धराय जू।

आगमोक्त विधि पुन जु चारित लब्धि है,
छेदोस्थापन पाय जजूँ गुण अब्धि है।।

ॐ ह्री छेदोपस्थापना-नाम-चारित्रलब्धिधारक-जिनेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

कोइयक मुनि परिणाम विशुद्धी धारते,
कस्मिन् काले म्वेच्छा करत विहारतें।
त्रस थावर वध दोष निवारण कारणै,
जजूँ लब्धि चारित्र विशुद्धि धारणै।।

ॐ ह्रीं परिहारविशुद्धि-नाम-चारित्रलब्धिधारक-जिनेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

आशय है जहँ सूक्षम लोभ तणो सही,
ता परिणाम निवारण चारित जो कही।
सो ही सूक्षम सापराय विख्यात है,
तास लब्धि धर देव जजूँ अवदात है।

ॐ ह्री सूक्ष्मसापरायनाम-चारित्रलब्धिधारक-जिनेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

आतम शुद्ध स्वरूप तणो जो ध्यान है,
यथाख्यात चारित्र सार जग मान है।
धरत लब्धि जो ऐसी तिन पद धोक है,
पूजूँ अर्घ चढाय ज्ञान को थोक है।।

ॐ ह्रीं यथाख्यात-चारित्रलब्धिधारक-जिनेभ्यो अर्घ्यं नि.स्वाहा।।7।।

अष्ट गुणन सयुक्त सिद्ध परमेष्ठि है,
तिन मे तन्मय भाव चितवन श्रेष्ठ है।
निश्चय चारित लब्धि सार यह जानिये,
ता धारक जिन जजूँ भक्ति उर आनिये।।

ॐ ह्रीं निश्चय-चारित्र-लब्धि-धारक-जिनेभ्यो अर्घ्यं नि.स्वाहा।।8।।

गुण अनत निज आतम रूप सुहावनो,
तासो तन्मय भाव विचारन पावनो।
क्षायक चारित लब्धि शुद्ध गुण धाम है,
ता धारक जिन पूजूँ तजि सब काम है।।

ॐ ह्रीं क्षायिक-चारित्र-लब्धिधारक-जिनेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

जयमाला

दोहा- पच कल्याणक रूप हो, पच लब्धि दातार।
स्वय बुद्ध परमात्मा, नमूँ नमूँ भव हार।।

छन्द-लक्ष्मीधरा

देखिये जिनेन्द्र आज राज ऋद्धि पाय है,
शक्र चक्र आदि सर्व चर्ण शीश नाय है।
सार सिहासन चामर धार है,
शीश त्रय छत्र इन्दु जोति को निवार है।।
वृक्ष है अशोक सार शोक सब को हरे,
देव आकाश ते फूल वरषा करें।
खिरत मुख कजतै दिव्य ध्वनि सार है,
सुनत भवि जीव को पाप क्षयकार है।।
तन प्रभा मण्डल सप्त विख्यात है,
बजत सुर दुदुभी सार जस गात है।
कर्म-चक्र नाश के धर्म चक्री भये,
बोधि भव्य जीव को मोक्ष लक्ष्मी लये।।
त्रिपुरारी तुम्ही शुद्ध परमात्म हो,
जन्म जरा मर्ण हर एकनेकात्म हो।
नमत हूँ विश्व दृश्या विधाता मही,
नमत हूँ विश्व व्यापी त्रिलोचन सही।।

सर्व योगीश्वरो नित्य मैं नमत हूँ,
नमहुँ दातात्म तीर्थेश दुख वमत हूँ।
नम हूँ अजित चिंतामणी नाम है,
कर्म अरिनाश मन चित कर काम है।।

घत्ता

जय दीन दयाल, शिव करतार, हनि भव जाल, अरज करूँ।
मैं अर्घ चढाऊँ, शीश नमाऊँ,- 'चन्द' जनम फिर, नाहि धरूँ।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमब्रह्म चारित्रलब्धिधारक-जिनेभ्यः पूर्णार्घ्यं।

दोहा-क्षायक चारित्र लब्धिधर, जिन पूजै जो जीव।
शक्र चक्र सुख भोग के, शिव सुख लहै सदीव।।

इत्याशीर्वादः

समुच्चय जयमाला

छन्दकुसुमलता

जग सुख दायक चार घाति हनि, केवल पाय भये चिद्रूप।
शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध अनूपम, सुर नर सेवै त्रिभुवन भूप।।
नाशि अघाति भये शिव मन्दिर, वसु गुण धरि अजरामर रूप।
नित्य निरंजन वीर जिनेश, नमों पद कंज नशे भव भूप।।1।।

चाल त्रिभुवन गुरुकी

अहो वीर जिन देव तुम हो त्रिभुवन स्वामी,
अरज सुनो महाराज, वसु विधि बडे हरामी।।
तुम इनको कर नाश वास शिव नगर करावो,
मोकूँ यह दुख देय गति गति माहि फिरावो।।
रत्नत्रय निधि लूट मोहि ठग कियो भिखारी,
अब सुध लीजो देव तुमको लाज हमारी।
तुम हो दीनदयाल विरद अपनो लख लीजे,
मेरी भूल अनादि प्रभु सब माफ करीजे।।

अबलौ तुम गुण भेद मै कछु जाण्यो नाही,
मुनिगण सेवै पाय ध्यान तै सुर शिव पाई।।
तुम गुण अगम अपार पार सुर गुरु नहि पावै,
तेरे नाम प्रसाद विघन नशि मगल आवै।
अग्नि नीर अहि माल रोग तन मे नही व्यापै,
मृगपति मृग सम थाप कुटिल गज थरहर कॉपै।।
व्यतर भूत पिशाच नाम जपतै नशि जावै,
उदधि परे तिर जाय विषम वन नाहीं डरावे।
ऐसो अतिशय और कुदेवादिक मे नाहीं,
मै जग देख्यो हेर दोष तिष्ठै सब माहीं।।
तुम निरदूषण देव प्रातिहारज अति सोहै,
अनत चतुष्टय देखि दोष को लेश न कोहै।
क्षुधा तृषा अरु अरति जन्म मृत्यु तोरी फॉसी,
खेद स्वेद मद मोह जरा निद्रा भय सारी।।
विस्मय रोग रु शोक राग चिता सब जारी,
द्वेष तणो नहीं लेश दोष अष्टादश हारी।
रूप निरबर शात तेज रवि कोटि लजायो,
धर्मचक्र तुम धार कर्म चक्री जय पायो।।
नमूँ ब्रह्म वय धार नमूं शिवदानी ध्यानी,
मानस्तभ विलोक शीश नावै बहु भारी।
तेरो दरश प्रभाव सुजश जग छाय रह्यो है,
वचन सुधा सम धार जीव बहु ज्ञान लह्यो है।
दर्श भाव उर धार भेक सुर पदवी पाई,
इन्द्रभूति कर दर्श ज्ञान चवथो सु लहाई।।
तुम दर्शन तें नाथ कोटि भव के अघ नाशै,
तुम दर्शन तें नाथ ज्ञान सम्यक् परकाशै।

तुम दर्शन तै नाथ नरक पशु गति नही पावै,
तुम दर्शन तैं नाथ मुक्ति कमलापति थावै।।
तुम दर्शन तै नाथ नवों निधि मैने पाई,
तुम दर्शन तै नाथ मनुष भव सफल कराई।।
आयो तुम दरबार युगल पद धन्य हमारे,
पूजे तुम पद धार हिये दृग रूप निहारे।।
श्रवण सफल मुनि बैन सफल रसना गुण गाये,
शीश सफल कर जोर हृदय शुचि ध्यान धराये।
नमो वीर महावीर नमो सन्मति के करता,
वर्द्धमान महावीर नमूँ भव सकट हरता।।
पावापुर निर्वाण नमूँ सुर नर खग ध्यावै,
जै जै शब्द उचार बहुत वादित्र बजावै।
अहमिंद्रादिक वास नहीं जाचूँ स्तुति करके,
भव भव में पद सेव देहु मिथ्यातम हरि कै।।

दोहा- कनक थाल मे द्रव्य भरि, पूजूँ मन वच काय।
भव दधि डूबत काढिये, 'चन्द' मुकति पहुँचाय।।

ॐ ह्री नवलब्धिधारक-जिनेभ्यः पूर्णाऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा- जो नर पूज रचाय, पाठ पढै मन लाय के।
निश्चय सुर पद पाय, नर ह्वै मुनि शिव तिय वरै।।

इति श्रीलब्धिविधान-पूजा सम्पूर्णा

इत्याशीर्वादः।

श्रुतस्कंध विधान

मंगलाचरण (श्रुतभक्ति)

सिद्धवरसासणाण, सिद्धाण कम्मचक्कमुक्काण।
काऊण णमुक्कार, भत्तीय णमामि अगाई।।1।।
जिनका वर शासन जग प्रसिद्ध, जो कर्मचक्र से रहित सिद्ध।
उनको कर नमस्कार भक्त्या, द्वादश अगों को नमूँ नित्य।।1।।
आचार सूत्रकृत स्थान अग, समवाय व व्याख्याप्रज्ञप्ती।
है ज्ञातृधर्मकथनाग छठा, औ उपासकाध्ययनाग कृती।।2।।
अत कृतदश औ अनुत्तरोपपाददशक है अगज्ञान।
है प्रश्न व्याकरण विपाकसूत्र, इन ग्यारह अगो को प्रणाम।।3।।
परिकर्मसूत्र प्रथमानुयोग, पूर्वगत चूलिका पचविधा।
इन युत बारहवाँ दृष्टिवाद, है अग उसे प्रणमूँ त्रिविधा।।4।।
उत्पादपूर्व अग्रायणीय, और वीर्य अस्तिनास्ति प्रवाद।
ज्ञानप्रवाद सत्यप्रवाद, आत्मप्रवाद, कर्म प्रवाद।।5।।
औ प्रत्याख्यान पूर्व विद्यानुवाद कल्याण नाम पूरब।
जो प्राणवाद किरिया विशाल, और लोकबिदुसार पूरब।।6।।
दश चौदह आठ अठारह औ, बारह बारह सोलह व बीस।
है तीस व पद्रह शेष चार, मे दश दश वस्तू श्रुत प्रणीत।।7।।
चौदहपूर्वों में वस्तुनाम, अधिकारों की सख्या क्रम से।
इन पूर्वों की जितनी वस्तू, उन सबको प्रणमूँ भक्ति से।।8।।
एक एक वस्तू में बीस बीस, प्राभृत माने आचार्यों ने।
वस्तू तो विषम व सम भी हैं, प्राभतृ सब सख्या में माने।।9।।
चौदह पूर्वों की एक शतक, पचानवे वस्तू होती है।
सब प्राभृत सख्या तीन सहस, नव सौ पूर्वों की होती है।।10।।

दोहा- इस विश्व भक्ति राग से, स्तवन करूँ श्रुत शस्त्र।
जिनवर वृषभ मुझे तुरत, देवों श्रुत का लाभ।।11।।

अथ श्रुतस्कंधयज्ञप्रतिज्ञापनाय मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

अथ स्थापना (गीता छन्द)

जिनदेव के मुख से खिरी दिव्या ध्वनी अनअक्षरी।
गणधर ग्रहण कर द्वादशागी ग्रथमय रचनाकरी।।
उन अग पूरब शास्त्र के ही अश ये सब शास्त्र हैं।
उस जैनवाणी को नमूँ जो ज्ञान अमृत सार हैं।।

ॐ ह्रीं श्रुतस्कंधकल्पद्रुम ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वान।
ॐ ह्रीं श्रुतस्कधकल्पद्रुम ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापन।
ॐ ह्रीं श्रुतस्कंधकल्पद्रुम ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथ ·ाष्टक (चामर छन्द)

जैन साधु चित्त सम पवित्र नीर ले लिया।
स्वर्ण भृग में १ रा पवित्र भाव मैं किया।।
द्वादशाग जैनवाणी पूजते उद्योत हो।
मोहध्वात नष्ट हो उदीत ज्ञान ज्योति हो।।1।।

ॐ ह्रीं श्रुतस्कंधकल्पद्रुमाय जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

केशरादि को घिसाय स्वर्ण पांत्र में भरी।
पाप ताप शाति हेतु पूजहूँ इसी घरी।।द्वादशाग0।।2।।

ॐ ह्रीं श्रुतस्कंधकल्पद्रुमाय संसारताप-विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्द्र रश्मि के समान धौत स्वच्छ शालि हैं।
पुज को चढ़ावते भरा सुवर्ण थाल हैं।द्वादशाग0।।3।।

ॐ ह्रीं श्रुतस्कधकल्पद्रुमाय अक्षयप्रद-प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

मोगरा गुलाब चप केतकी चुनाय के।

स्वात्म सौख्य प्राप्त होय पुष्प को चढावते।।द्वादशाग०।।4।।

ॐ ह्रीं श्रुतस्कंधकल्पद्रुमाय कामबाण-विध्वसनाय पुष्प नि.स्वाहा।

लड्डुकादि व्यजनों से थाल को भराय के।

ज्ञान देवता समीप भक्ति से चढाय के।।द्वादशाग०।।5।।

ॐ ह्रीं श्रुतस्कंधकल्पद्रुमाय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं नि.स्वाहा।

दीप में कपूर ज्वाल आरती उतारहूँ।

ज्ञानपूर जैन भारती हृदय में धारहूँ।।द्वादशाग०।।6।।

ॐ ह्रीं श्रुतस्कधकल्पद्रुमाय मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप ले दशाग अग्नि पात्र में हि खेवते।

कर्म भस्म हो उडे सुगधि को बिखेरते।।द्वादशाग०।।7।।

ॐ ह्रीं श्रुतस्कंधकल्पद्रुमाय अष्टकर्म-दहनाय धूपं नि. स्वाहा।

सेव सतरा अनार द्राक्ष थाल में भरे।

मोक्ष फल के हेतु शास्त्र के समीप ले धरें।।द्वादशाग०।।8।।

ॐ ह्रीं श्रुतस्कंधकल्पद्रुमाय मोक्षफल-प्राप्तये फल नि.स्वाहा।

वारि गध शालि पुष्प चरु सुदीप धूप ले।

सत्फलों समेत अर्घ ले जजें सुयश मिले।।द्वादशाग०।।9।।

ॐ ह्रीं श्रुतस्कंधकल्पद्रुमाय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं नि.स्वाहा।

स्वर्ण भृग नाल से, सुशाति धार देय के।

विश्व शाति हो तुरन्त, इष्ट सौख्य देय के।।द्वादशाग०।।10।।

शातये शातिधारा।

गध के समस्तदिक्, सुगध कर रहे सदा।

पुष्प को समर्पिते न दु ख व्याधि हो कदा।।द्वादशाग०।।11।।

दिव्य पुष्पाजलि ।

प्रत्येक अर्घ्य

सोरठा- जिनवाणी है पूज्य, अग तथा अग बाह्य जो।
जिनवच जिनसम पूज्य, अत पूजहूँ भक्ति से।।

इति मडलस्योपरि पुष्पाजलिं क्षिपेत्

अथ प्रथमदले पुष्पांजलिः

चौपाई- मुनियो के आचार प्रधान, उनका पूरण करे बखान।
करो यत्नपूर्वक सब क्रिया, जिससे मिले शीघ्र शिव प्रिया।

दोहा- पद है आचाराग मे, अठरह सहस प्रमाण।
जो पूजे नित अर्घ ले, मिले सौख्य निर्वाण।।1।।

ॐ ह्री जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-आचारांगाय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्व ममय पर ममयो को कहे, स्त्री के लक्षण वरणये।
सूत्र कृताग दूसरा अग, इसको नमत मिले सुख सग।।

दोहा-इसी दूसरे अग मे, पद छत्तीस हजार।
पूजत ही भ्रम नाश के, मिले समय का सार।।2।।

ॐ ह्री जिनेन्द्रदेव-मुखकमल विनिर्गत-सूत्रकृतागाय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जीव और पुद्‌गल के भेद, एक दोय त्रय आदि अनेक।
वर्णे स्थानाग सदैव, पूजत मिले ज्ञान स्वमेव।।
तीजे स्थानाग में पद व्यालीस हाजार।
जो पूजें वे शीघ्र ही, लहें स्वात्म निधि सार।।3।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-स्थानागाय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्य अपेक्षा रहें समान, उसे कहें समवाय सुमान।
क्षेत्र काल अरु भाव समान, इनका भी यह करे बखान।।

एक लाख चौंसठ सहस, पद इसके है जान।
पूजत ही जिनके सदृश, मिला स्वात्म निधान।।4।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-समवायांगाय अनर्घ्य-पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जीव अस्ति या नास्ति आदि, साठ हजार प्रश्न इत्यादि।
इनका उत्तर देवे नित्य, व्याख्या प्रज्ञप्ती वह सिद्ध।।
पद माने दो लाख अरु, अठ्ठाईस हजार।
वसुविध अर्घ चढाय हूँ, मिले सुगुण भंडार।।5।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-व्याख्याप्रज्ञप्त्यंगाय अनर्घ्य-पद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर की धर्म कथादि, दिव्य ध्वनि से वर्णे सादी।
त्रय संध्या में खिरती ध्वनी, संशय आदि दोष को हनी।।
पाँच लाख छप्पन सहस, पद है इसमे जान।
ज्ञातृ धर्म-कथांग-यह, जजूँ इसे गुण खान।।6।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-नाथधर्मकथांगाय अनर्घ्य-पद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पाक्षिक नैष्ठिक साधक भेद, श्रावक के प्रतिमादि अनेक।
इनका वर्णन करें अमंद, सो उपासकाध्ययन सुअंग।।
ग्यारह लाख सत्तर सहस, पद हैं इसमें सिद्ध।
जो पूजें नित भाव से, वे पद लहें अनिंद्य।।7।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-उपासकाध्ययनांगाय अनर्घ्य-पद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रति तीर्थंकर तीरथकाल, दश दश मुनि निज आत्म संभाल।
घोर घोर उपसर्ग सहत, केवलि हो निर्वाण लहत।।

अन्त कृत दश नाम यह, अग जजूं धर नेह।
तेइस लख अठबीस सहस, पद से यह वर्णय।।8।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-अत कृतदशांगाय अनर्घ्य-पद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौविस तीर्थंकर का तीर्थ, उनमें हो दश मुनि ईश।
घोरोपसर्ग सहनकर मरे, अनुत्तर मे इन्द्र अवतरे।
अनुत्तरौपपादिक दश, अग जजूं सुखकार।
पद है बानवे लाख अरु, चब्बालीस हजार।।9।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-अनुत्तरौपादिकदशागाय अनर्घ्य-पद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आक्षेपिणि विक्षेपिणि तथा, सवेदनि निर्वेदनि कथा।
नष्ट मुष्टि चितादिक प्रश्न, वर्णन करता है यह अग।।
इसमे पद तिरानवे, लाख व सोल हजार।
प्रश्न व्याकरण अग को, जजूँ मिले सुखसार।।10।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-प्रशनव्याकरणांगाय अनर्घ्य-पद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ वर अशुभ कर्मफल पाक, वर्णन करता अग विपाक।
द्रव्य क्षेत्र काल अरु भाव, इनके आश्रय कहे स्वभाव।।
इस विपाक सूत्राग में पद हैं एक करोड।
लाख चुरासी भी कहें जजूँ सदा कर जोड।।11।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-विपाकसूत्रांगाय अनर्घ्य-पद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन शतक त्रेसठ मत भिन्न, उनका वर्णन करे अखिन्न।
नाना भेद सहित यह अग, दृष्टिवाद नाम यह अत।।

इक सौ आठ करोड अरु, पद है अडसठ लाख।
छप्पन हजार पाँच भी जजूँ नमाकर माथ।।12।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-दृष्टिवादागाय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शातिधारा। दिव्य पुष्पाजलिः।

अथ द्वितीयदले पुष्पांजलिः

शभुछंद

इस दृष्टि वाद के पाँच भेद परिकर्म सूत्रप्रथमानुयोग।
पूरब गत अरु चूलिका कही, इनमे भी कहे प्रभेद योग।।
पहले परिकर्म के पॉच भेद, उनमे शशि प्रज्ञप्ती पहला।
उसमे पद छत्तिस लाख पॉच, हज्जार जजूँ ले अर्घ भला।।13।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-चद्रप्रज्ञप्त्यै अनर्घ्यपद- प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दूजा सूरज प्रज्ञप्ति कहा, परिकर्म सूर्य से सबधी।
आयु मडल परिवार ऋद्धि, अरु गमन अयन दिन-रात विधी।।
इस सबका वर्णन करता यह, इसको भक्ती से पूजूँ मै।
पद पॉच लाख अरु तीन सहस, इन वदत भव से छूटूँ मै।।14।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-सूर्यप्रज्ञप्त्यै अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रज्ञप्ती जबूद्वीप नाम, यह मेरु कुलाचल क्षेत्रादिक।
वेदिका सरोवर नदी भाग, भू जिनमदिर सुरभवनादिक।।
इस जबूद्वीप के मध्य विविध, रचना का वर्णन करता है।
पद तीन लाख पच्चीस सहस, इनका अर्चन भव हरता है।।15।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-जबूद्वीपप्रज्ञप्त्यै अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस मध्य लोक मे द्वीप और, सागर है सख्याती कहे।
किसमें क्या है ? यह सब वर्णे, व्यतर आदिक आवास कहे।।
इसमे पद बावन लाख तथा, छत्तीस हजार बखाने है।
हम भक्ती से पूजे इसको, जिससे भव भव दु ख हाने है।।16।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-द्वीपसागरप्रज्ञप्त्यै अनर्घ्य-पद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

व्याख्या प्रज्ञप्ती परीकर्म, जीवाजीवादिक द्रव्यों को।
भव्यों व अभव्यों सिद्धो कों, वर्णे बहु वस्तू भेदों को।।
इसमे पद लाख चुरासी अरु, छत्तीस हजार बखाने हैं।
हम इसकी पूजा करके ही, निज आत्मा को पहचाने है।।17।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-व्याख्याप्रज्ञप्त्यै अनर्घ्य-पद प्राप्तये-अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शातये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ तृतीयदले पुष्पांजलिः

उस दृष्टि वाद का भेद दूसरा, सूत्र नाम का माना है।
है जीव अबधक अवलेपक, इत्यादिक करे बखाना है।।
यह क्रिया अक्रिया वादों को, अरु विविध गणित को वर्णे है।
पद है अठ्टासी लाख कहे, इसको पूजूँ भवतरणी ये।।18।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-दृष्टिवादभेदसूत्राय अनर्घ्य-पद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्यपुष्पांजलिः।

अथ चतुर्थदले पुष्पांजलिः

तीर्थंकर चक्री हलधर अरु, नारायण प्रतिनाराण हैं।
त्रेसठ ये शलाका पुरुष कहे, इनके चारित्र को वर्णे ये।।

जिनवर विद्याधर ऋद्धिधर, मुनियों राजादिक पुरुषों को।
वर्णे पद इसमें पाँच सहस, प्रथमानुयोग पूजूँ इसको।।19।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-दृष्टिवादभेद-प्रथमानुयोगाय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांति धारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ पंचम दले पुष्पांजलिः

चौथा है भेदपूर्व गत जो, इसके भी चौदह भेद कहें।
उत्पाद पूर्व पहला यह भी, उत्पत्ति नाश स्थिति कहे।।
सब द्रव्यों की पर्यायों को यह वर्णे इसको पूजूं मैं।
इसमें पद एक करोड कहे, वदत भव दु ख से छूटूँ में।।20।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गतोत्पादपूर्वाय-अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्रायणीय पूरब दूजा, यह सुनय सात सौ अरु दुर्नय।
छह द्रव्य पदार्थों को वर्णे, इसमें पद छ्यानवे लाख अभय।।
इस द्वितीय पूर्व को पूजूँ में, इसका कुछ अश आज भी है।
षट् खडागम जो सूत्रग्रथ, उन भक्ति भवभय हरती है।।21।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गताग्रायणीयपूर्वाय-अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीर्यानुवाद है तृतिय पूर्व, यह आत्म वीर्य परवीर्यों को।
तपवीर्यादिक को कहता है, पद सत्तर लाख इसी में हों।।
इसकी भक्ति से शक्ति बडे, फिर युक्ति मिले शिवमारग की।
फिर ज्ञान पूर्ण हो मुक्ति मिले, मैं पूजा करूँ सतत इसकी।।22।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-वीर्यानुप्रवादपूर्वाय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो अस्तिनास्ति प्रवाद पूर्व, स्वद्रव्य क्षेत्र कालादिक से।
सब वस्तु का अस्तित्व कहे, नास्तित्व अन्यद्रव्यादिक से।।

यह दुर्नय का खडन करके, नय द्वारा विधि प्रतिषेध कहे।
इसमे पद साठ लाख माने, इसको पूजत सम्यक्त्व लहे।।23।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-अस्तिनास्तिप्रवादपूर्वाय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो ज्ञान प्रवाद नाम पूरब, प्रत्यक्ष परोक्ष प्रमाणो का।
मतिश्रुत अवधि मनपर्यय अरु, केवल इन पाँचों ज्ञानों का।।
बहुभेद प्रभेद सहित वर्णे, इसको पूजत हो ज्ञान पूर्ण।
इसमें पद इक कम एककोटि, इस वदत हो अज्ञान चूर्ण।।24।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-ज्ञानप्रवादपूर्वाय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वह सत्य प्रवाद पूर्व दशविध, सत्यो का वर्णन करता है।
यह सप्तभग से सब पदार्थ का, सुन्दर चित्रण करता है।।
इसके पूजन से झूठ कपट, दुर्भाषाये नश जाती है।
पद एककोटि छह हे पूजूँ, दिव्यध्वनि वश हो जाती है।।25।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-सत्यप्रवादपूर्वाय अनर्घ्य-पदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्मा निश्चय से शुद्ध कहा, फिर भी अशुद्ध ससारी है।
व्यवहार नयाश्रित ही कर्मो का कर्ता है भवकारी है।।
यह आत्म प्रवाद पूर्व कहता, इसमें पद छब्बिस कोटि कहे।
इसको पूजत ही आत्मनिधी, मिलती है जो भव दु ख दहे।।26।।

ॐ ही जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गतात्मप्रवादपूर्वाय अनर्घ्य-पदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यह कर्म प्रवाद पूर्व नाना, विध कर्मो का वर्णन करता।
इर्यापथ कर्म कृतीकर्मो को, अध कर्म को भी कहता।।

इसमे पद एक करोड लाख, अस्सी है इसको पूजूँ मै।
निज पर का भेद ज्ञान करके, इन आठ करम से छूटूँ मै।।27।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-कर्मप्रवादपूर्वाय अनर्घ्य-पदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो प्रत्याख्यान प्रवाद पूर्व, वह द्रव्य क्षेत्र कालादिक से।
नियमित व अनियमित कालों तक, बहुत्याग विधि को बतलाके।।
वस्तु सदोष का त्याग करो, निर्दोष वस्तु भी तप रुचि से।
पद है चौरासी लाख कहे, पूजूँ इसको मैं बहु रूचि से।।28।।

ॐ ह्री जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-प्रत्याख्यानप्रवादपूर्वाय अनर्घ्य-पदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यह विद्यानुप्रवाद रोहिणी, आदिक महविद्या पॉच शतक।
अगुप्ठ प्रसेनादिक विद्या, मानी है लघु से सात शतक।।
इनके सब साधन विधि आदि को, वर्णे इसको जजूँ यहॉ।
पद एक कोटि दश लाख कहे, इस पढ च्युत हो कुछ साधु यहॉ।29।

ॐ ह्री जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-विद्यानुप्रवाद पूर्वाय अनर्घ्य-पदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कल्याणप्रवाद पूर्व वर्णे, शशि सूर्य ग्रहादिक गमन क्षेत्र।
अष्टागमहान निमित्तादिक, पद इसे छब्बिस कोटि मात्र।।
तीर्थंकर के कल्याणक को, चक्री आदिक के वैभव को।
यह कहता इसको पूजें हम, इससे कल्याण हमारा हो।।30।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-कल्याणप्रवादपूर्वाय अनर्घ्य-पदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यह प्राणावाय प्रवाद पूर्व, इद्रिय बल आयु उच्छवासो का।
अपघात मरण अरु आयुबध, आयु अपकर्षण आदी का।।

यह आयुर्वेद के आठ अग, का विस्तृत वर्णन करता।
इसमें पद तेरह कोटि इसे, पूजत ही स्वास्थ्य लाभ मिलता।।31।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-प्राणावायप्रवादपूर्वाय अनर्घ्य-पदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो नृत्यशास्त्र सगीतशास्त्र, व्याकरण छद अरु अलकार।
पुरुषादि के लक्षण कहता, जिसमें नवकोटि पद विचार।।
सो है किरिया विशाल पूरब, इसको जो रुचि से भजते हैं।
वे सब शास्त्रों में हो प्रवीण, फिर स्वपर भेद को लभते है।32।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-क्रियाविशालपूर्वाय अनर्घ्य-पदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परिकर्म और व्यवहार रज्जु राशि गुणकार वर्ग धन को।
बहु बीजगणित को भी वर्णे, कहता है मुक्ती स्वरूप को ।।
पद बारह कोटि पचास लाख, इसको पूजूँ ले अर्घ भले।
यह लोक बिदुमार पूरब, इसके वदत लोकाग्र मिले।।33।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-लोकबिदूसारपूर्वाय अनर्घ्य-पदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शातये शांति धारा। दिव्य पुष्पाजलि ।

अथ षष्ठ दले पुष्पांजलिः

दृष्टि वाद का भेद चूलिका, पॉच भेद भी उसके है।
जलगता प्रथम जल मे स्थलवत्, चलना इत्यादिक वर्णे हैं।।
जलस्तभन के मत्र तत्र तप, आदि अग्नि भक्षण आदिक।
पद दो करोड नव लाख नवासी, सहस्र द्विशत पूजूँ नितप्रति।।34।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-जलगताचूलिकायै अनर्घ्य-पदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो स्थलगता चूलिका है, मेरू कुलपर्वत क्षेत्रों को।
उन पर गमनादिक मत्र तत्र, तप आदिक बहुविध कहती वो।।
पद दो करोड नव लाख नवासी, हजार दो सौ इसमे है।
इसको पूजूँ मै अर्घ्य लिये, यह साधन भवदधि तरने में।।35।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-स्थलगताचूलिकायै अनर्घ्य-पदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो माया गता चूलिका वह, माया का खेल सिखाती है।
बहु इन्द्र जाल क्रीडाओ की, मत्रादि विधि बतलाती है।।
पद दो करोड नव लाख नवासी, हजार दो सौ इसमे है।
मै जजूँ इसे यह कुशल सदा, सब जग की माया हरने मे।।36।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-मायागताचूलिकायै अनर्घ्य-पदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यह रूपगता चूलिका सिह, गज घोडा मनुजादिक बहुविध।
रूपो को धरने के मत्रो, तप आदिक को वर्णे नितप्रति।।
पद दो करोड नव लाख नवासी, हजार दो सौ माने है।
मै जजूँ मिले मुझ आत्मरूप, मुझको पररूप हटाने है।।37।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-रूपगताचूलिकायै अनर्घ्य-पदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आकाश गता चूलिका सदा, नभ मे गमनादि सिखाती है।
बहु विध के मत्र तत्र तप के, साधन की विधी बताती है।।
पद दो करोड नव लाख नवासी, हजार दो सौ से वर्णे।
मैं इस आशा से जजूँ मिले मुझ लोकाकाश अग्रक्षण में।।38।।

ॐ ही जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गताकाशगताचूलिकायै अनर्घ्य-पदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शातये शांतिधारा। दिव्यपुष्पांजलिः।

अथ सप्तम दले पुष्पांजलिः

दोहा- अगबाह्य के भेद है, चौदह शास्त्र प्रसिद्ध।
नाम प्रकीर्णक से यही सामायिक आदीक।।

रोला छंद- नियत काल सामायिक, त्रय सध्या में करना।
अनियत काल सदैव, रागद्वेष परिहरना।।
समता भाव स्वरूप, सामायिक कहता है।
प्रथम प्रकीर्णक रूप, जजे मोक्ष मिलता है।।39।।

ॐ ह्री जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गतांगबाह्यस्यसामायिक-प्रकीर्णकश्रुताय अनर्घ्य-पदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौबीसो तीर्थेश, इनकी स्तुति वदन का।
उसका फल वर्णय, वही प्रकीर्णक दूजा।।
जिन प्रतिमा जिनयज्ञ, बहुविधान यह वर्णे।
मै पूजूॅ बहु भक्ति, जिनवर की ले शरणे।।40।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गतागबाह्यस्य-चतुर्विंशति- स्वत प्रकीर्णकश्रुताय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर या जिनगेह, एक एक का वदन।
सिद्ध वदना येह करता पाप निकदन।।
वदन विधी फल आदि, सबका वर्णन करता।
पूजूॅ मन वच काय, महापुण्य यह भरता।।41।।

ॐ ह्री जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गतांगबाह्यस्य-वदना प्रकीर्णकश्रुताय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दिवस रात्रि अरु पक्ष, चातुर्मास सवत्सर।
ईर्यापथ उत्तमार्थ, इन सबका आश्रय कर।।

प्रतिक्रमण के सात, भेदों का बहु वर्णन।
प्रतिक्रमण यह नाम, पूजूँ शुचिकर तन मन।।42।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गतांगबाह्यस्य-सामायिक प्रकीर्णकश्रुताय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्शन ज्ञान चारित्र, तप उपचार विनय है।
इनके लक्षण भेद, फल आदिक वर्णन है।।
नाम वैनयिक येह, पचम भेद कहाता।
पूजूँ भक्ति समेत, मिले सर्व सुख साता।।43।।

ॐ ह्री जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गतांगबाह्यस्य-वैनयिक प्रकीर्णकश्रुताय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हो स्वाधीन करेय, प्रदक्षिणा त्रय अवनति।
त्रय उपवेशन और, भक्त्या चार शिरोनति।।
द्वादश हो आवर्त, बहु कृतिकर्म विधी से।
जिन सिद्धादि नमेय, जजूँ इसे बहुरुचि से।।44।।

ॐ ह्री जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गतांगबाह्यस्य-कृतिकर्म प्रकीर्णकश्रुताय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दशवैकालिक ग्रथ, मुनि के आचारो को।
भिक्षाटन विधि आदि, चर्या उसके फल को।।
वर्णे बहुत विशेष, उसे जजूँ मन वच तन।
जिन सूत्रों की भक्ति, करे ज्ञान का वर्धन।।45।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गतांगबाह्यस्य-दशवैकालिक प्रकीर्णकश्रुताय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चार तरह उपसर्ग, बाइस परिषह आदिक।
इनका सहन विधान, फल शिव या स्वर्गादिक।।

इन सबको वर्णेय उत्तराध्ययन वही है।
पूजूँ धर मन नेह, मिलती सौख्य मही है।।46।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गतांगबाह्यस्य-उत्तराध्ययन प्रकीर्णकश्रुताय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋषियों को यदि दोष, लगे व्रतादिक मे जो।
प्रायश्चित्त विधान, बहु विध से वर्णे जो।।
कहा कल्प्यव्यवहार, सूत्र प्रकीर्णक नामा।
पूजूँ रुचि मन धार, मिले शीघ्र शिव रामा।।47।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गतागबाह्यस्य-कल्प्यव्यवहार प्रकीर्णकश्रुताय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

साधू के यह योग्य, यह अयोग्य इस विधि से।
द्रव्य क्षेत्र अरु काल, भाव निमित इन धर के।।
कल्प्याकल्प्य सुनाम, इन सबको कहता है।
पूजूँ करूँ प्रणाम, मन पावन करता है।।48।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गतागबाह्यस्य-कल्प्याकल्प्य प्रकीर्णकश्रुताय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीक्षा शिक्षा सघ, पोषण निज सस्कारा।
सल्लेखन उतमार्थ, मुनि के छहो प्रकारा।।
द्रव्यादि के निमित्त, इन सबको वर्णे जो।
महाकल्प्य वह सूत्र, जजूँ भक्ति धर उसको।।49।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गतागबाह्यस्य-महाकल्प्य प्रकीर्णकश्रुताय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चउविध देव व इद्र, सामानिक इत्यादि।
इनके सुख विभवादि, इनके कारण आदी।।

पूजा दान तपादि, इन सबको कहता जो।
पुडरीक है नाम, जजूं नमाकर शिर को।।50।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गतांगबाह्यस्य-पुडरीक प्रकीर्णकश्रुताय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव देवियो आदि के उपपाद इत्यादि।
तप शीलादि निमित्त, कहे सदा सुख आदी।।
महापुडरीकास्य, वर्णन करे निरन्तर।
पूजूं भक्ति सभाल, मिले शीघ्र शिवसुन्दर।।51।।

ॐ ह्री जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गतांगबाह्यस्य-महापुडरीक प्रकीर्णकश्रुताय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋषिगण के बहुभेद, युत प्रायश्चित्त वर्णे।
निषिद्धिका है नाम, मुनि चर्या को वर्णे।।
चौदहवॉ अग बाह्य, भेद प्रकीर्णक माना।
पूजूं भक्ति बढाय, मिले शीघ्र निजधामा।।52।।

ॐ ह्री जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गतांगबाह्यस्य-निषिद्धि प्रकीर्णकश्रुताय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य-शभुछद

या द्वादश अग व अग बाह्य, इन रूप दिव्य ध्वनि जिनवर की।
है जितने जैन शास्त्र अब भी, सब साररूप ध्वनि जिनवर की।।
गगा का जल घट मे भर ले, वैसे हि ग्रन्थ जिनवर वाणी।
मै पूजूं पूरण अर्घ लिये, इस युग में यह ही कल्याणी।।53।।

ॐ ह्री जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गतांगबाह्यस्य-सामायिक सर्वश्रुतज्ञानाय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांति धारा। दिव्य पुष्पाजलिः।

अथ अष्टम दले पुष्पांजलिः

दोहा- सर्ववागमय में कहे, चारअनुयोग प्रसिद्ध।
प्रथम करण अरु चरण अरु, द्रव्य नाम से सिद्ध।।

शंभु छन्द

जो धर्म अर्थ अरु काम मोक्ष, पुरुषार्थ कहे अरु चरित कहे।
त्रेसठ शलाका पुरुषों के, आदर्श महान पुराण कहे।।
वह पुण्य रूप है रत्नत्रय मय बोधि समाधि निधान महा।
मैं जजूँ उसको उसही का, प्रथमानुयोग यह नाम कहा।।54।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-प्रथमानुयोग-सम्यक्ज्ञानाय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीमि स्वाहा।

जो लोक अलोक विभाग कहे, षट्काल परावर्तन कहता।
चारो गति के ससरण कहे, भव पच परावर्तन कहता।।
दर्पण समान वह त्रिभुवन का, सब चित्त सामने झलकाता।
मै जजूँ उसे करणानुयोग यह, नाम धरे भुवि सुखदाता।।55।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-करणानुयोगसम्यक्ज्ञानाय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीमि स्वाहा।

श्रावक मुनि के आचार रूप, चारित्र सही जो बतलाता।
उसकी उत्पत्ती वृद्धि और, रक्षा के साधन सिखलाता।।
चरणानुयोग है शास्त्र वही, जो मोक्ष महल में चढने को।
चरणों को रखने हेतु सहज, सोपान रूप पूजूँ इसको।।56।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-चरणानुयोग-सम्यक्ज्ञानाय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीमि स्वाहा।

जो जीव अजीव सुतत्वों को, अरु पुण्य पाप को बतलाता।
आस्रव सवर अरु बध मोक्ष, तत्वों को विधवत् समझाता।

वह दीप सदृश द्रव्यानुयोग, द्रव्यों को प्रकट दिखाता है।
श्रुत विद्या का सुन्दर प्रकाश, मैं पूजूँ इसे सुखदाता है।।57।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदेव-मुखकमल-विनिर्गत-द्रव्यानुयोग-सम्यक्ज्ञानाय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीमि स्वाहा।

शांतये शांति धारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

कतिपय ग्रंथों को अर्घ्य

चाल-हे दीन बन्धु

जो है कषाय पाहुड गुणधर गुरु रचित।
क्रोधादि कषायों को सब विश्व किया ग्रथित।।
जयधवल नाम टीका गाथाये दो सौ तेतिस।
पूजूँ में भक्ति धरके, हो पूर्ण ज्ञान विकसित।।58।।

ॐ ह्रीं पूर्वाचार्य-मुखकमल-विनिर्गत-जयधवलाटीकासमेत-कषायप्राभृतग्रंथाय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीमि स्वाहा।

धरसेन सूरिवर से पाया जो ज्ञान मुनि ने।
श्री पुष्पदत मुनिवर अरु भूतबलि मुनि ने।।
षट्खड जिनागम की रचना रची उभय ने।
धवला प्रसिद्ध टीका पूजूँ धरूँ विनय मैं।।59।।

ॐ ह्रीं पूर्वाचार्य-मुखकमल-विनिर्गत-जयधवलाटीकासमेत-षट्खण्डागमग्रंथाय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीमि स्वाहा।

जम्बूद्वीप की उत्पत्ति इस द्वीप को दिखाती।
मेरु कुलाचलादिक सब वस्तु को बताती।।
इसके पठन से जम्बूद्वीपादि को समझ लो।
भक्ती के अर्घ करके निजलोक भी समझ लो।।62।।

ॐ ह्रीं पूर्वाचार्य-मुखकमल-विनिर्गत-जम्बूद्वीप-प्रज्ञप्ति-ग्रंथाय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीमि स्वाहा।

पचास्तिकाय प्रवचन सारादि समयसारा।
चौरासि पाहुडादी अरु ग्रन्थ नियम सारा।।
इन सबको अर्घ लेके पूजूँ निजात्म रुचि से।
अज्ञान भाव हटकर निज ज्ञान ज्योति चमके।।63।।

ॐ ह्रीं पूर्वाचार्य-मुखकमल-विनिर्गत-पचास्तिकाय-प्रवचनसार समयसार-नियमसार-चतुरशीति-प्राभृत-ग्रथेभ्य अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीमि स्वाहा।

आचारसार मूलाचारादि शास्त्र मुनि के।
जो रत्नकरडादी श्रावक क्रियादि कहते।।
आचार शास्त्र पूजा दानादिक को वखाने।
उनको जजूँ रुचि से वे सर्वदु ख हाने।।64।।

ॐ ह्रीं पूर्वाचार्य-मुखकमल-विनिर्गत-मूलाचाराचारसाररत्नकरण्ड-श्रावकाचारादिशास्त्रेभ्य अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीमि स्वाहा।

जो है पुराणआदी बहु शास्त्र मान्य जग मे।
हरिवश पुराणादि अरु पद्म चरित इनमे।।
तीर्थकरों व चक्री नारायणादिको का।
वर्णे चरित्र सुदर उनको जजूँ सुनीका।।65।।

ॐ ह्रीं पूर्वाचार्य-मुखकमल-विनिर्गत-महापुराण-उत्तरपुराण-हरिवशपुराण पद्मपुराणादिग्रंथेभ्यः अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तत्वार्थ सूत्र तत्वो को वर्णता है सुन्दर।
गुरु गृद्धपिच्छ इसमें भर दीना श्रुत समुदर।।
सर्वार्थसिद्धि आदिक टीका इसी पे बहुती।
हैं आप्तमीमासादि रचना जजूँ सुभक्ती।।66।।

ॐ ह्रीं पूर्वाचार्य-मुखकमल-विनिर्गत-तत्वार्थसूत्रग्रंथ-तट्टीका-सर्वार्थसिद्धि-तत्वार्थराजवार्तिक-श्लोकवार्तिक-गंधहस्तिमहाभाष्य-आप्तमीमासा-अष्टशती-अष्टसहस्रीआदितत्संबधिसर्वग्रन्थेभ्यः अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गोमट्टसार जीवकाड कर्मकाड श्रुत।
त्रिलोक सार लब्धि सार क्षपण सार श्रुत।।
ये पच सग्रहादि ग्रन्थ अर्थ पूर्ण है।
इनको जजूँ इन्ही से अनेकात पूर्ण है।।67।।

ॐ ह्रीं पूर्वाचार्य-मुखकमल-विनिर्गत-गोमट्टसार-जीवकांड-कर्मकांड-त्रिलोकसार-लब्धिसार-क्षपणसार-पचसंग्रहनाम-ग्रन्थेभ्यः अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जितने जिनश्रुत उपलब्ध आज, जिनमदिर मठ ग्रन्थालय में।
गुरुपरपरा से प्राप्त लिखा, भवभीरु महाव्रती मुनिजन ने।।
सर्व अग पूर्व के अश-अश, जिनवर की वाणी मानी है।
मै पूजूँ अर्घ चढकर के, ये स्वात्मम सुधारस दानी है।।68।।

ॐ ह्रीं पूर्वाचार्य-मुखकमल-विनिर्गत-गुरुपरंपरागत-जिनमंदिर मठ-ग्रन्थालयस्थित-सर्वजिन-शास्त्रेभ्यः अनर्घ्य पद प्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शातगेशांति धारा। दिव्यपुष्पांजलि·।

जाप्य मंत्र

ॐ ह्रीं श्री वद वद वाग्वादिनि भगवति सरस्वति ह्रीं नमः।

जयमाला

दोहा- द्वादशाग हे वागमय! श्रुतज्ञानामृतसिधु।
गाऊँ तुम जयमालिका, तरूँ शीघ्र भवसिधु।।1।।

शभु छन्द

जय जय जिनवर की दिव्यध्वनी, जो अनक्षरी ही खिरती है।
जय जय जिनवाणी श्रोताओं, को सब भाष में मिलती है।।
जय जय अठरह महाभाषायें, लघु सातशतक भाषायें हैं।
फिर भी सख्यातों भाषा में, सब समझें जिन महिमा ये हैं।।2।।

जिन दिव्यध्वनी को सुनकर के, गणधर गूँथे द्वादश अग में।
बारहवे अग के पाँच भेद, चौथे में चौदह पूर्व भर्णे।।
पद इक सौ बारह कोटि तिरासी, लाख अठावन महस पाँच।
मैं इनका वदन करता हूँ, मेरा श्रुत में हो पूरणाक।।3।।
इक पद सोलह सौ चौंतीस कोटि और तिरासी लाख तथा।
है सात हजार आठ सौ अठ्ठासी अक्षर जिन शास्त्र कथा।।
इतने अक्षर का इक पद तब, सब अक्षर के जितने पद हैं।
उनमें से शेष बचें अक्षर वह , अगबाह्य श्रुत नाम लहे।।4।।
जो आठ कोटि इक लाख आठ, हज्जार एक सौ पचहत्तर।
चौदह प्रकीर्णमय अग बाह्य, के इतने ही माने अक्षर।।
यह शब्द रूप अरु ग्रन्थ रूप, सब द्रव्यश्रुत कहलाता है।
जो ज्ञानरूप है आत्मा में, वह कहा भावश्रुत जाता है।।5।।
जिनको केवलज्ञानी जाने, पर वच के नहि कह सकते है।
ऐसे पदार्थ सु अनतानत, जो तीन भुवन मे रहते है।।
उनसे भि अनन्तवें, वचनों से वर्णित हो सकते पदार्थ।
इन प्रज्ञापनीय से भि अनन्तवें, भाग कथित श्रुत में पदार्थ।।6।।
फिर भी यह श्रुत सब द्वादशाग, सरसों सम इसका आज अश।
उनमें से भी लवमात्र ज्ञान, हो जावे जो भी जन्म धन्य।।
यह जिन आगम की भक्ती ही, निज पर का ज्ञान कराती है।
यह भक्ती ही श्रुतज्ञान पूर्णकर, श्रुतकेवली बनाती है।।7।।
श्रुतज्ञान व केवल ज्ञान उभय, ज्ञानापेक्षा हैं सदृश कहे।
श्रुतज्ञान परोक्ष लखे सब कुछ, बस केवलज्ञान प्रत्यक्ष लहे।।
अतर इतना हि तुम जानो, इसलिए जिनागम आराधो।
स्वाध्याय मनन चितन करके, निजआत्म सुधारस को चाखो।।8।।
इन ढाईद्वीप में कर्मभूमि, में इक सौ सत्तर जिन होते हैं।
उन सबकी ध्वनि जिन आगम है, इससे जन अघमल धोते हैं।।

जिनवचपूजा जिनपूजा सम, यह केवल ज्ञान प्रदाता है।
नित पूजूँ ध्याऊँ गुण गाऊँ, यह भव्यों को सुखदाता है।।9।।
है नाम भारती सरस्वती, शारदा हंसवाहिनी तथा।
विदुषी वागीश्वरी और कुमारी, ब्रह्मचारिणी सर्वमता।।
विद्वान जगन्माता कहते, जिसको ब्रह्माणी वरदा।
वाणी भाषा श्रुतदेवी गौ, ये सोलह नाम सर्व सुखदा।।10।।
हे सरस्वति! अमृतझरिणी, मेरा मन निर्मल शांत करो।
स्याद्वाद सुधारस वर्षाकर, सब दाह हरो मन तृप्त करो।।
है जिनवाणी माता मुझ, अज्ञानी की नित रक्षा करिये।
दे केवल "ज्ञानमती" मुझको, फिर भले उपेक्षा ही करिये।।11।।

दोहा- भू भविष्यत् संप्रति, त्रैकालिक जिनशास्त्र।
श्रुतस्कंध है कल्पद्रुम, नमत सिद्धि सर्वार्थ।।

ॐ ह्रीं समग्र-श्रुतस्कंधकल्पद्रुमाय जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्यपुष्पांजलिः।

शेर छन्द- जो भव्य श्रुतस्कंध कल्पद्रुम को यजेंगे।
वे सर्व मनोवांछित को प्राप्त करेंगे।।
श्रुतज्ञान दृक से स्वात्मतत्त्व को विलोकेंगे।
फिर केवल "ज्ञानमती" दृक् से लोक लोकेंगे।।1।।

इत्याशीर्वादः

समाप्तम्

श्री जिन सहस्रनाम विधान

आचार्य श्री जिनसेनकृत जिन सहस्रनाम का भावानुवाद

प्रस्तावना

आत्म तत्त्व के आद्य प्रणेता, अत स्वयभू कहलाते।
निज परिणति मे रमने वाले, तेरी महिमा हम गाते।।1।।
इस जगती का सार आपने, अन्तर बाहर से जाना।
विद्वत वर्ग नमन करता है, परामर्श दे पहचाना।।2।।
विषयो की आशा छोडी है, सद् विवेक वाणी मानी।
चरणों मे नत श्रद्धा मे है, इन्द्र-महेन्द्र, अवधिज्ञानी।।3।।
चित चकोर को जीत लिया है, अघ धोये ध्यानातल से।
जन्म-मरण का चक्कर पलटा, है अनन्तजित निज बल से।।4।।
तीनो लोक विजय मौरभ से, दुन्दुभि बजती चारो ओर।
मृत्यु जय बन विचरण करते, हुआ परास्त मृत्यु का चोर।।5।।
सुमरण से कट जाते बन्धन, भव्यजनो के बन्धु ललाम।
तीनो लोकों के आदीश्वर, त्रिपुरारि है तेरा नाम।।6।।
तीन काल के ज्ञाता दृष्टा, तत्त्व ज्ञान करुणाधारी।
केवल ज्योति उदित होने से, मानों हो त्रिनेत्रधारी।।7।।
मोह कर्म के मद मर्दन से, अन्धकान्तक कहलाये।
घाति कर्म कीचक के वध से, अर्धनारीश्वर पद पाये।।8।।
शिव रमणीको वरण किया है, शिव बन अघ हर लेते हो।
हे शकर आनन्द प्रदाता, सम्भव सुख यश देते हो।।9।।
स्वाभिमान श्रेष्ठ जन नायक, वृषभ चराचर कृत वन्दन।
हे पुरु हे नाभेय गुणागर, हे इक्ष्वाकु कुल नन्दन।।10।।
एक मात्र ही आप श्रेष्ठ है, हे द्वय नयन ! त्रिलोकी नाथ।
मोक्षमार्ग रत्नत्रय धारी, प्रति त्रिकाल त्रि नत माथ।।11।।

चारों चरण जिसे मगल हों, चतुरस्रधी उसे कहते।
परम पञ्चपरमेष्ठि चरण रज, लेकर हम पावन रहते।।12।।
स्वर्गों से अवतरण आपका, प्रभुवर सद्योजात हुआ।
रूप सलोना कामदेव का, वन्दनीय स्नात हुआ।।13।।
दीक्षित स्वय बनाकर मुद्रा, नग्न दिगम्बर शान्त स्वरूप।
केवल पद पर हुए प्रतिष्ठित, वरण किया था ईश्वर रूप।।14।।
शुद्धातम प्रकटाकर जिनने, मुक्ति वधू से किया विवाह।
सिद्ध शुद्ध अपनाकर निज पद, वीर बहूटी का उत्साह।।15।।
ज्ञानावरणी नष्ट किया है, हे अनन्तज्ञानी जिनराज।
कर्म दर्शनावरणी क्षय कर, बने विश्वदृश्वा महाराज।।16।।
दर्शन मोह तजा घर छोडा, प्रगटाया क्षायिक अतिदर्श।
नाशा चारित मोह आपने, वीतराग हे ! तेजोत्कर्ष।।17।।
सुख धीरज की अतुल राशि का, किया आपने स्वय वरण।
दिव्य दृष्टि पा किया प्रकाशित, लोकालोक जिनेश नमन।।18।।
अतुल सम्पदा के दानी बन, जीता अन्तराय दुष्कृत्य।
भोग और उपभोग लब्धि का, सुख पाया हे प्रभुवर सत्य।।19।।
परम योग को नमस्कार है, हटा चुके हो परिभ्रमण।
परम पवित्र परम ऋषि तुमको, है मेरा शतवार नमन।।20।।
सत्पथ पर चल दूर किया है, अज्ञानी का मत मिथ्यात्व।
परम तत्त्व विद्याधारी ने, पाया नित परमातम तत्त्व।।21।।
रूप राशि में अग्रगण्य हो, तेज फैलता आठों याम।
उपदेष्टा हे पावन-पथ के, परमेष्ठी शतवार प्रणाम।।22।।
भोग अनोखे मुक्ति वधू के, नक्षत्रों का ज्योतिष ज्ञान।
पारगत सर्वज्ञ आप हैं, सर्वोत्कृष्ट और द्युतिमान।।23।।

कम से कम भी बचा न परकुछ, दोष मुक्त बन्धन से हीन।
क्षीणमोह पर जा पहुँचे हो, नमस्कार मेरा स्वाधीन।।24।।
ऐसा कार्य किया है तुमने, सद्गति का है द्वार खुला।
हम प्रणाम करते कि अतीन्द्रिय, सुखका यह साम्राज्य मिला।।25।।
बन्धन तोड तीन योगों से, उन्नत भाल हुए अशरीर।
योगी जन भी जिनके आगे, नत होते कर्मों को चीर।।26।।
वेद पुरुष या नारी का, या नपुसकत्व का दूर हुआ।
क्रोध मान माया कषाय से, मुँह मोडा योगीन्द्र हुआ।।27।।
विज्ञानी ने अन्तरतम को, सयम से जगमगा दिया।
परमारथ की परमदृष्टि से, रक्षित जग दुख जगमगा दिया।।28।।
लेश्या शुक्लारूढ हुये हो, तुमको मेरा शुद्ध नमन।
भव्याभव्य अवस्था विरहित, करते नित पूजन-अर्चन।।29।।
मन वेमन वाले प्राणी से, हुआ अलौकिक निर्मल रूप।
भय मैथुन आहार परिग्रह, रहित सु क्षायक दृष्टि स्वरूप।।30।।
चाह नहीं भोजन आदिक की, तृप्त हुए अतिशय वाले।
सारे दोष नष्ट कर अपने, भव-सागर से पार चले।।31।।
प्रौढावस्था वृद्धावस्था, जन्म मृत्यु पर जय पाई।
अचल सिद्ध अविनश्वर पद को, नमन हमारा है भाई।।32।।
देव जिनेश्वर अनन्त गुणों के, अधिकारी हैं यह माना।
किस प्रकार सम्भव हो सकता, एक साथ उनको पाना।।33।।
नाम स्मरण मात्र भक्ति से, स्तुति की कुछ चाह नहीं।
भविक जनोंके पाप शान्त हों, सहस्रनाम की थाह नहीं।।34।।

इति प्रस्तावना

पुष्पाञ्जलिं

श्री जिन सहस्रनाम समुच्चय पूजा

स्थापना

वृषभादिक चौबीस जिन, प्रणमूँ बारम्बार।
सहस्रनाम पूजा रचूँ, उर धर हर्ष अपार।।

ॐ ह्रीं श्रीमदादिधर्मसाम्राज्यनायकान्ताष्टाधिकसहस्रशुभनाम- धारक, श्रीजिनेन्द्रदेव अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।
ॐ ह्रीं श्रीमदादिधर्मसाम्राज्यनायकान्ताष्टाधिकसहस्रशुभनाम- धारक, श्रीजिनेन्द्रदेव अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्रीमदादिधर्मसाम्राज्यनायकान्ताष्टाधिकसहस्रशुभनाम- धारक श्रीजिनेन्द्रदेव अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

भव-भव का सारा मैल धुला, अब इच्छाओ की प्यास नहीं।
सम्यक् ज्ञानामृत पा करके मृग, जल पर अब विश्वास नहीं।।
जिन सहसनाम की भक्ति भावना, हृदय हिलोरे लेती है।
सद्भक्तों के चेतन में छा तन मन पावन कर देती है।।

ॐ ह्रीं अष्टाधिक-सहस्रनामधारक-श्रीजिनेन्द्रदेवाय जल निर्वपामीति स्वाहा।

तन-मन तपन मिटी मेरी बुझ रही राग की आग यहाँ।
वचनामृत शीतल चन्दन से चेतन मे उठा विराग यहाँ।।
जिन सहस नाम की भक्ति भावना हृदय हिलोरें लेती है।
सद्भक्तों के चेतन में छा तन मन पावन कर देती है।।

ॐ ह्री अष्टाधिक-सहस्रनामधारक-श्रीजिनेन्द्रदेवाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षत-विक्षत पर्यायों पर से उठ गई हमारी दृष्टि प्रभो।
निज को अखण्ड अक्षत पाकर बदली सब लौकिक सृष्टि विभो।।

जिन सहस नाम की भक्ति भावना हृदय हिलोरें लेती है।
सद्भक्तों के चेतन में छा तन-मन पावन कर देती है।।

ॐ ह्रीं अष्टाधिक-सहस्रनामधारक-श्रीजिनेन्द्रदेवाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

इन रग विरगे फूलों पर अब कभी नही मडराऊँगा।
विषयों के चुभते शूलो पर अब नही भूल कर जाऊँगा।।
जिन सहस नाम की भक्ति भावना हृदय हिलोरें लेती है।
सद्भक्तो के चेतन में छा तन-मन पावन कर देती है।।

ॐ ह्रीं अष्टाधिक-सहस्रनामधारक-श्रीजिनेन्द्रदेवाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा।

जब दर्शन पूजन करने मे तन मन लोचन सब तृप्त हुए।
तब क्षुधा मिटाने तथा कथित ये षट्रस व्यञ्जन व्यर्थ हुए।।
जिन सहस नाम की भक्ति भावना हृदय हिलोरे लेती है।
सद्भक्तों के चेतन मे छा तन-मन पावन कर देती है।।

ॐ ह्री अष्टाधिक-सहस्रनामधारक-श्रीजिनेन्द्रदेवाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा।

इस ज्ञानदीप के जलने से मिथ्यात्व ॲधेरा भाग गया।
जग का व्यापार सचेत हुआ निश्चय अपने में जाग गया।।
जिन सहसनाम की भक्ति भावना हृदय हिलोरे लेती है।
सद्भक्तों के चेतन में छा तन मन पावन कर देती है।।

ॐ ह्री अष्टाधिक-सहस्रनामधारक-श्रीजिनेन्द्रदेवाय दीप निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु भक्ति वन्दन के द्वारा शुभ अशुभ विकार हुए स्वाहा।
शुद्धोपयोग की पावक में चिच्चमत्कार चमका आहा।।

जिन सहसनाम की भक्ति भावना हृदय हिलोरे लेती है।
सद्भक्तों के चेतन मे छा तन मन पावन कर देती है।।

ॐ ह्रीं अष्टाधिक-सहस्रनामधारक-श्रीजिनेन्द्रदेवाय धूप निर्वपामीति स्वाहा।

है नर्क निगोद अशुभ का फल शुभ का फल मानवता है।
मानवता का फल सयम है सयम को देव तरसता है।।
जिन सहसनाम की भक्ति भावना हृदय हिलोरे लेती है।
सद्भक्तो के चेतन मे छा तन मन पावन कर देती है।।

ॐ ह्री अष्टाधिक-सहस्रनामधारक-श्रीजिनेन्द्रदेवाय फल निर्वपामीति स्वाहा।

जल चन्दन अक्षत पुष्प और नैवेद्य एकाकार हुए।
जड दीप धूप फल अष्ट द्रव्य ये पूजा के उपचार हुए।।
जिन सहसनाम की भक्ति भावना हृदय हिलोरे लेती है।
सदभक्तो के चेतन मे छा तन मन पावन कर देती है।।।

ॐ ह्री अष्टाधिक-सहस्रनामधारक-श्रीजिनेन्द्रदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाल

श्री जिनेन्द्र की भक्ति मे, होकर अति तल्लीन।
गाऊँ गुणमाला विशद, समता भाव प्रवीण।।

अस्तित्व आपका प्रतिक्षण ही, सन्मार्ग प्रकाशित करता है।
श्री जिनवाणी का अवलम्बन, सम्यक्त्व हृदय मे भरता है।।
कर्मो की छाया क्षणभगुर, रागादि निमित पा जाती है।
चरणारविन्द की रज लेकिन, परिणाम सुखद कर जाती है।।
सद्ध्यान कसौटी चढ करके, आतम कुन्दन हो जाता है।
तप सौरभ का स्वर्णिम सपना, साकार स्वय हो जाता है।।

भावों की सुन्दर सरिता भी, कण-कण से नि सृत होती है।
सुर गगा भी बहकर पावन भव भव के कल्मष धोती है।।
सत् अनेकान्त मय वस्तु तत्त्व को, स्याद्वाद दर्शाता है।
प्रत्येक धर्म बन मुख्य गौण, अपनी आभा बिखराता है।।
जिनसेन तथा जिन बैन मृदुल, जिन कल्पवृक्ष की छावों में।
वचनों के नामो की माला, गूँथी गुण सूत्री भावों में।।

ॐ ह्रीं अष्टाधिक-सहस्रनामधारक-श्रीजिनेन्द्रदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाम - मन्त्र के जाप से, भव-भव के सन्ताप।
कटते अपने आप ही, कोटि जन्म के पाप।।

इत्याशीर्वाद परिपुष्पाञ्जलि क्षिपेत्

प्रथम - शतक

कर्म भूमि की आदि से, चतुर्थ काल पर्यन्त।
वृषभादिक चौबीस है, नाम अनन्तानन्त।।
सहस्र एक अरु आठ है, सस्थित चरम शरीर।
गुणमाला ऐसी रची, कटे पाप जञ्जीर।।1।।

दो लक्ष्मी शोभित है जिनके वे श्रीमान स्वयभू।
धर्मरूप व्यवहार वृषभ का सार्थक सम्भव शम्भू।।
निज स्वरूप में रमण आत्मभू द्योतित स्वय स्वयप्रभ।
अति सामर्थ्यवान प्रभु भोक्ता व्यक्त विश्वभू अपुनर्भव।।2।।
विश्व हृदय विश्वात्मा जानों तीनों लोक विश्वलोकेश।
केवलदर्शी विश्वतश्चक्षु अक्षय रूप विश्वविद्येश।।
जीत लिया है सकल विश्वजित् विश्वयोनि अद्भुत काया।
अष्टकर्म कर नष्ट आपने अविनश्वर है पद पाया।।3।।

लोकालोक विश्वदृश्वा विभु सकल जगत के तारणहार।
धाता पर कृपालु आप हैं हे विश्वेश करो उद्धार।।
नेत्र पिपासु विश्वलोचन के लोकालोक विश्वव्यापी।
अन्धकार के हे विधु वेधा शाश्वत् विश्वतोमुख रूपी।।4।।
षट् कर्मों के उपदेष्टा हैं आप विश्वकर्मा जगज्येष्ठ।
हस्तरेखवत् विश्वमूर्ति जिन विश्वदृक जय विश्वभूतेश।।
किरणावलि मानो उतरी हो भूपर विश्वज्योति फैली।
इष्टजनों को राह दिखाते है प्रति समय अनीश्वर जी।।5।।
कर्म विजेता जिन श्री जिष्णू ज्ञान अमेयात्मा चिद्रूप।
विश्वरीष हो आप जगत्पति तीनो ही लोको के भूप।।
नाम अनेको है अनन्तजित् हे अचिन्त्यात्मा परमेश।
भव्यबन्धु उपकृत भव्यो से घाति अबन्धन कर्म विशेष।।6।।
युगारम्भ मे जन्म लिया है युगादिपुरुष ब्रह्मा गुणसृष्ट।
पञ्चब्रह्ममय परमेष्ठी है जीव मात्र के है शिव इष्ट।।
पार उतारे पर परतर है केवलगम्य सूक्ष्म साकार।
परमपदे स्थित परमेष्ठी सत्य स्वरूप सनातन सार।।7।।
स्वय ज्योति तम दूर भगाते अज अमरत्व अजन्मा।
ब्रह्मयोनि रत्नत्रय मण्डित अत अयोनिज परमा।।
सकल कर्म भी थर थर काँपे है मोहारि विजयी जिननाथ।
बने धर्मचक्री सु दयाध्वज चक्रध्वज ले अपने साथ।।8।।
कर्म शत्रु हो गये शान्त वे योगी जन प्रशान्त जानों।
गणधर योगीश्वरार्चित हैं ब्रह्मवित्त आत्म मानों।।
ब्रह्मोद्यावित् आत्मतत्त्व के ज्ञाता हुए ब्रह्मतत्त्वज्ञ।
यतियों में हैं श्रेष्ठ यतीश्वर रत्नत्रय मण्डित सर्वज्ञ।।9।।
शुद्ध बुद्ध ऐसी आत्मा हो हे प्रबुद्धात्मा शत् सूर्य।

हुए सकल सिद्धार्थ प्रयोजन हुआ सिद्ध शासन वैडूर्य।।
कर्म काट कर सिद्ध हुए है सिद्धान्तवित् अवतार।
ध्येय प्राप्त कर लिया आपने सिद्ध साध्य जगद्हितकार।।10।।
क्रोध गरल का वमन किया है हे सहिष्णु अनन्त अच्युत।
सुख समुद्र प्रभविष्णु महोदय अविनश्वरता गुण सयुत।।
हे प्रभुता सम्पन्न प्रभूष्णु अजर अमर शक्तिशाली।
कोटिक रवि-शशि से भ्राजिष्णु धीश्वर अव्यय गुणमाली।।11।।
बने विभावसु तेजवन्त हे असम्भूष्णु मति प्रत्युत्पन्न।
स्वयभूष्णु हो प्रगट पुरातन पथ पर चलते गुणसम्पन्न।।
पूज्य परम परमात्मा पूजन परमज्योति प्रकटी तत्काल।
तीनो लोक अभय से मण्डित धन्य त्रिजगपरमेश्वर भाल।।12।

1 ॐ ही श्रीमते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
2 ॐ ह्रीं स्वयभुवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
3 ॐ ह्रीं वृषभाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
4 ॐ ह्रीं शभवाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
5 ॐ ह्रीं शंभवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
6 ॐ ही आत्मभुवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
7 ॐ ह्रीं स्वयप्रभाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
8 ॐ ह्रीं प्रभवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
9 ॐ ह्रीं भोक्त्रे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
10 ॐ ह्रीं विश्वभुवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
11 ॐ ही अपुनर्भवाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
12 ॐ ह्रीं विश्वात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
13 ॐ ह्रीं विश्वलोकेशाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
14 ॐ ही विश्वतश्चक्षुषे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

15 ॐ ह्रीं अक्षराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

16 ॐ ह्रीं विश्वविदे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

17 ॐ ह्रीं विश्वविद्येशाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

18 ॐ ह्रीं विश्वयोनये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

19 ॐ ह्रीं अनश्वराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

20 ॐ ह्रीं विश्वदृश्वने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

21 ॐ ह्रीं विभवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

22 ॐ ह्रीं धात्रे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

23 ॐ ह्रीं विश्वेशाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

24 ॐ ह्रीं विश्वलोचनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

25 ॐ ह्रीं विश्वव्यापिने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

26 ॐ ह्री विधये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

27 ॐ ह्री वेधसे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

28 ॐ ह्री शाश्वताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

29 ॐ ह्री विश्वतोमुखाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

30 ॐ ह्रीं विश्वकर्मणे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

31 ॐ ह्रीं जगज्ज्येष्ठाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

32 ॐ ह्रीं विश्वमूर्तये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

33 ॐ ह्रीं जिनेश्वराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

34 ॐ ह्रीं विश्वदृशे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

35 ॐ ह्रीं विश्वभूतेशाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

36 ॐ ह्रीं विश्वज्योतिषे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

37 ॐ ह्रीं अनीश्वराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

38 ॐ ह्रीं जिनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

39 ॐ ह्रीं जिष्णवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

40 ॐ ह्रीं अमेयात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
41 ॐ ह्रीं विश्वरीशाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
42 ॐ ह्रीं जगत्पतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
43 ॐ ह्रीं अनन्तजिते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
44 ॐ ह्रीं अचिन्त्यात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
45 ॐ ह्रीं भव्यबन्धवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
46 ॐ ह्रीं अबन्धनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
47 ॐ ह्रीं युगादिपुरुषाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
48 ॐ ह्रीं ब्रह्मणे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
49 ॐ ह्रीं पञ्चब्रह्ममयाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
50 ॐ ह्रीं शिवाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
51 ॐ ह्रीं पराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
52 ॐ ह्रीं परतराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
53 ॐ ह्रीं सूक्ष्माय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
54 ॐ ह्रीं परमेष्ठिने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
55 ॐ ह्रीं सनातनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
56 ॐ ह्रीं स्वयंज्योतिषे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
57 ॐ ह्रीं अजाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
58 ॐ ह्रीं अजन्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
59 ॐ ह्रीं ब्रह्मयोनये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
60 ॐ ह्रीं अयोनिजाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
61 ॐ ह्रीं मोहारिविजयिने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
62 ॐ ह्रीं जेत्रे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
63 ॐ ह्रीं धर्मचक्रिणे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
64 ॐ ह्रीं दयाध्वजाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

65 ॐ ह्रीं प्रशान्तारये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
66 ॐ ह्रीं अनन्तात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
67 ॐ ह्रीं योगिने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
68 ॐ ह्रीं योगीश्वरार्चिताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
69 ॐ ह्रीं ब्रह्मविदे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
70 ॐ ह्रीं ब्रह्मतत्त्वज्ञाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
71 ॐ ह्रीं ब्रह्मोद्याविदे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
72 ॐ ह्रीं यतीश्वराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
73 ॐ ह्रीं शुद्धाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
74 ॐ ह्रीं बुद्धाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
75 ॐ ह्रीं प्रबुद्धात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
76 ॐ ह्रीं सिद्धार्थाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
77 ॐ ह्रीं सिद्धशासनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
78 ॐ ह्रीं सिद्धाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
79 ॐ ह्रीं सिद्धान्तविदे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
80 ॐ ह्रीं ध्येयाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
81 ॐ ह्रीं सिद्धसाध्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
82 ॐ ह्रीं जगद्धिताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
83 ॐ ह्रीं सहिष्णवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
84 ॐ ह्रीं अच्युताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
85 ॐ ह्रीं अनन्ताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
86 ॐ ह्रीं प्रभविष्णवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
87 ॐ ह्रीं भवोद्‌भवाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
88 ॐ ह्रीं प्रभूष्णवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
89 ॐ ह्रीं अजराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

90 ॐ ह्रीं अजर्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

91 ॐ ह्रीं भ्राजिष्णवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

92 ॐ ह्रीं धनेश्वराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

93 ॐ ह्रीं अव्ययाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

94 ॐ ह्रीं विभावसवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

95 ॐ ह्रीं असंभूष्णवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

96 ॐ ह्रीं स्वयभूष्णवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

97 ॐ ह्रीं पुरातनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

98 ॐ ह्रीं परमात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

99 ॐ ही परंज्योतिषे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

100 ॐ ह्रीं त्रिजगत्परमेश्वराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इति श्रीमदादिशतम्।

जल चन्दन अक्षत प्रसून चरु, दीप धूप फल अर्घ अनूप।
श्री मदादि अरहत शिरोमणि, अखिल जिनेश्वर शुद्ध स्वरूप।।

ॐ ह्रीं श्रीमदादि-जगत्परमेश्वरान्तशतनामधारकाय श्रीजिनेन्द्रदेवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वितीय शतक

दिव्यध्वनि गणधर ने झेली विशद दिव्यभाषापति कोष।
मन-मयूर सा दिव्य मनोहर पूतवाक् वाणी निर्दोष।।
परम पूत शासन है जिनका निर्मल दर्पणवत् प्रत्यक्ष।
पुण्य साथ है पूतात्मा प्रभु पर ज्योति हे धर्माध्यक्ष।।1।।
इन्द्रिय दमन किया है जिनने वही दमीश्वर कहलाते।
वे श्रीपति भगवान कर्म नीरज अरजा सज्ञा पाते।।
भव्यजनो के विरज सहायक धर्म तीर्थकृत् शुचि ईशान।
हे पूजार्ह अमल स्नातक परम केवली केवलज्ञान।।2।।

तेज अनन्त दीप्ति के धारी प्रभु ज्ञानात्मा ज्ञान स्वरूप।
स्वय बुद्ध बोधित निज से ही अमर प्रजापति ब्रह्म अनूप।।
निराबाध सुख हे निष्कल हे भुवनेश्वर हे त्रिभुवन भूप।
मुक्त हुए कर्मों से उज्ज्वल शक्ति अनन्त शक्त वर रूप।।3।।
अञ्जन रहित निरञ्जन केवल जगज्योति एव निरुक्तोक्ति।
रोग रहित है स्वस्थ्य अनामय अकर्त्तव्य एव अनमुक्ति।।
ध्रौव्य रूप अचलस्थिति स्थिर अपरिणाम निश्चय कूटस्थ।
हे स्थाणु अगति अक्षय हे प्रभुवर शाश्वत सौख्य प्रशस्त।।4।।
हे शिवनायक मोक्ष अग्रणी गुणी ग्रामणी नेता हो।
न्याय मार्ग के न्याय शास्त्र कृत प्रामाणीक प्रणेता हो।
हित उपदेष्टा आप धर्मपति जिन शासन के शास्ता हो।
धर्ममयी हो धर्म्म आप हो धर्म तीर्थकृत कर्ता हो।।5।।
वृषभाकित है ध्वजा धर्म की वृषध्वज वृषाधीश वृषकेतु।
बने वृषायुध धर्मस्वरूपी कर्मनाश करने के हेतु।।
चिह्न धर्ममय वृष वृषपति का भर्ता थे वृषभाक जिनेश।
धर्ममयी मॉ का सुख सपना पूर्ण वृषोद्भव हुआ विशेष।।6।।
नाभिराज ने जन सेवा हित हिरण्यनाभि का कर आह्वान।
भूतात्मा बन हुए भूतभृत् नमन भूतभावन भगवान।।
कुलकर प्रभव विभव वैभवयुत भवके बिना हुए भास्वान।
क्षणवर्ती भव पर्यायो का भाव भवान्तक सत् भगवान।।7।।
सुवरण की वर्षा होती थी आये हिरण्यगर्भ भगवन्त।
अन्तरग श्रीगर्भमयी थी परम प्रभूत विभव अत्यन्त।।
आगे भव का अन्त अभव का स्वय प्रभू सामर्थ्य महान्।
प्रभूतात्मा भूतनाथ हे करो जगत्पति मम कल्याण।।8।।

सर्वश्रेष्ठ सर्वादि प्रवर्तक शुद्ध सर्वदृक् एव सार्थ।
हे सर्वज्ञ ! सर्वदर्शन ! हे सर्वोपरि सर्वात्मा पार्थ।।
सब जीवों के हितचिन्तक हो अत सर्वलोकेश हुए।
नाथ सर्ववित् सर्वलोकजित् सर्वोदय परमेश हुए।।9।।
पञ्चम गति ही मात्र सुगति है सुश्रुत आतमज्ञान महान।
हे सुवाक् गुरुवर्य सूरि हे बहु श्रुत आप परम विद्वान।।
विश्रुत विस्तृत केवल किरणे विश्वशीर्ष तक बिखर रही।
हे शुचिश्रवा ज्ञान पावनता नियत विश्वत निखर रहीं।।10।।
नाम अनेक सहस्र शीर्ष के लोकालोकमयी क्षेत्र।
सहस्राक्ष हे केवलज्ञानी सहस्रपात हे जिन सर्वज्ञ।।
भूत भव्य भवद्भर्ता हे अविनाशी परमेश्वर देव।
विश्वविद्यामहेश्वर हैं ज्ञायक तत्त्व सहज स्वयमेव।।11।।

1 ॐ ह्रीं दिव्यभाषापतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
2 ॐ ह्रीं दिव्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
3 ॐ ह्रीं पूतवाचे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
4 ॐ ह्रीं पूतशासनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
5 ॐ ह्रीं पूतात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
6 ॐ ह्रीं परमज्योतिषे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
7 ॐ ह्रीं धर्माध्यक्षाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
8 ॐ ह्रीं दमीश्वराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
9 ॐ ह्रीं श्रीपतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
10 ॐ ह्रीं भगवते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
11 ॐ ह्रीं अर्हते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
12 ॐ ह्रीं अरजसे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
13 ॐ ह्रीं विरजसे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

14 ॐ ह्रीं शुचये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
15 ॐ ह्रीं तीर्थकृते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
16 ॐ ह्रीं केवलिने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
17 ॐ ह्रीं ईशानाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
18 ॐ ह्रीं पूजार्हाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
19 ॐ ह्रीं स्नातकाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
20 ॐ ह्रीं अमलाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
21 ॐ ह्रीं अनन्तदीप्तये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
22 ॐ ह्रीं ज्ञानात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
23 ॐ ह्रीं स्वयंबुद्धाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
24 ॐ ह्रीं प्रजापतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
25 ॐ ह्रीं मुक्ताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
26 ॐ ह्रीं शक्ताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
27 ॐ ह्रीं निराबाधाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
28 ॐ ह्रीं निष्कलाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
29 ॐ ह्रीं भुवनेश्वराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
30 ॐ ह्रीं निरञ्जनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
31 ॐ ह्रीं जगज्ज्योतिषे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
32 ॐ ह्रीं निरुक्तोक्तये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
33 ॐ ह्रीं अनामयाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
34 ॐ ह्रीं अचलस्थितये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
35 ॐ ह्रीं अक्षोभ्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
36 ॐ ह्रीं कूटस्थाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
37 ॐ ह्रीं स्थाणवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
38 ॐ ह्रीं अक्षयाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

39 ॐ ह्रीं अग्रण्यै वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
40 ॐ ह्रीं ग्रामण्यै वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
41 ॐ ह्रीं नेत्रे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
42 ॐ ह्रीं प्रणेत्रे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
43 ॐ ह्रीं न्यायशास्त्रकृते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
44 ॐ ह्रीं शास्त्रे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
45 ॐ ह्रीं धर्मपतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
46 ॐ ह्रीं धर्म्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
47 ॐ ह्रीं धर्मात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
48 ॐ ह्रीं धर्मतीर्थकृते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
49 ॐ ह्री वृषध्वजाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
50 ॐ ह्री वृषाधीशाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
51 ॐ ह्री वृषकेतवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
52 ॐ ह्रीं वृषायुधाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
53 ॐ ह्रीं वृषाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
54 ॐ ह्रीं वृषपतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
55 ॐ ह्रीं भर्त्रे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
56 ॐ ह्रीं वृषभांकाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
57 ॐ ह्री वृषोद्भवाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
58 ॐ ह्री हिरण्यनाभये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
59 ॐ ह्रीं भूतात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
60 ॐ ह्रीं भूतभृते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
61 ॐ ह्रीं भूतभावनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
62 ॐ ह्रीं प्रभवाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
63 ॐ ह्रीं विभवाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

64 ॐ ह्रीं भास्वते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
65 ॐ ह्रीं भवाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
66 ॐ ह्रीं भावाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
67 ॐ ह्रीं भवान्तकाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
68 ॐ ह्रीं हिरण्यगर्भाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
69 ॐ ह्रीं श्रीगर्भाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
70 ॐ ह्रीं प्रभूतविभवाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
71 ॐ ह्रीं अभवाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
72 ॐ ह्रीं स्वयंप्रभवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
73 ॐ ह्रीं प्रभूतात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
74 ॐ ह्रीं भूतनाथाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
75 ॐ ह्रीं जगत्प्रभवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
76 ॐ ह्रीं सर्वादये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
77 ॐ ह्रीं सर्वदृशे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
78 ॐ ह्रीं सार्वाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
79 ॐ ह्रीं सर्वज्ञाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
80 ॐ ह्रीं सर्वदर्शनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
81 ॐ ह्रीं सर्वात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
82 ॐ ह्रीं सर्वलोकेशाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
83 ॐ ह्रीं सर्वविदे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
84 ॐ ह्रीं सर्वलोकजिते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
85 ॐ ह्रीं सुगतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
86 ॐ ह्रीं सुश्रुताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
87 ॐ ह्रीं सुश्रुते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
88 ॐ ह्रीं सुवाचे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

89 ॐ ह्रीं सूरये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
90 ॐ ह्रीं बहुश्रुताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
91 ॐ ह्रीं विश्रुताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
92 ॐ ह्रीं विश्वतः पादाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
93 ॐ ह्रीं विश्वशीर्षाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
94 ॐ ह्रीं शुचिश्रवसे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
95 ॐ ह्रीं सहस्रशीर्षाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
96 ॐ ह्रीं क्षेत्रज्ञाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
97 ॐ ह्रीं सहस्राक्षाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
98 ॐ ह्रीं सहस्रपादे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
99 ॐ ह्रीं भूतभव्यभवद्भर्त्रे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
100 ॐ ह्रीं विश्वविद्यामहेश्वराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इति दिव्यादिशतम्

जल चन्दन अक्षत प्रसून चरु, दीप धूप फल अर्घ अनूप।
दिव्यादिक अरहत शिरोमणि, अखिल जिनेश्वर शुद्ध स्वरूप।।

ॐ ह्रीं दिव्यभाषापत्यादि-विश्वविद्या-महेश्वरान्त-शतनाम-धारकाय श्री जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तृतीय शतक

सद्गुण के अवकाश धाम हे स्थविष्ठ है ज्ञानसुवृद्ध।
सज्ञा श्री स्थविर आपकी तीनों लोकों में प्रसिद्ध।।
ज्येष्ठ पृष्ठ सब के प्रिय नेता प्रेष्ठ लोकप्रिय प्रतिभावान।
हे वरिष्ठधी थिर अविनाशी स्थेष्ठ गरिष्ठ परम गुरु ज्ञान।।1।।
शुभ वहिष्ठ अमित गुण भूषण श्रेष्ठ अणिष्ठ गरिष्ठगीर्वाण।
सहस्र नाम से युक्त आपने पाया है निज पद निर्वाण।।

अहो विश्वभृट् अहो विश्वसृट् विश्व भ्रमण का चक्कर भेट।
अहो विश्वसृक विधि-विधान के आदि विश्व नायक विश्वेट्।।2।।
अहो विश्वरूपात्मा विजितान्तक व विश्वजित् विश्वासी।
विभव विभाव भय शोक रहित हे परम वीर पद अविनाशी।।
विजर विशोक जरा न मुझ में भी प्रकटा देना परम विराग।
विरत असग वीतमत्सर मै बनूँ विविक्त मोह को त्याग।।3।।
जो विनेय जनता बन्धु रहें वही विलीना शेष कल्मष।
वही वियोग अयोग केवलि तथा योगवित् आत्म स्वरस।।
सर्वश्रेष्ठ विद्वान जनों के धर्म विधाता सुविधि प्रशस्त।
सुधी शिरोमणि भक्त जनों के ध्वस्त करो प्रभु कर्म समस्त।।4।।
क्षमाशील हो क्षान्तिभाक् हे साक्षात् ही पृथिवी मूर्ति।
सन्तोषामृत शान्तिभाक् का पान करे सलिलात्मक कीर्ति।।
असगात्मा हीन परिग्रह वायुमूर्ति हे भवनिर्भार।
हे अध धृक् ऊर्ध्व स्वभावी वह्नि मूर्ति हे कर्मागार।।5
यजमानात्मा हे सुयज्व यह कर्मकाण्ड स्वाहा कर दो।
सुत्रामपूजित ऋत्विक सुत्वा ज्ञानानन्द उदधि भर दो।।
यज्य यज्ञपति पूजनीय हे आप स्वय ही हो यज्ञाग।
कुम्भ-कलश अमृत के छल छल आत्मलीन हवि हो सर्वांग।।6
व्योममूर्ति हो लोकाकाशी अमूर्तात्मा हो अदृश्य।
हो निर्मल निर्लेप कर्म से अचल सुसौम्यात्मा निजवश्य।।
सूर्यमूर्ति हे परम प्रतापी सोममूर्ति हे परम प्रशान्त।
केवल ज्ञान ज्योति से मण्डित अहो महाप्रभ प्रभा नितान्त।।7
स्वय मन्त्रवित् स्वय ! मन्त्रकृत् मत्री स्वय मन्त्रणाधीश।
मन्त्रमूर्ति हो स्वय अनन्तग हे स्वतन्त्र जिन नाथ मुनीश।।
आगम प्रमुख तन्त्रकृत स्वान्त पावन अन्त करण सुखाय।
हे कृतान्तकृत कृतान्तान्त यम भव विच्छेदक मात्र उपाय।।8

है सचमुच सत्कृत्य आपके अत कृती कृत्यकृत्य हुए।
हम को भी करदो कृतार्थ हे कृतक्रतु जिनवर सत्य हुए।।
हे मृत्युञ्जय हे अविनाशी हे अमृत्यु तुम नित्य स्वरूप।
अमृतात्मा अमृतोद्भव चिदानन्द चिन्मय चिद्रूप।।9
ब्रह्मनिष्ठ होकर ब्रह्मात्मा परम् ब्रह्म में लीन हुए।
अहो ब्रह्म सम्भव भव खोकर केवल ज्ञानासीन हुए।।
महा ब्रह्मपति गुण गणधर के केवल ज्ञान परम ब्रह्मेष्ट।
महा ब्रह्मपदेश्वर जिनपति समवशरण तीर्थंकर श्रेष्ठ।।10
सुप्रसन्न हे प्रसाद गुण से प्रसन्नात्मा परम प्रशान्त।
ज्ञानधर्मदमप्रभु भव जेता हे प्रशमात्मा शुभ्र नितान्त।।
त्रेषट् पुरुष शलाकाओ मे प्रशान्तात्मा हे उत्कृष्ट।
भक्ति भाव से वन्दन करते हे पुराण पुरुषोत्तम तुष्ट।।11

1 ॐ ह्रीं स्थविष्ठाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
2 ॐ ह्री स्थविराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
3 ॐ ह्री ज्येष्ठाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
4 ॐ ह्री प्रष्ठाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
5 ॐ ह्री प्रेष्ठाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
6 ॐ ह्री वरिष्ठधिये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
7 ॐ ह्री स्थेष्ठाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
8 ॐ ह्री गरिष्ठाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
9 ॐ ह्री बहिष्ठाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
10 ॐ ह्री श्रेष्ठाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
11 ॐ ह्रीं अणिष्ठाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
12 ॐ ह्री गरिष्ठगिरे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
13 ॐ ह्री विश्वभृते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

14 ॐ ह्रीं विश्वसृजे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
15 ॐ ह्रीं विश्वेशे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
16 ॐ ह्रीं विश्वभुजे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
17 ॐ ह्रीं विश्वनायकाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
18 ॐ ह्रीं विश्वाशिषे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
19 ॐ ह्रीं विश्वरूपात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा
20 ॐ ह्रीं विश्वजिते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
21 ॐ ह्रीं विजितान्तकाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
22 ॐ ह्री विभवाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
23 ॐ ह्रीं विभयाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
24 ॐ ह्रीं वीराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
25 ॐ ह्रीं विशोकाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
26 ॐ ह्रीं विजराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
27 ॐ ह्रीं जरते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
28 ॐ ह्रीं विरागाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
29 ॐ ह्रीं विरताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
30 ॐ ह्रीं असंगाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
31 ॐ ह्रीं विविक्ताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
32 ॐ ह्री वीतमत्सराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
33 ॐ ह्रीं विनेयजननाबधवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
34 ॐ ह्रीं अविलीनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
35 ॐ ह्रीं विगताशेष कल्मषाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
36 ॐ ह्रीं वियोगाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
37 ॐ ह्रीं योगविदे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
38 ॐ ह्रीं विदुषे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

39 ॐ ह्रीं विधात्रे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
40 ॐ ह्रीं सुविधये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
41 ॐ ह्रीं सुधिये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
42 ॐ ह्रीं क्षान्तिभाजे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
43 ॐ ह्रीं पृथिवीमूर्तये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
44 ॐ ह्रीं शान्तिभाजे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
45 ॐ ह्रीं सलिलात्मकाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
46 ॐ ह्रीं वायुमूर्तये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
47 ॐ ह्रीं वह्निमूर्तये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
48 ॐ ह्रीं अधर्मधृके वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
49 ॐ ह्रीं सुयज्वने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
50 ॐ ह्रीं यजमानात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
51 ॐ ह्रीं सुत्वने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
52 ॐ ह्रीं सुत्रामपूजिताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
53 ॐ ह्रीं ऋत्विजे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
54 ॐ ह्रीं यज्ञपतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
55 ॐ ह्रीं याज्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
56 ॐ ह्रीं यज्ञांगाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
57 ॐ ह्रीं अमृताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
58 ॐ ह्रीं हविषे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
59 ॐ ह्रीं व्योममूर्तये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
60 ॐ ह्रीं अमूर्तात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
61 ॐ ह्रीं निर्लेपाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
62 ॐ ह्रीं निर्मलाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
63 ॐ ह्रीं अचलाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

64 ॐ ह्रीं सोममूर्तये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
65 ॐ ह्रीं सुसौम्यात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
66 ॐ ह्रीं सूर्यमूर्तये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
67 ॐ ह्री महाप्रभाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
68 ॐ ह्रीं मन्त्रविदे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
69 ॐ ह्रीं मन्त्रकृते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
70 ॐ ह्रीं मन्त्रिणे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
71 ॐ ह्री मन्त्रमूर्तये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
72 ॐ ह्री अनन्तगाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
73 ॐ ह्री स्वतन्त्राय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
74 ॐ ह्री तन्त्रकृते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
75 ॐ ह्री स्वन्तय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
76 ॐ ह्री कृतान्तान्ताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
77 ॐ ह्री कृतान्तकृते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
78 ॐ ह्री कृतिने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
79 ॐ ह्रीं कृतार्थाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
80 ॐ ह्रीं सत्कृत्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
81 ॐ ह्रीं कृतकृत्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
82 ॐ ह्री कृतक्रतवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
83 ॐ ह्री नित्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
84 ॐ ह्री मृत्युञ्जयाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
85 ॐ ह्री अमृत्यवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
86 ॐ ह्री अमृतात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
87 ॐ ह्रीं अमृतोद्भवाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
88 ॐ ह्रीं ब्रह्मनिष्ठाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

89 ॐ ह्रीं परंब्रह्मणे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
90 ॐ ह्रीं ब्रह्मात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
91 ॐ ह्रीं ब्रह्मसंभवाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
92 ॐ ह्रीं महाब्रह्मपतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
93 ॐ ह्रीं ब्रह्मेशे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
94 ॐ ह्रीं महाब्रह्मपदेश्वराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
95 ॐ ह्रीं सुप्रसन्नाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
96 ॐ ह्रीं प्रसन्नात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
97 ॐ ह्रीं ज्ञानधर्मदमप्रभवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
98 ॐ ह्री प्रशमात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
99 ॐ ह्री प्रशान्तात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
100 ॐ ह्रीं पुराणपुरुषोत्तमाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

।।इति स्थविष्ठादिशतम्।।

जल चदन अक्षत प्रसून चरु, दीप धूप फल अर्घ अनूप।
स्थविष्ठ इत्यादि शिरोमणि अखिल जिनेश्वर सिद्ध स्वरूप।।

ॐ ह्री स्थविष्ठादिपुराणपुरुषोत्तमान्त-शतनाम-धारकाय श्री-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चतुर्थ - शतक

तरु अशोक के तले आपकी परमौदारिक काया थी।
शोक और सन्तप्त प्राणियों के हित शीतल छाया थी।।
महाशोक ध्वज फहराता था द्रुम अशोक के कानन में।
महापद्मविस्टर सुखकारक स्रष्टानित कमलासन में।।1
हे पद्मेश रमापति पद तल शरण पद्मसम्भूति रहो।
एक अनुत्तर पद्मनाभि की लोकोत्तरी विभूति रही।।

गरिमा श्री उस पद्मयोनि की जगत्योनि मय धन्य हुए।
स्तुतीश्वर स्तोत्रो से कोटि कोटि स्तुत्य हुए।।2
स्तवनर्हि पात्र स्तुति के हृषीकेष इन्द्रिय जेता।
मोहराग जितजेय इत्य है शुद्ध तथा कृतकृत नेता।।
गणज्येष्ठ हो आप गणाधिप गुणागार हो हे गुणगण्य।
गणाग्रणी हो श्रेष्ठ गुणाकर मगलमय सर्वोत्तम पुण्य।।3
गुणाम्बोधि मे सिन्धु गुणो का अति प्रशान्त लहराता है।
प्रति गुणज्ञ जिन गुण नायक की मौलिक महिमा गाता है।।
गुण की चादर बिछी हुई है आदर देते गुणादरी।
जिस गुणोच्छेदी ने भेदी गुण-अवगुण-निर्गुण नगरी।।4
सरस्वती के परम पुण्यगी शरण भूत है आप शरण्य।
पुण्यवाक् हो जग वरेण्य हो पूत पुण्य नायक अति धन्य।।
नही अगण्य गिने जा सकते गुण अनन्त पुण्यधी गण्य।
महा पुण्य कृत् अनुशासन है अत पुण्य शासन सुखमन्य।।5
धर्माराम विराजे जिनवर आत्मलोक मे है गुण ग्राम।
पुण्यापुण्य निरोधक भाषण सुनते सभी जीव निष्काम।।
पाप तिमिर को हरने वाले विपापात्मा पापापेत।
हे विपात्मा पाप रहित हो आप सु द्रव्य स्वभाव समेत।।6
कर्म कालिमा छूट गई है अहो वीत कल्मष निर्द्वन्द।
हुए शान्त निर्मोह निरुपद्रव मद निर्मद करके गुण वृन्द।।
अपलक हो टिमकार रहित हे निर्निमेष लोचन वाले।
ग्रास रहित तुम निराहार हो निष्क्रियता हरने वाले।।7
विप्लव रहित निरुप्लव मेरे हरो सभी विप्लव जिनराज।
निर्धूताग निरस्तैना हो करो निराश्रव कर्म जहाज।।

विपुल ज्योति धर निष्कलक हे गुणगण मण्डित परम विशाल।
इन्द्र सरीखे कैसे पावे तव अचिन्त्य वैभव जगपाल।।8
सवर करते हुए सु सवृत सुगुप्तात्मा निश्चय गुप्ति।
सुभृत एव सुनय तत्त्ववित् जागरूक हो त्यक्त सुषुप्ति।।
एक विद्य केवल विद्या के महाविद्य मुनि विद्या धाम।
परिदृढ दृढ हे परम तपस्वी तीन लोक पति गति विश्राम।।9
हे विद्यानिधि हमको देना विद्या का मगल आशीष।
साक्षी बने विजेता शिव के हे विहितान्तक मुक्ति निधीश।।
पिता शब्द आत्मीय पितामह आदिनाथ की हम सन्तान।
हे पालक हे त्राता मेरे हे पवित्र पावन गतिमान।।10
जगत्राता हे वैद्य भिषग् वर जन्म-मरण का हरो विकार।
हे गुरुवर्य वरद वरदानी परम पुमान पुरुष साकार।।
आत्म काव्य के हे गायक कवि आप पुराण पुरुष प्राचीन।
वर्षीयान् चिरञ्जीवी हो वृषभनाथ पुरु पुरुष प्रवीन।।11
नाथ प्रतिष्ठा प्रसव हेतु हो वचनामृत की करो सुवृष्टि।
जन-जन के भुवनैक पितामह करो जगत पर करुणा दृष्टि।।
परम प्रतिष्ठित पद पर स्थित परमेष्ठी कहलाते है।
उन्हे प्रतिष्ठित करने वाले भव्य मोक्ष पद पाते है।।12

1 ॐ ही महाशोकध्वजाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
2 ॐ हीं अशोकाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
3 ॐ हीं क-सज्ञाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
4 ॐ ही स्रष्ट्रे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
5 ॐ हीं पद्मविष्टराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
6 ॐ ही पद्मेशाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
7 ॐ ही पद्मसभूतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

8 ॐ ह्रीं पद्मनाभये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
9 ॐ ह्रीं अनुत्तराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
10 ॐ ह्रीं पद्मयोनये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
11 ॐ ह्रीं जगद्योनये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
12 ॐ ह्रीं इत्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा
13 ॐ ह्री स्तुत्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
14 ॐ ह्रीं स्तुतीश्वराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
15 ॐ ह्री स्तवनार्हाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
16 ॐ ह्रीं हृषीकेशाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
17 ॐ ह्री जितजेयाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
18 ॐ ह्री कृतक्रियाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
19 ॐ ह्रीं गणाधिपाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
20 ॐ ह्री गणज्येष्ठाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
21 ॐ ह्रीं गण्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
22 ॐ ह्रीं पुण्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
23 ॐ ह्रीं गणाग्रण्ये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
24 ॐ ह्रीं गुणाकराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
25 ॐ ह्रीं गुणाम्भोधये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
26 ॐ ह्री गुणज्ञाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
27 ॐ ह्रीं गुणनायकाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
28 ॐ ह्रीं गुणादरिणे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
29 ॐ ह्रीं गुणोच्छेदिने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
30 ॐ ह्रीं निर्गुणाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
31 ॐ ह्रीं पुण्यगिरे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
32 ॐ ह्रीं गुणाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

33 ॐ ह्रीं शरण्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

34 ॐ ह्रीं पुण्यवाचे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

35 ॐ ह्रीं पूताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

36 ॐ ह्रीं वरेण्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

37 ॐ ह्रीं पुण्यनायकाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

38 ॐ ह्रीं अगण्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

39 ॐ ह्रीं पुण्यधिये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

40 ॐ ह्री गुण्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

41 ॐ ह्रीं पुण्यकृते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

42 ॐ ह्री पुण्यशासनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

43 ॐ ह्री धर्मारामाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

44 ॐ ह्री गुणग्रामाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

45 ॐ ह्रीं पुण्यापुण्यनिरोधकाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

46 ॐ ह्री पापापेताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

47 ॐ ह्रीं विपापात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

48 ॐ ह्रीं विपाप्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

49 ॐ ह्रीं वीतकल्मषाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

50 ॐ ह्री निर्द्वन्द्वाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

51 ॐ ह्रीं निर्मदाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

52 ॐ ह्री शान्ताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

53 ॐ ह्रीं निर्मोहाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

54 ॐ ह्रीं निरुपद्रवाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

55 ॐ ह्रीं निर्निमेषाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

56 ॐ ह्रीं निराहाराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

57 ॐ ह्रीं निष्क्रियाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

58 ॐ ह्रीं निरुपप्लवाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

59 ॐ ह्रीं निष्कलंकाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

60 ॐ ह्रीं निरस्तैनसो वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

61 ॐ ह्रीं निर्धूतागसे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

62 ॐ ह्रीं निरास्रवाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

63 ॐ ह्रीं विशालाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

64 ॐ ह्रीं विपुलज्योतिषे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

65 ॐ ह्रीं अतुलाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

66 ॐ ह्रीं अचिन्त्य वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

67 ॐ ह्रीं सुसवृताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

68 ॐ ह्रीं सुगुप्तात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

69 ॐ ह्री सुबुधे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

70 ॐ ह्रीं सुनयतत्त्वविदे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

71 ॐ ह्री एकविद्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

72 ॐ ह्रीं महाविद्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

73 ॐ ह्रीं मुनये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

74 ॐ ह्रीं परिवृढाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

75 ॐ ह्रीं पतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

76 ॐ ह्रीं धीशाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

77 ॐ ह्रीं विद्यानिधये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

78 ॐ ह्रीं साक्षिणे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

79 ॐ ह्रीं विनेत्रे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

80 ॐ ह्रीं विहतान्तकाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

81 ॐ ह्रीं पित्रे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

82 ॐ ह्रीं पितामहाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

83 ॐ ह्रीं पात्रे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

84 ॐ ह्रीं पवित्राय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

85 ॐ ह्रीं पावनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

86 ॐ ह्रीं गतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

87 ॐ ह्रीं त्रात्रे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

88 ॐ ह्रीं भिषग्वराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

89 ॐ ह्रीं वर्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

90 ॐ ह्रीं वरदाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

91 ॐ ह्रीं परमाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

92 ॐ ह्रीं पुंसे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

93 ॐ ह्रीं कवये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

94 ॐ ह्रीं पुराणपुरुषाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

95 ॐ ह्रीं वर्षीयसे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

96 ॐ ह्रीं वृषभाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

97 ॐ ह्रीं पुरवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

98 ॐ ह्रीं प्रतिष्ठाप्रसवाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

99 ॐ ह्रीं हेतवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

100 ॐ ह्रीं भुवनैकपितामहाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

।। इति महाशोकध्वजादि शतम्।।

जल चन्दन अक्षत प्रसून चरु दीप धूप फल अर्घ अनूप।
महाशोक ध्वज आदि शिरोमणि, अखिल जिनेश्वर शुद्ध स्वरूप।।

ॐ ह्रीं श्री महाशोकध्वजादि-त्रिभुवनैकपितामह-पर्यन्त-शतनाम-धारकाय श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पञ्चम-शतक

लक्षण लक्ष्य श्रीवृक्षलक्ष्णाधीश्वर लक्षणमय लक्षण्य।
हे शुभलक्षण नाथ विलक्षण लक्ष लक्ष है आप शरण्य।।
अहो पुण्डरीकाक्ष हटाकर ऐन्द्रिकजाल निरक्ष करो।
पुष्पकरेक्षण कमल नयन हे पुष्कल फल प्रत्यक्ष धरो।।1
सिद्धि प्रदाता सिद्धिद स्वामी करदो सभी सिद्ध सकल्प।
सिद्धात्मा मै बनूँ साधकर सभी सिद्ध साधन निर्जल्प।।
बुद्धबोध्य हो ज्ञानवन्त के महाबोधि केवल अरहत।
बृद्धिगत हो वर्धमान हे गुण पीयूष महर्दिक सन्त।।2
अनुयोगो के समयसार हो, आप वेदवित् श्री वेदाग।
वेदो मे ही वेद्य विदावर यथाजात जातरूपाग।।
वेद वेद्य हो केवलज्ञानी अनुभव गम्य स्वय सवेद्य।
अगम त्रिवेद अगोचर वक्ता वदताम्बर प्रस्तुत नेवेद्य।।3
सतत अनादि निधन परमश्वर आदि सन्त से सनत विहीन।
व्यक्त ज्ञान से स्यात वचन से व्यक्त वाक् हे वचन विलीन।
हे युगादिकृत हित उपदेष्टा अत व्यक्त जिन शासन हो।
तुम युगादि से युगाधार हो जगदादिज हो पावन हो।।4
इन्द्रो द्वारा वन्दनीय हो आप अतीन्द्रिय सौख्य अतीन्द्र।
चँमर ढोरते है महेन्द्र भी अतीन्द्रियार्थदृक् हे अवनीन्द्र।।
परम इन्द्रियातीत अतिन्द्रिय सेवक है अहमिन्द्राचार्य।
पूज्य महेन्द्रमहित महिमामय है महान् मुझको अनिवार्य।।5
अमर राज्य मे जन्म लिया था उद्भव कारण योगीश्वर।
कर्ता सदा शुद्ध भावों के परम पूज्य पारग यतियर।।
नाविक भवतारक बन जाओ इन्द्रिय द्वारा हे अग्राह्य।
गहन गुह्य परमेश्वर आओ बन परार्ध्य हे तन मन बाह्य।।6

अनन्तर्द्धि हैं अमेयर्द्धि हैं अचिन्त्यर्द्धि है आप जिनेश।
हैं समग्रधी प्रथम प्राग्रय वर शत शत नमन अहो वृषभेश।।
अहो प्राग्रहर परम श्रेष्ठ हो वन्दनीय मेरे अभ्यग्र।
अग्रगण्य हो तथा अज्ञ हो अग्रिम अग्रज नित प्रत्यग्र।।7
तप से महातपा कहलाते, तथा महातेजा भगवन्त।
महोदर्क हो मार्तण्ड मे प्रकट महोदय हे अरहत।।
अतिशय महायशा पदधारी अहो महाधामा सुखधाम।
अहो महाधृति महासत्त्व हो काम विजेता तुम निष्काम।।8
महाधैर्य जिसके चेतन में महावीर्य से जो सम्पन्न।
वही महाबल वही अतुल बल श्रीयुत वही महा सम्पन्न।।
महाशक्ति हो रही प्रवाहित महाज्योति जगमगा रही।
और महाद्युति महाभूति की सुप्त जनो को जगा रही।।9
धन्य महामति महानीति से तुमने जग को न्याय दिया।
धन्य महोदय महाशान्ति ने माना मोक्ष उपाय दिया।।
महाप्रज्ञ हे सचमुच मेरे महाभाग जागे है आज।
महानन्त वे श्रेष्ठ महाकवि मेरे भी आगे महाराज।।10
महामहा है महाकीर्ति है महाकान्ति है मेरे देव।
महादान है महाज्ञान है महायोग है वे स्वयमेव।।
जो कि महावपु और महानमहपति वर वीर कहाए।
प्राप्त महाकल्याणक पञ्चक वही महाप्रभु तुम्हें ध्याये।।11
महा प्रातिहार्याधीश्वर हे नमन महेश्वर करता हूँ।
अपना मस्तक महागुणो के चरणो मे नित धरता हूँ।।
तरु अशोक सिंहासन चामर छत्रत्रय के तुम धारी।
पुष्पवृष्टि दुन्दुभि भामण्डल दिव्यध्वनि अष्ट प्रतिहारी।।12

1 ॐ ह्री श्रीवृक्षलक्षणाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
2 ॐ ह्रीं श्लक्ष्णाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
3 ॐ ह्रीं लक्षण्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
4 ॐ ह्रीं शुभलक्षणाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
5 ॐ ह्रीं निरक्षाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
6 ॐ ह्रीं पुण्डरीकाक्षाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
7 ॐ ह्रीं पुष्कलाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
8 ॐ ह्रीं पुष्करेक्षणाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
9 ॐ ह्रीं सिद्धिदाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
10 ॐ ह्री सिद्धसकल्पाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
11 ॐ ह्री सिद्धात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
12 ॐ ह्री सिद्धसाधनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
13 ॐ ह्रीं बुद्धबोध्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
14 ॐ ह्रीं महाबोधये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
15 ॐ ह्रीं वर्धमानाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
16 ॐ ह्री महर्द्धिकाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
17 ॐ ह्री वेदागाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
18 ॐ ह्रीं वेदविदे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
19 ॐ ह्रीं वेद्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
20 ॐ ह्री जातरूपाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
21 ॐ ह्रीं विदांवराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
22 ॐ ह्रीं वेदवेद्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
23 ॐ ह्रीं स्वसंवेद्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
24 ॐ ह्रीं विवेदाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
25 ॐ ह्रीं वदतांवराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

26 ॐ ह्रीं अनादिनिधनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

27 ॐ ह्री अव्यक्ताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

28 ॐ ह्री व्यक्तवाचे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

29 ॐ ह्रीं व्यक्तशासनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

30 ॐ ह्री युगादिकृते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

31 ॐ ह्रीं युगाधाराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

32 ॐ ह्री युगादये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

33 ॐ ह्री जगदादिजाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

34 ॐ ह्री अतीन्द्राय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

35 ॐ ह्रीं अतींन्द्रियाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

36 ॐ ह्री धीन्द्राय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

37 ॐ ह्रीं महेन्द्राय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

38 ॐ ह्री अतीन्द्रियादृशे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

39 ॐ ह्री अनिन्द्रियाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

40 ॐ ह्रीं अहमिन्द्राच्यार्य वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

41 ॐ ह्रीं महेन्द्रमहिताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

42 ॐ ह्रीं महते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

43 ॐ ह्री उद्भवाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

44 ॐ ह्रीं कारणाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

45 ॐ ह्रीं कर्त्रे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

46 ॐ ह्रीं पारगाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

47 ॐ ह्री भवतारकाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

48 ॐ ह्रीं अगाह्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

49 ॐ ह्रीं गहनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

50 ॐ ह्रीं गुह्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

51 ॐ ह्रीं पराध्यार्य वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
52 ॐ ह्रीं परमेश्वराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
53 ॐ ह्रीं अनन्तर्द्धये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
54 ॐ ह्रीं अमेयर्द्धये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
55 ॐ ह्रीं अचिन्त्यर्द्धये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
56 ॐ ह्रीं समग्रधिये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
57 ॐ ह्रीं प्राग्र्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
58 ॐ ह्रीं प्राग्रहराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
59 ॐ ह्रीं अभ्यग्राय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
60 ॐ ह्रीं प्रत्यग्राय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
61 ॐ ह्रीं अग्र्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
62 ॐ ह्रीं अग्रिमाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
63 ॐ ह्रीं अग्रजाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
64 ॐ ह्रीं महातपसे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
65 ॐ ह्रीं महातेजसे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
66 ॐ ह्रीं महोदर्काय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
67 ॐ ह्रीं महोदयाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
68 ॐ ह्रीं महायशसे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
69 ॐ ह्रीं महाधाम्ने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
70 ॐ ह्रीं महासत्त्वाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
71 ॐ ह्रीं महाधृतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
72 ॐ ह्रीं महाधैर्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
73 ॐ ह्रीं महावीर्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
74 ॐ ह्रीं महासम्पदे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
75 ॐ ह्रीं महाबलाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

76 ॐ ह्रीं महाशक्तये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
77 ॐ ह्रीं महाज्योतिषे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
78 ॐ ह्रीं महाभूतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
79 ॐ ह्रीं महाद्युतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
80 ॐ ह्री महामतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
81 ॐ ह्रीं महानीतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
82 ॐ ह्री महाक्षान्तये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
83 ॐ ह्रीं महादयाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
84 ॐ ह्री महाप्राज्ञाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
85 ॐ ह्रीं महाभागाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
86 ॐ ह्रीं महानन्दाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
87 ॐ ह्री महाकवये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
88 ॐ ह्रीं महामहसे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
89 ॐ ह्रीं महाकीर्तये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
90 ॐ ह्रीं महाकान्तये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
91 ॐ ह्री महावपुषे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
92 ॐ ह्री महादानाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
93 ॐ ह्रीं महाज्ञानाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
94 ॐ ह्रीं महायोगाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
95 ॐ ह्रीं महागणाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
96 ॐ ह्रीं महामहपतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
97 ॐ ह्रीं प्राप्तमहाकल्याणपञ्चकाय वृषभाय अर्घ्यं नि.स्वाहा।
98 ॐ ह्री महाप्रभवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
99 ॐ ह्री महाप्रातिहार्याधीशाय वृषभाय अर्घ्यं नि स्वाहा।
100 ॐ ह्रीं महेश्वराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

।। इति श्री वृक्षादि शतम्।।

जल चन्दन अक्षत पुष्प चरु दीप धूप फल अर्घ अनूप।
श्री वृक्षादि महन्त शिरोमणि अखिल जिनेश्वर शुद्ध स्वरूप।।

ॐ ह्रीं श्री वृक्षादिमहेश्वरपर्यन्त-शतनामधारकाय श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षष्ठ-शतक

वचन गुप्ति आसीन महामुनि और महामौनी मुनिनाथ।
आत्मैकाग्र महाध्यानी है शुक्लध्यान धारी शिव साथ।।
आप महादम आप महाक्षम विषय विजेता क्षमा निधान।
आप महामख महायज्ञ हो महाशील शाली भगवान।।1
आप महाव्रत पति बन करके कहलाते है मह्य महान।
महा कान्तिधर तेजस्वी है अधिप अयोध्यापति श्रीमान्।।
आप महामैत्री मय स्वामी अपरिमेय अर्थात अमेय।
महोपाय हो शिव साधन के आप महोमय सच्चे देव।।2
महा कारुणिक सब जीवो पर मन्ता महामन्त्र साकार।
जयतु महायति महानाद की बोलो मिलकर जय जयकार।।
महाघोष जय घोष योग्य है ज्ञान यज्ञ के योग्य महेज्य।
धवल कीर्ति मति फैल रही थी महा सम्पति सहज सहज्य।।3
विनय शील हो व्रत धारण कर धुरी महाध्वर धर सत धूर्य।
तुम महात्मा स्याद्वाद के अत महेष्ट वाक वच सूर्य।।
मह साधाम महा महिमा मय हो महर्षि योगी ऋद्धीश।
सर्वोदय के धर्म तीर्थ की महतो दय कहते योगीश।।4
आप महा क्लेशाकुश बन कर मिटा रहे है जग के कष्ट।
महाभूत पति शूरवीर गुरु किये घातिया कर्म विनष्ट।।

महा पराक्रम शाली बन कर महाक्रोध रिपु करते अन्त।
वशीभूत कर लिये आपने मोह सरीखे शत्रु अनन्त।।5
महा भवाब्धि सन्तारी मुझ को भव-सागर से पार करो।
तथा महा मोहाद्रिसूदन शर से गिरि सहार करो।।
महा गुणाकर शान्त शिरोमणि आप महा योगीश्वर गम्य।
शमन किये सब कर्म आपने अत शमी अत्यन्त प्रशम्य।।6
महाध्यान पति शुक्ल ध्यान के ध्यात महा धर्मधारी।
पञ्च महाव्रत रूपी असि से महा कर्म अरि सहारी।।
आत्मज्ञा है प्रभु निश्चय मे महादेव देवो के देव।
ऐश्वर्यो के स्वामी जिनवर है महेशिया मय स्वयमेव।।7
आप सर्व क्लेशापह बन कर सर्व दोष हर कहलाते।
साधुजनो के पाप हरण से सार्थक सज्ञा हर पाते।।
असख्येय अप्रेमयात्मा के है अनन्त गुण सीमातीत।
प्रशमाकर अथवा शमात्मा गूँजे सदा शान्ति सगीत।।8
सर्व योगधर योगीश्वर है जिन अचिन्त्य महिमाधारी।
वे श्रुतात्मा द्वादशाग के विष्टाश्रवा हुए भारी।।
इन्द्रिय जय दान्तात्मा सज्ञा दम तीर्थेश हुए भगवान।
योगात्मा पद योग लीन बन हुए ज्ञान सर्वग श्रीमान्।।9
दृढतर ध्यान प्रधान आपका आत्मा अतुल द्रव्य स्वाधीन।
समवशरण की पकृति प्राप्त कर हुए परम परमोदय लीन।।
है प्रक्षीण बॅधकर मेरे नष्ट क्षेम कृत सब कर्मारि।
जिन शासन के स्याद्वाद से करो क्षेम शासन सुखकारि।।10
ओकार पद प्रणव महाकवि प्रणय प्राण प्रिय मित्र स्वरूप।
प्राणद जडता के प्रणतेश्वर भव्यो के है जो अनुरूप।।

लोक और तन के प्रमाण से प्रणिधि प्रमाण तथा नयवन्त।
दक्ष दक्षिणामय अध्वर्यू अध्वर सन्मार्गी जयवन्त।।11
सलिल तुल्य आनन्दनन्द तुम नन्दन अभिनन्दन आनन्द।
हे अनिद्य तुम परम वद्य हो आवागमन करो मम बन्द।।
भोग निरोध कामहा कामद भव्यो के हित आप सुकाम्य।
नाथ अरिजय कामधेनु सी इष्ट वस्तु पाऊँ निष्काम्य।।12

1 ॐ ह्रीं महामुनये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
2 ॐ ह्रीं महामौनिने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
3 ॐ ह्रीं महाध्यानिने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
4 ॐ ह्री महादमाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
5 ॐ ह्री महाक्षमाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
6 ॐ ह्रीं महाशीलाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
7 ॐ ह्रीं महायज्ञाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
8 ॐ ह्रीं महामखाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
9 ॐ ह्रीं महाव्रतपतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
10 ॐ ह्रीं मह्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
11 ॐ ह्रीं महाकान्तिधराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
12 ॐ ह्रीं अधिपाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
13 ॐ ह्रीं महामैत्रीरूपाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
14 ॐ ह्रीं महामेयाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
15 ॐ ह्रीं महोपायाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
16 ॐ ह्रीं महोमयाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
17 ॐ ह्रीं महाकारुणिकाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
18 ॐ ह्रीं मन्त्रे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
19 ॐ ह्रीं महामन्त्राय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

20 ॐ ह्रीं महायतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
21 ॐ ह्रीं महानादाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
22 ॐ ह्रीं महाघोषाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
23 ॐ ह्रीं महेज्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
24 ॐ ह्रीं महसापतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
25 ॐ ह्रीं महाध्वरधराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
26 ॐ ह्रीं धुर्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
27 ॐ ह्रीं महौदार्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
28 ॐ ह्री महिष्ठवाचे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
29 ॐ ह्रीं महात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
30 ॐ ह्रीं महसांधाम्ने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
31 ॐ ह्रीं महर्षये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
32 ॐ ह्रीं महितोदयाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
33 ॐ ह्री महाक्लेशाकुशाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
34 ॐ ह्रीं शूराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
35 ॐ ह्रीं महाभूतपतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
36 ॐ ह्रीं गुरवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
37 ॐ ह्रीं महापराक्रमाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा
38 ॐ ह्री अनन्ताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
39 ॐ ह्रीं महाक्रोधरिपवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
40 ॐ ह्रीं वशिने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
41 ॐ ह्रीं महाभवाब्धिसतारिणे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
42 ॐ ह्रीं महामोहाद्रिसूदनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
43 ॐ ह्रीं महागुणाकराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
44 ॐ ह्रीं महाक्षान्ताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

45 ॐ ह्रीं महायोगीश्वराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
46 ॐ ह्रीं शमिने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
47 ॐ ह्रीं महाध्यानपतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
48 ॐ ह्रीं ध्यातमहाधर्मणे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
49 ॐ ह्रीं महाव्रताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
50 ॐ ह्रीं महाकर्मारिघ्ने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
51 ॐ ह्रीं आत्मज्ञाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
52 ॐ ह्रीं महादेवाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
53 ॐ ह्रीं महेशित्रे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
54 ॐ ह्रीं सर्वक्लेशापहाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
55 ॐ ह्रीं साधवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
56 ॐ ह्रीं सर्वदोषहराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
57 ॐ ह्रीं हराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
58 ॐ ह्रीं असंख्येयाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
59 ॐ ह्रीं अप्रमेयात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
60 ॐ ह्रीं शमात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
61 ॐ ह्रीं प्रशमाकराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
62 ॐ ह्रीं सर्वयोगीश्वराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
63 ॐ ह्रीं अचिन्त्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
64 ॐ ह्रीं श्रुतात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
65 ॐ ह्रीं विष्टरश्रवसे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
66 ॐ ह्रीं दान्तात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
67 ॐ ह्रीं दमतीर्थेशाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
68 ॐ ह्रीं योगात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
69 ॐ ह्रीं ज्ञानसर्वगाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

70 ॐ ह्रीं प्रधानाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
71 ॐ ह्रीं आत्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
72 ॐ ह्रीं प्रकृतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
73 ॐ ह्रीं परमाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
74 ॐ ह्रीं परमोदयाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
75 ॐ ह्रीं प्रक्षीणबन्धाय वृषभाग अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
76 ॐ ह्रीं कामारये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
77 ॐ ह्रीं क्षेमकृते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
78 ॐ ह्रीं क्षेमशासनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
79 ॐ ह्रीं प्रणवाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
80 ॐ ह्रीं प्रणयाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
81 ॐ ह्रीं प्राणाय वृषभाय आर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
82 ॐ ह्रीं प्राणदाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
83 ॐ ह्रीं प्रणतेश्वराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
84 ॐ ह्रीं प्रमाणाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
85 ॐ ह्रीं प्रणिधये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
86 ॐ ह्रीं दक्षाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
87 ॐ ह्रीं दक्षिणाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
88 ॐ ह्रीं अध्वर्यवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
89 ॐ ह्रीं अध्वराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
90 ॐ ह्रीं आनन्दाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
91 ॐ ह्रीं नन्दनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
92 ॐ ह्रीं नन्दाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
93 ॐ ह्रीं वन्द्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
94 ॐ ह्रीं अनिन्द्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

95 ॐ ह्रीं अभिनन्दनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
96 ॐ ह्रीं कामघ्ने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
97 ॐ ह्रीं कामदाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
98 ॐ ह्रीं काम्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
99 ॐ ह्रीं कामधेनवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
100 ॐ ह्रीं अरिञ्जयाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इति महामुन्यादिशतम्

जल चन्दन अक्षत प्रसून चरु दीप धूप फल अर्घ अनूप।
श्री अरहत महामुन्यादिक अखिल जिनेश्वर शुद्ध स्वरूप।।

ॐ ह्रीं श्री महामुन्यादि-अरिञ्जयपर्यन्त-शतनामधारकाय श्री जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्तम-शतक

निश्चयत हो सहज असस्कृत सुसस्कार व्यवहार स्वरूप।
धर्म प्रकृति से रहित अप्राकृत वैकृतान्तकृत अनघ अनूप।।
सुगम अन्तकृत मोक्ष महल का सुखद सलौना कान्तगुमान।
शोभाकान्त सुलभ चिन्तामणि अहो अभीष्टद आयुषमान।।1
कामक्रोध के अजित विजेता अत आप ही जित कामारि।
अमित अमर्यादित शासन है अत अमित शासन सुखकारि।।
जय जित क्रोध कर्म रिपुओं के जितामित्र हे जय जितक्लेश।
मृत्यु उपासक यमराजा को जीत जितान्तक हुए जिनेश।।2
गुण गणधर भी करते जिनका गान जिनेन्द्र महा विज्ञान।
परमानन्द मगन मुनि नायक हे मुनीन्द्र मुनिनाथ प्रधान।।
दुन्दुभि स्वर सी वचन माधुरी सुनी महेन्द्र वद्य योगीन्द्र।
महा यतीश्वर हे यतीन्द्र तुम स्वत नाभिनन्दन अवनीन्द्र।।3

नाभिराज कुलकर सुत प्रभुवर हुए आप नाभिज नाभेय।
हे अजात हे सहज अजन्मा सुव्रत पञ्च महाव्रत ध्येय।।
वस्तु तत्त्व का मनन किया है मनु ने उत्तम और अभेद्य।
अत अनत्यय अनाश्वान का अनुभव हुआ स्वय सवेद्य।।4
अधिगुरु अधिकृत हित उपदेशी सुगी दिव्यध्वनि बिखराते।
मेधावी स्वामीश विक्रमी अधिक सुमेधा कहलाते।।
दुराधर्य अनिवार्य निरुत्सुक सहज द्रव्य गुण व्यक्त विशिष्ट।
अहो शिष्टभुक प्रत्यय कामन अनघ शिष्य गुरु सभ्य सुशिष्ट।।5
क्षेमी क्षेमकर उद्बोधक क्षेमधर्मपति हे अक्षय।
क्षमी आप अग्राह्य इन्द्रियों के द्वारा हे नाथ अजय।।
अहोज्ञान निग्राह्य नियत नय ध्यान गम्य करता हूँ ध्यान।
सदा निरुत्तर समाधान हो मूक अनुत्तर लोक प्रधान।।6
पर पुण्य की धातु सुकृति से पूज्यनीय इज्यार्ह जिनेश।
सुनय-विनय सम्पन्न शिरोमणि चतुरानन अर्हत् परमेश।।
श्री निवास चतुर्वक्त्र चतुर्मुख समवशरण शोभित चतुरास्य।
अन्तर्मुखी ज्ञान से मानो बाह्य लक्ष्मी है उपहास्य।।7
सत् का साक्षात्कार किया है, सत्यात्मा ने अपने आप।
हुआ सत्य विज्ञान प्रमाणित सत्यवाक् का सुन कर चाप।।
सदा सत्य शासन स्वीकारा दिया लोक को सत्याशीश।
ध्रौव्य सत्य का सत्य परायण करें सत्य सन्धान मुनीश।।8
स्थेयान अडिग स्थर स्थवीयान् हैं नेदीयान।
दवीयान् हैं दूर पाप से सूक्ष्म दूरदर्शन भगवान।।
अणोरणीयान परमाणु अनणु आद्यगुरु नमन तुम्हें।
नाथ गरीयस लोक वरीयस जगततरीयस नमन तुम्हें।।9

आत्म योग हो सदा योग हो सदाभोग आनन्दों से।
सदातृप्त हो आप सदाशिव वन्दनीय भविवृन्दों से।।
सदा अगति से आप सदागति सदासौख्य से मण्डित हो।
ज्ञान स्वरूपी सदाविद्य हो नित्य सदोदय पण्डित हो।।10
दिव्य ध्वनि सुमधुर सुघोष से सुमुख प्रफुल्लित आभावान।
शीतल सौम्य सुखद जिनवाणी करती सुहृत सुहित कल्यान।।
हे सुगुप्त तुम गुप्तिभूत हो गोप्ता हो अव्यक्त रहस्य।
लोकाध्यक्ष दमीश्वर हुई है सभी इन्द्रियाँ तुमको वश्य।।12।।

1 ॐ ह्रीं असंस्कृतसुसंस्कराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
2 ॐ ह्रीं प्राकृताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
3 ॐ ह्रीं वैकृतान्तकृते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
4 ॐ ह्रीं अन्तकृते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
5 ॐ ह्रीं कान्तगवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
6 ॐ ह्री कान्ताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
7 ॐ ह्रीं चिन्तामणये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
8 ॐ ह्रीं अभीष्टदाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
9 ॐ ह्रीं अजिताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
10 ॐ ह्रीं जितकामारये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
11 ॐ ह्रीं अमिताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
12 ॐ ह्रीं अमितशासनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
13 ॐ ह्रीं जितक्रोधाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
14 ॐ ह्रीं जितामित्राय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
15 ॐ ह्रीं जितक्लेशाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
16 ॐ ह्रीं जितान्तकाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
17 ॐ ह्रीं जिनेन्द्राय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

18 ॐ ह्रीं परमानन्दाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
19 ॐ ह्रीं मुनीन्द्राय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
20 ॐ ह्रीं दुन्दुभिस्वनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
21 ॐ ह्रीं महेन्द्रवन्द्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
22 ॐ ह्रीं योगीन्द्राय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
23 ॐ ह्रीं यतीन्द्राय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
24 ॐ ह्रीं नाभिनन्दनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
25 ॐ ह्रीं नाभेयाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
26 ॐ ह्रीं नाभिजाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
27 ॐ ह्रीं अजाताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
28 ॐ ह्रीं सुव्रताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
29 ॐ ह्रीं मनवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
30 ॐ ह्रीं उत्तमाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
31 ॐ ह्रीं अभेद्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
32 ॐ ह्रीं अनत्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
33 ॐ ह्रीं अनाशुषे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
34 ॐ ह्रीं अधिकाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
35 ॐ ह्रीं अधिगुरवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
36 ॐ ह्रीं सुधिये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
37 ॐ ह्रीं सुमेधसे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
38 ॐ ह्रीं विक्रमिणे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
39 ॐ ह्रीं स्वामिने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
40 ॐ ह्रीं दुराधर्षाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
41 ॐ ह्रीं निरुत्सुकाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
42 ॐ ह्रीं विशिष्टाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

43 ॐ ह्रीं शिष्टभुजे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
44 ॐ ह्रीं शिष्टाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
45 ॐ ह्रीं प्रत्ययाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
46 ॐ ह्रीं कामनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
47 ॐ ह्रीं अनघाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
48 ॐ ह्रीं क्षेमिणे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
49 ॐ ह्रीं क्षेमंकराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
50 ॐ ह्रीं अक्षय्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
51 ॐ ह्रीं क्षेमधर्मपतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
52 ॐ ह्रीं [illegible]मिणे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
53 ॐ ह्रीं अग्रा[illegible]ाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
54 ॐ ह्रीं ज्ञाननिग्राह्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
55 ॐ ह्रीं ध्यानगम्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
56 ॐ ह्रीं निरुत्तराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
57 ॐ ह्रीं सुकृतिने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
58 ॐ ह्रीं धातवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
59 ॐ ह्रीं इज्यार्हाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
60 ॐ ह्रीं सुनयाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
61 ॐ ह्रीं चतुराननाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
62 ॐ ह्रीं श्रीनिवासाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
63 ॐ ह्रीं चतुर्वक्त्राय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
64 ॐ ह्रीं चतुरास्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
65 ॐ ह्रीं चतुर्मुखाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
66 ॐ ह्रीं सत्यात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
67 ॐ ह्रीं सत्यविज्ञानाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

68 ॐ ह्रीं सत्यवाचे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
69 ॐ ह्रीं सत्यशासनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
70 ॐ ह्रीं सत्याशिषे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
71 ॐ ह्रीं सत्यसन्धानाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
72 ॐ ह्रीं सत्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
73 ॐ ह्रीं सत्यपरायणाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
74 ॐ ह्रीं स्थेयसे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
75 ॐ ह्रीं स्थवीयसे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
76 ॐ ह्रीं नेदीयसे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
77 ॐ ह्रीं दवीयसे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
78 ॐ ह्रीं दूरदर्शनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
79 ॐ ह्रीं अणीयसे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
80 ॐ ह्रीं अनणवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
81 ॐ ह्रीं गरीयसामाद्यगुरवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
82 ॐ ह्रीं सदायोगाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
83 ॐ ह्रीं सदाभोगाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
84 ॐ ह्रीं सदातृप्ताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
85 ॐ ह्रीं सदाशिवाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
86 ॐ ह्रीं सदागतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
87 ॐ ह्रीं सदासौख्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
88 ॐ ह्रीं सदाविद्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
89 ॐ ह्रीं सदोदयाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
90 ॐ ह्रीं सुघोषाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
91 ॐ ह्रीं सुमुखाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
92 ॐ ह्रीं सौम्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

93 ॐ ह्रीं सुखदाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
94 ॐ ह्रीं सुहिताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
95 ॐ ह्रीं सुहृदे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
96 ॐ ह्रीं सुगुप्ताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
97 ॐ ह्रीं गुप्तिभृते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
98 ॐ ह्रीं गोप्त्रे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
99 ॐ ह्रीं लोकाध्यक्षाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
100 ॐ ह्रीं दमीश्वराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

।।इति असंस्कृतादिशतम्।।

जल चन्दन अक्षत प्रसून चरु दीप धूप फल अर्घ अनूप।
श्री अरहत असस्कृत आदिक अखिल जिनेश्वर शुद्ध स्वरूप।।

ॐ ह्रीं असंस्कृतादि-दमीश्वरपर्यन्त-शतनामधारकाय श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम-शतक

इन्द्रादिक देवों के गुरु हो, वृहद् वृहस्पति वाग्मी हो।
वाणीभूषण वाचस्पति हो, अति उदार धी स्वामी हो।।
महा मनीषी धिषण गिराम्पति शेमुषीश एव धीमान्।
सम्यक्ज्ञानी पर प्रवक्ता धरम धुरन्धर प्रतिभावान्।।1
नेकरूप पर्याय दृष्टि से नयोतुग नयनीति निधान।
नैकात्मा हो नैक धर्म कृत अविज्ञेय कृत लक्षणवान।।
अहो अप्रतर्क्यात्मा तेरा चिर कृतज्ञ मैं भार विमुक्त।
क्योंकि एक में भी अनेक हो विविध दृष्टियों से सयुक्त।।2
ज्ञानगर्भ हो अन्तरग से दयागर्भ हो परम दयालु।
रत्नगर्भ इस वसुन्धरा के रत्नत्रय मगल वर्षालु।।

भामण्डल से आप प्रभास्वर पद्मगर्भ कहलाते हो।
जगत गर्भ तुम हेमगर्भ तुम चक्र सुदर्शन पाते हो।।3
अन्तर बाह्य लक्ष्मी मण्डित होने से हो लक्ष्मीवान।
चारित त्रिदशाध्यक्ष आप हो सभी दशा में एक समान।।
दृढीयान् है सुदृढ ईशिता इनका महा मनोहर रूप।
मनोज्ञाग हैं धीर वीर गम्भीरशासनाधिक जगभूप।।4
धर्मरूप स्तम्भ धर्म के दृढतम धर्म नेमि चक्रेश।
महा मुनीश्वर पूजें तुम को अहो धर्मचक्रायुध वेश।।
देव आप ही पर दिव्य हो घाति कर्महा हन्ता हे।
करो धर्मघोषण सुख पोषण दयायाग भगवन्ता हे।।5
निर्मल सफल अमोघवाक् मत् अमोघाज्ञ की वाणी।
है अमोघ शासन जिनवर का सुभग सुरूप प्रदानी।।
पर को त्याग हुए हैं त्यागी निज गुण के अनुरागी।
समयज्ञों से हुए समाहित समाधान प्रभु बडभागी।।6
सुस्थित निश्चल स्वास्थ्यभाक है आत्मनिष्ठ होने से स्वस्थ।
नीरजस्क है और निरुद्धव है अलेप सच्चे शिव प्रस्थ।।
निष्कलकात्मा हो जिनकी वीतराग उनको कहते।
इच्छाओं से रहित मर्वथा स्वामी गतस्पृह रहते।।7
वशीभूत कर चुके इन्द्रियां विमुक्तात्मा वश्येन्द्रिय।
नि सपत्न निष्कण्टक है वे मेरे स्वामी विजितेन्द्रिय।।
हे प्रशान्त मुद्रा के धारी हे अनन्तधामर्षि महान।
मगलमय है मलनाशक हैं मलहा अनघ पुण्य की खान।।8
नही आप मा कोई अनीदृक् अनुपमेय हे उपमा भूत।
भाग्य विधाता कर्म शुभाशुभ दृष्टी दैव विगत करतूत।।

वचन अगोचर तुम अमूर्त हो मूर्तिमान हो पुरुषाकार।
एकनैक नानैक तत्त्वदृक विविध नयो से विविध प्रकार।।9
हे अध्यात्मगम्य अनुभव से अगम्यात्मा कहलाते।
सदायोगिवन्दित होकर ही पर योगवित् पद पाते।।
सर्वत्रग हो लोक व्याप्त हो नाथ सदाभावी हो तुम।
हो त्रिकाल विषयार्थ दृषी पर ज्ञाता दृष्टा ही हो तुम।।10
शकर से हो सौख्य प्रदाता सवद शान्ति प्रवक्ता है।
इन्द्रिय दमन किया हो जिसने दमी दान्त हो सक्ता है।।
क्षान्तिपरायण क्षमा रूप हो जगत भूप हो अधिप प्रधान।
स्वय परात्पर परात्मज्ञ हो भगवत परमानन्द महान।।11
तीनो लोको को है प्यारे, त्रिजगतवल्लभ मेरे देव।
है अभ्यर्च पात्र अर्चा के, त्रिजगन्मगलोदय स्वयमेव।।
अहो त्रिजगत्पतिपूज्याघ्रि तुम, त्रिलोकाग्र शिखामणि हो।
आत्म लोक गुँजाने वाली अनहद तुम अन्तर्ध्वनि हो।।12

1 ॐ ह्रीं बृहद्बृहस्पतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
2 ॐ ह्री वाग्मिने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
3 ॐ ह्रीं वाचस्पतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
4 ॐ ह्री उदारधिये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
5 ॐ ह्रीं मनीषिणे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
6 ॐ ह्रीं धिषणाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
7 ॐ ह्रीं धीमते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
8 ॐ ह्रीं शेमुषीशाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
9 ॐ ह्री गिरांपत्ये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
10 ॐ ह्रीं नैकरूपाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
11 ॐ ह्री नयोत्तुंगाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

12 ॐ ह्रीं नैकात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
13 ॐ ह्रीं नैकधर्मकृते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
14 ॐ ह्रीं अविज्ञेयाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
15 ॐ ह्रीं अप्रतर्क्यात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
16 ॐ ह्रीं कृतज्ञाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
17 ॐ ह्रीं कृतलक्षणाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
18 ॐ ह्रीं ज्ञानगर्भाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
19 ॐ ह्रीं दयागर्भाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
20 ॐ ह्रीं रत्नगर्भाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
21 ॐ ह्रीं प्रभास्वराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
22 ॐ ह्रीं पद्मगर्भाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा
23 ॐ ह्रीं जगद्गर्भाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
24 ॐ ह्रीं हेमगर्भाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीनि स्वाहा।
25 ॐ ह्रीं सुदर्शनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
26 ॐ ह्रीं लक्ष्मीवते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
27 ॐ ह्रीं त्रिदशाध्यक्षाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
28 ॐ ह्रीं दृढीयसे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
29 ॐ ह्रीं इनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
30 ॐ ह्रीं ईशित्रे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
31 ॐ ह्रीं मनोहराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
32 ॐ ह्रीं मनोज्ञांगाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
33 ॐ ह्रीं धीराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
34 ॐ ह्रीं गम्भीरशासनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
35 ॐ ह्रीं धर्मयूपाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
36 ॐ ह्रीं दयायागाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

37 ॐ ह्रीं धर्मनेमये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
38 ॐ ह्रीं मुनीश्वराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
39 ॐ ह्रीं धर्मचक्रायुधाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
40 ॐ ह्रीं देवाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
41 ॐ ह्रीं कर्मघ्ने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
42 ॐ ह्रीं धर्मघोषणाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
43 ॐ ह्रीं अमोघवाचे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
44 ॐ ह्रीं अमोघाज्ञाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
45 ॐ ह्रीं निर्मलाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
46 ॐ ह्रीं अमोघशासनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
47 ॐ ह्रीं सुरूपाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
48 ॐ ह्रीं सुभगाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
49 ॐ ह्रीं त्यागिने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
50 ॐ ह्रीं समयज्ञाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
51 ॐ ह्रीं समाहिताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
52 ॐ ह्रीं सुस्थिताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
53 ॐ ह्रीं स्वास्थभाजे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
54 ॐ ह्रीं स्वस्थाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
55 ॐ ह्रीं नीरजस्काय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
56 ॐ ह्रीं निरुद्धवाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
57 ॐ ह्रीं अलेपाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
58 ॐ ह्रीं निष्कलकात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
59 ॐ ह्रीं वीतरागाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
60 ॐ ह्रीं गतस्पृहाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
61 ॐ ह्रीं वश्येन्द्रियाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

62 ॐ ह्रीं विमुक्तात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
63 ॐ ह्रीं निःसपत्नाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
64 ॐ ह्रीं जितेन्द्रियाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
65 ॐ ह्रीं प्रशान्ताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
66 ॐ ह्रीं अनन्तधामर्षये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
67 ॐ ह्रीं मगलाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
68 ॐ ह्रीं मलघ्ने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
69 ॐ ह्रीं अनघाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
70 ॐ ह्रीं अनीदृशे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
71 ॐ ह्रीं उपमाभूताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
72 ॐ ह्रीं दिष्टये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
73 ॐ ह्रीं दैवाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
74 ॐ ही अगोचराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
75 ॐ ह्रीं अमूर्ताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
76 ॐ ह्रीं मूर्तिमते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
77 ॐ ह्रीं एकरूपाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
78 ॐ ह्रीं नैकरूपाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
79 ॐ ह्रीं नानैकतत्त्वदृशे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
80 ॐ ह्रीं अध्यात्मगम्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
81 ॐ ह्रीं अगम्यात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
82 ॐ ह्रीं योगविदे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
83 ॐ ह्रीं योगिवन्दिताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
84 ॐ ह्रीं सर्वत्रगाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
85 ॐ ह्रीं सदाभाविने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
86 ॐ ह्रीं त्रिकालविषयार्थदृशे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

87 ॐ ह्रीं शंकराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
88 ॐ ह्रीं शंवदाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
89 ॐ ह्रीं दान्ताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
90 ॐ ह्रीं दमिने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
91 ॐ ह्रीं क्षान्तिपरायणाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
92 ॐ ह्रीं अधिपाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
93 ॐ ह्रीं परमानन्दाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
94 ॐ ह्रीं परात्मज्ञाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
95 ॐ ह्रीं परात्पराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
96 ॐ ह्री त्रिजगद्वल्लभाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
97 ॐ ह्रीं अभ्यचर्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
98 ॐ ह्रीं त्रिजन्मंगलोदयाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
99 ॐ ह्रीं त्रिजगन्पतिपूज्याघ्रये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
100 ॐ ह्रीं त्रिलोकाग्रशिखामणये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इति वृहदादिशतम्

जल चन्दन अक्षत प्रसून चरु, दीप धूप फल अर्घ अनूप।
वृहदादिक अरहत शिरोमणि, अखिल जिनेश्वर शुद्ध स्वरूप।।

ॐ ह्रीं श्री बृहदादित्रिलोकाग्र-शिखामणिपर्यन्त-शतनामधारकाय श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नवम - शतक

भूत भविष्यत् वर्तमान के हो त्रिकालदर्शी प्रत्यक्ष।
हे लोकेश लोकधाता तुम मुझे विलोको आत्म् समक्ष।।
अविचल दृढव्रत पालन करते अहो सर्वलोकातिग पार्थ।
पूज्य सहज ही पूजनीय हो सर्वलोकैक सारथी सार्थ।।1

परम पुरातन तुम पुराण हो पुरुष आत्मा में रहते।
आद्य प्रवर्त्तक पूर्व पुरुष को इसीलिये पूर्वज कहते।।
कृत पूर्वांग विस्तरादीश्वर आदिदेव बतलाते है।
पुराणाद्य देवाधिदेवता गुरु पुरु देव सिखाते हैं।।2
हे युगादि स्थिति देशक ! तुम युग ज्येष्ठ कल्याण कल्प हो।
हे कल्याण वर्ण तुम ही तो धरती पर सब से निशल्य हो।।
हे युग मुख्य! तुम्ही हो मुखिया इस अवसर्पिणि कल्प काल के।
हे कल्याण लक्षणों वाले गाते है हम गुण विशाल के।।3
आप सहज कल्याण प्रकृति हैं, आप दीप्त कल्याण आत्मा।
आप विकल्मष पाप रहित है पाप-पुण्य का करो खात्मा।।
हे कलिलघ्न कलाधर स्वामी मुझ को भी विकलक करो।
कलातीत मै भी बन जाऊँ चेतन यह निष्पक करो।।4
देव देव की स्तुति गाते जगन्नाथ हे त्रिभुवन ईश।
जगद्बन्धु जग हित करते हैं जगद् विभू सर्वग अवनीश।।
कल्पवृक्ष सम जगद् हितैषी ज्ञाता दृष्टा प्रभु लोकज्ञ।
केवल ज्ञान गम्य जगदग्रज सर्व श्रेष्ठ एव सर्वज्ञ।।5
उन्ही चराचर गुरु गूढात्मा को प्रणाम मै करता हूँ।
उन्ही गूढ गोचर ईश्वर को गोप्य हृदय में धरता हूँ।।
ज्वलज्ज्वलन सप्रभ मशाल है जलती हुई ज्योति ज्वाला।
सद्योजात प्रकाशात्मा ने जग को जगमग कर डाला।।6
सूर्य प्रखर आदित्य वर्णज्यों कान्तियुक्त भर्माभ ज्वलन्त।
सुप्रभ और कनक प्रभ जिनकी सूर्य कोटि सम प्रभ शोभन्त।।
स्वर्ण वर्ण गौराग सलौना आभा कुमुद बाल रुक्माभ।
आत्म नेत्र से निज पर में ही जीवन जगा रहे चन्द्राभ।।7

है तपनीय निभस्वी काया तपे हुए सोने सारूप।
बालार्काभ अनल प्रभ मानों अरुणोदय हो जग के भूप।।
है सन्ध्याभ्र बभ्रु सध्या के बादल की लालामी रूप।
तुम्हीं तप्त चामीकर छवि स्वामी हेमाभ सुनामी भूप।।8
कनत् काञ्चन कान्ति सन्निभ हे निष्टप्त कनक छाया से।
शान्त कुम्भनिमप्रभ स्वर्णाभा हिरण्य वर्ण सी काया से।।
ये सम्पूर्ण विशेषण तन के इनसे तुम प्रभु न्यारे हो।
हे चिच्चमत्कार आदीश्वर समयसार चिर धारे हो।।9
तुम्ही जात रूपाभ कहाते तुम्ही कहाते हो द्युम्नाभ।
तुम्हीं तप्त जाम्बून द्युति हो तुम्ही नाथ हाटक द्युति लाभ।।
हे मुधौत कलधौत श्रीमन् चेतन ज्योति प्रदीप्त करो।
वर्ण भेद से राग रग से देह विपर्यय दृष्टि हरो।।10
प्रिय रञ्जन शिष्टेष्ट महाजन करना पुष्टिद ऋद्धि निधान।
महाबली स्पष्ट पुष्ट हे स्पष्टाक्षर नित करो विधान।।
हे अमोघ शत्रुघ्न प्रशास्ता हे अप्रतिघ तुम्ही क्षम हो।
तुम्ही शासिता और स्वयभू हो तुम्ही धर्म के सगम हो।।11
हे शिवातात शान्तिकृत मेरे सभी उपद्रव शान्त करो।
शान्ति निष्ठ हे कान्तिमान हे कामित प्रद मत भ्रान्त करो।।
हे मुनि ज्येष्ठ तथा शान्तिद प्रभु शिवप्रद पद मुझको देना।
आत्मशान्ति निज से मिलती है पर से क्या लेना देना ?।।12
श्रेयो निधि हो आप जिनेश्वर अधिष्ठान हो धर्मों के।
अप्रतिष्ठ हे लब्ध प्रतिष्ठत तुम्हीं विनाशक कर्मों के।।
इतने सुस्थिर स्थावर हो पृथीयान कहलाते हो।
तुम निश्चल स्थाणु सरीखे पृथु पृथ्वी पर छाते हो।।13

1 ॐ ह्रीं त्रिकालदर्शिने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
2 ॐ ह्रीं लोकेशाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
3 ॐ ह्रीं लोकधात्रे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
4 ॐ ह्रीं दृढव्रताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
5 ॐ ह्रीं सर्वलोकातिगाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
6 ॐ ह्रीं पूज्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
7 ॐ ह्रीं सर्वलोकैकसारथये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
8 ॐ ह्रीं पुराणाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
9 ॐ ह्री पुरुषाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
10 ॐ ह्रीं पूर्वाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
11 ॐ ह्रीं कृतपूर्वांगविस्तराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
12 ॐ ह्री आदिदेवाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
13 ॐ ह्री पुराणाद्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
14 ॐ ह्रीं पुरुदेवाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
15 ॐ ह्री अधिदेवतासज्ञाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
16 ॐ ह्री युगमुख्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
17 ॐ ह्रीं युगज्येष्ठाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
18 ॐ ह्रीं युगादिस्थितिदेशकाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
19 ॐ ह्री कल्याणवर्णाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
20 ॐ ह्रीं कल्याणाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
21 ॐ ह्रीं कल्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
22 ॐ ह्रीं कल्याणलक्षणाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
23 ॐ ह्रीं कल्याणप्रकृतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
24 ॐ ह्रीं दीप्रकल्याणात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
25 ॐ ह्रीं विकल्मषाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

26 ॐ ह्रीं विकलंकाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
27 ॐ ह्रीं कलातीताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
28 ॐ ह्रीं कलिलघ्नाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
29 ॐ ह्रीं कलाधराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
30 ॐ ह्रीं देवदेवाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
31 ॐ ह्रीं जगन्नाथाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
32 ॐ ह्रीं जगद्बन्धवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
33 ॐ ह्रीं जगद्विभवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
34 ॐ ह्रीं जगद्धितैषिणे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
35 ॐ ह्री लोकज्ञाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
36 ॐ ह्रीं सर्वगाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
37 ॐ ह्रीं जगदग्रजाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
38 ॐ ह्रीं चराचरगुरवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
39 ॐ ह्रीं गोप्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
40 ॐ ह्रीं गूढात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
41 ॐ ह्रीं गूढगोचराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
42 ॐ ह्रीं सद्योजाताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
43 ॐ ह्रीं प्रकाशात्मने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
44 ॐ ह्रीं ज्वलज्ज्वलनसप्रभाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
45 ॐ ह्रीं आदित्यवर्णाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
46 ॐ ह्रीं भर्माभाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
47 ॐ ह्रीं सुप्रभाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
48 ॐ ह्रीं कनकप्रभाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
49 ॐ ह्रीं सुवर्णवर्णाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
50 ॐ ह्रीं रुक्माभाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

51 ॐ ह्रीं सूर्यकोटिसमप्रभाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
52 ॐ ह्रीं तपनीयनिभाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
53 ॐ ह्रीं तुंगाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
54 ॐ ह्रीं बालार्काभाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
55 ॐ ह्रीं अनलप्रभाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
56 ॐ ह्रीं सन्ध्याभ्रबभ्रवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
57 ॐ ह्रीं हेमाभाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
58 ॐ ह्रीं तप्तचामीकरच्छवये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
59 ॐ ह्रीं निष्टप्तकनकच्छायाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
60 ॐ ह्रीं कनत्काञ्चनसन्निभाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
61 ॐ ह्रीं हिरण्यवर्णाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
62 ॐ ह्री स्वर्णाभाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
63 ॐ ह्रीं शातकुम्भनिभप्रभाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
64 ॐ ह्रीं द्युम्नाभाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
65 ॐ ह्रीं जातरूपाभाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
66 ॐ ह्री तप्तजाम्बूनदद्युतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
67 ॐ ह्रीं सुधौतकलधौतश्रिये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
68 ॐ ह्रीं प्रदीप्ताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
69 ॐ ह्रीं हाटकद्युतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
70 ॐ ह्रीं शिष्टेष्टाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
71 ॐ ह्रीं पुष्टिदाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
72 ॐ ह्रीं पुष्टाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
73 ॐ ह्रीं स्पष्टाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
74 ॐ ह्रीं स्पष्टाक्षराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
75 ॐ ह्रीं क्षमाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

76 ॐ ह्रीं शत्रुघ्नाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
77 ॐ ह्रीं अप्रतिघाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
78 ॐ ह्रीं अमोघाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
79 ॐ ह्रीं प्रशास्त्रे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
80 ॐ ह्रीं शासित्रे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
81 ॐ ह्रीं स्वभुवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
82 ॐ ह्रीं शान्तिनिष्ठाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
83 ॐ ह्रीं मुनिज्येष्ठाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
84 ॐ ह्रीं शिवतातये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
85 ॐ ह्रीं शिवप्रदाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
86 ॐ ह्रीं शान्तिदाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
87 ॐ ह्रीं शान्तिकृते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
88 ॐ ह्रीं शान्तये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
89 ॐ ह्रीं कान्तिमते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
90 ॐ ह्रीं कामितप्रदाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
91 ॐ ह्रीं श्रेयोनिधये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
92 ॐ ह्रीं अधिष्ठानाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
93 ॐ ह्रीं अप्रतिष्ठाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
94 ॐ ह्रीं प्रतिष्ठिताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
95 ॐ ह्रीं सुस्थिराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
96 ॐ ह्रीं स्थावराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
97 ॐ ह्रीं स्थाणवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
98 ॐ ह्रीं प्रथीयसे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा
99 ॐ ह्रीं प्रथिताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
100 ॐ ह्रीं पृथवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इति त्रिकालदर्श्यादिशतम्

जल चदन अक्षत प्रसून चरु दीप धूप फल अर्घ अनूप।
श्री त्रिकालदर्श्यादि शिरोमणि अखिल जिनेश्वर शुद्ध स्वरूप।।

ॐ ह्री श्री त्रिकालदर्श्यादिपृथुपर्यन्त-शतनामधारकाय श्री जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दशम-शतक

दिशा वसन है वायु अशन है वातरशन के दिग्वासा।
अम्बर ही है अम्बर जिनका अत निरम्बर परिभाषा।।
भीतर बाहिर गॉठ न जिनके प्रकृत वेष वे निर्ग्रंथेश।
लेश मात्र भी नहीं परिग्रह निष्किञ्चन अतएव जिनेश।।1
निराशस को चाह न होती, आशा और प्रशसा की।
जय बोलो उस ज्ञान चक्षु की निर्मल चेतन हसा की।।
जो बिलकुल निर्मोह हुए है वही अमीमुंह कहलाते।
इसीलिये तो उनके चरणो में हम है झुक-झुक जाते।।1
तेजो राशि पराक्रम शाली नाथ अनन्तौजा ओजस्वी।
तेजोमय है अमित ज्योति है ज्योति मूर्ति अति तेजस्वी।।
हे ज्ञानाब्धि शीलसागर हे ज्ञानशील मै बन जाऊँ।
दूर करूँ अज्ञान ॲधेरा और तमोपह कहलाऊँ।।3
अहो ! जगच्चूडामणि तुम तो दिव्य दीप्ति से दीप्त हुए।
विघ्न विनायक हे कलिघ्न तुम पापों से निर्लिप्त हुए।।
वही कर्म शत्रुघ्न हमारे लोकालोक प्रकाशक है।
निजानन्द रस लीन जिनेश्वर सकल ज्ञेय के ज्ञायक है।।4
अतन्द्रालु है अनिद्रालु जागरूक हैं श्री जिनराज।
ज्ञान प्रभामय लक्ष्मी पति है जगज्ज्योति है श्री महाराज।।

सतत प्रजाहित करने से ही धर्मराज कहलाते हो।
वीतराग विज्ञानमयी तुम सत्यमार्ग दर्शाते हो।।5
जो मुमुक्षु है वही मोक्ष साधन की वाञ्छा करते हैं।
वही बन्ध मोक्षज्ञ सप्त तत्त्वों पर श्रद्धा धरते है।।
वही भव्य पेटक नायक बन निज मन्मथ कहलाते।
वे प्रशान्त रस शैलूषी प्रभुवर जिताक्ष पद पाते।।6
धर्ममूल कर्ता अखिलेश्वर अखिलज्योति से भरे हुए।
द्रव्य भाव नोकर्म तीन मल है मलघ्न से हरे हुए।।
वही मूल कारण परमात्मा आप्त तथा वागीश्वर है।
श्रायसोक्ति श्रेयान् वही है निरुक्तवाक् लक्ष्मीधर है।।7
सर्वोत्तम है धर्म प्रवक्ता आप जिनेश्वर वचसामीश।
मदन मारजित विश्वभाववित् तनुनिर्मुक्त हे सुतनु मुनीश।।
आप सुगत है सम्यग्ज्ञानी, मिथ्यानय सब नाश किये।
अत आप ही हत दुर्नय है, नयातीत आवास लिये।।8
हे श्रीश्रितपादाब्ज आप है अन्तरग लक्ष्मीपति श्रीश।
आप वीत भी अभयकर है, हे उत्सन्नदोष जगदीश।।
विघ्न रहित निर्विघ्न आप ही, निज स्वभाव मे निश्चल है।
वत्सलता से ओतप्रोत है, अत लोक के वत्सल हैं।।9
हे लोकोत्तर नाथ लोकपति लोकचक्षु खोलो मेरे।
हे अपार धी परम घोर धी स्थितप्रज्ञ शरण तेरे।।
अहो बुद्ध सन्मार्ग प्रणेता सूनृत पूतवाक् स्वामी।
परम शुद्ध के शुद्ध पन्थ का बन जाऊँ मैं अनुरागी।।10
प्रज्ञा पारमितादीश्वर हे ! प्रज्ञा पार नही पाती।
अत प्राज्ञ यति सज्ञा सार्थक नियमितेन्द्रिय कहलाती।।

हे भदन्त हे भद्र भद्रकृत् कल्प वृक्ष उपमाधारी।
हे वरप्रद वरदान मुझे दो, बनूँ मोक्ष का अधिकारी।।11
कर्म शत्रुओं को जड से ही प्रभुवर तुमने दिया उखाड।
कर्म काष्ठ सुशुक्षणी बन जला दिये कर्मो के झाड।।
कर्म नाश करने मे कर्मठ पुरुषार्थी कर्मण्य तुम्हीं।
हे यादेव विचक्षण स्वामी प्राशु रश्मि हो धन्य तुम्हीं।।12
तुम्हीं अनन्तशक्तिशाली हो तुम्हीं अछेद्य तुम्ही त्रिपुरारि।
तुम्ही त्रिलोचन या त्रिनेत्र हो त्र्म्बक तुम्हीं नाथ सुखकारी।।
केवलज्ञान वीक्षण तुम ही ज्ञाता दृष्टा हो प्रत्यक्ष।
सम्यग्दर्शन ज्ञान चरित से कहलाते हो तुम ही त्रयक्ष।।13
हे समन्तभद्रादि देव हो सभी तरह कल्याण स्वरूप।
शान्त किये सब कर्म आपने, इसीलिये शान्तारि अनूप।।
धर्माचार्य दयानिधि मुझ पर जितानग हो परम कृपालु।
वही धर्मदेशक मुझको भी करें सूक्ष्मदर्शी श्रद्धालु।।14
शुभ युगल सुख साद्भूत है पुण्यराशि भगवान जिनेश।
रोग रहित हे स्वस्थ अनामय धर्मपाल जिनराज विशेष।।
वही धर्म साम्राज्यनायकाधीश स्वय कहलाते है।
जगत्पाल के श्रीचरणों मे अपना शीश झुकाते है।।15।।

1 ॐ ह्रीं दिग्वाससे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
2 ॐ ह्रीं वातरशनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
3 ॐ ह्रीं निर्ग्रन्थेशाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
4 ॐ ह्रीं निरम्बराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
5 ॐ ह्रीं निष्किञ्चनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
6 ॐ ह्रीं निराशसाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

7 ॐ ह्रीं ज्ञानचक्षुषे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
8 ॐ ह्रीं अमोमुहाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
9 ॐ ह्रीं तेजोराशये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
10 ॐ ह्रीं अनन्तौजसे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
11 ॐ ह्रीं ज्ञानाब्धये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
12 ॐ ह्रीं शीलसागराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
13 ॐ ह्रीं तेजोमयाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
14 ॐ ह्रीं अमितज्योतिषे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
15 ॐ ह्रीं ज्योतिर्मूर्तये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
16 ॐ ह्रीं तमोपहाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
17 ॐ ह्रीं जगच्चूडामणये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
18 ॐ ह्रीं दीप्राय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
19 ॐ ह्रीं शवते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
20 ॐ ह्रीं विघ्नविनायकाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
21 ॐ ह्रीं कलिघ्नाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
22 ॐ ह्रीं कर्मशत्रुघ्नाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
23 ॐ ह्रीं लोकालोकप्रकाशकाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
24 ॐ ह्रीं अनिद्रालवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
25 ॐ ह्रीं अतन्द्रालवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
26 ॐ ह्रीं जागरूकाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
27 ॐ ह्रीं प्रमामयाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
28 ॐ ह्रीं लक्ष्मीपतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
29 ॐ ह्रीं जगज्ज्योतिषे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
30 ॐ ह्रीं धर्मराजाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
31 ॐ ह्रीं प्रजाहिताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

32 ॐ ह्रीं मुमुक्षवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
33 ॐ ह्रीं बन्धमोक्षज्ञाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
34 ॐ ह्रीं जिताक्षाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
35 ॐ ह्रीं जितमन्मथाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
36 ॐ ह्रीं प्रशान्तरसशैलूषाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
37 ॐ ह्रीं भव्यपेटकनायकाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
38 ॐ ह्रीं मूलकर्त्रे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
39 ॐ ह्रीं अखिलज्योतिषे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
40 ॐ ह्रीं मलघ्नाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
41 ॐ ह्रीं मूलकारणाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
42 ॐ ह्रीं आप्ताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
43 ॐ ह्रीं वागीश्वराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
44 ॐ ह्रीं श्रेयसे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
45 ॐ ह्रीं श्रायसोक्तये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
46 ॐ ह्रीं निरुक्तवाचे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
47 ॐ ह्रीं प्रवक्त्रे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
48 ॐ ह्रीं वचसामीशाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
49 ॐ ह्रीं मारजिते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
50 ॐ ह्रीं विश्वभावविदे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
51 ॐ ह्रीं सुतनवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
52 ॐ ह्रीं तनुनिर्मुक्ताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
53 ॐ ह्रीं सुगताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
54 ॐ ह्रीं हतदुर्नयाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
55 ॐ ह्रीं श्रीशाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
56 ॐ ह्रीं श्रीश्रितपादाब्जाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

57 ॐ ह्रीं वीतभिये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
58 ॐ ह्रीं अभयंकराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
59 ॐ ह्रीं उत्सन्नदोषाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
60 ॐ ह्रीं निर्विघ्नाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
61 ॐ ह्रीं निश्चलाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
62 ॐ ह्रीं लोकवत्सलाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
63 ॐ ह्रीं लोकोत्तराय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
64 ॐ ह्री लोकपतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
65 ॐ ह्रीं लोकचक्षुषे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
66 ॐ ह्री अपारधिये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
67 ॐ ह्री धीरधिये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
68 ॐ ह्रीं बुद्धसन्मार्गाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
69 ॐ ह्री शुद्धाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
70 ॐ ह्रीं सूनृतपूतवाचे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
71 ॐ ह्रीं प्रज्ञापारमिताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
72 ॐ ह्रीं प्राज्ञाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
73 ॐ ह्री यतये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
74 ॐ ह्रीं नियमितेन्द्रियाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
75 ॐ ह्री भदन्ताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
76 ॐ ह्री भद्रकृते वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
77 ॐ ह्री भद्राय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
78 ॐ ह्रीं कल्पवृक्षाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
79 ॐ ह्रीं वरप्रदाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
80 ॐ ह्रीं समुन्मूलितकर्मारये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
81 ॐ ह्रीं कर्मकाष्ठाशुशुक्षणये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

82 ॐ ह्रीं कर्मण्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
83 ॐ ह्रीं कर्मठाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
84 ॐ ह्रीं प्रांशवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
85 ॐ ह्रीं हेयादेयविचक्षणाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
86 ॐ ह्रीं अनन्तशक्तये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
87 ॐ ह्रीं अच्छेद्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
88 ॐ ह्रीं त्रिपुरारये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
89 ॐ ह्रीं त्रिलोचनाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
90 ॐ ह्रीं त्रिनेत्राय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
91 ॐ ह्रीं त्र्यम्बकाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
92 ॐ ह्रीं त्र्यक्षाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
93 ॐ ह्रीं केवलज्ञानवीक्षणाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
94 ॐ ह्रीं समन्तभद्राय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
95 ॐ ह्रीं शान्तारये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
96 ॐ ही धर्माचार्याय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
97 ॐ ह्रीं दयानिधये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
98 ॐ ही सूक्ष्मदर्शिने वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
99 ॐ ह्रीं जितानगाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
100 ॐ ह्रीं कृपालवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
101 ॐ ह्रीं धर्मदेशकाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा
102 ॐ ह्रीं शुभंयवे वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
103 ॐ ह्रीं सुखसाद्भूताय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
104 ॐ ह्रीं पुण्यराशये वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
105 ॐ ह्रीं अनामयाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
106 ॐ ह्रीं धर्मपालाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

107 ॐ ह्रीं जगत्पालाय वृषभाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

108 ॐ ह्रीं धर्मसाम्राज्यनायकाय वृषभाय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

इति श्री दिग्वासाद्यष्टोत्तरशतम्

जल चन्दन अक्षत प्रसून चरु दीप धूप फल अर्घ अनूप।
दिग्वासादिक सन्त शिरोमणि अखिल जिनेश्वर शुद्ध स्वरूप।।

ॐ ह्रीं श्री दिग्वासादि-धर्मसाम्राज्यनायकपर्यन्त-शतनामधारकाय श्री जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

"जाप मन्त्र"

ॐ ह्रीं अर्हं अष्टाधिक-सहस्रनामभ्यो नमः

(108 बार इस मन्त्र का जाप करें)

जयमाला

श्री जिनेन्द्र के इन नामों की महिमा सञ्जय जगजानी।
ध्याता है जो भक्ति भाव से द्विगुणित स्मृति अतुलानी।।1
श्रेयस रूप मन्त्र की माला स्तुति गाई तुम्हारी ही।
अवर्णनीय है वचन अगोचर है अभीष्ट फलकारी ही।।2
विश्व बन्धु हो जगदिभषक हे हमें स्वस्थ कर देना।
अहो जगद्दाता करुणाकर अखिल जगद्धित कर देना।।3
ज्योति स्वरूपी एक मात्र हो उभय रूप हे उपयोगी।
रत्नत्रय मय मुक्ति मार्ग हो अनन्त चतुष्टय के भोगी।।4
तुम्हीं पञ्च कल्याणक नायक तुम्हीं पञ्च परमेष्ठी हो।
छह द्रव्यों के जानकार हो, तुम्हीं सप्तनय सृष्टी हो।।5
सम्यक्त्वाष्ट गुणो के धारी नव केवल लब्धीश प्रभु।
पूर्वभवों के दश अवतारी, दो मगल आशीष प्रभु।।6
एक सहस्र आठ नामों के द्वारा गुणमाला गाऊँ।
करी अर्चना तव प्रसाद से कृपा सहारा सुखपाऊँ।।7

जो भी भक्त भजन करता है जिन जिन सहस्रनामों का।
वह पवित्रतम बन जाता है भाजन नित कल्याणों का।।8
इन्द्रो सा ऐश्वर्य पायेगे पुण्यवान पुण्यार्थी बन।
मोक्ष लक्ष्मी वरण करेंगे परम्परा परमार्थी जन।।9
जगच्चराचर के गुरुवर का इन्द्रो ने गुणगान किया।
प्रार्थना सुन तीर्थंकर ने विहरण हेतु प्रयाण किया।।10
शुभ प्रशस्त गुण कीर्तन की है स्तुति की परिभाषा।
है प्रसन्न मति स्तोता को निष्ठार्थी फल भव्याशा।।11
वन्दनीय तीनों लोको के मै त्रिकाल वन्दन करता।
ध्येय स्वय है योगिवृन्द के किन्तु नही मै तुम ध्याता।।12
नयवन्तो के नेता पाते भुक्ति मुक्ति की लक्ष्मी को।
अहो त्रिलोकी गुरु गुरु पावन कृपा करो मुझ पर भी तो।।13
इन्द्रार्चित उन चरण कमल को है शत शत नमन हमारा।
कर्म घातिया नाश जिन्होने अनन्त चतुष्टय निज धारा।।14
भव्य कमल विकसाने वाले जगन्मान्य त्रैलोकीनाथ।
समवशरण आगे गौतम मानस्तम्भ विलोकीनाथ।।15

ॐ ह्री श्री अष्टाधिकसहस्रनामधारकाय श्रीजिनेन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भक्ति भाव से हम भी करते है मगल अभिनन्दन।
युग युग वन्दन करे तुम्हारा वृषभेश्वर मरु के नन्दन।।

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि

सोलहकारण विधान

(कवि टेकचन्द कृत)

दोहा- मानो आनो मन गहो, सोलह कारण भाव।
नमों जजौ जिनपद मिलै, भलो मिल्यो शुभ दाव।।1।।

सोरठा- ए धर्म कारण जान, स्वर्ग मुक्ति इनसौ मिलै।
होय पापकी हान, नितप्रति मगल सपजै।।2।।

चौपाई- यह व्रत नर तन ही तै होई, देवन कौ अवसर नहि कोई।
व्रतधारी कौ देवा पूजे, व्रत धारेतै सब अघ धूजै।।3।।

पद्धड़ी छन्द

यह वरत सकल मे ऊँच जान, ऊँचे पदको यह दाय मान।
ऊँचे ही नरपै होय सोय, पूजै सो भी जिय ऊँच होय।।1।।

अडिल्ल छन्द- कर्म-शैल को वरत बज्र सम जानिए,
जहाँ वरत तहँ अशुभतनी हो हानिए।
वरत बडो सुरवृक्ष देय वाछित फला,
बिन वाछै जो करै धरै सिध की शिला।।5।।

गीता छन्द

यह वरत वह्नि कर्म-वनको, पाप बेल कुठार जी।
अशुभ घन को पवन दीरघ, मिथ्यात तम रवि सार जी।।
करण-करि को हरि समाना, मन-कपि को श्रखला।
शुभ ध्यान मन्दिर नाव भवदधि, व्यसन मल जीतन भला।।6।।

चौपाई

यह व्रत करै विनयजुत कोय, तो चवगति भरमन नहि होय।
पूजे यह व्रत मन वच काय, जगत पूज्यपद सो जिय पाय।।7।।

भुजगप्रयात छन्द

यह वरत सार हरै पाप भार, यह वरत नीका हरै शोक जी का।
यह वरत जूना करै दूर खूना, यह वरत प्यारा करै पाप न्यारा।।8।।

छन्द त्रिभगी

जो यह व्रत ध्यावै, नवनिधि पावै, पुण्य बढावै, अघ हानी।
यह व्रत सुखदाई, देत बडाई, सब जिये भाई, हितदानी।।
या वरत प्रभावै, पूज्य कहावै, ज्ञान बढावै, शिवकारी।
यह वरत सुमित्ता, करदे चित्ता, महा पवित्ता, भवतारी।।9।।

मुनियानदी चाल

आदि इस वरतकी ओपमा है घनी,
कही जिनदेव जिनवाणी मे सब भनी।
तनिक सी यहाँ कही राग व्रत-कारनै,
सुनौ भव्य करौ यह वरत दु ख टारनै।।10।।

इति व्रत महिमा पुष्पाञ्जलि क्षिपेत्

अथ स्थापना (त्रिभगी छन्द)

यह सोलहकारण भवदधितारण, काज सुधारण गुणधारी।
यह पाप नशावै शुभ फल ल्यावै, ध्यान बढावै शिवकारी।।
तीर्थंकर पद दे जगथुति फलजै, पूजौ भवि ते हित भारी।
मै मनवचकाई यह गुन भाई, थापन लाई मद टारी।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारणानि अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारणानि अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारणानि अत्र मम सन्निहितानि भवत भवत वषट् सन्निधिकरणम्।

गीता छन्द

तन कर पवित्र सुधार वसु तर, भक्ति मनवच लाय जी।
ले कनक झारी रतन जडित सु, चित्त में हरषाय जी।।
भर नीर गगा तनौ निरमल, गध तहँ अधिकाय है।
मै जजों षोडशभावना, शुभ तीर्थपद की दाय है।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि-षोडशकारणेभ्यो जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

ले बावनो चदन सु निरमल, नीरतैं घसि सार जी।
धर कनक पातर भाव शुभ करि, सकल मद को मार जी।।
कर काय मन वच शुद्ध परणति, भक्ति उर बहु लाय है। मै

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि-षोडशकारणेभ्यो ससारताप-विनाशनाय चदन निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

उज्ज्वल अखण्डित बीन नखशिख, लाइये हितकारनै।
बहु गधजुत शुभ धोय अक्षत, महा पुनि-फल धारनै।।
करि भावना अति शुद्ध मनवच, काय जोग लगाय है। मै

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि-षोडशकारणेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

ले फूल सुरतरु कनक चाँदी, और कृत्रिम जानिए।
शुभ गध गुजत भ्रमर तिनपै, भले पुनि अनुमानिए।।
धरि भक्ति हिरदै कायमनवच, हर्ष बहु उपजाय है। मै

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि-षोडशकारणेभ्यः कामबाण-विध्वसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

कर तुरत नेवज आदि मोदक, भले रस मिलवाय जी।
तिम देखते नैवेद्यको, दुख रोग भूख नशाय जी।।
सो लेय निज कर धार हिरदै, भक्ति भाव लगाय है। मै

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि-षोडशकारणेभ्यः क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

धर रतनदीपक कनकपातर, आरती शुभ चित करौ।
बहु हर्ष मनवचकाय धरिकै, मोहतम नाशन करौ।।
हो ज्ञान ता फल भलो केवल, सकल सशय जाय है।
मै जजों षोडशभावना, शुभ तीर्थपद की दाय है।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारणेभ्यो मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

धूप दशधा अगर चन्दन, अरु सुगन्ध मिलाय जी।
सो खेयकरि फल कर्मक्षय हो, घनी कहा बरनाय जी।।
तिस धूप की ले गध लोलुप, भ्रमर शब्द कराय है। मै

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारणेभ्यो अष्टकर्म-विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

फल लेय श्रीफल लौग खारक, भले और बदाम जी।
इन आदि और अनेक शुभ फल, लेय सुख के काम जी।।
कर कायमनवच भक्ति नीकी, राग उर बहु लाय है। मै

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारणेभ्यो मोक्षफल-प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

जल भलौ चन्दन सुभग अक्षत, पुष्प चरु दीपक सही।
फिर धूप फल इमि आठ द्रव्य, भलै भावन अघ दही।।
धर भक्ति मनवचकाय हिरदै, आरती शुभ दाय है। मै

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारणेभ्यो अनर्घपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

दोहा-दर्शविशुद्धि आदि शुभ, षोडश भावन सोय।
तिनकौं पूजौ भाव धरि, तीर्थंकर पद होय।।10।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारणेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।।

जयमाला (छद चौपाई)

षोडशभावन पावन जान, यह तीर्थंकरपद फल दान।
याको ध्याय भए जिन घनै, च्यार घातिया कर्म जु हनै।।1।।
भो भवि षोडशकारण करौ, ताकी विधि हिये में धरौ।
तीन प्रकार वरत को करौ, जघन्य मध्य उत्कृष्टै धरौ।।2।।
मास एक उपवास कराय, सो उत्कृष्ट जु विधि मनलाय।
बेले बेले पारण करै, तथा एकान्तर अनसन धरै।।3।।
जो लघुशक्ति धार जिये होय, पाँचो परवी अनसन जोय।
यातै भी लघुशक्ति धरै, तो षट्वास नाहि परिहरै।।4।।
ताकी विधि ऐसी जू जान, आदि अन्त दो पडवा आन।
दो आठैं दो चौदश वास, ये षट्वास जघन्य विधि भास।।5।।
बाकी दिन एकाशन करै, एक बार सो भोजन धरै।
फेर न लहै नीर को सोय, ऐसे वरत करत सुध होय।।6।।
षोडशवर्ष करै जिय सोय, फेर उद्यापन की विधि होय।
नाही वरत दुगुनता करै, पीछे शक्तिसमा व्रत धरै।।7।।
जो फिर शक्ति होय तो धीर, आयु लगै करनौ वरवीर।
यह सामान्य वरत विधि जान, और विशेष ग्रन्थतैं मान।।8।।

सोरठा- या विधि षोडशभाव, जो भवि पूजै भाव सौ।
सो जन जिनपद पाय, और कहा फल गाइये।।9।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारणेभ्यो महार्घ्यं नि. स्वाहा।।

(1) दर्शनविशुद्धि-भावना पूजा

मुनियानंदी चाल

भावना दर्श विशुद्धि सो जानिए,
तास मधि दोष पच्चीस नहि मानिये।

या बिना मोक्ष कू और अग ना करै,
जजौ इमि जान इहाँ थापि सो अघ हरे।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धि-भावने ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धि-भावने ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धि-भावने ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

मुनियानंदी चाल

गगको-नीर मह निरमलौ जानिए,
रतनतै जडित शुभ पात्र में आनिए।
पूजिये भावना दर्श विशुद्धि आदि या,
या बिना मोक्षमारग नहीं तिन लिया।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धिमावनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

सुभग चन्दन घस्यो नीर गगा थकी,
कनकझारी धरौ भक्ति मुख तैज की। पूजिये

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धिमावनायै चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

सुभग अक्षत महा ऊजरे गधमई,
भक्तिभावन थकी अर्घ करमें लई। पूजिये

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धिमावनायै अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

फूल सुरवृक्षके गधजुत लाइये,
होय परफुल्ल उर फूल चढवाइये। पूजिये

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धिमावनायै पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

सुभग चरु लेय षट् रस तनैं सार जी,
कनक पातर विषैं भक्ति तैं धार जी। पूजिये

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धिमावनायै नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

दीप तम के हरा रतनमय सार जी,
कनक भरि थाल करि आरती धार जी। पूजिये

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धिभावनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

धूप दशधा महा गध जुत सब लई,
खेय वह्निविषैं भक्ति मुख तैं चई। पूजिये

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धिभावनायै धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

सुभग श्रीफल भले आदिफल सार जी,
भक्त कू देत है मुक्ति फल धार जी। पूजिये

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धिभावनायै फल निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

नीर चदनाक्षत पुष्प चरु दीप जी,
धूप फल लेय करि अर्घ शुभ टीप जी। पूजिये

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

भावना भली यह दर्शविशुद्धिया,
सकल धर्म अग के मुख्य यह जिन चया।
या भये मोक्षमग निकट भासौ सही,
जानि इमि भली हम अर्घ करतै ठही।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धिभावनायै महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।10।।

प्रत्येक अर्घ

मुनियानंदी चाल

धर्म मारग विषैं शक ताकै नहीं,
होय निरभै गुरु देव धर्म पद ठहीं।
भेद विज्ञान में शक नहि आय है,
भावसौं दर्श विशुद्धि सुखदाय है।।

ॐ ह्रीं निःशंकित-गुणसहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि।1।

धर्म सेवे नही चाह हिरदै करै,
भोग चक्री सुरा इन्द्र के परिहरै ।
एक शिवचाह अनि भूल नही पाय है।
भावसौ दर्श विशुद्धि सुखदाय है।।

ॐ ह्री नि कांक्षित-गुणसहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि।2।

देख परवस्तु चित्त घिन नहीं आनि है,
रूप शुभ अशुभ अब पुदगल के मानि है।
निर्विचिकित्सा गुण जीव हितदाय है। भाव सौ०

ॐ ह्रीं निर्विचिकित्सागुणसहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि।3।

देव गुरु धर्म को परख सेवै सही,
बिन परीक्षा गुरु देव सेवै नही।
दृष्टि साँची सरध उर विषै पाय है। भाव सौ०

ॐ ह्रीं अमूढ़दृष्टिगुणसहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।4।

देख परदोष कू नाहि मुखतै कहै,
दोष परके सदा ढॉकणों उर चहै।
सदा चित्त शान्त करुणामई पाय है। भाव सौ०।।

ॐ ह्रीं उपगूहनगुणसहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।।5।।

धर्म तै डिगत को थिरी सो करत है,
देत उपदेश मन-भरम को हरत है।
धर्मधर आप फिर और धर्मदाय है। भाव. सौ०

ॐ ह्रीं स्थितिकरणगुणसहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।6।

देख धर्मी भली प्रीति तासौ करै,
गऊ लख पुत्र ज्यों हर्ष मन में धरे।
धर्म अगधार हितकार गुणपाय है। भाव सौ०

ॐ ह्रीं वात्सल्यगुणसहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।।7।।

मन वचन काय धन बुद्धि तपतैं सही,
मति श्रुतज्ञान मनपर्यय अवधि कही।
धर्म परभाव इनतै करै भाय है। भाव सौ०

ॐ ह्रीं प्रभावनाअंगसहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि ।8।

आठ गुन ए धरै शुद्ध सरधा करै,
तत्त्व सरधान में भरम नाही परै।
आप चिद्रूप पर देख जडभाय है। भाव सौ०

ॐ ही अष्टगुणसहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।।9।।

मातृपक्ष मदकरै हर्ष मन में धरै,
नान मम माम बहु धान धन अनुसरै।
जातिमद जान यह नाहि उर लाय है। भाव सौ०

ॐ ह्रीं जातिमदरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।।10।।

द्रव्य बहु लाय हूं बुद्धिबलतैं सही,
द्वीप दधि मै फिरयो माल पैदा कही।
लाभमद जान यह नाहि उर लाय है। भाव सौ०

ॐ ह्रीं लाभमदरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।।11।।

पितामह पिता मम बडे पद धार है,
द्रव्य बहु हुक्म को सकै नहि टार है।
जान यह कुलमद नाहीं उर लाय है। भाव सौ०

ॐ ह्रीं कुलमदरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।।12।।

रूप हम तनु जिसो कामतन है सही,
नैन कर शीश मुख महासुख की मही।
जान यह रूपमद नाहि उर लाय है। भाव सौ०

ॐ ह्रीं रूपमदरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।।13।।

करौं तप मास दो मास षट् मास जी,
और बहु तप करौ धारि अति सास जी।
जान यह तपमद नाहि इस भाय है।
भावसौ दर्श विशुद्धि सुखदाय है।।

ॐ ह्रीं तपोमदरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।।14।।

मो समान और में नाहि बल जानिए,
मैं बली महा प्रचण्ड अति मानिये।
जान बलमद यह नाहि उर लाय है। भाव सौ०

ॐ ह्रीं बलमदरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।।15।।

मैं पढयौ काव्य व्याकरण प्राकृत मही,
निमित ज्योतिष घनैं ग्रन्थ देखे सही।
जान यह विद्यामद नाहि जो लाय है। भाव सौ०

ॐ ह्रीं विद्यामदरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि ।।16।।

मो हुकम आज नृप पच सब मान हैं,
लोक में हम बडे और नहीं जान है।
जान अधिकार मद उर नहीं लाय है। भाव सौ०

ॐ ह्रीं अधिकारमदरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।।17।।

जाति अरु लाभ कुलरूप तप बल सही,
विद्या अधिकार मद आठ ये दुख मही।
जान दुखदाय मद अष्ट नहि लाय है। भाव सौ०

ॐ ह्रीं अष्टमदरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।।18।।

धर्म सेवन विषैं शक जो चित धरै,
नाहि निरभय थकी धर्म बिच सचरै।
जान सम्यक्त्व को दोष जो ढाय है। भाव सौ०

ॐ ह्रीं शंकादोषरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।।19।।

धर्म को सेय सुख वछ है जगत में,
तासतैं आपने किए सब शुभ हने। जान

ॐ ह्रीं कांक्षादोषरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।।20।।

देख पर वस्तु को घिन आने सही,
कर्म को ठाठ समझे नहीं उर मही। जान

ॐ ह्रीं विचिकित्सादोषरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।21।

देव धर्म गुरु जे परख बिन सेय है,
मूढबुद्धिधार ते अशुभ फल लेय हैं। जान

ॐ ह्रीं मूढदृष्टिदोषरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।।22।।

देख परदोष शठ आप मुखतैं कहै,
दोषजुत चित्त उर माँहि दुर्जन रहै। जान

ॐ ह्रीं परदोषभाषणदोषरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।23।

धर्म सेवनविषै खेद जो जिय करै,
अथिरता भाव उपजाय धर्म परिहरै। जान

ॐ ह्रीं अस्थितिकरण दोषरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।24।

जीव धरमी थकी दोष जो उर करै,
भाव वात्सल्य का सकल वो परिहरै। जान

ॐ ह्रीं अवात्सल्य-दोषरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।25।

धर्म परभावना ताहि नहि उर चहै,
देख परभावना हर्ष नाहीं लहै। जान ..

ॐ ह्रीं अप्रभावना-दोषरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।26।

दोष शकादि ये आठ मन आनिये,
इन भये नाश सम्यक तनो जानिये।
अशुभ यह जानकर नाहि हरषाय है,
भावसौं दर्श विशुद्धि सुखदाय है।।

ॐ ह्रीं शंकादि अष्टदोषरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।27।

योनिधर देव नहि प्रभुपद तिन विषैं,
तन धरै फिर मरे तिनहि प्रभुपद अखै।
जान यह आयतन दोष जो ढाय है।
भावसौ दर्श विशुद्धि सुखदाय है।।

ॐ ह्रीं कुदेवप्रशंसाआयतन-दोषरहित-दर्शनविशुद्धिमावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।28।।

प्रभुपद बिना जगदेव जे है सही,
भक्त इन ताहि लखि भला मानै वही। जान

ॐ ह्रीं कुदेवमक्त-प्रशंसाआयतन-दोषरहित-दर्शनविशुद्धिमावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।29।।

जीवघाती धरम पापकी खानि है,
जीव भोरे भजै महा शुभ मानि है। जान

ॐ ह्रीं कुधर्म-प्रशसाआयतन-दोषरहित-दर्शनविशुद्धिमावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।30।।

जीवघाती धरम सेवका जोय है,
ताहि परशसजै आयतन होय है। जान

ॐ ह्रीं कुधर्मसेव प्रशंसाआयतन-दोषरहित-दर्शनविशुद्धिमावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।31।।

विषय उपदेश गुरु क्रोध मानी सही,
तिनहि गुरु मान जे चहैं शुभकी मही। जान

ॐ ह्रीं कुगुरुप्रशंसाआयतन-दोषरहित-दर्शनविशुद्धिमावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।32।।

कुगुरु के भक्त जो सेव नीकी करै,
देख ताको भलो जान शोभा धरै। जान

ॐ ह्रीं कुगुरुभक्तप्रशंसाआयतन-दोषरहित-दर्शनविशुद्धिमावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।33।।

देव की परख बिन प्रभु पद जो कहै,
मूढता देव की जीव सो सिर लहै।
जान यह मूढता दोष जो ढाय है,
भाव सो दर्शविशुद्धि सुखदाय है।।

ॐ ह्रीं देवमूढता-दोषरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।34।

दया बिना धर्म की सेव में जो परै,
परख बिन धर्म जो सेव को अनुसरै। जान

ॐ ह्रीं धर्ममूढ़ता रहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।।35।।

परख बिन सेवा जो गुरुतनी ठानिये,
आप सिर भूल का अशुभ बध आनिये। जान

ॐ ह्रीं गुरुमूढ़ता-दोषरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि ।36।

आठ मद आठ शकादि मल जानिये,
आयतन जान षट् मूढ त्रय मानिये।
दोष पच्चीस इन रहित सो भाय है,
भाव सो दर्श विशुद्धि सुखदाय है।।

ॐ ह्रीं गुरुमूढता-दोषरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि ।37।

गीता छन्द

द्यूत आमिष सुरा गनिका, खेट चोरी जानिये,
परनार वाछा सात है, ये व्यसन अघफल मानिये।
जो तजै, साँचौ दृष्टि ताकै, होय सब सुख आय जी,
जो धरै दर्श विशुद्धि भावन, भलो जिनपद पाय जी।।

ॐ ह्रीं सप्तव्यसनरहित-दर्शनविशुद्धि-भावनायै अर्घ्यं नि.।38।

जो द्यूत रमनौ चित्त वाछै, पाय दुख अघ खेत है।
ये सात व्यसन जू मूल जानौ जगत निंदा देत है।।
जान खोटे तजै याकों, भाव समता लाय जी। जो धरै

ॐ ह्रीं द्यूतव्यसनरहित-दर्शनविशुद्धि-भावनायै अर्घ्यं नि.।।39।।

सप्त धातन माँहि निदक, महाघिनकारी सही।
ता देखते ही असन तजिये खाय सो जिय अघ मही।।
जिये घात बिन नहि होय आमिष, त्यागनौ बुध लाय जी।
जो धरै दर्श विशुद्धि भावन, भलो जिनपद पाय जी।।
ॐ ह्रीं आमिषव्यसनरहित-दर्शनविशुद्धि-भावनायै अर्घ्यं नि.।40।
जो लहै दारू तजै सुध बुध, ज्ञान सकल नसाय है।
या अमल माहीं मात भगनी, नार भेद न थाय है।।
यह व्यसन दारू हरै जुगभव, तजै पुण्य लसाय जी। जो धरै
ॐ ह्रीं मदिराव्यसनरहित-दर्शनविशुद्धि-भावनायै अर्घ्यं नि ।41।
यह जान गणिका जगत-पातल, झौट मम बुधजन कही।
जो रमै यातै धरम खोवै, महा अघ की सो मही।।
यह व्यसन दुखदा जान त्यागै, महापुण्य फल लाय है।
जो धरै दर्शविशुद्धि भावन, भलो जिनपद पायजी।।
ॐ ह्रीं गणिकाव्यसनरहित-दर्शनविशुद्धि-भावनायै अर्घ्यं नि.।42।

खड़गा छन्द

आप सम जीवकौ घात कैसे करै घाव किम देय आयुध तनौ जी,
कटते काय कपाय मब आपकी दुख थकी रोय कहै मति हनौ जी।
मोधिया जीव हति भल या पारधी ऊँच कुल जीवकौ न सतावै।
त्याग खेटक व्यसन दया उर में धरै दर्श विशुद्धि भाव सो नाम पावै।।
ॐ ह्रीं आखेटव्यसनरहित-दर्शनविशुद्धि-भावनायै अर्घ्यं नि.।43।
दाम परका हरै हरष मन मैं भरै पाप निज सिर धरै मूढ प्रानी।
चोर के भाव छलछिद्र अधिका धरै काय तज दुख लहै हीन ज्ञानी।।
व्यसन यह घोर नर्क देय घनघोर दुख लहै अधिकाय नहीं पार पावे।
त्याग यह व्यसन परिणति को शुद्धकरै विशुद्ध भाव सो नाम पावै।।
ॐ ह्रीं चोरव्यसनरहित-दर्शनविशुद्धि-भावनायै अर्घ्यं नि.।44।

नारि पर चहै सो सीस अघ लहै जो यह त्यागै सो धर्म राह जानै।
देख परतिया चित मात सम किया, बहन सम जान उर ज्ञान आनै।।
व्यसन उर नाहि ते शुद्ध चित माहि, जिय होय समभाव शिव राह जावै।
त्याग पर नारि का व्यसन शुद्धमन करै, दर्शशुद्धि भाव सो नाम पावै।।

ॐ ह्रीं परदारव्यसनरहित-दर्शनविशुद्धि-भावनायै अर्घ्यं नि.।45।

व्यसन ये सात नर्क सात के प्रीतमा धर्म को दोष या जान त्यागै।
होय जिनदास उरधार शिव आस भव्य धर्मधार आप चित माहि जागै।।
ते जग जस लहै सफल भवतैं रहे नाहि जे व्यसन वश आप आवै।
भेद विज्ञानतै आप पर भिन्न लखै दर्शशुद्धि भाव सो नाम पावै।।

ॐ ह्रीं सर्वव्यसनरहित-दर्शनविशुद्धि-भावनायै अर्घ्यं नि.।।46।।

बेसरी छन्द

नहि सक्रान्ति दान सरधाना, जानै आतमरूप पिछाना।
नाहि अतत्व भाव उर लावै, सो सत्दर्शन पूज कहावै।।

ॐ ह्रीं सक्रान्तिदिवसदानदोषरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।47।।

अगनि सेव नाही मन लावै, इसकी दया ठान सम थावै, नाहि

ॐ ह्रीं अग्निसेवारहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।।48।।

ग्रह नक्षत्र पूजा नहि आनै, पूजै त्रिभुवनपति सुख मानै। नाहि

ॐ ह्रीं ग्रहनक्षत्रसेवारहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।49।

गोमूत्रादि पूँछ नहि पूजै, अघ कारजतै मन वच धूजै। नाहि

ॐ ह्रीं गोमूत्रादिसेवारहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।।50।।

रतन पाषाण सेवाता नाहीं, जानै पृथ्वीकाय सु ठाहीं। नाहि

ॐ ह्रीं रत्नपाषाणदिसेवारहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।51।

भूमिसेव पूजा परिहरै, पूजै, जिन समता उर धारै। नाहि

ॐ ह्रीं भूमिसेवारहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।।52।।

पर्वत पतन थकी सुख होई, यह भ्रम उर मे लहै न कोई।
नाहि अतत्व भाव उर लावै सो सत्दर्शन पूज कहावै।।

ॐ ह्रीं पर्वतपतनरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।।53।।

नदी-स्नान शुद्ध नहि मानै, ज्ञान-स्नान शुद्ध सरधानै। नाहि

ॐ ह्रीं नदीस्नानश्रद्धानरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।54।

अगनि पाततै मुक्ति न मानै, मुक्ति एक शुध अनुभव जानै।
ज्ञान स्वभाव आप उर भावे, सो सत्दर्शन पूज कहावै।।

ॐ ह्रीं अग्निपातरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।।55।।

कुगुरु सेव श्रद्धा नहि जाकै, वीतराग गुरु मानै ताकै।
ताकौ आतमज्ञान सु भावै, सो सत्दर्शन पूज कहावै।।

ॐ ह्रीं कुगुरुसेवारहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि ।।56।।

गज तुरग वृष सेव न ठाने, सेवै जिनपद भक्ति सु आनै।
भेद विज्ञान राह समझावे, सो सत्दर्शन पूज कहावै।।

ॐ ह्रीं वाहनसेवारहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।।57।।

जीवघात शस्तरतै होई, सो शस्तर पूजै नहि सोई।
आतम सेवा तिनकौ भावै, सो सत्दर्शन पूज कहावै।।

ॐ ह्रीं शस्त्रसेवारहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।।58।।

हिसा देव न पूजै भाई, वीतराग को जजै सु जाई।
जो सॉची सरधा उर भावै, सो सत्दर्शन पूज कहावै।।

ॐ ह्री हिसादेवसेवारहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।।59।।

निशि अहार त्याग करि सारा, आतम अनुभौ भाव विचारा।
भेद ज्ञानतै निज पर भावै, सो सत्दर्शन पूज कहावै।।

ॐ ह्रीं निशा-आहाररहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।60।

बिन छाने जलको नहि पीवे, करुणा कर समतातैं जीवे।
चेतन आप अन्य जड भावै, सो सत्दर्शन पूज कहावै।।

ॐ ह्रीं जलगालनविधिसहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।61।

खाय न फल कठूबरा सोई, करुणाधर अचार शुभ होई।
निराकार फलको तो भावै, सो सत्‌दर्शन पूज कहावै।।

ॐ ह्रीं कठूंबरभक्षणरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।।62।।

नाहि उदम्बर फलको लेवै, अभक्ष जान सब ही तज देवै।
परतै विरचि आप में आवै, सो सत्‌दर्शन पूज कहावै।।

ॐ ह्रीं उदम्बरफलअहाररहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।63।

ऊमर फल अभक्ष्य नहि खाना, शुभ आचारी दया निधाना।
चेतन देव आपसम भावै, सो सत्‌दर्शन पूज कहावै।।

ॐ ह्रीं ऊमरफलभक्षणरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।64।

वटफल जीवराशि नहि खइये, दया धार उर समता लहिये।
तन विरक्त शुद्धातम भावै, सो सत्‌दर्शन पूज कहावै।।

ॐ ह्रीं वटफलभक्षणरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।65।

पीपलफल जगम थलरासी, खाय नही तिन करुणा भासी।
ममत छाँडि जग आतम ध्यावै, सो सत्‌दर्शन पूज कहावै।।

ॐ ह्रीं पीपलफलभक्षणरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।66।

भक्षी वमन निद्य मधु जानौ, शुभ आचारीको नहि खानौ।
रसना लोलुप तज हरषावै, सो सत्‌दर्शन पूज कहावै।।

ॐ ह्रीं मधुभक्षणरहित-दर्शनविशुद्धिभावनायै अर्घ्यं नि.।।67।।

गीता छन्द

दरशनविशुद्धि भावना, शुभ दोष बिन निरमल सही,
यह मोक्ष वट का बीज नीका, या बिना नहि शिवमही।
या देय तीरथ नाथ पदवी, महा मगल दाय है,
सो जजों दरशन भावना, शुभ काय मन वच लाय है।।

ॐ ह्रीं सकलदोषरहित-दर्शनविशुद्धि-भावनायै अर्घ्यं नि ।।68।।

जयमाला (पञ्चममंगल की चाल)

भो भवि दर्शनविशुद्धि भावना जानिये,
दोष पचीस आदि नहि तामै मानिये।
सब गुन मे यह भावना पावन सार है,
सकल गुणन की खान मान भवतार है।
तारै जु भवदधि नाव जैसे करम सकट टारनी,
दे मोक्ष थानक पूज्य त्रिभुवन काज वांछित सारनी।
याकी जु महिमा कहे कवि किम पार गुण ताके नहीं,
गम्य ज्ञानी सकल जानैं और को मुखतै कही।।1।।
यह शुभ भावन जिनपद दानी जानिये,
मोक्ष वृक्ष को बीज मिथ्यातम हानिये।
याही के परभाव समोसर्ण थाय है,
होत कल्याणक पाँच साँच शिव पाय है।।
पाय पञ्चकल्याण शिव ले फेर जग नहि आय है,
तन छाँड जड चिद्रूप निवसै ज्ञान केवल पाय है।
यह सकल महिमा जान याकी भले फलकी दाय है,
तातैं सु सेव विशुद्ध दरशन भक्ति उर बहु लाय है।।2।।
अब यह दर्शविशुद्धि निरमल भावना,
भाये वछित मन फल नीका पावना।
षोडशकारण माहीं कारण सार है,
याही तैं सब धर्म महा फलकार है।।
फलकार या बिन धर्म नाहीं करै बिरथा जाय जी,
बहुदान तप तन कष्ट सजम नाहि शिवफल दाय जी।

तातैं जु शिवमग लोभिया जे सुरति, भाषित सौ करौ,
ए भावना शुभ कार्य मन वच आपनै हिरदै धरौ।।3।।
मै भी मफल आप भव तबही मानिहौं,
दरशविशुद्धि भावन उर में आनिहौं।
या भावन भाये बिन भव वन में फिरयो,
मानि मानि निज ठास शीश पै अघ धरयौ।।
धरयौ जु सिरपै पाप समझै बिना दुख तातै लए,
अब काल तिनको निकट आयो भाव हम ऐसे भए।
भावै जु दर्श विशुद्धि मन वच काय जोग लगाय जी,
ता किया सबही धर्म नीको होय इस समझाय जी।।5।।

दोहा-दर्श विशुद्धि भावना, भावो मनवच काय।
तो बॉधो पद तीर्थ को, और अधिक कहा गाय।।5।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धि-भावनायै पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

(2) विनय सम्पन्नता भावना पूजा

मुनियानंदी की चाल

विनय सब धर्म को भूल जानो सही,
विनय बिन धर्म विधि सकल निष्फल कही।
जान इम थापना थाप इहाँ भायजी,
विनय सम्पन्नता जजौं मन लायजी।।

ॐ ह्रीं विनयसम्पन्नता-भावने ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानं।

ॐ ह्रीं विनयसम्पन्नता-भावने ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।।

ॐ ह्रीं विनयसम्पन्नता-भावने ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।।

नीर गगातनो निर्मलो लाइये,
कनक झारी विषै धार शुभ पाइये।
पूजिये विनयतै विनय भावन सही,
तासफल निरमलो होय उर जिन कही।।

ॐ ह्रीं विनयसम्पन्नता-भावनायै जलं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

बावनो चन्दना नीर घसवाइये,
रतनपातर विषै धार गुन गाइये।
पूजिये विनय तै विनय भावन सही,
तासफल चार गति पाप विनसै सही।।

ॐ ह्रीं विनयसम्पन्नता-भावनायै चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

खण्ड बिन ऊजरे मुकतफल से कहै,
तदुला थालभर आपनै कर लहै।
पूजिये विनय तैं विनय भावन सही,
तासतै अखय फल होय जिनधुनि कही।।

ॐ ह्रीं विनयसम्पन्नता-भावनायै अक्षतान् नि. स्वाहा।।3।।

देवतरु के भले फूल शुभ आनिये,
माल बहु गूँथ उर भक्ति मन ठानिये।
पूजिये विनय तै विनय भावन सही,
तासफल कामजुर नाश हो इम कही।।

ॐ ह्रीं विनयसम्पन्नता-भावनायै पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

भेलि षट्रमा नैवेद्य करनौं भलौ,
भक्ति भावन किये थाल में धर चलो।
पूजिये विनय तैं विनय भावन सही,
भूख की वेदना नाश ताफल रही।।

ॐ ह्रीं विनयसम्पन्नता-भावनायै नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

दीप मणि रतन के ज्योति तम नाश जी,
कनक भरि थाल ले आरती भास जी।
पूजिये विनय तै विनय भावन सही,
नाश अज्ञान कर ज्ञान प्रगटै मही।।

ॐ ह्रीं विनयसम्पन्नता-भावनायै दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

धूप वह्नीविषैं अगर की जारिये,
गध महा सुभग धर हाथ निज धारिये।
पूजिये विनय तैं विनय भावन सही,
आठ कर्म दहन होय वानि जिन इम कही।।

ॐ ह्रीं विनयसम्पन्नता-भावनायै धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

सुभगफल लाय नारेल बादाम जी,
आदि खारक घने महा शुभ ठाम जी।
पूजिये विनय तै विनयभावन सही,
मोक्ष फल सो करै पूजिफल धुनि कही।।

ॐ ह्रीं विनयसम्पन्नता-भावनायै फल निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

नीर गध अखत पुष्प लेय चरु दीप जी,
धूप फल अर्घ तैं कर्म सब लीप जी।
पूजिये विनय तैं विनयभावन सही,
तासफल पूज्यपद लहै निश्चय कही।।

ॐ ह्रीं विनयसम्पन्नता-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

प्रत्येक अर्घ अडिल्ल छन्द

पढै विनयतैं पाठ विनयतैं जो सुनैं,
धरै विनयतैं पुस्तक पुट्ठा शुभ ठनैं।
अक्षर चाँदी कनक लिखावै सार जी,
विनयसार शुभ ज्ञान तनौं अधिकार जी।।

ॐ ह्रीं ज्ञानविनय-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

दरशन शुध सरधान देखनौ जानिये,
अवलोकन गुणसार विनयतै आनिये।
श्रद्धा दृढ उरमाहि विनय सो सार जी,
विनयसार शुभ ज्ञान तनों अधिकार जी।।

ॐ ह्रीं दर्शनविनय-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

जतन समिति का करै गुपति पालै भली,
महावरत शुध करै विनययुत सब मिली।
करै जतनतै सोय विनयविधि है सही,
चारित त्रयदश सार जजौ विधितै मही।।

ॐ ह्रीं चारित्रविनय-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

यथायोग्य सब ठाम विनय सबको करै,
देव धर्म गुरु सार भली थुति उच्चरै।
पूजै चाव कराय भाव शुभ लाय जी,
सो उपचार सु विनय महा सुखदाय जी।।

ॐ ह्रीं उपचारविनयसम्पन्नता-भावनायै अर्घ्यं नि. स्वाहा।।4।।

विनय चार परकार और बहुभेद है,
पूजै जो मन लाय भली तिस टेव है।
विनय भावना सार जगत में जानिये,
सो पूजै मनलाय बडी गुन खानिये।।

ॐ ह्रीं विनयसम्पन्नता-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

जयमाला

बेसरी छन्द

विनयभावना बहु सुखदाई, विनय भावबिन भव भरमाई।
धर्ममूल सब विनय है भैया, इमलखि विनय पूज सिरनैया।।1।।

सोलह कारण में सरदारा, विनय भावना है अघजारा।
विनय सकल को है सुखदैया, इमलखि विनय पूज सिरनैया।।2।।
विनयभाव गुरुका जो कीजै, तो शुभ होय पाप सब छीजै।
विनय थकी सबने सुखपैया, इमलखि विनय पूज सिरनैया।।3।।
विनय मानगिरि हरन प्रचण्डा, वज्रदण्ड सम है बलबडा।
अविनय वन कौ वह्नि भैया, इमलखि विनय पूज सिरनैया।।4।।
जगमें विनय धर्म परधाना, विनय सर्वका राखै माना।
विनय जिसा वल्लभ नहि भैया, इमलखि विनय पूज सिरनैया।।5।।
तातैं विनयभाव उरलावो, तो सब जगमें महिमा पावो।
सबमैं विनय मुकति गुन पैया, इमलखि विनय पूज सिरनैया।।6।।
विनय सकल दोषन को खोवै, विनय मानमल को ले धोवै।
विनय ज्ञानतरु को पय पैया, इमलखि विनय पूज सिरनैया।।7।।
कीजे विनय देव गुरु केरा, धर्म की विनय हरै भवफेरा।
विनय थकी जग विनय करैया, इमलखि विनय पूज सिरनैया।।8।।
विनय भाव ताकै उर जागै, जा उर कुटिल भाव नहि लागै।
विनय भाव सब दोष हरैया, इमलखि विनय पूज सिरनैया।।9।।
विनय इत्यादि बहुत गुणधारी, सब विधि मगल विनय उचारी।
तातै और घनी कहा कहिया, इमलखि विनय पूज सिरनैया।।10।।

दोहा-तीर्थंकरपद करनको, चतुर महासुखदाय।
भवदधि तारन नावसी, विनय भावना भाय।।11।।

ॐ ह्रीं विनय-भावनायै पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

(3) शीलव्रतेष्वनतिचार भावना पूजा

अडिल्ल छन्द- पञ्चबाणतैं रहित बाडि नवजुत सही,
सहस अठारह अतिचार जामैं नहीं।

सर्व दोषतैं रहित शील सो भावना,
ताकौ इह शुध भाय थापि सिर नामना।।

ॐ ह्रीं सर्वदोषरहित-शीलव्रतेष्वनतिचारभावने अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानं।

ॐ ह्रीं सर्वदोषरहित-शीलव्रतेष्वनतिचारभावने अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं सर्वदोषरहित-शीलव्रतेष्वनतिचारभावने अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

अडिल्ल- पदम कुण्डको नीर सुनिर्मल लायकै,
झारी रतन भराय भक्ति मन भायकै।
शीलव्रतेषु भाव पूज हौ सार जी,
जनम जरा मल जाय होय भव पार जी।।

ॐ ह्रीं शीलव्रतेष्वनतिचार-भावनायै जलं निर्वपामीति स्वाहा।1।

चन्दन बावन पावनकारी सोहनौं,
निर्मल जल घसिलाय गंध मन मोहनौं।
शीलव्रतेषु भाव पूज भवि भाय जी,
ता पूजाफल ताप जगत दुखजाय जी।।

ॐ ह्रीं शीलव्रतेष्वनतिचार-भावनायै चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।2।

अक्षत उज्ज्वल नखशिख शुद्ध बखानिये,
सो ले उज्ज्वल भाव भक्ति मन आनिये।
शीलव्रतेषु भाव पूज्य सुखदाय है,
ताके पूजे दोषरहित पद पाय है।।

ॐ ह्रीं शीलव्रतेष्वनतिचार-भावनायै अक्षतान् नि. स्वाहा।।3।।

देवद्रुम के फूल गंध रंग जुत सही,
कर तिनकी शुभ माल हाथ अपने लही।

शीलव्रतेषु भाव पूज्य सुखदाय है,
ताके पूजे दाह कामजुर जाय है।।

ॐ ह्रीं शीलव्रतेष्वनतिचार-भावनायै पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।4।

नानारस नैवेद्य भेद बहु लाइये,
मोदक फेणी सार थाल भरवाइये।
शीलव्रतेषु भावपूज्य सुखदाय है,
भूखरोग क्षय होय निराकुल थाय है।।

ॐ ह्रीं शीलव्रतेष्वनतिचार-भावनायै नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।5।

रतनदीप भरि थाल जोति परकासिका,
धारि आरती हाथ करम-तम नासिका।
शीलव्रतेषु भाव पूज्य सुखदाय है,
मोहतिमिर हो नाश इसो फल पाय है।।

ॐ ह्रीं शीलव्रतेष्वनतिचार-भावनायै दीपं निर्वपामीति स्वाहा।6।

धूप दशाग बनाय भक्ति उर लाय है,
अगनि माहि ता जारि महासुखपाय है।
शीलव्रतेषु भाव पूज्य सुखदाय है,
कर्म अष्ट क्षय होय निरजन थाय है।।

ॐ ह्रीं शीलव्रतेष्वनतिचार-भावनायै धूपं निर्वपामीति स्वाहा।7।

श्रीफल सार बदाम दाख पिस्ता सही,
खारक आदि अनेक और फल सुख मही।
शीलव्रतेषु भाव पूज्य सुखदाय है,
ताके पूजे मोक्ष महाफल पाय है।।

ॐ ह्रीं शीलव्रतेष्वनतिचार-भावनायै फलं निर्वपामीति स्वाहा।8।

जल चन्दन अक्षत पुष्प चरु दीपक सही,
धूपफला द्रव्य आठ जोरि अरघै ठही।

शीलव्रतेषु भाव पूज्य सुखदाय है,

सिद्ध लोक शुध थान तासफल पाय है।।

ॐ ह्रीं शीलव्रतेष्वनतिचार-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।9।

प्रत्येक अर्घ (चौपाई)

शील भाव नव बाड समेत, सो शिव नारी दे उर चेत।

आठ द्रव्य कर अर्घ बनाय, पूजौं शीलव्रतेषु भाय।।

ॐ ह्रीं नवबाड़सहित-शीलव्रतेष्वनतिचार-भावनायै अर्घ्यं नि।।1।

राग सहित तियमन नहि जोय, ताकै शील भावना होय।

सो हौ आठों द्रव्य मिलाय, पूजौ शीलव्रतेषु भाय।।

ॐ ह्रीं रागसहितस्त्रीतनअवलोकनत्याग-शीलबाड़सहित-शीलव्रतेष्वनतिचार-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

राग वचन मुखतै नहि कहै, सुनिकै ताहि राग नहि लहै।

ए लख शील दोष नहि लाय, सो हौं शील जजौं सिरनाय।।

ॐ ह्रीं रागवचनरहित-शीलबाड़सहित-शीलव्रतेष्वनतिचार-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

पूरब भोग न चितै सोय, ताके शील बरत दृढ होय।

शीलभावना सब सुखदाय, सो हौ शील जजौ सिरनाय।।

ॐ ह्रीं पूर्वभोगचिन्तारहित-शीलबाड़सहित-शीलव्रतेष्वनतिचार भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

भोजन गृष्ट मेवादि न लेय, दूध घिरत पै भाव न देय।

शील भावना सो दिढ लाय, सो हौं शील जजौ सिरनाय।।

ॐ ह्रीं गरिष्टभोजनरहित-शीलबाड़सहित-शीलव्रतेष्वनतिचार भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

पट भूषणतैं तन श्रृंगार, करै न शीलवरत को धार।

तानै यह व्रत सुरतरु पाय, सो हौं शील जजौं सिरनाय।।

ॐ ह्रीं तनश्रृंगाररहित-शीलबाड़सहित-शीलव्रतेष्वनतिचार-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

नारी जा पलग पै सोय, तहँ नहि सोवे व्रतधर होय।
या फल जीव सुरग शिव पाय, सो हौं शील जजौं सिरनाय।।

ॐ ह्रीं स्त्रीपलंगपरशयनरहित-शीलबाड़सहित-शीलव्रतेष्वनतिचार भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

काम कथा न करैं मुख सोय, दे चित कथा काम नहि जोय।
ऐसो वरत शील सुखदाय, सो हौ शील जजौ सिरनाय।।

ॐ ह्रीं कामकथारहित-शीलबाड़सहित-शीलव्रतेष्वनतिचार- भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

पेट धाप भोजन नहि खाय, ताकै शीलवरत मन आय।
शीलदोष बिन सो शिवदाय, सो हौ शील जजौं सिरनाय।।

ॐ ह्रीं उदरभरभोजनरहित-शीलबाड़सहित-शीलव्रतेष्वनतिचार भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

काम चाहतै सोच बढाय, उपजे दुख चित धीर न पाय।
ये तज शीलभाव सुध भाय, सो हौं शील जजौं सिरनाय।।

ॐ ह्रीं कामचाहरहित-शीलबाड़सहित-शीलव्रतेष्वनतिचार- भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।10।।

हो सताप कामवश सोय, तो वेदनतैं अति दुख होय।
यो तजि शुद्ध शील मन भाय, सो हौं शील जजौ सिरनाय।।

ॐ ह्रीं संतापकामबाणरहित-शीलबाड़सहित-शीलव्रतेष्वनतिचार भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।11।।

कामबाण ताके मन सोय, मन उदास उच्चाटन होय।
यो तजि शुद्धशील मनभाय, सो हौं शील जजौं सिरनाय।।

ॐ ह्रीं उच्चाटनकामबाणरहित-शीलबाड़सहित-शीलव्रतेष्वनतिचार भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।12।।

कामबाण वश सुधि विसराय, तावश और न काज सुहाय।
या बिन शीलभाव सुखदाय, सो हौ शील जजौ सिरनाय।।

ॐ ह्रीं वशीकरणकामबाणरहित-शीलबाड़सहित-शीलव्रतेष्वनतिचार-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।13।।

कामबाण मोहित चित सोय, ताकौ हौल दिला चित होय।
या बिन शील शुद्ध जे थाय, सो हौ शील जजौ सिरनाय।।

ॐ ह्रीं मोहनकामबाणरहित-शीलबाड़सहित-शीलव्रतेष्वनतिचार-भावनायै अर्घ्यं नि.।।14।।

ये ही पॉच काम के बाण, लोकीक शील की हाण।
इन बिन भाव शील हितदाय, सो हौ शील जजौ सिरनाय।।

ॐ ह्रीं लौकिकपञ्चकामबाणरहित-शीलबाड़सहित-शीलव्रतेष्वनतिचार-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।15।।

अडिल्ल- अब सुन पञ्च कहे श्रुतिवाणा सु काम के,
शील हरण को सूर नहि किस आनि के।
यातैं रहित सुशील शुद्ध मनभाय है,
सो मै पूजौ मनवचकाय लगाय है।।

ॐ ह्रीं पञ्चबाणकामरहित-शीलबाड़सहित-शीलव्रतेष्वनतिचार-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।16।।

कामबाण करि पीडित चित तिस होय है,
देख तिया मन मुलकन हास्य बदोय है।
या दूषण तैं रहित शील शुध भाय है,
सो मैं पूजौं मनवचकाय लगाय है।।

ॐ ह्रीं मुलकनकामबाणरहित-शीलबाड़सहित-शीलव्रतेष्वनतिचार-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।17।।

बार-बार तिय देखन की बाछा रहै,
और न कछु सुहावै अवलोकन चहै।
ऐसे मलतै रहित शील शुध भाव है,
सो मैं पूजौ मनवच काय लगाव है।।

ॐ ह्रीं अवलोकनकामबाणरहित-शीलबाड़सहित-शीलव्रतेष्वनतिचार-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।18।।

देख नारि की तरफ हास्य चितको करै,
कामवचन तन ठान घनौ कौतुक धरै।
ऐसे अरितै रहित शील शुध भाव है,
सो मै पूजौ मनवचकाय लगाव है।।

ॐ ह्रीं हास्यकामबाणरहित-शीलबाडसहित-शीलव्रतेष्वनतिचार-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।19।।

सैनासैन बतावन कामी चित रहे,
नैन बाणतै हाथ करन किरिया लहै।
ऐसे औगुण रहित शील जो भाय है।
सो मैं पूजौ मनवचकाय लगाव है।।

ॐ ह्रीं सैनबतावनकामबाणरहित-शीलबाड़सहित-शीलव्रतेष्वनतिचार-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।20।।

काम सतावै ताहि जीव उर इम रहै,
मद हास्य उर लहै देख तिय सुख चहै।
ऐसे पातक रहित शील जो भाव है,
सो मैं पूजौं मनवचकाय लगाव है।।

ॐ ह्रीं मंदहास्यकामबाणरहित-शीलबाड़सहित-शीलव्रतेष्वनतिचार-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।21।।

नारितनौ सत्कार घनौ आदर करे,
नाना पट भूषण भोजन दे खुशी धरै।
ऐसे दूषण रहित शील शुध भाव है,
सो मै पूजौ मनवचकाय लगाव है।।

ॐ ह्रीं स्त्रीसत्कारदोषरहित-शीलबाड़सहित-शीलव्रतेष्वनतिचार-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।22।।

नारि मिलन की चाह सदा उर माहि जी,
कामबाण यह जान महा दुखखान जी।
ऐसे अशुभ निवार शील गुनदाय है,
सो मैं पूजौ मनवचकाय लगाव है।।

ॐ ह्रीं स्त्रीमिलापकामबाणरहित-शीलबाड़सहित शीलव्रतेष्वनतिचार-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।23।।

मन वच काय लगाय काम ऐसो करै,
तातैं वीरज क्षरै हरष मनमे धरै।
या दूषण तै रहित शील शुभ भाव है,
सो मै पूजौं मनवचकाय लगाव है।।

ॐ ह्रीं वीर्यक्षयअतीचाररहित-शीलबाड़सहित-शीलव्रतेष्वनति-चार भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।24।।

दोहा-इत्यादिक दूषण रहित, शीलव्रतेषु भाव।
तीरथपद यातै मिलैं, मैं पूजो करि चाव।।

ॐ ह्री सर्वदोषरहित-शीलव्रतेष्वनतिचार-भावनायै महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।25।।

जयमाला

दोहा-सकल धर्म यातै रहै, या बिन धर्म अधर्म।
तातैं सब में शील शुभ, काटन खोटे कर्म।।1।।

मुनियानंदी चाल

शील सब धर्म को मूल मन आनिये,
शीलगुण पूज्य सुरलोक तै जानिये।
शीलसौ सार गुण और नहि पाय है,
मै नमौ शीलगुण शीश कर लाय है।।2।।
शील ही सर्वदा सॉच शिवराह है,
शीलगुण कामकी हरत सब दाह है।
शील जगपूज्य मुनिराज इन ध्याय है,
मै नमों शील गुण शीश कर लाय है।।3।।
शील शिवराह को वाहना सार जी,
शील ही मोक्ष दे करै भवपार जी।
शील भव सागरा तार नौकाय है,
मै नमौ शीलगुण शीश कर लाय है।।4।।
शील सरदार सब धर्म अगमे सही,
शीलरवि पापतरु हरन असि पाय है,
मै नमौ शीलगुण शीश कर लाय है।।5।।
शील कपि काम बन्धन भली सॉकरी,
शील मद मदन गज हरन हरि बाकरी।
शील धर्म केतु का दण्ड शुभ भाय है,
मै नमौ शील गुण शीश कर लाय है।।6।।
शील सम भाव का दाव कर चाह है,
शील सरिता हरै काम मल भाव है।
शील धर्मचक्र की किरण सुखदाय है,
मैं नमौं शीलगुण शीश कर लाय है।।7।।
शील शुभ शरण अरु करण मगल सही,
शील जिनदेव पदवी भली दे कही।

शील शाश्वत थला सर्वदा दाय है,
मैं नमौ शील गुण शीश कर लाय है।।8।।
शील सौ सार सज्जन नहि कोय जी,
ता फलै सकल सुख सहज ही होय जी।
शील गुण सेवनौ शर्मदा भाय है,
मै नमौ शील गुण शीश कर लाय है।।9।।

सोरठा- शील शिरोमणि धर्म, शील शाश्वतो पद करै।
शील हरै सब कर्म, शील जजौ यातैं सही।।10।।

ॐ ह्रीं शीलव्रतेष्वनतिचारभावनायै पूर्णार्घ्यं नि स्वाहा।।3।।

(4) अभीक्ष्ण-ज्ञानोपयोग भावना पूजा।।

करै निरन्तर ज्ञान अभ्यास, ज्ञान थकी शिव मारग भास।
ज्ञान भावना मगल दाय, सो मै थाप जजौ थुति लाय।।

ॐ ह्रीं ज्ञानोपयोग-भावने ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वान।

ॐ ह्रीं ज्ञानोपयोग-भावने ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ· ठः स्थापन।

ॐ ह्रीं ज्ञानोपयोग-भावने ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

चौपाई

क्षीरोदधि को निरमल नीर, कनक झारि को भर हर-पीर।
पूजों ज्ञान भावना सार, ताफल होय जनम मृतु छार।।

ॐ ह्रीं ज्ञानोपयोग-भावनायै जलं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

चन्दन बावन पावन लाय, धार करौं उर भक्ति बढाय।
पूजौं ज्ञान भावना सार, तातैं भव आताप निवार।।

ॐ ह्रीं ज्ञानोपयोग-भावनायै चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

अक्षत उज्ज्वल मोती जिसा, खण्ड बिना शोभे शुभरसा।
पूजौ ज्ञान भावना सार, अक्षय फल की सो दातार।।

ॐ ह्रीं ज्ञानोपयोग-भावनायै अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

सुरतरु फूल गंध रंग भला, तिनकी माला लेकर चला।
पूजौ ज्ञान भावना सार, मेटन मनमथ काम विकार।।

ॐ ह्रीं ज्ञानोपयोग-भावनायै पुष्प निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

नाना रस नैवेद्य बनाय, कंचन थाल भरे शुभ लाय।
पूजौ ज्ञान भावना सार, क्षुधा रोग करने को छार।।

ॐ ही ज्ञानोपयोग-भावनायै नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

दीपक मणिका तुरत प्रकाश, कंचन थाल भरे थुति भास।
पूजौ ज्ञान भावना सार, मोह तिमिर ताफल परिहार।।

ॐ ह्रीं ज्ञानोपयोग-भावनायै दीप निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

धूप अगर चन्दन की लाय, अगनि खेवने को उमगाय।
पूजौ ज्ञान भावना सार, कर्म अष्ट जालन दुख टार।।

ॐ ह्रीं ज्ञानोपयोग-भावनायै धूप निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

श्रीफल सार बादाम महान, खारक आदि भले फल आन।
पूजौं ज्ञान भावना सार, वांछित मोक्ष फलै हितकार।।

ॐ ह्रीं ज्ञानोपयोग-भावनायै फल निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

जल चन्दन अक्षत पुष्प जेय, चरु दीपक अरु धूप फलेय।
पूजौ ज्ञान भावना सार, अद्भुत फल दायक निरधार।।

ॐ ह्रीं ज्ञानोपयोग-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

प्रत्येक अर्घ (चौपाई)

जो मतिज्ञानपयोग सु जान, इन्द्री मनद्वारे है आन।
अधिक छतीस तीन सै भेव, इनकी मनवच करिहौ सेव।।

ॐ ही मतिज्ञानोपयोग-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

श्रुतज्ञान मय वरतै सोय, जो उपयोग घनी विध होय।
द्वादशाग के जानै भेव, इनकी मनवच करिहौ सेव।।

ॐ ह्रीं श्रुतज्ञानोपयोग-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

गीता छन्द

निमित्त ज्ञान सु आठ माहीं, मन वचन वरतैं सही।
निशदिन करैं अभ्यास तिनको, मरम को लख सब कही।।
जान ज्ञानोपयोग नीको, भली सरधा जुत गिनौ।
मै जजौं मनतन वैन शुध कर, अज्ञानतम ताफल हनौं।।

ॐ ह्रीं अष्टनिमित्त-श्रुतज्ञानोपयोग-भावनायै अर्घ्यं नि.।।3।।

आकाश में रवि चन्द्र तारा, मेघ पटलादिक लखै।
सध्या समय के चिह्न और, अनेक बातन को अखै।।
सो होय इनके निमित सेती, शुभाशुभ सो जानिये।
अन्तरीक निमित्त उपयोग ज्ञानसु, जजौं बहु थुति आनिये।।

ॐ ह्रीं अंतरीक्षनिमित्त-श्रुतज्ञानोपयोग-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

भूमि में रतनादि कचन, धातु खान सु जान है।
इन आदि और अनेक चिह्न, सु भौम के सब थान है।।
सो लखै ज्ञानोपयोग धारी, शुभ अशुभ जानै सही।
अन्तरीक भौम निमित्त नीको, सो जजौं बहु धुनि कही।।

ॐ ह्रीं भौमनिमित्त-श्रुतज्ञानोपयोग-भावनायै अर्घ्यं नि.।।5।।

मनुष तिर्यंच देह के शुभ, अशुभ चिह्न सु जानिये।
रस प्रकृति रुधिरादिक सु लखिकै, भली बुरी बखानिये।।
यह अग निमित्त जु ज्ञान अद्भुत, महासुख उपजाय जी।
मैं जजौ ज्ञानोपयोग ऐसो, भलो अरघ मिलाय जी।।

ॐ ह्रीं अंगनिमित्त-श्रुतज्ञानोपयोग-भावनायै अर्घ्यं नि.।।6।।

सुन शब्द नर तिर्यच केरा, शुभाशुभ जाने सही।
खर शब्द घूघू काक स्याल सु, मारसा जो धुन कही।।
इन आदि वच सुनि कहे मुखदुख, सुर निमित्त सु जानिये।
मै जजौ यह उपयोग ज्ञानो शीशनय थुति आनिये।।

ॐ ह्रीं सुरनिमित्त-श्रुतज्ञानोपयोग-भावनायै अर्घ्यं नि.।।7।।

जो मसा तिल सिर गाल दाढी, पॉव कर मे जाये है।
तिम निमित ज्ञान सु सकल जानै, शुभाशुभ जे होय है।।
यह ज्ञान व्यजन निमित नीको, भलो शुभ उपयोग है।
मै जजौं मनवचकाय शुध करि, जान सुखदा भोग है।।

ॐ ह्रीं व्यजननिमित्त-श्रुतज्ञानोपयोग-भावनायै अर्घ्यं नि ।।8।।

तन विषै स्वस्तिक कलश वज्र सु, मच्छ इन आदिक मही।
शुभ होय लक्षण देख इनको, शुभाशुभ भाखै कही।।
यह ज्ञान लक्षण निमित आछयो, भले फल को दाय है।
सो जजौ मनवचकाय यह, उपयोग ज्ञान सुभाय है।।

ॐ ह्रीं लक्षणनिमित्त-श्रुतज्ञानोपयोग-भावनायै अर्घ्यं नि ।।9।।

तहॉ पट आभूषण शीश कर के, उर पगो के जानिये।
तिनको सु काटै चौखरादिक, भेद तिनको आनिये।।
यह देख शुभ अरु अशुभ भाखै, भेद सुख दुख दाय जी।
यह छिन निमित्त उपयोग ज्ञानौ, जजौ मनवचकाय जी।।

ॐ ह्रीं छिन्ननिमित्त-श्रुतज्ञानोपयोग-भावनायै अर्घ्यं नि ।।10।।

जो लखैं सुपना शुभाशुभको, भेद मुखदुखजान है।
इन आदि अग अनेक समझै, सकल भेद सु आन है।।
यह ज्ञान सुपन निमित्त नीको, बडे अतिशय धार जी।
सो जजौं ज्ञानपयोग मन वच, काय सुखमय सार जी।।

ॐ ह्रीं स्वप्ननिमित्त-श्रुतज्ञानोपयोग-भावनायै अर्घ्यं नि.।।11।।

अडिल्ल- अतरीक्ष फिर भौम अग सुर व्यजना,
लक्षण छिन्न जु सुपन निमित्त वसु भ्रमहना।
इनका चितवन दिना रैनि मो भाय है,
ज्ञानपयोग सु जजौ अरघ शुभ लाय है।।

ॐ ह्रीं अष्टागनिमित्त-श्रुतज्ञानोपयोग-भावनायै अर्घ्यं नि ।।12।।

गीता छन्द

अब अवधिज्ञान विचार निशदिन, भले भाव लगाय है।
तिसरूप ही उपयोग वरतै, तत्त्व भेद सु पाय है।।
इस ज्ञानके त्रय भेद अद्भुत, मे रती सब विधि लखै।
यह जान ज्ञानपयोग अवधि सु, जजौ ज्यो सब अघ सुखै।।

ॐ ह्रीं अवधिज्ञानोपयोग-भावनायै अर्घ्यं नि स्वाहा।।13।।

यह जानि देशा-अवधि षट् विधि, कौन इस महिमा कहै।
सब लोक मे हो मूरती द्रव्य, भेद ताको सब लहै।।
इस रूप जो उपयोग वरतै, तत्त्व ज्ञान बतावता।
सो जानि ज्ञानपयोग पूजौ, भली विधि जस गावता।।

ॐ ह्रीं देशावधिज्ञानोपयोग-भावनायै अर्घ्यं नि स्वाहा।।14।।

सुन अवधि परमावधिक जानै, तास की महिमा घनी।
द्रव्यक्षेत्र काल सुभाव सबही, जान है गुण के धनी।।
जानै असख्या लोक खेतर, मूरती विधि सोय है।
मै-जजौ ज्ञानपयोग विधितैं, नही तहँ दुख कोय है।।

ॐ ह्रीं परमावधिज्ञानोपयोग-भावनायै अर्घ्यं नि. स्वाहा।।15।।

परमावधी तैं अधिक जानै, द्रव्य खेतर काल की।
सर्वावधी सो जान भविजन, छिपै नाहीं बाल की।।
जानै असख्या लोक अधिके, काल की सख्या गना।
तारूप जो उपयोग वरतै, ज्ञान सो पूजौं मना।।

ॐ ह्रीं सर्वावधिज्ञानोपयोग-भावनायै अर्घ्यं नि. स्वाहा।।16।।

जो सरल मनवचकाय किरिया, जान है त्रयकाल की।
सो ऋजु मनपरजय सुज्ञानी, पूज्य जग गुन पाल की।।
तारूप जो उपयोग वरतै, ज्ञान सुखदा सार जी।
मै जजों मनवचकाय नमि भक्ति मुखतै धार जी।।

ॐ ह्रीं ऋजुमति-मन·पर्यय-ज्ञानोपयोग-भावनायै अर्घ्यं नि।17।

सरल मन वा वक्र मनकी, शुभाशुभ जे भावना।
ते होय निज पर जीव विकलप, भेद सो सब पावना।।
जो विपुल मन पर्यय सुज्ञानी, रहै समभावन सही।
ते जजौं ज्ञानपयोग मनवच, काय नमि नमि थुति कही।।

ॐ ह्रीं विपुलमति-मन·पर्यय-ज्ञानोपयोग-भावनायै अर्घ्यं नि।18।

अडिल्ल- केवलज्ञान महान सकल विध जान है।
ज्यों ज्यों भई-रे होय, होयगी मान हैं।।
भूरति और अमूरति काल अनन्त को।
जानत सारी बात जजौं जगमित को।।

ॐ ह्रीं केवलज्ञानोपयोग-भावनायै अर्घ्यं नि. स्वाहा।।19।।

गीता छन्द

भेद और अनेक हैं सो, सकल जिन धुनि में कहै,
यहाँ अल्प से व्याख्यान माहीं कथन-प्रयोजन वरन है।
उपयोग भेद अपार जानौ, भेद को पावै सही,
वश भक्ति द्रव्य मिलाय पूजौं, ज्ञान केवल शिव मही।।

ॐ ह्रीं ज्ञानोपयोग-भावनायै महार्घ्यं नि. स्वाहा।।20।।

जयमाला

दोहा-ज्ञानाभ्यास सदा करै, मनवच काय लगाय।
अन्तर कहुं पावै नहीं, ज्ञानपयोग सु पाय।।1।।

ज्ञानपयोग निरतर ध्यावै, धरम ध्यान में काल गुमावै।
ज्ञानाभ्यास जिसा वृष नाही, सब धरमन मे यह अधिकाही।।2।।
ज्ञानाभ्यास तत्त्व बतलावै, ज्ञानाभ्यास ध्यान उपजावै।
ज्ञानाभ्यास वैराग्य बढावै, ज्ञानाभ्यास मोक्षपद पावै।।3।।
ज्ञानाभ्यास थकी जग पूजा, ज्ञानाभ्यास थकी अघ धूजा।
ज्ञानाभ्यास त्याग बुधि लावै, ज्ञानाभ्यास दोष सब ढावै।।4।।
ज्ञान गुणा कर ज्ञान बधावै, ज्ञानाभ्यास मुक्ति परणावै।
ज्ञान सकल सतन को प्यारा, ज्ञान सर्व जग माहि उजारा।।5।।
ज्ञान सूर्य मिथ्या तम नासै, ज्ञानमेघ भवतप को फाँसै।
ज्ञान सकल सशय को खोवै, ज्ञान पाप मलको सब धोवै।।6।।
ज्ञान क्रोध वह्नि को नीरा, ज्ञान तरु सजम पय वीरा।
ज्ञानाभ्यास जगत का बन्धू, ज्ञानाभ्यास हरै दुख दधू।।7।।

सोरठा- ज्ञानाभ्यास सदीव, सुखदाई ससार मे।
तातै कर भवि जीव, जो चाहै समभाव को।।8।।

ॐ ह्रीं ज्ञानोपयोग-भावनायै पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

(5) संवेग भावना पूजा।।

अडिल्ल- यो जग दुख भण्डार रोग सोगैं भरयो,
ताको लख भवि जीव भयानक चित करयो।
भव दुखतै भय खाय विरक्ति तनतै करै,
सो सवेगता थाप जजौं भव-तप हरै।।

ॐ ह्रीं संवेग-भावने! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानं।
ॐ ह्रीं संवेग-भावने ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं सवेग-भावने ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरण।

बेसरी छन्द

क्षीरोदधि का जल ले जाई, कनक झारि भर चित हरषाई।
भाव सवेग पूज हौं भाई, भव दुख बधु होय न आई।।

ॐ ह्रीं संवेग-भावनायै जल निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

चदन नीर थकी घस लाया, शुभ पातर धरि अति हरषाया।
भाव सवेग पूज हौ भाई, ता फल जग आताप नसाई।।

ॐ ह्रीं संवेग-भावनायै चन्दन निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

अक्षत मुक्ताफल सम प्यारे, हरष धारि पातर मे धारे।
भाव सवेग पूज हौं भाई, ता फल अक्षय पद उपजाई।।

ॐ ह्रीं संवेग-भावनायै अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

सुरतरु फूल लाय गध धारी, माल करी शोभा अति भारी।
भाव सवेग पूज हौ भाई, ता फल काम नाश हो जाई।।

ॐ ह्रीं संवेग-भावनायै पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

नानारस नैवेद्य बनाया, कनक पात्र भरि आनन्द पाया।
भाव सवेग पूज हौं भाई, ता फल भूख रोग नस जाई।।

ॐ ह्रीं संवेग-भावनायै नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

दीपक रतन जोत परकासी, सो भर थाल भक्ति सुख भासी।
भाव सवेग पूज हौं भाई, तातै मोह रैन नस जाई।।

ॐ ह्रीं संवेग-भावनायै दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

धूप अगर चन्दन की आनो, वह्नि खेय हरष अति मानो।
भाव' सवेग पूज हौ भाई, तातै अष्ट कर्म जरि जाई।।

ॐ ह्रीं संवेग-भावनायै धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

श्रीफल लौंग बदाम सुपारी, खारक पिस्तादिक फल भारी।
भाव सवेग पूज हौं भाई, मोक्ष ठाम ताके फल पाई।।

ॐ ही सवेग-भावनायै फल निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

जल चन्दन अक्षत पुष्प लाई, चरु दीपक फल धूप सुधाई।
भाव सवेग पूज हौ भाई, अभय धाम ताफल मिल पाई।।

ॐ ही सवेग-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

प्रत्येक अर्घ (बेसरी छन्द)

यह ससार महा भयकारा, च्यार गति दुख रूप भण्डारा।
यातै विरचि धरम दिढ लागै, सो सवेग जजौ भव भागै।।

ॐ ही ससार-भयभीत-सवेग-भावनायै अर्घ्यं नि.।।1।।

देव मरण कालै दुख पावै, ज्ञानी सो गति भूल न चावै। यातै

ॐ ह्रीं देवगतिदुःखभय-विरक्तायै सवेगभावनायै अर्घ्यं नि।2।

मानुषगति अति दुख का भारा, यातें ज्ञानी को भयकारा। यातै

ॐ ही मनुष्यगतिदुःख-विरक्तायै संवेगभावनायै अर्घ्यं नि।3।

नारक गति वेदन लख भाई, ज्ञानी पाप थकी भय लाई। यातै

ॐ ही नरकगतिदुःख-विरक्तायै सवेगभावनायै अर्घ्यं नि.।4।

पृथ्वीकाय तनै दुख भारी, छेदन भेदन अति दुखकारी। यातै

ॐ ह्रीं पृथ्वीकायदुःख-विरक्तायै सवेगभावनायै अर्घ्यं नि.।।5।।

जल के दुख की को मुख गावै, जानै जो जिय पाप कमावै। यातै

ॐ ही जलकायदुःख-विरक्तायै सवेगभावनायै अर्घ्यं नि.।।6।।

अगनिकाय दुख ही का गेहा, यातैं किम उपजै मन नेहा। यातै

ॐ ह्रीं अग्निकायदुःख-विरक्तायै संवेगभावनायै अर्घ्यं नि.।।7।।

पवनकाय में दुख अति भाई, हाथ पॉव लागै क्षय जाई। यातै

ॐ ह्रीं पवनकायदुःख-विरक्तायै संवेगभावनायै अर्घ्यं नि.।।8।।

अडिल्ल छन्द- छेदन भेदन ताडन मर्दन दुख घनै,
और महादुख जान जाय ते किम गिनै।

वनस्पति दुख जोय पाप भय चित धरै
सो सवेगता भाव जजौ भव भ्रम हरै।।

ॐ ही वनस्पतिकायदु·ख-विरक्तायै सवेगभावनायै अर्घ्यं नि।9।

एक सॉस के माहि अठारेवर मरै,
फेर काल उस माहि अठारै तन धरै।
ऐसी वेदन लख निगोदके माहि जी,
है भयभीत सु जजौ सवेग जु ठाहि जी।।

ॐ ही निगोददुःख-विरक्तायै सवेगभावनायै अर्घ्यं नि.।।10।।

दे इन्द्री लट जौक गिडोला अलसिया,
बाला कौडी शख आदि दुखमे सिया।
इनके वेदन देख चित्त भय लाय है,
सो सवेग जजौ लख अघ थर्राय है।।

ॐ ही द्विन्द्रियीदु.ख-विरक्तायै संवेगभावनायै अर्घ्यं नि ।।11।।

चीटी खटमल धान तिजूला जानिये,
और कुथवा आदि तिइन्द्री मानिये।
या गति वेदन जोय पाप तज वृष धरै,
सो सवेगता जजौ जगत भय थरहरै।।

ॐ हीं त्रीन्द्रियदुःख-विरक्तायै सवेगभावनायै अर्घ्यं नि.।।12।।

माखी मच्छर भ्रमर और टीडी सही,
डास पतगा आदि जीव चवअख कही।
इन तन वेदन जोय पाप भय लाय है,
सो सवेगता भाव जजौ वृषदाय है।।

ॐ हीं चतुरिन्द्रिदुःख-विरक्तायै सवेगभावनायै अर्घ्यं नि.।।13।।

हाथी घोडा देव मनुज नारक सही,
सिह सूर मृग आदि और पच अख कही।

ताकि उत्पत्ति मृत्यु देखि भय लाय है,
सो सवेग जजौ वृषधरि हरषाय है।।

ॐ ह्रीं पचेन्द्रियदुःख-विरक्तायै संवेगभावनायै अर्घ्यं नि.।।14।।

जनम रोग दुख करै मात उर इमि सहै,
तल सिर ऊपर पाँव लिपत मलतैं रहे।
इत्यादिक दुख जनम जान विरकत सही,
सो पूजौ सवेग भाव शिवदा मही।।

ॐ ह्रीं जन्मदुःख-विरक्तायै सवेगभावनायै अर्घ्यं नि.।।15।।

बिच्छू लाखों डसै जिसा दुख मरण का,
इनै आदि दुख और कालवश परन का।
मरन महादुख जान जीव विरकत सही,
सो पूजौं सवेग भाव शिवदा मही।।

ॐ ह्रीं मरणदुःख-विरक्तायै सवेगभावनायै अर्घ्यं नि.।।16।।

गीता छन्द

इष्ट वस्तु वियोग का दुख जगत में भरपूर है,
धन पुत्र नारि पितादि सज्जन मरणवार हुँ दूर है।
इन आदि इष्ट पदार्थ बिनसै, देख जो विरकत सही,
सो पूजि हौं सवेग भावन ताहि में यह दुख नहीं।।

ॐ ह्रीं इष्टवस्तुवियोग-दुःखरहित-संवेगभावनायै अर्घ्यं नि।17।

जो मिलै बैरी सिह सूर अरु जीव दुष्ट अनेक जी,
यह है अनिष्ट सयोग का दुख कहे तिनको टेक जी।
इन आदि कारण और दुखको जानि कै विरकत भयैं,
सो जजौं भाव सवेग मन वच तास फल बहु शिव गये।।

ॐ ह्रीं अनिष्टवस्तुसंयोग-दुःखरहित-सवेगभावनायै अर्घ्यं नि.।18।

तन रोग पीडा होय बहुती कठ तन शस्तर लगै,
पित्त साँस खास जलोदरा तन आयके पीडा जगै।
इन आदि पीडा मिलन के दुख जानके विरकत भए,
सो जजौ भाव सवेग मन वच तास फल बहु शिवगये।।

ॐ ह्रीं पीड़ासंयोगदुःखरहित-संवेगभावनायै अर्घ्यं नि.।।19।।

इन आदि कारण और दुख के जगत में पूरण सही,
तिस सहित चउगति जीव भरिए देखिये सबही मही।
हम जानि विरचे जगत सेती धर्म में अति दिढ भये,
सो जजौ भाव सवेग मनवच तास फल बहु शिव गये।।

ॐ ह्रीं अनेकदुखमय-जगत-अवलोकनरहित-सवेग-भावनायै महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।20।।

जयमाला

दोहा-अथिर दशा ससार की, देख जु भए उदास।
भये मगन निज रूप में, ते निज गुण के दास।।1।।

बेसरी छन्द

जग लख चपल भाव वैरागै, तब आतमरस माहीं लागै।
भव मे जानै दु ख अपारा, सो सवेग भाव जग न्यारा।।2।।
मात तात सुत सज्जन भाई, नारी आदि और सुखदाई।
ये सब स्वारथ के लख सारा, धर सवेग भाव जग न्यारा।।3।।
तन धन राजलक्ष्मी क्षयकारी, बिजली जिसी चपल हैं मारी।
राखी रहै न इक छिन प्यारा, धर सवेग भाव भव न्यारा।।4।।
देव इन्द्र के सुख नस जावै, खग चक्रीपद देखत ढावै।
इमलखि जगत महा दुखकारा, धर सवेग भाव भव न्यारा।।5।।
काल अनादि जगत भरमाये, नाना तनधरि अति अकलाये।
लखा न सुख सब दुख का भारा, धर सवेग भाव भव न्यारा।।6।।

पाप किए जिय नरक सिधायो, कै तिर्यञ्च विषै दुख पायो।
अब मोसर नीका है प्यारा, धर सवेग भाव भव न्यारा।।7।।
पुण्य उदय नर देव बनाया, तहँ मनवांछित बहु सुख पाया।
सो भी भए देख क्षयकारा, धर सवेग भाव भव न्यारा।।8।।
कौन महा दुख जग के भाखै, यह जिय इन्द्री सुख अभिलाखै।
तातै तजो जान क्षयकारा धर सवेग भाव भव न्यारा।।9।।
सोरठा- जग दुख रूप विचार, विरचै भवतै साधवा।
जग सुख छिनहुँ न धार सो पूजो सवेगता।।10।।
ॐ ह्री सवेग-भावनायै पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

(6) त्याग भावना पूजा।।

सोरठा- त्याग भावना सार, भवदधि नौका जानिये।
इसलखि मन वच धार, थापन कर पूजौ सही।।
ॐ ह्रीं त्याग-भावने ! अत्र अवतर अवतर सवौषट् आह्वान।
ॐ ह्री त्याग-भावने ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापन।
ॐ ह्री त्याग-भावने ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरण।

पद्धडी छन्द

जल कनक झारि धरि भाव लाय, महा उज्ज्वल क्षीर समुद्र भाय।
पूजौ सु त्याग भावन महान, ताके फल जनम जरा न जान।।
ॐ ह्री त्याग-भावनायै जल निर्वपामीति स्वाहा।।1।।
चन्दन घसि निरमल नीर लाय,
धरि कनक पात्र मे भक्ति भाय। पूजौ
ॐ ह्री त्याग-भावनायै चन्दन निर्वपामीति स्वाहा।।2।।
अक्षत मुक्ताफल मे बखान,
बिन खण्ड गध उज्ज्वल महान। पूजौ
ॐ ह्रीं त्याग-भावनायै अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

पुष्प कल्पवृक्ष गध वर्ण धार,
तिनकी करि माला भक्ति मार। पूजो

ॐ ह्री त्याग-भावनायै पुष्प निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

षट् रस नैवेद्य बनाय मार,
धरि सुभग पात्र मे हरष धार। पूजौ

ॐ ह्री त्याग-भावनायै नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

दीपक मणिमय अति जोति रूप
धरि थाल आरती कर अनुप। पूजौ

ॐ ह्री त्याग-भावनायै दीप निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

कर धूप अगर चन्दन सुगध,
वह्नि पर खेऊँ भगति बध। पूजौ

ॐ ह्री त्याग-भावनायै धूप निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

श्रीफल वदाम खारक अनूप,
पुगीफल आदिक लेय रूप। पूजौ

ॐ ह्री त्याग-भावनायै फल निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

जल चन्दन अक्षत पुष्प मार,
चरु दीप धूप फल अर्घकार। पूजौ

ॐ ह्री त्याग-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

प्रत्येक अर्घ (चौपाई)

आप समान सकल जिय जान, अभयदान दे सबको मान।
दया भाव राखै मनमाहि अभयदान सो भाव जजाहि।।

ॐ ह्री अदया-त्याग-अभयदानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

सबको हितदा ज्ञान विचार, दे श्रुतदान महाबुध धार।
सबको चाहे केवलज्ञान सो ही ज्ञानदान हितवान।।

ॐ ह्रीं शास्त्र-दानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

भोजन देय कायथित काज, मुनि कूं भक्ति दया सुखपाज।
यथायोग्य जे दान कराय, जो अन्नदान सकल सुखदाय।।

ॐ ह्रीं अन्न-दानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

रोगी को शुभ भेषज देय, सब जिय साता वछै तेय।
औषध दान तास को नाम, सो भी देनो शिवपुर काम।।

ॐ ह्रीं औषध-दानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

एही दान चार विधि जानें, त्याग भावना मे पहिचान।
तीर्थंकर पद देन बताय, सुरतरु सी जिनवाणी गाय।।

ॐ ह्रीं चतुर्विध-दान-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

करुणासागर दीनदयाल, सब जीवन के है प्रतिपाल।
त्याग जीव की घात सयान, सो व्रत जजौ अरघ तै आन।।

ॐ ह्रीं हिंसात्याग-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

जीव जाय तो झूठ न कहै, महा धीर सतवादी रहै।
सत्य वचन सब धर्म समान, सो व्रत जजौ अरघ तैं आन।।

ॐ ह्रीं असत्यत्याग-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

परधन ताहि महा अघ जान, छूवै नही दया की खान।
चोरी त्याग होय गुणथान, सो व्रत जजौ अरघ तैं आन।।

ॐ ह्रीं चौर्यत्याग-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

नारी चार जाति की सोय, देव मनुषनी आदिक होय।
सो सब मन वच त्यागी जान, सो व्रत जजौं अरघ तै आन।।

ॐ ह्रीं कुशीलत्याग-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

परिग्रह त्याग करै जिय सोय, ताके शिव की वाछा होय।
पापकार आरम्भ पिछान, सो व्रत जजौं अरघ तैं आन।।

ॐ ह्रीं परिग्रहत्याग-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।10।।

तन तै ममता भाव निवार, शिव के हेत नगन पद धार।
सहै परीषह खेद न आय, तन विरक्त के पूजौ पाय।।

ॐ ह्रीं तन ममत्वत्याग-भावनाये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।11।।

भोग सपदा सकल निवारि, सहस छानवै सुरसी नारि।
सब तजि मोक्ष भावना भाय, सो त्यागी पूजौ मन लाय।।

ॐ ह्रीं राजभोगत्याग-भावनाये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।12।।

इत्यादिक त्यागी जे होय, शिव वाछक जिय रक्षक सोय।
भव त्यागी रागी निर्वाण, सो मैं जजौं त्याग भव हान।।

ॐ ह्रीं त्यागभावनाये-महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।13।।

जयमाला

सोरठा- त्याग मोक्ष मग जोय, जगत पूज्य त्यागी सही।
बिना त्याग भव होय, तातै त्याग जजौं सही।।1।।

मुनियानदी की चाल

त्याग भावन बिना मोक्ष जीवन नहीं,
त्याग ही मोक्ष मग जान सब श्रुत कही।
त्याग मोह हरन को महाभट जानिये,
त्याग ही मूल समता तना ठानिये।।2।।
त्याग ही कर्मगिरि वज्र सम है सही,
त्याग मन विकलता रोकने पटु कही।
त्याग शिवदाय को जान मन लाइये,
त्याग केवल थकी कर्म दव जालिये।।3।।
त्याग मुनिराज का भला भूषण सही,
त्याग को नमैं सुर खगा चक्री कही।
पूजि हैं त्याग को इन्द्र थुति लाय जी,
मैं जजौं त्याग मनवचन तन आय जी।।4।।

त्याग बिनराग ही कर सके सोहनो,
रागजुत जीव को हार भागे मनो।
त्याग कल्पवृक्ष सम देय वाछित सही,
त्याग इम जानि मै जजौ सिर दे मही।।5।।
त्याग त्रिभुवन विषै सार धर्म अग है,
त्याग के जोर तै होय कर्म भग है।
त्याग को देख कायर नरा धूजि है,
त्याग को मै जजौ और भवि पूजि है।।6।।
त्याग फल उदयतै होय है आय जी,
इन्द्र वा देव खग चक्रधर थाय जी।
मोक्ष ताही भवै तथाकर्म तै लहै,
मै जजौ त्याग भवि जजौ जिनधुनि कहै।।7।।
त्याग जग पूज है त्यागधर पूज जी,
त्यागतै अवधि मनर्पय सब सूझ जी।
त्याग तारै समुद जगत अति दुद्धरा,
मै जजौ त्याग को और पूजौ नरा।।8।।
त्याग खोटे किए कर्म को झट हरै,
त्यागतै सुभट मन और इन्द्री मरै।
त्याग ही मरण का भय निबारै सही,
मै जजौ त्याग को मन वचन तन कही।।9।।

दोहा-त्याग तरन तारन सही, त्याग जगत गुरु सोय।
मै पूजो मन वचन तन, त्याग भावना जोय।।10।।

ॐ ह्री त्याग-भावनायै पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

(7) तप भावना पूजा।।

अडिल्ल- तप ही वज्रसमान पापगिरि को मही,
तप ही भवदधि नाव धरै शिव की मही।
तप ही भव भव शरण हरो भव दुख सवे,
सो तप मै इहॉ थापि जजौ मन वच अवे।

ॐ ह्रीं तपोभावने ! अत्र अवतर अवतर सवौषट् आह्वान।
ॐ ह्रीं तपोभावने ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापन।
ॐ ह्रीं तपोभावने ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरण।

गीता छन्द

पद्म द्रह को नीर निरमल, कनक झारी मै धरौ।
उर भक्ति करि गुण गाय तपके, शीशतै नमनी करो।।
इह भली भावन तप सु केरी, कौन उपमा गाय है।
मै जजो तप मनवचन काया तीर्थ पद की दाय है।।

ॐ ह्रीं तपो-भावनायै जल निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

घसि अगर चन्दन नीर सेती, महागध का भार जी।
हो कनक झारी माहि धरिहो नमौ तप गुन धार जी।।
नाफलै भव आताप नाशै, होय ममता भाय है। मै

ॐ ही तपो-भावनायै चन्दन निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

अक्षत अखण्डित धवल नखसिख, शुद्ध गध मई कहै।
धरि सुभग पातर भावना तै, आपने कर मे लहै।।
पद अक्षय पावन चाह मेरे, तास यो मन भाय है। मै

ॐ ह्रीं तपो-भावनायै अक्षत निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

फूल चाँदी कनक का करि, तथा सुरवृक्ष के मही।
करि माल नीकी शोभदाई, भ्रमर गुँजत गध मही।।
तिस देख कपे मदन को उर चह चढी जिनपाय जी। मै

ॐ ह्रीं तपो-भावनायै पुष्प निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

नैवेद्य षट्रस सार मोदक तुरत के बनवाय जी।
तिग देख उर अनुराग उपजै, क्षुधारोग नसाय जी।।
तब होय निर्वांछक स्थिर हो, ध्यान मे थिर थाय है। मै

ॐ ही तपो-भावनायै नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

करि दीप मणिमय नाश तम को, कनक थाली में धरौ।
कर आरती शुभ भाव सेती, भक्ति बहु मन में करौ।।
ता फलै तुरत अज्ञान जावै, ज्ञान परगट भाय है। मै

ॐ ही तपो-भावनायै दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

धूप दशधा गध धारी, अगनि मधि जारौ सही।
उर हरष करले आप कर मे, कर्म रिपु मारौ सही।।
तब होय शिव पद कर्म नाशै, तास यह विधि पाय है। मै

ॐ ही तपो-भावनायै धूप निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

ले लौग खारक और श्रीफल, जान सुभग बदाम जी।
फिर जान पिस्ता आदि नीका, भला फल अभिराम जी।।
ता फलै शिवफल होय निहचल, और बहु कहॉा गाय है। मै

ॐ ही तपो-भावनायै फल निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

जल गध अक्षत फूल चरु ले, दीप धूप फला सही।
कर अर्घ आठौ द्रव्य मिलकै, महाशुभ फल की मही।।
ता फलै अद्भुत होय फल सो, कौन मुखतै गाय है। मैं

ॐ ह्रीं तपो-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

प्रत्येक अर्घ

सोरठा- जो कर है उपवास, एक दोष पक्ष मास के।
सो अनसन तप नाम, मैं पूजौ द्रव्य आठतैं।।

ॐ ह्रीं अनशनतपो-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

भूख थकी लघु खाय, अर्ध तथा दोय गास जी।
सो ऊनोदर भाय, मै पूजो द्रव्य आठतै।।

ॐ ह्री ऊनोदरतपो-भावनाये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

रोज वस्तु परमान, राख लेय दिढ भावतै।
सो व्रत सख्या जान, मै पूजौ द्रव्य आठतै।।

ॐ ह्रीं व्रत-परिसंख्यानतपो-भावनाये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।3।

रोज रसन को त्याग, षट् रस वा दो एक जी।
रस परित्याग व्रत लाग, मै पूजौ द्रव्य आठतै।।

ॐ ह्री रस परित्यागतपो-भावनाये अर्घ्यं नि. स्वाहा।।4।।

आसनादि दिढ भाव, नाहि चलै खग देव ते।
सो शय्यासन चाव, मैं पूजौ द्रव्य आठ तै।।

ॐ ह्री विविक्त शय्यासनतप-भावनाये अर्घ्यं नि.स्वाहा।।5।।

निमित कष्ट को लाय, समता भाव न जो रहै।
कायकलेश सु भाय, मै पूजौ द्रव्य आठ तै।।

ॐ ह्री कायक्लेशतपो-भावनाये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

ए तप बाह्य वखान, जगत पूज्य फल दे सही।
महा ऊँच गुन जान, मै पूजौ द्रव्य आठ तै।।

ॐ ह्री बाह्यषट्तपो-भावनाये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

लगे दोष शुध होय, जानै सो गुरु दे सही।
सो प्रायश्चित्त जोय, मै पूजौ द्रव्य आठ ते।।

ॐ ह्रीं प्रायश्चित्ततपो-भावनाये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

विनय करै गुरु देव, धरम तथा धरमी तनौ।
सो तप विनय स्वमेव, मैं पूजौं द्रव्य आठ तै।।

ॐ ह्रीं विनयतपो-भावनाये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

मुनि के चपै पॉय, जो तन में तप खेद हो।
सो वैयावृत भाय, मै पूजौ द्रव्य आठ तै।।

ॐ ह्रीं वैयावृत्यतपो-भावनाये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।10।।

निशदिश जिनधुनि पाठ, पूछै सुनि चितवन करै।
सो स्वाध्याय तप ठाठ, मै पूजौ द्रव्य आठ तै।।

ॐ ह्रीं स्वाध्यायतपो-भावनाये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।11।।

तनतैं ममत निवार, इक थल तिष्ठै धीर मौ।
सो व्युत्सर्ग तप सार, मैं पूजौं द्रव्य आठ तै।।

ॐ ह्रीं व्युत्सर्गतपो-भावनाये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।12।।

मन वच तन इक ठाम, चितै धर्मशुध भावना।
ध्यान तिकौ शुभ नाम, मै पूजौं द्रव्य आठ तै।।

ॐ ह्रीं ध्यानतपो-भावनाये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।13।।

ए तप द्वादश जान, दुविधि महा अघके हरा।
कर्मगिरि वज्र समान, मै पूजौ द्रव्य आठ तै।।

ॐ ह्रीं द्वादशतपो-भावनाये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।14।।

जयमाला

बेसरी छन्द

जो तप करै हरै अघ सारा, होय सकल करमन तैं न्यारा।
ये तप पर भवके सग साथी, ए तप करम दलन को हाथी।।1।।
तप ही भवदधि नाव बताया, तप बलतै सबने शिवपाया।
तप की अग्नि दहै कर्म काठा, तपतैं रहे नहि अरि आठा।।2।।
तप की चाह करे सुरपति से, तप कूँ राज तजै नरपति से।
तप को जजै तिको तप पावै, तप बिन प्राणी जगत भ्रमावै।।3।।
तप दे कल्पवृक्ष मन चाया, तप आगम में बन्धु बताया।
तपतै तपै क्रांति को पावै, कनक जिसे वह्नी सग थावै।।4।।

तप को चहै तितो भर प्रानी, तप को करै तिनै धुनि जानी।
तप को पूजै सो तप चेरा, तप धारै सो साहिब मेरा।।5।।
मै तो तप की सेव कराऊँ, कब तप मिले भावना भाऊँ।
जबलौ मिलै नही तप त्राता, तबलौ मैं तप पूजों भ्राता।।6।।
तपका शरण भवातर पाऊँ, तपको भव भव में सिर नाऊँ।
तप ही तै गुरु देव कहावै, तप जग बन्धु सकल सुख पावै।।7।।

दोहा-तरुणपनै तप जे धरै, तिरै नेम जिन जेम।
तातै मै तप कौं नमौं, वसु द्रव ले धर प्रेम।।8।।

ॐ ह्रीं तप-भावनायै पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

(8) साधुसमाधि भावना पूजा।।

दोहा-जा विधि मुनि को सुखबढै, साधु समाधि सुजान।
सो मै इत थापन करौं, पूजौ मन वच आन।।

ॐ ह्रीं साधुसमाधि-भावने ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वान।

ॐ ह्रीं साधुसमाधि-भावने ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं साधुसमाधि--भावने ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

चौपाई

नीर निरमलौ गगातनौ, सो मैं कनक झारि ले घनौं।
पूजौ साधु समाधी भाव, ताफल मिटै कर्म को दाव।।

ॐ ह्रीं साधुसमाधि-भावनायै जलं नि.।।1।।

बावन चन्दन नीर घसाय, रतन जडित झारी धरलाय।
पूजों साधु समाधी भाव, ता फल भव आताप नशाय।।

ॐ ह्रीं साधुसमाधि-भावनायै चन्दनं नि.।।2।।

अक्षत उज्ज्वल मोती समा, सुभग रकेबी मे धर रमा।
पूजौ साधु समाधी भाव, ताके फल अक्षयपद पाव।।

ॐ ही साधुसमाधि-भावनायै अक्षतान् नि.।।3।।

फूल भले सुरतरुक लाय, गूँथी माल भक्ति मन लाय।
पूजो साधु समाधी भाव, ताफल मदन नाश को पाव।।

ॐ ह्रीं साधुसमाधि-भावनायै पुष्प नि.।।4।।

वहु विध रस नैवेद्य बनाय, उज्ज्वल पातर ले हरषाय।
पूजो साधु समाधी भाव, ताफल भूख नाश को पाव।।

ॐ ह्रीं साधुसमाधि-भावनायै नैवेद्य नि.।।5।।

दीपक मणिमय थाल भराय, मन वच तन करि भक्ति बढाय।
पूजौ साधु समाधी भाव, ताफल नाशै मिथ्या दाव।।

ॐ ह्रीं साधुसमाधि-भावनायै दीप नि ।।6।।

धूप जु दस विधि गध मिलाय, अग्नि विषै खेऊँ मन भाय।
पूजो साधु समाधी भाव, ताफल अष्ट कर्म क्षय जाय।।

ॐ ही साधुसमाधि-भावनायै धूपं नि.।।7।।

श्रीफल लौग बदाम अपार, खारक आदि और फल सार।
पूजौ साधु समाधी भाव, ताफल सिद्ध थान फल पाव।।

ॐ ही साधुसमाधि-भावनायै फलं नि.।।8।।

जल चन्दन अक्षत पुष्प लेय, चरु अरु दीप धूप फल जेय।
पूजौ साधु समाधी भाव, ताफल अद्भुत फल उपजाव।।

ॐ ह्रीं साधुसमाधि-भावनायै अर्घ्यं नि.।।9।।

प्रत्येक अर्घ

चौपाई

मूलगुणों में जो अतिचारा, लागै जाहि जतीको सारा।
सो पुलाक मुनि साता लाय, साधु समाधि जजौ सुखदाय।।

ॐ ह्रीं पुलाकमुनि-साधुसमाधि-भावनायै अर्घं नि.।।1।।

भोजन माहि कछु रति लहै, वकुश जाति सो मुनिवर कहे।
तिनको साता विधि मन लाय, साधु समाधि जजौ सुखदाय।।

ॐ ही वकुशमुनि-साधुसमाधि-भावनायै अर्घं नि ।।2।।

मुनि कुशील कहे जुग भेद, इक कषाय प्रतिसेवन वेद।
तिनको साता विधि मन लाय, साधु समाधि जजौ सुखदाय।।

ॐ ही कुशीलमुनि-साधुसमाधि-भावनायै अर्घं नि ।।3।।

उत्तर गुन मे कछु अतिचार, सो प्रति सेवन साधु विचार।
तिनको साता विधि मन लाय, साधु समाधि जजौ सुखदाय।।

ॐ ही प्रतिसेवना-कुशीलमुनि-साधुसमाधि-भावनायै अर्घं नि।4।

दसमे गुणथानक लौ सही, तबलौ मोह उदय अस कही।
तिनको साता विधि मन लाय, साधु समाधि जजौ सुखदाय।।

ॐ ही कषाय-कुशीलमुनि-साधुसमाधि-भावनायै अर्घं नि.।।5।।

जा मुनि के मोह करम न पाय, यथाख्यात चारित्र कहाय।
सो निरग्रन्थ जती मनलाय, साधु समाधि जजौ सुखदाय।।

ॐ ह्रीं निर्ग्रंथमुनि-साधुसमाधि-भावनायै अर्घं नि.।।6।।

जा जिन मुनि को केवल होय, साधु स्नातक कहिये सोय।
तीन लोक पूजन मन भाय, साधु समाधि जजौ सुखदाय।।

ॐ ही स्नातकमुनि-साधुसमाधि-भावनायै अर्घं नि.।।7।।

ये पाँचो मुनि है शिव नाव, सबही नगन जानकर चाव।
शिवनायक दायक शिव भाव, साधु समाधि जजौ सुखदाय।।

ॐ ह्रीं पंचप्रकारमुनि-साधुसमाधि-भावनायै महार्घ्यं नि.।।8।।

जयमाला

भावना साधुसमाधि सो जानिये,
जती तन विषैं सुख होय जिम ठानिये।

रोग वश मुनि मन नाहि थिर होय जी,
रोग विधि नाश ऋषि ध्यान शुद्ध जोय जी।।1।।
देख खग नरा पशु दुष्ट जो दुख करै,
ताहि जो दूर कर मुनिको सुख भरै।
जती समभाव शिवसाधना लाय है,
साधु समाधी सो भावना भाय है।।2।।
साधु की भक्ति शिव शाश्वती देय जी,
साधु को सुख करै मोक्ष ते लेय जी।
साधु माता हरै जगत फेरा सही,
साधु की भक्ति शुद्ध ठाम की है मही।।3।।
साधु को सुख वधै काज सो कीजिये,
साधु की सेवतें सास ते जीजिये।
मै सदा साधुकी भक्ति चाहौ सही,
होय मोकौ शरण अगले भव मही।।4।।
साधुको सुख करै तिको निज अघ हरै,
साधुकी विनयजुत वेदना क्षय करै।
साधु समाधी सो भावना जानिये,
तास फल तीर्थ पद करम को हानिये।।5।।

दोहा-साधु समाधी भावको, जो भावे भवि कोय।
जो साधू को सुख करै, सो तीर्थंकर होय।।6।।

ॐ ह्रीं साधुसमाधि-भावनायै पूर्णार्घ्यं नि.।।8।।

(9) वैयावृत्य भावना।।

गीता छन्द

मुनिराज को मग चलत तन में, खेद जब उपजै सही,
वा घने तप के जोर सेती, काय कछु खीनी भही।

ता समय दाबै पॉव सिर कर, भाव या विधि जो करै,
सो जान वैयावृत्य पूजौ, थाप इहॉ सो अघ हरै।।

ॐ ह्रीं वैयावृत्य-भावने ! अत्र अवतर, अवतर सवौषट् आह्वानम्।
ॐ ह्रीं वैयावृत्य-भावने ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ. ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं वैयावृत्य-भावने ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

नाराच छन्द

निरमलौ सुनीर लाय कनक झारिका धरौ,
अति सुगन्ध क्षीरसागर तास माहि ए करौ।
जजौं सुभाव वैयावृत्य भावना सुभाय है,
फलै सु तास लहै तीर्थपदी को उमाय है।।

ॐ ह्रीं वैयावृत्य-भावनायै जलं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

नीर माहि बावनो सुचन्दना घसाय हौ,
धरौ सु कनक झारिका महासुभक्ति भाय हौ। जजौ

ॐ ह्रीं वैयावृत्य-भावनायै चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

अक्षता अखण्ड खण्ड नाहि उज्ज्वला सही,
महा सुगन्ध मोहना सुभक्ति भला ज्यौ कही। जजौं

ॐ ह्रीं वैयावृत्य-भावनायै अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

भले सुफूल गन्ध धार देवद्रुमके सही,
करी सु माल पोय गूँथ भाव भक्त ले ठही। जजौ

ॐ ह्रीं वैयावृत्य-भावनायै पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

लिये भले सुमोदकादि तुरत के किये सही,
धरै जु पात्र माहि भाव भक्ति ले हिये मही। जजौ

ॐ ह्रीं वैयावृत्य-भावनायै नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

दीपका बनाय रत्न अघ के विनाशिया
भले सुपात्र माहि धार ज्ञान का विकासिया,
जजौ सुभाव वैयावृत्य भावना सुभाय है,
फलै सु तास लहै तीर्थपदी को उमाय है।।

ॐ ह्री वैयावृत्य-भावनायै दीप निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

लई जु धूप गध सार भ्रमर की भ्रमावनी,
सुखेय वह्नि माहि ताहि भाव की बढावनी। जजौ

ॐ ह्री वैयावृत्य-भावनायै धूप निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

श्रीफला बदाम लौंग आदि जे फला सही,
धरै जु पात्र माहि भक्त भावना हिये कही। जजौ

ॐ ह्री वैयावृत्य-भावनायै फल निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

जला सु गध अक्षता भले जु पुष्प जानिये,
चरु सु दीप धूप फला अर्घ लेय आनिये। जजौ

ॐ ह्री वैयावृत्य-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

प्रत्येक अर्घ

चौपाई

गुण छत्तीस के धारक सोय, सघनाथ आचारज होय।
इनकी वेयावृत्य मन लाय, सो तीर्थकर पद फलदाय।।

ॐ ह्रीं आचार्य-वैयावृत्य-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

गुण पच्चीस के धारन हार, उपाध्याय भव तारन सार। इनको

ॐ ह्रीं उपाध्याय-वैयावृत्य-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

तपस्या बहु विधि दुद्धर करै, तपसी जात मुनि ते अघ हरै। इनको

ॐ ह्रीं तपस्वी-वैयावृत्य-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

आचारज पै पढै सुज्ञान, सो शैक्ष्य जाति मुनि पहिचान। इनको

ॐ ह्रीं शैक्ष्यमुनि-वैयावृत्य-भावनायै अर्घ्यं नि. स्वाहा।।4।।

रोग रहित तन समता भाव, सो गिलान मुनि भवदधि नाव। इनको

ॐ ह्री ग्लानमुनि-वैयावृत्य-भावनाये अर्घ्यं नि ।।5।।

वय करि बडे तथा गुण चढे, इनका सग सो गण मुनि दढे। इनको

ॐ ह्रीं गण-वैयावृत्य-भावनाये अर्घ्यं नि ।।6।।

दिक्षा देन विधि जानै जोय, ते कुल जाति मुनि अवलोय। इनको

ॐ ह्री कुल-वैयावृत्य-भावनाये अर्घ्यं नि ।।7।।

मुनि अर्जिका श्रावक श्राविका, इनको सघ कहिए अघ थका। इनको

ॐ ह्री चतु प्रकार-सघवैयावृत्य-भावनाये अर्घ्यं नि.।।8।।

बहुत दिनो के दीक्षक होय, साधु जाति मुनि कहिये सोय। इनको

ॐ ह्रीं साधुजातिमुनि-वैयावृत्य-भावनाये अर्घ्यं नि ।।9।

दिक्षा लेन को सनमुख भया, सो मनोज्ञ कुल पावन थया। इनको

ॐ ह्रीं मनोज्ञ वैयावृत्य भावनाये अर्घ्यं नि.।।10।।

ये दस जाति मुनी भवतार, इनकी सेव करै भव पार। इनको

ॐ ह्री दशजातिमुनि-वैयावृत्य-भावनाये अर्घ्यं नि.।।11।।

जयमाला

दोहा-वैयावृत सब व्रतन मे, बडो वरत मनलाय।
याकी सेवा जो करै, सो शिव पहुँचै जाय।।1।।

बेसरी छन्द

वैयावृत है धरम का मूला वैयावृत तै अघ खय थूला।
वैयावृत कीजै गुरु केरा, तातै मिटे जगत का फेरा।।2।।
वैयावृत महागुण प्यारा, वैयावृत भवदधि का तारा।
वैयावृत धर्म अग का डेरा, यातै मिटै जगत का फेरा।।3।।
वैयावृत धर्म बीज बताया, वैयावृत जगबधू गाया।
वैयावृत-सा धन नहि नेरा, तातैं मिटे जगत का फेरा।।4।।
वैयावृत आभूषण ताके, जा सम शोभा और न काके।
वैयावृत दुख वह्नि नीरा, नाते मिटै जगत की पीरा।।5।।

वैयावृत जाके उर भावै, सो जिय सज्जन सब आवै।
वैयावृत सब दोष विनासी, या फल होय जगत लछिदासी।।6।।
वैयावृत ते बैर नसावै, वैयावृत जग हेत बढावै।
वैयावृत को जो भवि पासी, ताफल होय जगत लछि दासी।।7।।
वैयावृत जाके मनमाही, सो जग पूज्य कह्यो जग ठाहीं।
वैयावृत को मै सिरनाऊँ, ताके फल जग मे न भ्रमाऊँ।।8।।
वैयावृत सब धर्म निशाना, वैयावृत तै होय सुध्याना।
ताफल लहै हिये मे ज्ञाना, तातै वैयावृत परधाना।।9।।
वैयावृत तप में परधाना, वैयावृत तै भवदधि जाना।
वैयावृत शिवराह बतावै, वैयावृत को जग जस गावै।।10।।
वैयावृत छिनक अघ मारा वैयावृत सतन को प्यारा।
वैयावृत सा और न मिता, वैयावृत मेटे भव चिता।।11।।

दोहा-वैयावृत मे गुन घने, कबलौ कहो बनाय।
तातै मुनि तन टहल को, करो सु मन वच काय।।12।।

ॐ ह्री वैयावृत्य-भावनायै पूर्णार्घ्यं।।9।।

(10) अरहंत-भक्ति-भावना पूजा।।

अडिल्ल- प्रातिहार्य वसु अनन्त चतुष्टय जानिये,
दस जन्मत दस केवल उपजत मानिये।
चौदह देवा करै सकल छयालीस गुन,
इन जुत अरहत जजौ थाप इहाँ शुद्ध मन।।

ॐ ह्रीं अरहत-भक्तिभावने ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानं।

ॐ ह्रीं अरहंत-भक्तिभावने ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापन।

ॐ ह्रीं अरहत-भक्तिभावने ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

चौपाई

पद्मकुण्ड को निरमल नीर, कनक झारिका धरि मन धीर।
पूजौ मन वच काय लगाय, अर्हन्तभक्ति भावना भाय।।

ॐ ह्री अरहंतभक्ति-भावनायै जल निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

चन्दन बावन नीर घसाय, रतन जडित झारी भरलाय। पूजौ

ॐ ह्रीं अरहंतभक्ति-भावनायै चन्दन निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

अक्षत उज्ज्वल खण्ड न कोय, कनक थाल मे धर शुध होय। पूजौ

ॐ ह्रीं अरहंतभक्ति-भावनायै अक्षतम् निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

देवद्रुम के फूल सुलाय, माला कर सेवौ जिनपाय। पूजौ

ॐ ह्री अरहतभक्ति-भावनायै पुष्प निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

नानारस नैवेद्य करेय, मोदक आदि सुभग कर लेय। पूजौ

ॐ ह्री अरहतभक्ति-भावनायै नैवेद्यम् निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

दीपक रतनमई कर लिया, सुभग थाल भर सनमुख भया। पूजौ

ॐ ह्रीं अरहंतभक्ति-भावनायै दीप निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

धूप दशाग बनाय सु प्यार, वह्निमध्य जारौ मनधार। पूजौ

ॐ ह्रीं अरहंतभक्ति-भावनायै धूप निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

श्रीफल लौग बदाम अपार, खारक पुगीफल ले सार। पूजौ

ॐ ह्रीं अरहतभक्ति-भावनायै फल निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

जल चन्दन अक्षत पुष्प लेय, चरु दीपक सु धूप फल लेय।
अर्घ बनाय शीश को नाय, पूजौ अरहतभक्ति सुभाय।।

ॐ ह्रीं अरहतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

प्रत्येक अर्घ

अडिल्ल छन्द- वृक्ष अशोक सुजान ताहि देखैं सही,
रहै नही उर शोक होय उर सुख कही।

याके धारी अरहत देव महान है,
पूजौ अरहत भक्तिभाव गुनथान है।।

ॐ ह्री अशोकवृक्ष-प्रातिहार्यसहित-अरहतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

देव पहुप की वृष्टि करै थुति लायकै,
नभतै आवे जेम रतनसे भायकै।
मानो जोतिष यान भूमि पै आय है
इन जुत देव नमौ सु भावना भाय है।।

ॐ ह्रीं पुष्पवृष्टि-प्रातिहार्यसहित-अरहतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

खिरे दिव्यधुनि सार सु जिनवरकी मही,
प्रातिहार्य यह जान सकल जिय रक्षा मही।
या जुत अरहत देव भक्ति शुभ भावना,
मै पूजौ थुति आन अरघ धर पावना।।

ॐ ह्रीं दिव्यध्वनि-प्रातिहार्यसहित-अरहतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

उज्ज्वल जिम गगधार रतनमय सार जी,
चवर सु ढौरे देव भक्तिके लार जी।
प्रातिहार्य यह इन जुत अर्हत देव जी,
ताकी भक्ति सुभावन करिहौ सेव जी।।

ॐ ह्री चमर-प्रातिहार्यसहित-अरहतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

सिहासन जिम मेरु रतन कनकै जड्या,
प्रातिहार्य जगपूज्य किन्ही यह ना घड्या।

इनके धारक देव कहै अरहत जी,
तिनकी भक्ति सुभावन शिव का पथ जी।।

ॐ ह्रीं सिंहासन-प्रातिहार्यसहित-अरहतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

जिनके तनकी जोति चक्र ताको सही,
ताके देखै लखै पूर्वभव की मही।
प्रातिहार्य यह इन जुत अरहतदेव जी,
ताकी भक्ति सुभावन करिहौ सेव जी।।

ॐ ह्रीं प्रभामण्डल-प्रातिहार्यसहित-अरहतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

देव बजावै नभ मै बहुविधि बाजना,
तिनकी धुनि चहुँ ओर महा अघ की हना।
प्रातिहार्य इन सहित देव अर्हत सही,
इनकी भक्ति सुभावन पूजौ शुभ मही।।

ॐ ह्रीं दुंदुभि-प्रातिहार्यसहित-अरहतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

छत्र तीन सिर धरै जगतत्रय नाथ जी,
प्रातिहार्य जुत भले विराजै तात जी।
जगत देव अरहन्त सुगुण के धार है,
ताकि भक्ति सुभावन पूजौ सार है।।

ॐ ह्रीं छत्रत्रय-प्रातिहार्यसहित-अरहतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

धरैं अनन्तो ज्ञान लखै सब जग तनी,
तीन काल की कथा सकल जो जो बनी।
या अतिशय जुत देव जान अरहत जी,
तिनकी भक्ति सुभावन सेवत सत जी।।

ॐ ह्रीं अनंतज्ञानसहित-अरहतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि स्वाहा।9।

देखै जो त्रयकाल पदारथ सकल ही,
तिनतै छानी नाहि सकल मुख की मही।
या गुण धारक देव कहे अरहत जी,
तिनकी भक्ति सुभावन सेवत सत जी।।

ॐ ह्री अनतदर्शनसहित-अरहंतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।10।

सुख अनन्त के धार जगत गुरु सार जी,
अविनाशी दुख नाहि भवोदधि पार जी।
या गुण अतिशय धार देव अरहत जी,
याकी भक्ति सुभावन सेवत सत जी।।

ॐ ह्रीं अनतसुखसहित-अरहतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि स्वाहा।11।

बल अनन्त के धार देव अरहत जी,
यह अतिशय इन माहि और नहि अन्त जी।
इनकी भक्ति सुभावन सुख की दाय है,
सो जन तीरथपद को निहचै पाय है।।

ॐ ह्रीं अनतबलसाहित-अरहतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि स्वाहा।12।

गीता छन्द

इन आदि अतिशय और सुखदा लहै तिनमे सार जी।
सो देव है अरहत जग मे भविजन के तार जी।।
इन भक्ति भावन जो करै जिय लहै जगथुति की मही।
अरहत भक्ति सुभाव भावै ते लहै शिव को सही।।

ॐ ह्रीं अरहतभक्ति-भावनायै महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

जयमाला

बेसरी छन्द

अरहतभक्ति भाव जो भावै, सो उत्कृष्टै पद को पावै।
अरहत सो तामै गुण एहा, देव जजै बहु कर कर नेहा।।1।।

जनमत जो दस अतिशय पावै, सुगुन सुहरिसुर वाछित भावै।
दस अतिशय पावै तव देवा, केवलज्ञान होय स्वयमेवा।।2।।
चौदह अतिशय देव करावै, तिनकी महिमा मुख किम गावै।
आठ प्रातिहारज फिर होई, ए गुण प्रभु बिन लहै न कोई।।3।।
अनन्त चतुष्टय मगलकारी, सो गुण भी जिनके आधारी।
सब गुण मिल छयालीस धरैया, सो अरहत देव जज भैया।।4।।
या जिन सेव सकल अघ टारै, जिनकी सेव भवोदधि तारै।
अरहत सेव बिना सुख नाही, मोक्ष मिलै नहि जिनथुति पाही।।5।।
या प्रभु की सेवा मै चाहूॅ, जिन थुति कर भव सफल कराहूँ।
सो मन वाछा है यह भाई, अरहत भक्ति मिलै सुखदाई।।6।।
जबलौ मोकूॅ मोक्ष न होई, तुम थुति चहूॅ और नहि कोई।
तातै अरज यहै अरहता, पाय भजन काटै मोहि तता।।7।।
दोहा-अरहत गुण धार जो, भाव भक्ति इन भाय।
ताफल जिनपद पाय है, सो मै पूजूॅ आय।।8।।

ॐ ह्रीं अरहंतभक्ति-भावनायै पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।10।।

(11) आचार्य भक्तिभावना पूजा।।

द्वादस तप धर्म दस विधि गाये षडावश्य शुद्ध भाई।
पचाचारज तीन गुपति मिल गुण छत्तीस कहाई।।
इनके धारक आचारज सोई इनकी भक्ति सुभावा।
सो इहॉ थाप जजौ मन वच तन मेटन भव का दावा।।

ॐ ह्रीं आचार्यभक्ति-भावने ! अत्र अवतर अवतर सवौषट् आह्वानं।
ॐ ह्रीं आचार्यभक्ति-भावने ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठ. स्थापनं।
ॐ ह्रीं आचार्यभक्ति-भावने ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरण।

चौपाई

नीर पदमकुण्ड को ले सार, मणिमय झारी तै करधार।
आचार्यभक्ति भावना सोय, पूजौ मै मन वच तन होय।।

ॐ ह्रीं आचार्यभक्ति-भावनायै जल निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

चन्दन अगर नीर घस लाय, शुभ पातर में धर उमगाय।
आचार्यभक्ति भावना सोय, मै पूजौ भव-तप क्षय होय।।

ॐ ह्रीं आचार्यभक्ति-भावनायै चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

अक्षत उज्ज्वल मोती जेम, सो मै लेय धार कर प्रेम।
आचार्यभक्ति भावना सोय, पूजौ मै अक्षय फल होय।।

ॐ ह्रीं आचार्यभक्ति-भावनायै अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

पुष्प सुगन्ध वरण अधिकाय, कल्पवृक्ष के ले हरषाय।
आचार्यभक्ति भावना सोय, पूजौ मै मनमथ क्षय होय।।

ॐ ह्रीं आचार्यभक्ति-भावनायै पुष्प निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

षट्रस कर नैवेद्य कराय, मोदक आदि महा शुभ भाय।
आचार्यभक्ति भावना सोय, पूजौ रोग क्षुधा क्षय होय।।

ॐ ह्रीं आचार्यभक्ति-भावनायै नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

दीप रतनमय ज्योति जगाय, कर्पूरादिक बहु विधि लाय।
आचार्यभक्ति भावना सोय, पूजौ मैं मिथ्यातम खोय।।

ॐ ह्रीं आचार्यभक्ति-भावनायै दीप निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

दसधा धूप मिलाय सुगन्ध, अगनि माहि खेऊँ अघ बध।
आचार्यभक्ति भावना सोय, पूजौं मैं वसुकर्म क्षय होय।।

ॐ ह्रीं आचार्यभक्ति-भावनायै धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

श्रीफल लौग बदाम अपार, खारक पुगीफल सुखकार।
आचार्यभक्ति भावना सोय, पूजौ मैं शिवफल जिम होय।।

ॐ ह्रीं आचार्यभक्ति-भावनायै फलं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

जल चन्दन अक्षत पुष्पसार, चरु दीपक फल धूप सुप्यार।
आचार्यभक्ति भावना सोय, पूजौ मै अघनाशै होय।।

ॐ ह्रीं आचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

प्रत्येक अर्घ

चौपाई

तप द्वादश दो विधि मनलाय, अन्तर बाहिर भेद बनाय।
इनको धरै अचारज सोय, ते गुरु जजौ अरघतै जोय।।

ॐ ह्रीं द्वादशतपसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।।1।।

इक उपवास मास पक्ष जान, वर्ष आदि उपवास बखान। इनको

ॐ ह्रीं अनशनतपसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।2।

भूख थकी लघु खावै सही, अवमौदर्य नाम तप यही। इनको

ॐ ह्रीं अवमौदर्यतपसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि।3।

नितप्रति वरत करै परमान, सो व्रत सख्या तप अघ हान। इनको

ॐ ह्रीं व्रतपरिसंख्यानतपसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।4।

रोज रसन को त्यागै सही, रसपरित्याग नाम तप यही। इनको

ॐ ह्रीं रसपरित्यागतपसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि।5।

दिढ आसन लखके थित करा, विविक्त शय्यासन तप धरा। इनको

ॐ ह्रीं विविक्तशय्यासनतपसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि।6।

तनको कष्ट करै सम रहै, कायकलेश नाम तप यहै। इनको

ॐ ह्रीं कायक्लेशतपसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि।7।

ये षट् बाह्यतनै तप जान, पापबेल हर करवत मान। इनको

ॐ ह्रीं बाह्यषट्तपसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।8।

लगे दोष को जो सुध करै, सो प्राछित तप अघ वन हरै। इनको

ॐ ह्रीं प्रायश्चित्तपसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि।9।

आप थकी गुरु सत्कार, सो ही विनय नाम तप सार।। इनको

ॐ ह्रीं विनयतपसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।।10।।

मुनि के खेद निवारन काज, हाथ पॉव चपै बुध साज।
इनको धरै अचारज सोय, ते गुरु जजौ अरघतै जोय।।

ॐ ह्रीं वैयावृत्यतपसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि।11।

निशदिन जिनवानी अभ्यास, सो स्वाध्याय महातप वास। इनको

ॐ ह्रीं स्वाध्यायतपसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि।12।

काय ममत परिहार कराय, सो व्युत्सर्ग नाम तप भाय। इनको

ॐ ह्रीं व्युत्सर्गतपसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि।13।

थिर मन आर्त रौद्र परिहार, सो ही ध्यान नाम तप धार। इनको

ॐ ह्रीं ध्यानतपसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।।14।।

ये तप द्वादश शिवमग जान, तप के करत होय उर ज्ञान। इनको

ॐ ह्रीं द्वादशतपसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि ।।15।।

बेसरी छन्द

सब जीवन तैं समता भावा, उत्तम धर्म सु शिवमग नावा।
याको आचारज नितभावै, तिन पद जजौ भाव सुख ध्यावै।।

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमा-धर्मसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।16।

मानभाव सब ही निरवारा, मार्दव धर्म जान यह प्यारा।
याको आचारज उर आनै, तिनपद जजौ फलै अघहानै।।

ॐ ह्रीं उत्तममार्दव-धर्मसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।17।

कुटिलाई तिनके उर नाहीं, आर्जव भाव धरम हित ठाहीं। याको

ॐ ह्रीं उत्तमार्जव धर्मसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।18।

काय जाय पैं असत न भाखै, सत्य धरम अपनो दिढ राखै। याको

ॐ ह्रीं उत्तमसत्य-धर्मसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।19।

परकी वस्तु चाह नहि ताकै, शौच भाव निरमल उर जाकै। याको

ॐ ह्रीं उत्तमशौच-धर्मसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।20।

इन्द्री कसै जीव को पालै, सो सजम धश अघ को टालै। याको

ॐ ह्रीं उत्तमसंयम-धर्मसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि ।21।

द्वादश तप दो विधि मनलाया, सो तप धरम शिवा सुरदाया।
याको करै अचारज सोही, जिनपद जजौ रहौ नहि मोही।।

ॐ ही उत्तमतप धर्मसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।22।

तन धन आदि वस्तु पर जेती, ममत नही दीसै तन सेती।
यो तप त्याग अचारज धारै, तिनपद जजौ फलै अघ हारै।।

ॐ ह्रीं उत्तमत्यागधर्मसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि।23।

दो विध परिग्रह त्याग सु नगना, सोहि अकिंचन धर्म सु मगना।
याको अचारज उर· लावै, तिनपद जजौं फलैं शिव आवै।।

ॐ ही उत्तमाकिंचन्यधर्मसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।24।

मन वच तन नारी का त्यागा, सो धर्म ब्रह्मचर्य भय भागा।
याको करै अचारज सोई, तिनपद जजौ फलै शिव होई।।

ॐ ही उत्तम ब्रह्मचर्यधर्मसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।25।

ये दश धर्म कर्म क्षयकारी, इनतै जाय पाप भय हारी।
अचारज इन धर्म को धारै, जिनपद जजौं पाप क्षय कारै।।

ॐ ह्रीं दशधर्मसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।।26।।

आरत रौद्र भाव को त्यागै, सो सामायिक के मन लागै।
याको करै अचारज सोई, तिन पद जजौं फलै सुख होई।।

ॐ ह्रीं सामायिकावश्यकसहिताचार्यभक्ति भावनायै अर्घ्यं नि.।27।

अर्हन्त सिद्ध की जो थुति कीजै, सो स्तवन अवधि गिन लीजै।
याको करै अचारज सोई, तिन पद जजौं फलै सुख होई।।

ॐ ह्रीं स्तवनावश्यकसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि।28।

वन्दन नमस्कार नित कीजै, अर्हन्त सिद्ध को शीश नमीजै।
याको करै अचारज सोई, तिन पद जजौं फलै शिव होई।।

ॐ ह्रीं वन्दनावश्यकसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.29।

लगे दोषको जो निरवारै, सो आवशि प्रतिकर्म सुधारै।
याको करै अचारज सोई, तिनपद जजौ फलै शिव होई।।

ॐ ह्रीं प्रतिक्रमणावश्यकसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि ।30।

मन वच काय पाप विधि त्यागी, प्रत्याख्यान अवशि तहँ जागी।
याको करै अचारज सोई, तिन पद जजौं रहो नहि मोही।।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावश्यकसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि ।31।

निरमोही तनका तिन त्यागी, कायोत्सर्ग आवशि तहँ जागी।
याको करै अचारज सोही, इन पूजा फल रहै न मोही।।

ॐ ह्रीं कायोत्सर्गावश्यकसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि ।32।

ये षट् आवशि करै मुनिन्दा, सो जगनाथ हरै भव फंदा।
आचारज इन गुन के धारी, तिन पद ढोक अरघ दे भारी।।

ॐ ह्रीं षट्आवश्यकाचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।।33।।

चौपाई

मनकपि ध्यान रस्सी बँधवाय, पाप विचार विषै नहि जाय।
आचारज मन इम वश करै, तिन पद जजौ फलैं अघ हरै।।

ॐ ह्रीं मनोगुप्तिसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।।34।।

वचन कहै जिन धुनि अनुसार, वचन गुपति जानौं ते तार।
याको आचारज प्रतिपालै, तिन पद जजौ फलैं अघ टालै।।

ॐ ह्रीं वचनगुप्तिसहित आचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि।35।

काय थकी अघकाज न करै, ध्यानाध्ययन माही सचरै।
काय गुपति आचारज ध्याय, तिन पद जजौं सुभग फलदाय।।

ॐ ह्रीं कायगुप्तिसहित आचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।।36।।

ये ही तीन गुपति सुखकार, मन वच तन अघ रोकनहार।
इनको करैं अचारज सोय, -तिनके पद पूजौं मद खोय।।

ॐ ह्रीं त्रिगुप्तिसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।।37।।

बेसरी छन्द

ज्ञानाचार ज्ञान सुध आनै, सकल पदारथ भेद वखानै।
याको करै अचारज सोई, तिनपद जजौ फलै सुध होई।।
ॐ ह्रीं ज्ञानाचारसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।।38।।
दर्शनाचार दृष्टि सुध लावै, दोष पच्चीस तहाँ नहि पावै।
याको करै अचारज सोई, तिन पद जजौ फलै सुख होई।।
ॐ ह्रीं दर्शनाचारसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।39।
तेरह विध शुभ चारित धारै, सहै परीषह आप न हारै।
याको करै अचारज सोई, तिन पद जजौ फलै शिव होई।।
ॐ ह्रीं चारित्राचारसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।।40।।
तप बहु करै खेद नहि आनै, तपाचार सो अघ गिरि भानै।
याको करै अचारज सोई, तिन पद जजौ फलै शिव होई।।
ॐ ह्रीं तपाचारसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि ।।41।।
वीर्याचार शक्ति को फोरै, शिव मग लहै कर्म अरि तोरै।
याको करै अचारज सोई, तिन पद जजौं फलै शिव होई।।
ॐ ह्रीं वीर्याचारसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।।42।।

अडिल्ल- द्वादश तप दश धर्म षडावश्य जानिये,
तीन गुपति आचार पच सब मानिये।
ये छत्तीस गुन धरै आचारज होयजी,
तिन पद पूजौ अर्घ लेय मद खोयजी।।
ॐ ह्रीं छत्तीसगुणसहिताचार्यभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।।43।।

जयमाला

मुनियानंदी चाल

सघ के नाथ आचार्य सो होय है,
तिन विषै भलै गुन तीस षट् सोय हैं।
और गुन घनै तिन माहि शुभ पाईये,
इन चरन भक्ति फल तीर्थ पद गाईये।।1।।

मति श्रुत अवधि इन आदि होय ज्ञान जी,
कहै भव्य जीवको भवातर जान जी।
मन विषै भक्ति के होय सो पाइये,
इन चरन भक्ति फल तीर्थ पद गाईये।।2।।
कहै उपदेश जिम जीव साता लहै,
सुरग शिव राह निज जान आनि को कहै।
बिगर कारण सकल सत्वबन्धु पाईये,
इन चरन भक्तिफल तीर्थ पद गाईये।।3।।
सकल श्रुति जान अभिमान ताकै नही,
फुरी बहु ऋद्धि गुन थूल तिन उर मही।
तीन जगपूज्य बिनराग सम पाइये,
इन चरन भक्तिफल तीर्थ पद गाईये।।4।।

दोहा-इन्हें आदि आचार्य में, गुण पावत है सार।
जे भवि इनपद थुति करै, ते उतरें भवपार।।4।।

ॐ ह्रीं आचार्यभक्ति-भावनायै पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

(12) बहुश्रुतभक्ति भावना पूजा।।

अडिल्ल- एकादश अग पूरब चौदह धार जी,
शिष्यन को पढवावै तपके भार जी।
ऐसे गुनके धार उपाध्याय सार जी,
पूजौं इन पद थापन कर थुति धार जी।।

ॐ ह्रीं बहुश्रुतभक्ति-भावने ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानं।

ॐ ह्रीं बहुश्रुतभक्ति-भावने ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं बहुश्रुतभक्ति-भावने ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

मुनियानंदी चाल

नीर शुभ निरमलो गग को लाइये,
कनक झारी भरो भली थुति गाइये।
तीर्थ पद दाय सुन लोभ उर आय जी,
पूजिहौ बहुश्रुत भाव मन काय जी।।

ॐ ही बहुश्रुतभक्ति-भावनायै जलं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

नीर घसि बावनो चन्दना सार जी,
भक्ति कर कनक के पात्रमधि धार जी। तीर्थपद

ॐ ही बहुश्रुतभक्ति-भावनायै चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

अक्षता उज्ज्वला खण्ड बिन सार जी,
मुक्तफलममा शुभ पात्र में धार जी। तीर्थपद

ॐ हीं बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

फूल सुरद्रुम के गध शुभ रगमई,
गूँथकर माल को हाथ अपने लई। तीर्थपद

ॐ हीं बहुश्रुतभक्ति-भावनायै पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

सुभग रस लेय नैवेद्य कर लाइये,
पात्र धर सुभग मुख भक्तिगुण गाइये। तीर्थपद

ॐ हीं बहुश्रुतभक्ति-भावनायै नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

दीप मणिमय सुभग जोति परकाशिका,
धार शुभ पात्र कर आरती दासिका। तीर्थपद

ॐ हीं बहुश्रुतभक्ति-भावनायै दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

धूप दस विधि करी गध बहु धार जी,
अगनि मधि खेवने चले सुखकार जी। तीर्थपद

ॐ हीं बहुश्रुतभक्ति-भावनायै धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

श्रीफला लौग शुभ खारका जानिये,
आदि इन फला ले भक्ति चित ठानिये।
तीर्थ पद दाय सुन लोभ उर आय जी,
पूजिहौ बहुश्रुत भाव मन काय जी।।

ॐ ह्रीं बहुश्रुतभक्ति-भावनायै फलं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

नीर गध तदुला फूल नैवेद्य जी,
दीप शुभ धूप फल अर्घ निरखेद जी। तीर्थपद

ॐ ह्रीं बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

प्रत्येक अर्घ

मुनियानंदी चाल

अग एकादशा पूर्व चौदह सही,
इन सबै जान बहुश्रुत गुण की मही।
जजै इनको तिको इनपदी पाय जी,
मै जजौ बहुश्रुत भक्ति मनलाय जी।।

ॐ ह्रीं एकादशांग-चतुर्दशपूर्व-गुणधारक-बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

जतन तै चालिये जतन उठ बैठ जी,
जतन तै काज सब कहै गुन पैठ जी।
अग आचारमधि जतन तैं अघ नही,
या धरा मुनि बहुश्रुत जजौ पुन्य मही।।

ॐ ह्रीं आचारांगसहित-बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।।2।।

विनय विधि और अध्ययन श्रुत को सही,
आप मत और मत भेद ता मधि कही।
सूत्रकृताग अग माहि इम जानिये,
या धरा मुनि बहुश्रुत थुति आनिये।।

ॐ ह्रीं सूत्रकृतागसहित-बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।।3।।

तहाँ जिय थान इक आदि उगणीस जी,
षट् अधिक चार शत कहे जगदीश जी।
यह स्थानासु अग माहि सब इम कही,
या धरा मुनि बहुश्रुत जजौ शुभ मही।।

ॐ ह्रीं स्थानागसहित-बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।।4।।

काल द्रव्य क्षेत्र इन आदि सम गाइये,
सकल सम वस्तु जो जगत मे पाइये।
सकल समवाय अग माहि या विधि कही,
या धरा मुनि बहुश्रुत जजौं शुभ मही।।

ॐ ह्रीं समवायागसहित-बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।।5।।

जीव अस्ती तथा नास्ती है सही,
एक अनेक जिय आदि सब विधि कही।
अग व्याख्या प्रज्ञप्ति नाम में इम चयो,
या धरा मुनि बहुश्रुत जजौ शुभ मही।।

ॐ ह्रीं व्याख्याप्रज्ञप्तिअंगसहित-बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि ।।6।।

तीर्थ जिनदेव के कहे अतिशय मही,
दिव्यधुनि समोसर्ण आदि शोभा कही।
अग ज्ञातृकथा माहि इम सब कहै,
या धरा मुनि बहुश्रुत जजौ शुभ मही।।

ॐ ह्रीं ज्ञातृकथागसहित-बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।।7।।

प्रतिमा भेद ग्यारह तहाँ वरणए,
और आचार श्रावक तने बहु चए।
उपासकाध्ययन सो अग या विधि कही,
या धरा मुनि बहुश्रुत जजौ शुभ मही।।

ॐ ह्रीं उपासकाध्ययनांगसहित-बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।8।

इक इक तीर्थ समै ये सु दस दम भए,
आयु अंत काय तजि ज्ञान ले शिव गए।
अंग कृतांग दश माहि इन विधि कही,
या मुनि बहुश्रुत जजौ शुभ मही।।

ॐ ह्रीं एकादशांगचतुर्दशपूर्व-गुणधारक-बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

एक इक जिन समय भए दस दस मुनि,
आयु अंत काय तजि पदी अहमिंद ठनी।
यह अनुत्तरोपपाद दशअंग इम कही,
या धरा मुनि बहुश्रुत जजौं शुभ मही।।

ॐ ह्रीं अनुत्तरोपपादिक-दशांगसहित-बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।10।।

गई वस्तु तथा मूठितनी जान जी,
और होनहार विधि लखै सब आन जी।
प्रश्न व्याकरण अंग धार उत्तरै करै,
या धरा मुनि बहुश्रुत जजौ अघ हरै।।

ॐ ह्रीं प्रश्नव्याकरणांगसहित-बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।11।

शुभाशुभ कर्म का फल तिको जानिए,
तीव्र मंद जैसे अनुभाग रस आनिए।
सूत्र सु विपाक अंग माहि इम भास है,
या धरा मुनि बहुश्रुत थुति राशि है।।

ॐ ह्रीं विपाकसूत्रांगसहित-बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि।12।

अंग आचार इन आदि ग्यारह सही,
महाश्रुतज्ञान यह ऋद्धि बहु इस महीं।

तीन जग गुरु जगनाथ मुनि सोय जी,
अग मब धार बहुश्रुत जजौ जोय जी।।

ॐ ह्रीं एकादशांगसहित-बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि ।।13।।

चौदह पूर्व अर्घ

वस्तु उत्पाद व्यय ध्रौव्य लक्षण सही,
द्रव्य पर्याय गुण माधनादिक कही।
पूर्व उत्पाद मो ताम मे इम चयो,
या धरा बहुश्रुत पाय मै सिर नयो।।

ॐ ही उत्पादपूर्वसहित-बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।।14।।

तास मै सुनय वा कुनय व्याख्यान जी,
द्रव्य खेतर तने भाव को मान जी।
कथन इन आदि अग्राणि पूरब कह्यो,
या धरा बहुश्रुत पाय जज धनि भयो।।

ॐ ही अग्रायणीपूर्वसहित-बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि।15।

आत्म वीरज तथा काल वीरज सही,
भाव तप वीर्य वा क्षेत्र वीरज कही।
वीर्य अनुवाद पूरब विषे इम कह्यो
या धरा बहुश्रुत पाय जज धनि भयो।।

ॐ ह्रीं वीर्यानुवादपूर्वसहित-बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि।16।

द्रव्य अस्ती तथा नास्ती इम कह्यो,
भावद्रव्य क्षेत्र काल आदि तहाँ सब चयो।
पूर्व अस्ति नास्ति में कही ये विधि सही,
या धरा बहुश्रुत पाय जजि पुण्य मही।।

ॐ ह्रीं अस्ति-नास्तिप्रवाद-पूर्वसहित-बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।17।।

ज्ञान वसु मति श्रुत आदि जे फल कहे,
और सब ज्ञान के भेद वरणान ठहे।
ज्ञान परवाद पूरब तिको जानिए,
या धरा बहुश्रुत जजौ थुति ठानिये।।

ॐ ह्रीं ज्ञानप्रवादपूर्वसहित-बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि।18।

वचन के भेद सत असत अनुभय उभय,
समिति गुप्ति तने भाव भाखे समय।
सत्य परवाद पूरब विषैं सब कहे,
या धरा बहुश्रुत पाय जजौ मन वच ठहे।।

ॐ ह्रीं सत्यप्रवादपूर्वसहित-बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि।19।

जीव निश्चय नय और व्यवहार है,
जीव अस्तित्व विधि कथन अनिसार है।
पूर्व यह आत्मपरवाद मे सब कही,
या धरा बहुश्रुत जजौ मन वच सही।।

ॐ ह्रीं आत्मप्रवादपूर्वसहित-बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि।20।

कर्मबन्ध उदय सत मूलकर्म जानिए,
प्रकृति उत्तर तनै भेद बहु आनिए।
कर्म परवाद पूरब विषै इम कही,
या धरा बहुश्रुत जजौ मन वच सही।।

ॐ ह्रीं कर्मप्रवादपूर्वसहित-बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि।21।

ता विषै सुमति व्रत तप निक्षेपा सही,
सकल अघ त्याग की रीति तामैं कही।
यह प्रत्याख्यान पूरब सबै वरणयो,
या धरा बहुश्रुत जजौ सब अग नयो।।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानपूर्वसहित-बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि।22।

ता विषै तप विद्या साधने मत्र जी,
विद्या मामर्थ्य फल और विधि अन्य जी।
पूर्व विद्यानुवाद विषै इम कही,
या धरा बहुश्रुत जजौ मन वच सही।।

ॐ ह्रीं विद्यानुवादपूर्वसहित-बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि।23।

तीर्थ जिन जन्मकल्याण आदिक सही,
भानु शशि जोतिषी और महिमा कही।
पूर्व कल्याण इस वाद मे इम चयो,
या धरा बहुश्रुत जजौ मन वच नयो।।

ॐ ह्रीं कल्याणवादपूर्वसहित-बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि।24।

वैद्य जोतिष कथन तास में पाइये,
यत्र विष नाशनै मत्र जहाँ गाइये।
पूर्व प्राणानुवाद में यह सब कही,
या धरा बहुश्रुत जजौ मन वच सही।।

ॐ ह्रीं प्राणानुवादपूर्वसहित-बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि।25।

छद अलकार सगीत नृत तहाँ कहे,
त्रिय चौसठ कला शिल्प विधि सब ठहै।
पूर्व किरिया सु विशाल में इम कही,
या धरा बहुश्रुत जजौं मन तन सही।।

ॐ ह्रीं क्रियाविशालपूर्वसहित-बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।26।

कथन त्रयलोक का मोक्ष साधन सही,
गिनति जानन करण सूत्र विधि सब कही।
पूर्व त्रयलोकबिन्दु माहि यह सब कह्यो,
या धरा बहुश्रुत पूज मै धनि भयो।।

ॐ ह्रीं त्रिलोकबिन्दुपूर्वसहित-बहुश्रुतभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि।27।

अग ग्यारह भले पूर्व चौदह सही,
भेद इनका लहै गुरु ते हम कही।
पढै जिन पाठ औरन थकी कहत जी,
जजौ तें बहुश्रुत ज्ञान गुण सहत जी।।

ॐ ह्रीं एकादशाग-चतुर्दशपूर्वसहित-बहुश्रुतभक्ति-भावनाये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।28।।

जयमाला

मुनियानदी की चाल

बहुश्रुत जगतगुरु सकल गुणधार हैं,
श्रुत मागर तनौ लहै प्रभु पार है।
राग बिन जगत के बन्धु सम हितकरा,
नमौ तिन चरण फल होय सो अघहरा।।1।।
आप पढि शिष्यन को देत उपदेश जी
तासको धार भव्य लहै मुनि भेषजी।
ध्यानध्ययन माहि निशदिना मुखमय खरा,
नमौ तिन चरण फल होय मो अघ हरा।।2।।
करै बहुभाँति तपऋद्धि तिनपै घनी,
पाप की बेल, जड मूलतै सब हनी।
करत दर्शन लहै पुण्य बढ शुभधरा,
नमो तिन चरणफल होय मो अघ हरा।।3।।
नाम गुरु को लिए ठाम नीकी लहै,
ज्ञान उर उपजै पाप अरि को दहै।
बहुश्रुत भक्ति तै भरम आगे खरा,
नमो तिन चरण फल होय मो अघ हरा।।4।।

चहो भव भव विषै भक्ति बहु शास्त्र की,
और नहि चाह मोहि राज सब भरत की।
अरज यह मो तनी भक्ति दे जग गुरा,
नमौ तिन चरण फल होय मो अघ हरा।।5।।

दोहा-भक्ति उपाध्याय की किए, भव उपाधि सब जाय।
मरण मिटै जनमै नही, इम लख पूजत पाय।।6।।

ॐ ह्रीं बहुश्रुतभक्ति-भावनायै पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।12।।

(13) प्रवचन भक्ति भावना पूजा।।

अडिल्ल- जिनकी वाणी सिद्धान्त अग ग्यारह सही,
चौदह पूरब और प्रकीरण धुनि कही।
षट्काई जिय राखन को जननी समा,
सो इहाँ थापन जजौ काय मन वच रमा।।

ॐ ह्रीं प्रवचनभक्ति-भावने ! अत्र अवतर अवतर सवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं प्रवचनभक्ति-भावने ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ. ठ. स्थापनम्।

ॐ ह्रीं प्रवचनभक्ति-भावने ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

चौपाई

पद्मकुण्ड को निरमल नीर, रतन जडित झारी धरि धीर।
पूजौ प्रवचन जिनधुनि सोय, तातै जनम मरण नहि होय।।

ॐ ह्रीं प्रवचनभक्ति-भावनायै जल निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

चन्दन बावन घस जल डारि, कनक पियालै धर हित धार।
पूजौ प्रवचन जिनधुनि सोय, ताफल भव तप कबहुँ न होय।।

ॐ ह्रीं प्रवचनभक्ति-भावनायै चन्दन निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

अक्षत मुक्ताफल सम जान, पातर में धरि निज कर आन।
पूजौ प्रवचन जिन धुनि सोय, ताफल अक्षय थान शिव होय।।
ॐ ह्रीं प्रवचनभक्ति-भावनायै अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।।3।।
फूलकनक कल्पवृक्ष के लाय, माल करी मनमें हरषाय।
पूजौं प्रवचन जिनधुनि सोय, ताफल काम नाश सब होय।।
ॐ ह्रीं प्रवचनभक्ति-भावनायै पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।
नानारस नैवेद्य बनाय, सुभग पात्र मे मोदक लाय।
पूजौं प्रवचन जिनधुनि सोय, ताके फल क्षुधा नहि होय।।
ॐ ह्री प्रवचनभक्ति-भावनायै नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।
रतन दीप तम नाशक जान, कनक थाल भर आरति ठान।
पूजौ प्रवचन जिनधुनि सोय, ताफल मिथ्यातम क्षय होय।।
ॐ ह्रीं प्रवचनभक्ति-भावनायै दीप निर्वपामीति स्वाहा।।6।।
धूप करी दस विधि गध लाय, अगनि माहि खेऊँ हरषाय।
पूजौ प्रवचन जिनधुनि सोय, ताफल अष्ट करम क्षय होय।।
ॐ ह्रीं प्रवचनभक्ति-भावनायै धूप निर्वपामीति स्वाहा।।7।।
श्रीफल खारक लौंग बदाम, पूगीफल आदिक शुभ नाम।
पूजौ प्रवचन जिनधुनि सोय, ताके फल शिव को पद होय।।
ॐ ह्रीं प्रवचनभक्ति-भावनायै फलं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।
नीर गध तदुल पुष्प जान, चरु दीपक फल धूप बखान।
पूजौ प्रवचन अर्घ सजोय, ताफल आवागमन न होय।।
ॐ ह्रीं प्रवचनभक्ति-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

प्रत्येक अर्घ

चौपाई

एकादश अग जिनकी बान, तामधि नाना भेद बखान।
ये सब सशय नाशनहार, पूजौ प्रवचन है सुखकार।।
ॐ ह्रीं एकादशअंगसहित-प्रवचनभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि।1।

चौदह पूरब जिन धुनि सही, मिथ्यातम नाशन रवि कही।
ये सब सशय नाशनहार, पूजौ प्रवचन है सुखकार।।

ॐ ह्रीं चौदहपूर्वसहित-प्रवचनभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि ।।2।।

प्रकीर्ण्ण अग प्रवचन सार, ताके चौदह भेद निहार।
ते सब सशय-तम-हर सूर, सो मै जजौ भाव भरपूर।।

ॐ ह्रीं प्रकीर्णकागसहित-प्रवचनभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि।3।

सब जीवन तै समता भाव, तप सजम करने अति चाव।
सो सामायिक प्रवचन जान, पूजौ मै वसु द्रव्य अघ आन।।

ॐ ह्रीं सामायिकसहित-प्रवचनभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।।4।।

तामै चौबिस जिन कल्यान, और तिनौ को स्तवन जान।
चतुर्विंश स्तवन अग सोय, सो मै जजो भाव शुद्ध होय।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिस्तवनसहित-प्रवचनभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि ।5।

जिन प्रतिमा जिन नाम सुभाय, तीर्थकर इनको सिरनाय।
वदन प्रवचन मे इम कही, सो मै जजो शुद्ध चित सही।।

ॐ ह्रीं वन्दनासहित-प्रवचनभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।।6।।

किए दोष तातै क्षय होय, तामे ऐसो कथन जु होय।
जो प्रतिक्रमण प्रवचन जान, सो मै जजौ भक्ति उर आन।।

ॐ ह्रीं प्रतिक्रमणसहित-प्रवचनभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।।7।।

देव धर्म गुरु विनय बखान, और विनय विधि बहुती जान।
वैनयिक अग में यह विधि कही, सो मैं जजो अरघ ले सही।।

ॐ ह्रीं वैनयिकसहित-प्रवचनभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।।8।।

पच परमेष्ठी थुति विधि तहाँ, नमस्कार प्रदक्षिण जहाँ।
कृतिकर्म में ऐसी विधि कही सो मैं जजौ भाव शुभ मही।।

ॐ ह्रीं कृतिकर्मसहित-प्रवचनभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।।9।।

मुनि इम आहार करे इम चलै, जती अचार और तहाँ मिलै।
दशवैकालिक इस विधि कही, सो मै जजौ भाव शुभ ठही।।

ॐ ह्रीं दशवैकालिकसहित-प्रवचनभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।10।

परिषह सहन सहन उपसर्ग, इनका फल परसन के वर्ग।
उत्तराध्ययन विषै इम कही, सो मे जजौ भाव शुभ मही।।

ॐ ह्रीं उत्तराध्ययनसहित-प्रवचनभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।11।

यह मुनि योग्य आचरण जोय, भए अयोग्य दण्ड ले सोय।
कल्पविहार अग इम कही, ते मैं जजौं भाव शुद्ध मही।।

ॐ ह्रीं कल्पविहारसहित-प्रवचनभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि ।।12।।

या द्रव्य खेतर कालर भाव, मुनि की क्रिया योग्य यह ठाव।
कल्पाकल्प अग इम कही, ते अग जजौ शुद्ध चित सही।।

ॐ ह्रीं कल्पाकल्पसहित-प्रवचनभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि ।।13।।

जिनकल्पी थिरकल्पी साध, और महा नर क्रिया समाध।
महाकल्प में या विधि कही, ते अग प्रवचन पूजौ सही।।

ॐ ह्रीं महाकल्पसहित-प्रवचनभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि ।।14।।

चार प्रकार देव किम होय, तहाँ उपजन की तपविधि सोय।
पूजा दान आदि तहँ जान, सो पुण्डरीक जजौ अग मान।।

ॐ ह्रीं पुण्डरीकसहित-प्रवचनभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।।15।।

इन्द्र अहमिन्द्र होन को सही, तपस्या आदि विधि सब कही।
महापुण्डरीक अग सो जान, ते मैं जजौं अरघ शुभ आन।।

ॐ ह्रीं महापुण्डरीकसहित-प्रवचनभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि।16।

क्रिया प्रमाद थकी अघ सोय, ताके नाश होन विधि जोय।
सो निषद्य का अग में कही, सो मैं जजौ भाव शुध सही।।

ॐ ह्रीं निषद्यकासहित-प्रवचनभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि.।।17।।

अग पूर्व परकीरण अग, जिन मुखतै उपजे शुभ रग।
सो सिद्धान्त जगत हितकार, सो मै जजौ दयादधिसार।।

ॐ ह्रीं जिनमुखोत्पन्न-प्रवचनभक्ति-भावनायै अर्घ्यं नि ।।18।।

जयमाला

दोहा-यह जिनवानी जगत हित, करुणासागर जान।
षट्कायक रक्षक जननि, सो जजि हौ सुखदान।।1।।

बेसरी छन्द

यह जिनवानी शिवसुखदानी, लगे पाप नाशै मुनि मानी।
यातै सुरग मोक्ष को पावै, तातै भवि हम शीश नवावै।।2।।
या बिन उर के पट नहि खूटै, या बिन कर्मबन्ध नहि छूटै।
यह भव दधि को नाव बतावै, तातै भवि हम शीश नमावै।3।।
याही तै मुनि शिवमग पाया, या बिन आतम जग भरमाया।
सकल भवा तब जिनधुनि पावै, तातै भवि हम शीश नमावै।।4।।
यह जिनवानी भवनत्रय दीवा, यातै निज पर लखै सुजीवा।
दयानिधान जगत जस गावे, तातै भवि हम शीश नमावै।।5।।
हरि सुर याको पूजै भाई, याही फलतैं सुरलछि पाई।
गणधर मुनि याको नित ध्यावै, तातै भवि हम शीश नमावै।।6।।

दोहा-जिनवानी गुन कहन को, समरथ नाहीं कोय।
ता ध्याये जिनपद मिले, इम लख पूजौं सोय।।7।।

ॐ ह्रीं प्रवचनभक्ति-भावनायै पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।13।।

(14) षट् आवश्यक भावना पूजा।।

गीता छन्द

सामायिक स्तवन प्रतिक्रम वन्दना मन लाइये।
फिर प्रत्याख्यान जु कायोत्सर्ग मिल अवश्य षट् विधि पाइये।

यह करै मुनिवर रोज निहचै आवश्यक बिसरै नही।
इहॉ थापि षड् आवशि सुभावन पूजहौ मन वच ठही।।

ॐ ह्री षट्आवश्यक-भावने ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वान।

ॐ ह्री षट्आवश्यक-भावने ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठ. स्थापन।

ॐ ह्री षट्आवश्यक-भावने ! अत्र मम सन्निहिता भव भव वषट् सन्निधिकरण।

पद्धड़ी छन्द

गगा जल निरमल गध धार, धरि रतन झारि लायो विचार।
मन वचन काय शुभ भक्ति लाय, पूजौ षट् आवशि शीश नाय।।

ॐ ह्री षट्आवश्यक-भावनाये जल निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

चन्दन घसि निरमल नीर डा✓, धर सुभग पात्र में थुति उचार।
जिनको पद या फल होय आय, पूजौं षट् आवशि शीश नाय।।

ॐ ह्रीं षट्आवश्यक-भावनाये चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

अक्षय अखण्ड उज्ज्वल सुगध, मुक्ताफल मानो धरै सकध।
धर भक्ति भाव ले हाय आय, पूजौं षट् आवशि शीश नाय।।

ॐ ह्रीं षट्आवश्यक-भावनाये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाटा।।3।।

पुष्प कल्प के गध धार, नाना रगधारी शुभ अकार।
तिनकी कर माला भक्ति लाय, पूजौं षट् आवशि शीश नाय।।

ॐ ह्रीं षट्आवश्यक-भावनाये पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

नाना रसजुत नैवेद्य जान, कर मोदक शुभ आचार ठान।
धरि सुभग थाल उरभक्ति भाय, पूजौं षट् आवशि शीश नाय।।

ॐ ह्रीं षट्आवश्यक-भावनाये नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

मणिदीप जोतिमय तम विनाश, भर थाल आरती थुति प्रकाश।
अग सकल नाय मन शुद्ध लाय, पूजौ षट् आवशि शीश नाय।।
ॐ ह्रीं षट्आवश्यक-भावनायै दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।
ले अगर आदि दशगध सोय, कर इकट्ठी धूप बनाय जोय।
खेऊँ अगनी में भक्ति लाय, पूजौं षट् आवशि शीश नाय।।
ॐ ह्रीं षट्आवश्यक-भावनायै धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।
श्रीफल बदाम खारक अनूप, पूगीफल लौंग अचार धूप।
धर भले पात्र में भक्ति लाय, पूजौं षट् आवशि शीश नाय।।
ॐ ह्रीं षट्आवश्यक-भावनायै फलं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।
जल चन्दन तदुल पुष्पसार, चरु दीप धूप फल अरघ धार।
धर भक्ति भाव ले आय पाय, पूजौ षट् आवशि शीश नाय।।
ॐ ह्रीं षट्आवश्यक-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

प्रत्येक अर्घ

चौपाई

सब जीवनतैं समता भाव, तप सयम करने को चाव।
सो सामायिक आवशि जोय, मैं पूजौं वसु द्रव्य ले सोय।।
ॐ ह्रीं सामायिकसहितषट्आवश्यक-भावनायै अर्घ्यं नि.।1।
चौबीसों जिनकी थुति होय, स्तवन आवशि कहिये सोय।
ताको वसु द्रव्य अरघ बनाय, पूजौं मन वच भक्ति लगाय।।
ॐ ह्रीं स्तवसहितषट्आवश्यक-भावनायै अर्घ्यं नि.स्वाहा।।2।।
सो जिनवरन को शीश नमाय, पूजा विधि ठानै मन लाय।
वन्दन आवश्य कहिये सोय, ताको पूजौं अर्घ सजोय।।
ॐ ह्रीं वन्दनासहितषट्आवश्यक-भावनायै अर्घ्यं नि.स्वाहा।।3।।
जो प्रमादतैं लागै दोष, ताको दूर करन को पोष।
सो प्रतिक्रमण आवश्य जान, पूजौं अर्घ धार सो आन।।
ॐ ह्रीं प्रतिक्रमणसहितषट्आवश्यक-भावनायै अर्घ्यं नि.।4।

पाप क्रिया को त्याग सुजान, वरतै सावधान बुधिवान।
प्रत्याख्यान सु अवश्य जोय, ताको मै पूजो मद खोय।।

ॐ ह्री प्रत्याख्यानसहितषट्‌वश्यक-भावनाये अर्घ्यं नि ।5।

मन वच तन का त्यागी होय, वरतै ममत रहित चित सोय।
कायोत्सर्ग आवश्य सो जान, याको मैं पूजौ मन वच आन।।

ॐ ह्रीं कायोत्सर्गसहितषट्‌वश्यक-भावनाये अर्घ्यं नि ।6।

ये षट् आवश्य मुनि नित करै, इन बिन वरत दोष को धरै।
तातै अवश्य करै मुनिनाथ, मैं यह भाव जजो सिर हाथ।।

ॐ ह्री षट्‌वश्यक-भावनाये अर्घ्यं नि. स्वाहा।।7।।

जयमाला

बेसरी छन्द

ये षट् आवश्य मुनि धर्म राखै, खेत बाड ज्यो रक्षा भाखै।
अवश्य करै तातै मुनि भाई, आवश्य नाम जान जिन गाई।।1।।
आवश्य भाव जजै जो प्रानी, सो शिव अवश्य लहै अघ हानी।
तीर्थंकर पद यातै पावै, अवश्य नाहि जग मे भरमावै।।2।।
आवश्य हरै पाप की धारा, आवश्य अवशि करै कर्म न्यारा।
आवश्य मुनिधर्म तरु जड जानो, आवश्य मुनिपद मित्र बखानो।।3।।
आवश्य अवशि भावना भावै, ते भवि अवशि अमर हो जावे।
अवशि ध्यान आवश्य को धारै, सो प्राणी कर्म अरि को मारै।।4।।
आवश्य तै अरति नश जावै, आवश्य तै आतम हित पावै।
हरै पाप धर्म उमगाया, तातै आवश्य भाव सुभाया।।5।।
आवश्य समता भाव बतावै, आवश्य तप सजम समझावै।
आवश्य जिनथुति जाननहारा, आवश्य प्रभु पूजा विधि सारा।।6।।
आवश्य लगे पाप को धोवै, आवश्य पाप त्याग विधि जोवै।
आवश्य तन तैं नेह तुडावै, सो आवश्य मै जजौ सुझावै।।7।।

दोहा-आवश्य भाव अनूप धर्म, भावै धर्म सुझाव।
लहै तीर्थपद सो भविक, आवश्य भाव कराव।।8।।

ॐ ह्री षट्ावश्यक-भावनायै पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।14।

(15) मार्गप्रभावना भावना पूजा।।

स्थापना (अडिल्ल)

मन वच तन धन लाय बुद्धि तप भावतै,
धर्म उद्योत करै भवि अति ही चावतै।
मार्ग प्रभावना भाव तीर्थपद दाय जी,
सो मै थापन थाप जजौ थुति लाय जी।

ॐ ह्रीं मार्गप्रभावना-भावने ! अत्र अवतर अवतर संवौष आह्वान।

ॐ ह्री मार्गप्रभावना-भावने ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापन

ॐ ह्री मार्गप्रभावना-भावने ! अत्र मम सन्निहिता भव भ वषट् सन्निधिकरणं।

अष्टक मुनियानंदी की चाल

क्षीरोदधि तनो ले नीर निरमल सही,
कनक झारी धरयो महा पुण्य की मही।
तीर्थ पद लोभ को धार मन माहि जी,
पूजिहौ मार्ग परभावना ठाहि जी।।

ॐ ह्रीं मार्गप्रभावना-भावनायै जलं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

चन्दना नीर घसि गधमय सार जी,
सुभग पातर विषैं जुगत तै धार जी।
तीर्थ पद लोभ को धार मन माहि जी,
पूजिहौ मार्ग परभावना ठाहि जी।।

ॐ ह्रीं मार्गप्रभावना-भावनायै चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।।2।

अक्षता खण्ड बिन बीन नखशिख सही,
उज्ज्वला कली जिम जायकी सी कही।
तीर्थ पद लोभ को धार मन माहि जी,
पूजिहौ मार्ग परभावना ठाहि जी।।

ॐ ह्रीं मार्गप्रभावना-भावनायै अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

फूल सुरवृक्ष के गधमय सार जी,
रग शुभ लेय कर माल थुति धार जी।
तीर्थ पद लोभ को धार मन माहि जी,
पूजिहौ मार्ग परभावना ठाहि जी।।

ॐ ह्रीं मार्गप्रभावना-भावनायै पुष्प निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

लाय नैवेद्य रस धार सुखकार जी,
मोदकादिक शुभ थाल में धार जी।
तीर्थ पद लोभ को धार मन माहि जी,
पूजिहौ मार्ग परभावना ठाहि जी।।

ॐ ह्रीं मार्गप्रभावना-भावनायै नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

दीप तम के हरा रतन के लाय जी,
थाल भर आरती भक्ति बहु भाय जी।
तीर्थ पद लोभ को धार मन माहि जी,
पूजिहौ मार्ग परभावना ठाहि जी।।

ॐ ह्रीं मार्गप्रभावना-भावनायै दीपं निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

धूप शुभ गध की धार मन लाय कै,
अग्नि में खेय हौं भक्ति मुख गाय कै।
तीर्थ पद लोभ को धार मन माहि जी,
पूजिहौ मार्ग परभावना ठाहि जी।।

ॐ ह्रीं मार्गप्रभावना-भावनायै धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

श्रीफला लौग पूगीफला आन जी,
और फल सुभग ले पात्र मे ठान जी।
तीर्थ पद लोभ को धार मन माहि जी,
पूजिहौ मार्ग परभावना ठाहि जी।।

ॐ ह्रीं मार्गप्रभावना-भावनायै फलं निर्वपामीति स्वाहा.।।8।।

नीर गध अक्षता पहुप चरु लाइये,
दीप फल धूप कर अर्घ गुन गाइये।
तीर्थ पद लोभ को धार मन माहि जी,
पूजिहौ मार्ग परभावना ठाहि जी।।

ॐ ह्रीं मार्गप्रभावना-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

प्रत्येक अर्घ

मुनियानंदी की चाल

द्रव्य बहु खरच जिन मन्दिर बनवाय हैं,
तीर्थ सिद्ध क्षेत्र को सघ चलवाय है।
दीन को दान देय दया मन लाय जी,
सो जजौं मार्ग परभावना भाय जी।।

ॐ ह्रीं द्रव्यतैं मार्गप्रभावना-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

आप लखतैं नहीं धर्म घातै सही,
धर्म के कारण मरण माडै मही।
तास लख जोर बहु सकल कपै जना,
जौरतैं धर्म परभाव पूजौं घना।।

ॐ ह्रीं शक्तितैं मार्गप्रभावना-भावनायै अर्घ्यं नि.स्वाहा।।2।।

कुसुम ताके थकी सकल कपै सही,
देख धरमी नहीं धर्म लघै नहीं।

धर्मधोरी महा धर्म का धार जी,
जजौ यह भाव परभावना मारजी।।

ॐ ह्री आज्ञातै मार्गप्रभावना-भावनायै अर्घ्यं नि स्वाहा।।3।।

देख तप नाम सब चकित मन मे रहै,
देहतै ममत तज वास दुद्धर लहै।
नाहि मोही तबै काज ऐसा बनै,
तप थर्की मार्ग परभाव इह जज नमै।।

ॐ ह्रीं तपतैं मार्गप्रभावना-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

मन सदा धर्म परभावना चाहि है,
इन्द्र चक्री जिसा उछव मन भाय है।
देख सुन धर्म उद्योत सुख पाय जी,
मन थकी धर्म परभाव जज याहि जी।।

ॐ ह्रीं मनतैं मार्गप्रभावना-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

देख तिस ज्ञान जग महा चक्रित रहै,
ज्ञान केवल थकी कालत्रय की कहै।
ज्ञान ऐसा नही और मत पाय जी,
ज्ञान कर धर्म परभाव जजूँ भाय जी।।

ॐ ह्रीं ज्ञानतैं मार्गप्रभावना-भावनायै अर्घ्यं नि स्वाहा।।6।।

देख तिस दान को सकल अचरज लहै,
दान ऐसो नहीं और मत में कहै।
या जिसो धर्म नही और जग इम कहै,
धर्म परभाव जजूँ दान कर शुभ लहै।।

ॐ ह्रीं दानतैं मार्गप्रभावना-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

तास को न्याय लख जगत साता लहै,
या समा धर्म नहीं सकल ऐसै कहै।

न्याय कर धर्म जग माहि परगट करे,
धर्म परभावना भाव जजूं अघ हरे।।

ॐ ह्री न्यायतैं मार्गप्रभावना-भावनायै अर्घ्यं नि. स्वाहा।।8।।

देख प्रभुभक्ति ताकी सबै धनि कहै,
या समा भक्ति जगमाहि नहि अनि रहै।
भक्ति कर धर्म परगट करे सोय जी,
मार्ग परभावना भक्ति जजूं जोयजी।।

ॐ ह्रीं भक्तितैं मार्गप्रभावना-भावनायै अर्घ्यं नि. स्वाहा।।9।।

देख समभाव कहे धन्य है ताहि जी,
धर्म यासो नही और जग ठॉहि जी।
भाव समता थकी धर्म परगट करै,
मार्ग परभाव जजूं तो सकल अघ हरै।।

ॐ ह्रीं भक्तिसमताभावतैं मार्गप्रभावना-भावनायै अर्घ्यं।10।

और बहु धर्म के अग है सार जी,
तिन थकी धर्म परगट करै भार जी।
काज सो ही करै धर्म महिमा लहै,
सो जजौ धर्म परभावना अघ दहै।।

ॐ ह्रीं मार्गप्रभावनाभावनायै महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।11।।

जयमाला

दोहा-धर्म उद्योत जासौ लहै, सो ही करिये काज।
ता फल तीर्थंकर बनै, लहै निरजन राज।।1।।

धर्म प्रभावन जो भवि ठानै, सो जगके सब पातक हानै।
धर्म प्रगट करि है जो प्रानी, सो प्रभावना अग बखानी।।2।।
दान देय मन वाछित सोई, कल्पवृक्ष सम पूरै जोइ।
ताकर धर्मोद्योत करावै, सो प्रभावना अग कहावै।।3।।

सघ चलावै तीरथ ठाही, मनवाछित द्रव्य खर्च कराही।
विनय सहित उत्सव बहु आनै, सो प्रभावना अग बखानै।।4।।
जिनमन्दिर जिनबिम्ब करावै, फिर परतिष्ठा कर हरषावे।
करै उछाह धर्म परभावन, सो प्रभावना अग सुजान।।5।।
तप बहु करै उग्र सुख पावै, सिह नि क्रीडित आदि करावै।
उग्रोउग्र महातप आनै, सो प्रभावना अग को ठानै।।6।।
मतिश्रुत अवधिज्ञान ते भाई, मन परजय आदिक सुखदाई।
इनतै जगके सशय खोवै, मो प्रभावना अगमय होवै।।7।।
दोहा-परभावन के भेद बहु, करै भव्य मन सोय।
ताको जिनपद होत है, अधिक कहन तै कोय।।8।।

ॐ ही मार्गप्रभावनाभावनायै पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।15।।

(16) प्रवचन वात्सल्य भावना पूजा।।

अडिल्ल छन्द- तिनकी वानी प्रवचन जग मे सार है,
करुणासागर मोई करत भव पार है।
याको वत्मल भाव प्रीति मन लाय है,
सो इहाँ प्रवचन थाप भावना भाय है।।

ॐ ह्रीं प्रवचनवात्सल्य-भावने ! अत्र अवतर अवतर सवौषट् आह्वान।

ॐ ह्रीं प्रवचनवात्सल्य-भावने ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापन।

ॐ ह्रीं प्रवचनवात्सल्य-भावने ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

बेसरी छन्द

गग सरित को निरमल नीरा, उज्ज्वल सुभग गध जुत वीरा।
भले पात्र में धर थुति लाई, पूजौं प्रवचन वत्सल भाई।।

ॐ ही प्रवचनवात्सल्य-भावनायै जलं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

चन्दन बावन पावन धारी, घसिहौ नीर डार हितधारी।
कचन झारी धर मनलाई, पूजौ प्रवचन वत्सल भाई।।

ॐ ह्रीं प्रवचनवात्सल्य-भावनायै चन्दन निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

अक्षत उज्ज्वल बीन अनूपा, नखशिख जुत मुक्ताफल रूपा।
भले पात्र में धर कर लाई, पूजौ प्रवचन वत्सल भाई।।

ॐ ह्रीं प्रवचनवात्सल्य-भावनायै अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।।3।।

फूल गध शुभ रग के धारी, सुरतरु पुष्प की भावन प्यारी।
गूँथ माल अपने कर लाई, पूजौ प्रवचन वत्सल भाई।।

ॐ ह्रीं प्रवचनवात्सल्य-भावनायै पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

षट्रस जुत नैवेद्य मिलाई, मोदक भले शोध कर लाई।
नीके पातर मे धर लाई, पूजौ प्रवचन वत्सल भाई।।

ॐ ह्रीं प्रवचनवात्सल्य-भावनायै नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

दीपक रतनजोत परकासी, तमनाशक निरधूम सुवासी।
कनक थाल भर आरति लाई, पूजौ प्रवचन वत्सल भाई।।

ॐ ह्रीं प्रवचनवात्सल्य-भावनायै दीप निर्वपामीति स्वाहा।।6।।

धूप अगर चदन की ठानी, दसविधि गध और धर आनी।
अगनि माहि मै खेवन लाई, पूजौ प्रवचन वत्सल भाई।।

ॐ ह्रीं प्रवचनवात्सल्य-भावनायै धूपं निर्वपामीति स्वाहा।।7।।

श्रीफल लौग सुपारी जानौ, खारक आदि भले फल आनौ।
सुथरे पातर में धर लाई, पूजौं प्रवचन वत्सल भाई।।

ॐ ह्रीं प्रवचनवात्सल्य-भावनायै फलं निर्वपामीति स्वाहा।।8।।

नीर गध अक्षत पुष्प भाए, चरु दीपक फल धूप सु लाए।
अरघ करी अपने कर आई, पूजौं प्रवचन वत्सल भाई।।

ॐ ह्रीं प्रवचनवात्सल्य-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।9।।

प्रत्येक अर्घ

मुनियानदी की चाल

पत्र शुभ ऊजले पुष्ट चिकने सही
दीर्घ मौली लिए हर्ष मन की मही।
तामगे बानि जिनसूत्र उतराइये,
भाव वात्सल्य प्रवचन जजो भाईये।।

ॐ ही शुभपत्रनिविषै लिखावन-प्रवचनवात्सल्य-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

अक चॉदी तथा कनक के मॉडिए,
सुभग आकार धर भक्ति अघ छॉडिए।
या विधि हर्ष सिद्धान्त उतराइये,
भाव वात्मल्य प्रवचन जजो भाईये।।

ॐ ह्रीं मनोज्ञाक्षर लिखावन-प्रवचनवात्सल्य-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।2।।

ताम जर चिकन किमखाब ममरू सही,
और उन्कृष्ट वहुमूल तिनको कही।
लाय उर भक्ति औ छॉड बनवाइये,
भाव प्रवचन वात्मल्य जज गाइये।।

ॐ ह्रीं मनोज्ञवस्त्रबन्धन-प्रवचनवात्सल्य-भावनायै अर्घ्यं नि.।3।

भले श्रुत राखने कनक चॉदी तने,
काष्ठ के सुभग पट उग्र तिन के बने।
करै पुट्ठा इसी भॉति मन लाइए,
भाव प्रवचन वात्सल्य जज गाइये।।

ॐ ही सुभगपुट्ठेकरण-प्रवचनवात्सल्य-भावनायै अर्घ्यं नि ।4।

कनक मय जडित चॉदी तने जानिए,
भरत वा घडति अनि धात कर आनिये।
काष्ठ चित्राम चौकी सु बनवाइये,
भाव प्रवचन वात्सल्य जज गाइये।।

ॐ ह्रीं वाचने को सुभग-चौकीकरण-प्रवचनवात्सल्य-भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।5।।

वॉचिए वानि जिन मन वचन काय जी,
एक कर चित्त उर भक्ति उमगाय जी।
वानि जिन विनयतैं पाठ पढवाइये,
भाव प्रवचन वात्सल्य जज गाइये।।

ॐ ह्रीं विनयतैं शास्त्र-पठन-प्रवचनवात्सल्य-भावनायै अर्घ्यं।6।

मन वचन काय थिर ठान जिन धुनि सुनै,
धारण धार अघतै डरै शुभ ठनै।
विनयजुत श्रवण कर आप धनि ध्याइये,
भाव प्रवचन वात्सल्य जज गाइये।।

ॐ ह्रीं विनयतै शास्त्र-श्रवण-प्रवचनवात्सल्य-भावनायै अर्घ्यं।7।

जाय पुस्तक धरै ठाम शुभ जोय जी,
विनयतै काय मन शुद्ध अति होय जी।
जतन कूं राख मन हर्ष बहु लाइये,
भाव प्रवचन वात्सल्य जज गाइये।।

ॐ ह्रीं विनयतैं शास्त्रधारण-प्रवचनवात्सल्य-भावनायै अर्घ्यं।8।

जतन तैं लेय पुस्तक विनय ठान जी,
भक्ति मन वचन शुभ कायतैं आन जी।
महा आदर करी शास्तर लाइये,
भाव प्रवचन वात्सल्य जज गाइये।।

ॐ ह्रीं विनयतैं पुस्तक-उठावन-प्रवचनवात्सल्य-भावनायै अर्घ्यं।9।

धरण पुस्तक भली ठाम बनवायवो,
नाहि सरदी तहाँ टीप करवायवो।
विनयतै पुस्तके तहॉ धरवाइये,
भाव प्रवचनवात्सल्य जज गाइये।।

ॐ ह्रीं विनयतै पुस्तकधारण-स्थान-करावन-प्रवचनवात्सल्य भावनायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।10।।

अग इन आदि बहु विनय विधि ठानिए,
प्रीत अति अन्तरै भक्ति शुभ आनिए।
जान जिनवानि आदर विनय लाइये,
भाव प्रवचन वात्सल्य जज गाइये।।

ॐ ह्रीं प्रवचनवात्सल्य-भावनायै अर्घ्यं नि ।।11।।

जयमाला

दोहा-वात्सल्य प्रवचन भाव सौं, जिनधुनि तै अति नेह।
विनय सहित वरतै सदा, सकल तिनौं की देह।।1।।

बेसरी छन्द

जिनवानी तैं वत्सल भावा, मेटत है जग का सब दावा।
ताकी सुर नर सेव करावै, जो जिय प्रवचन वत्सल भावै।।2।।
जो श्रुत सुनै भाव हरषावै, आपा पर को भेद लखावे।
तिनतैं सब जग प्रीत करावै, जो जिय प्रवचन वत्सल भावै।।3।।
प्रवचन पाठ करै मनलाई, ताको जस गावै सुरराई।
ताकै पाप निकट नहि आवै, जो जिय प्रवचन वत्सल भावै।।4।।
जिन धुनि सुनै हनै अघ सोही, याको भेद लहै नहि मोही।
सारा जग कूँ प्यारा थावै, जो जिय प्रवचन वत्सल भावै।।5।।
विनय सहित पुस्तक को राखै, ताको विनय लोक सब भाखै।
प्रीत घनी जिन धुनितैं लावै, जो जिय प्रवचन वत्सल भावै।।6।।

कनक रजत की स्याही ठानै, पत्र महा बध मोला आनै।
तिनपै जिनधुनि को लिखवावै, जो जिय प्रवचन वत्सल भावै।।7।।
बन्धन श्रुतको सुभग करावन, लावै पट जर रेशम पावन।
डोरी सुभग आन हरषावै, जो जिय प्रवचन वत्सल भावै।।8।।
आगम धरने ठाम अनूपा, बनवावै दिढ सुन्दर रूपा।
तहाँ न सरदी चित्र करावै, जो जिय प्रवचन वत्सल भावै।।9।।
दोहा-इत्यादिक गुन जो लहैं, दहै कर्मवन सोय।
भावे प्रवचन भावना, अति चित वत्सल होय।।10।।

ॐ ह्रीं प्रवचनवात्सल्य-भावनायै महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।16।।

समुच्चय जयमाला

दोहा- सोलहकारण भावना, भावै जो भवि सोय।
सो पद तीर्थंकर लहै, घनी कहनतैं कोय।।1।।

मुनियानंदी की चाल

षोडशकारण यह भावना भाय है,
तहाँ न मद आठ षट् आयतन पाय है।
अष्ट सम्यक्तने दोष नहि जानिए,
मूढता तीन नहि ज्ञान शुद्ध आनिए।।2।।
विनय गुरुदेव की राह जानै सही,
भूल अविनय विषैं बुद्धि राखै नहीं।
जगत जस पाय अघ ढाय समता लहै,
जीव सो भावना भाय षोडश यहै।।3।।
नारि पशु देवकी मनुषनी जान जी,
काष्ठ चित्राम यह जीव बिन मान जी।
चार विधि तजि शील भावन सही,
कारण षोडश यह भावना में कही।।4।।

ज्ञान उपयोग सो पाठ जिन धुनि करै,
श्रुति अध्ययन मे नाहि अतर परै।
पढै उपदेश करि प्रश्न बहु ले सही,
कारण षोडश यह भावना मे कही।।5।।
देख जग चपल नहि विषय सुख राचि है,
मात सुत नारि तन माहि नहि माचि है।
धरै वैराग्य उर माहि आनन्द सही,
कारण षोडश यह भावना मे कही।।6।।
त्याग धन तन करै राजलछि सार जी,
मात सुत पिता तिय देख बधकार जी।
छाडि परभाव निजमाहि राचै सही,
कारण षोडश यह भावना में कही।।7।।
करै तप दुर्धरा देख कायर डरै,
मास वर्ष पक्ष लो नाहि अनजल करै।
शीश गिरि तरुतलै नदी तट पै सही,
कारण षोडश यह भावना में कही।।8।।
मुनि तन विषैं जिम होय साता भली,
सोहि विधि करै उर भक्ति भावा मिली।
साधु समाधि यह भावना है सही,
कारण षोडश यह भावना में कही।।9।।
राह जब चले मुनि खेद तन में लहै,
तथा बहु तप थकी काय निर्बल रहै।
देख इम तबै भवि पाँव चपै सही,
कारण षोडश यह भावना में कही।।10।।

देव जिनराज की भक्ति पूजा करै,
कठ मधुरे थकी गान शुभ उच्चरै।
भक्ति अरहत सो भाव जे हैं सही,
कारण षोडश यह भावना में कही।।11।।
सघपति जगतगुरु तीस षट् गुणधरै,
लखै पर मन तनी भाव समता भरै।
धर्म तीरथ तने धीर धोरी सही,
कारण षोडश यह भावना में कही।।12।।
अग ग्यारह लखै पूर्व दश चार जी,
और गुन घने त्रय ज्ञान चव धार जी।
भक्ति इनकी यह भाव शुभदा सही,
कारण षोडश यह भावना में कही।।13।।
भक्ति जिनवानि की करै मनलाय जी,
मुनि आवशि करै भक्ति तिन भाय जी।
भाव सो प्रवचन जान सुखदा सही,
कारण षोडश यह भावना में कही।।14।।
मन वचन काय धन लाय हरषाय जी,
धर्म उद्योत करि पुण्य उपजाय जी।
मार्ग परभावना अग सुखदा सही,
कारण षोडश यह भावना में कही।।15।।
वानि जिन विनयतैं सुनै पढि हैं भली,
भाव वात्सल्य प्रवचन पुण्यकी रली।
या थकी भी महा पुण्यफल ले सही,
कारण षोडश यह भावना में कही।।16।।

दोहा-इत्यादिक ये भावना, षोडश भेद अनूप।
भावै इनको भक्तितैं, "टेक" मोक्ष सिद्ध रूप।।17।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धि-विनयसम्पन्नता-शीलव्रतेष्वनतिचार-अभीक्ष्णज्ञानोपयोग-संवेग-त्याग-तपस्साधुसमाधि-वैयावृत्य-अरहंतभक्ति-आचार्यभक्ति-बहुश्रुतभक्ति-प्रवचनभक्ति-आवश्यकापरिहाणि-मार्गप्रभावना-प्रवचनवात्सल्यषोडशकारण-भावनाभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इति षोडशकारणभावना पूजा संपूर्णा।

कुछ लोगों का यहाँ प्रश्न उठता है कि श्रावक एक ससारी प्राणी है वह गृहस्थ जीवन सबधी ऐसे कार्यों में सलग्न रहता है कि जिससे उसके चित्त में निरतर आकुलता बनी रहती है ऐसी परिस्थिती मे यदि वह धर्म के सहारे से कुछ कामनायें पूर्ण करने की भावना करता है तो अनुचित नहीं समझना चाहिए। क्योंकि सामान्य गृहस्थ का व्रतों के प्रवृत्ति मार्ग को छोडकर निवृत्ति पूर्वक पूर्ण श्रद्धा के साथ आलस्य रहित होकर उत्साह पूर्वक व्रत करने पर उनका समीचीन फल प्राप्त होता है। कुछ श्रावक, मुनिराज/आर्यिका माता जी के सान्निध्य में भावातिरेक में या अन्य की देखादेखी व्रत को ग्रहण कर लेते हैं, किन्तु उनका लक्ष्य समीचीन नहीं होने से उनकी व्रतों के प्रति अरुचि कर्म निर्जरा का कारण न बनकर कर्मबध का कारण बन जाती है। वह प्रमाद के साथ व्रत की क्रियायें तो कर लेता है, परन्तु अतरग में रचमात्र भी विशुद्धि नहीं हो पाने से वह व्रत उन्हें भाररूप लगने से धार्मिक अनास्था का कारण बन जाते हैं।

-मुनि प्रमाणसागर

त्रिकाल चतुर्विंशति विधान

(सामान्य समुच्चय पूजा)

अडिल्ल छन्द- भूत भविष्यत वर्तमान चौबीस को,
जबू भरत मँझार तीन जग ईश को ।
निरवाणदि अतीत वर्त्त वृषभादि है,
महा पद्मादि भविष्य करत अरि नाश है।।1।।
ये तीनों चौबीस बहत्तर नाथ कों,
थापि जजूँ मन वचन नाय निज माथ कों।
आह्वानम् सस्थापन मम सन्निहित युता,
भाव भक्ति अति आनि हानि मति भ्रमयुता।।2।।

ॐ ह्रीं त्रिकाल-चतुर्विंशति-जिनसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानं।

ॐ ह्रीं त्रिकाल चतुर्विंशति जिनसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ· ठ· स्थापनं।

ॐ ह्रीं त्रिकाल-चतुर्विंशति-जिनसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

गीतिका छन्द

गग क्षीर सुनीर निर्मल स्वर्ण झारी में भरैं,
जन्म जर मरणादि हारन अचल पद प्रापति करैं।
भरत जम्बूद्वीप के त्रयकाल त्रय चौबीस को,
पूजूँ सदा मन वचन तन तें दाय पद जगदीश को।1।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थ-भरतक्षेत्रोत्पन्न-त्रिकाल-संबंधि-चतुर्विंशति-जिनेभ्यो जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर केसर मिलत चदन अगर आदि सुगन्ध तै,
भरि स्वर्ण झारी धार देते छूटतें भव ताप तें। भरत2।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थ-भरतक्षेत्रोत्पन्न-त्रिकाल-संबंधि-चतुर्विंशति-जिनेभ्यो संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अति श्वेत सुन्दर सुरभि मडित तदुलौघ सुथाल में ।
भरि जजत जिनके चरन युग को अखै पद के पावने।। भरत।3।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थ-भरतक्षेत्रोत्पन्न-त्रिकाल-संबंधि-चतुर्विंशति-जिनेभ्यः अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

सुमन स्वर्ण स्वरूप मय शुभ स्वर्ण थाल भराईये।
अरि अनत भग सु करन कारण शील सार बढाइये।। भरत।4।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थ-भरतक्षेत्रोत्पन्न-त्रिकाल-सबंधि चतुर्विंशति-जिनेभ्य. कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पकवान मेवा आदि चरुवर कनक भाजन में भरे।
क्षुधा वेदनी के नाश कारण प्रभु चरण सन्मुख धरैं।। भरत।5।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थ-भरतक्षेत्रोत्पन्न-त्रिकाल-सबंधि चतुर्विंशति-जिनेभ्यो क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप मणिमय ज्योति भरकर प्रभा सुन्दर रवि समा।
ते धारि थारी कनक निर्मित पूजिये सब तम हना। भरत।6।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थ-भरतक्षेत्रोत्पन्न-त्रिकाल-संबंधि चतुर्विंशति-जिनेभ्यो मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप मेलि सुगन्ध नाना कीजिये अरि नाश ही।
सो कनक धूपायन हि खेवत अष्ट कर्म विनाश ही।। भरत।7।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थ-भरतक्षेत्रोत्पन्न-त्रिकाल-संबंधि चतुर्विंशति-जिनेभ्यो अष्टकर्म-विनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीफल दाख बदाम पिस्ता फल अनेक सु लाइये ।
सो कनक भाजन भरि सुपूजत मोक्ष महाफल पाइये। भरत।8।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थ-भरतक्षेत्रोत्पन्न-त्रिकाल-संबंधि-चतुर्विंशति-जिनेभ्यो मोक्षफल-प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गन्ध तन्दुल सुमन चरुवर दीप धूप फलौघ ही।
करि अर्घ्य द्रव्य अनर्घ लेके नसै भव अघ औघ ही।। भरत।9।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थ-भरतक्षेत्रोत्पन्न-त्रिकाल-संबंधि-चतुर्विंशति-जिनेभ्यो अनर्घ-पदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा-ये तीनो चौबीसिका, सकल सुखनि को मूल।
कहूँ तास जयमालिका, नाम पृथक युत थूल।1।

तामें प्रथम भूत चौबीस, नाम जपौ भ्रम हरन रवीश।
निर्वाणरु सागर महासाध, विमल विमल प्रभ शुद्ध अराध।2।
श्रीधर दत्तनाथ अमलेश, उधरन अगनिनाथ शुभभेश।
सजम पुष्पांजलि शिवगुणा, उत्साहरु चक्षु ज्ञान सुभणा ।3।
परमेश्वर विमलेश्वर सार, और यथार्थ जसोधर सार ।
कृष्ण ज्ञानमति विशुद्धमतीय, भद्ररु शांत युक्त शिवपीय ।4।
ये चवबीस अतीत जिनेश, वदौ दायक पद परमेश ।
आगे वर्तमान जिन ईश, नाम जपौ नम कर जगदीश ।5।
ऋषभ अजित संभव सुख बीज, अभिनंदन सु सुमत भव-ईश।
पद्मप्रभ जु सुपारस नाथ, चंद्र-प्रभु चंद्र सम गात ।6।
पुष्पदन्त शीतल तपहार, श्रेयांस वासपूजि सुखकार ।
विमल अनंत धर्म जिनराज, शांति कुंथ दायक सुख साज।7।
अर मलि मुनिसुव्रत जगनाथ, नमि अरु नेमनाथ सुख साथ ।
पार्श्वरु वीराधिप महावीर, कर्म चूरि पहुँचे भव तीर ।8।

ये चौबीस कहे वर्तमान, भव तारन जग गुरु भगवान ।
आगे कहूँ अनागत जिना, चतुर्विंश सख्या तिन भना ।9।
महापद्म पुनि सुर सुदेव, सुप्रभ स्वय प्रभु गहि सेव ।
सर्वायुध जगदेव जिनेश, उदयदेव उदयक सुभेश ।10।
प्रश्नकीर्ति जयकीर्ति उदार, पूर्णबुद्ध निष्कषाय जु सार ।
विपुलप्रभ जिन बहल सु भले, चित्र समाधि गुप्त निर्मले ।11।
स्वयभू व कदर्प जिनेश, जयनाथ जिन विमल प्रभेश ।
दिव्यवाद जिन अनत सुवीर, अनतवीर्य चौबिस समधीर ।12।
ये चौबीस अनागत जिना, भव उधरन कारण शिवसना ।
भूत भविष्यत वर्त चौबीस, कीनी थुति भव हरन जगीश ।13।
तिन सबके बहत्तर जिनराज, वदों भवदधि तरन जहाज ।
त्रय चौबीसनि के परसाद, गिरि कैलाश विषै सुख साध ।14।
निर्मापित थे भरत चक्रीश, पूजै तासु शक्र चक्रीश ।
ये ही कर्मनाश के कार, ये ही शिव रमणी भरतार ।15।
ये ही परम पूज्य परमेश, ये ही सकल सुखनि के वेश ।
ये ही मो मन वाछित कार, या भव पर-भव सुखदातार ।16।
ये ही जनम जरा मृतु हरैं, ये ही परम रिद्धि को करैं ।
जाके शरण और नहि कोय, ताके बडो शरण यह जोय ।17।
कोई हुये कारन ते सघ, ये बिन कारण सब जगबध ।
ये जिन बहत्तर की गुनमाल, जे पहरैं निज कठ विशाल ।18।
ते भव भव जग विभव अनेक, लाभे परभव होय शिवेश ।
पूजूँ ताकौं अर्घ्य सुदेय, मन वच तन बहु भक्ति सुलेय ।19।

दोहा- ये चौबीस तीन की, समुचय करि सुपूज ।
आगै भिन-भिन करत हौं, भक्ति अधिक मम हूज ।20।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपस्थ भरतक्षेत्रोत्पन्न-अतीत-वर्तमान-अनागत-चतुर्विंशतिजिनेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

।।इति समुच्चय-पूजा सम्पूर्णा।।

अतीत चौबीसी पूजा

अडिल्ल- श्री निवारण जु आदि, शात पुनि युक्त लों ।
थापौं भूत जिनेश, करम के मुक्त लो ।।
ससृत अरि के नाशक, शिवके मूल हैं ।
आह्वानम् विधि ठानि, हानि भ्रम भूलि है।।

ॐ ह्रीं श्रीनिर्वाणादिशांतपर्यन्तातीत-चतुर्विंशति-जिनेन्द्रसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानं।

ॐ ह्रीं श्री निर्वाणादिशांतपर्यन्तातीत चतुर्विंशति-जिनेन्द्रसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठ. स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्रीनिर्वाणादिशातपर्यन्तातीत-चतुर्विंशति-जिनेन्द्रसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरण।

अडिल्ल- शुद्ध नीर दधि क्षीर आदि झारी भरूँ।
जनम जरामृत हारन जल पूजा करूँ।
श्री निर्वाण जु आदि शात पुनि युक्त लों।
जजों जिनेश्वर पाँय जगत के मुक्त लो ।।

ॐ ह्रीं श्रीनिर्वाणादिशांतपर्यन्त-चतुर्विंशति-अतीत-जिनेभ्यो नम. जलं निर्वपामीति स्वाहा।

गध महा शुभ तीर अगर केसरि मिले ।
भरि भण्डार सुपूजत, भव आप दले ।श्री निर्वाण।।

ॐ ह्रीं श्रीश्रीनिर्वाणादिशांतपर्यन्त-चतुर्विंशति-अतीत-जिनेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

इन्दु कुन्द सम श्वेत, सुगध सुहावने ।
भरि सुवरण को थार, जजै क्षय को हनै ।श्री निर्वाण।।

ॐ ह्रीं श्रीनिर्वाणादिशांतपर्यंत चतुर्विंशति-अतीत-जिनेभ्यो अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प सुवरण स्वरूप, सुरभि शुभ थाल में ।
जजत जिनराज दुष्ट, काम नशे हाल में ।
श्री निर्वाण जु आदि शात पुनि युक्त लो।
जजों जिनेश्वर पॉय जगत के मुक्त लों ।।

ॐ ह्रीं श्रीनिर्वाणादिशातपर्यन्त-चतुर्विंशति-अतीतजिनेभ्यः पुष्प निर्वपामीति स्वाहा।

मेवा वहु पकवान कनक भाजन भरै ।
क्षुधा वेदनी हानि, अमल पद को करैं ।श्री निर्वाण।।

ॐ ह्रीं श्रीनिर्वाणादिशातपर्यन्त-चतुर्विंशति-अतीत-जिनेभ्यो नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा।

दीप सु मणिमय धरो, सुवरण थार मे ।
पूजत जिनके पाय, मोहतम हार मे ।श्रीनिर्वाण।।

ॐ ह्रीं श्रीनिर्वाणादिशातपर्यन्त-चतुर्विंशति-अतीत-जिनेभ्यो दीप निर्वपामीति स्वाहा।

धूप सुगन्ध अपार, भ्रमर गण मनवशे।
डारि धूपायन खेवत, अष्ट अरी नशे ।श्री निर्वाण।।

ॐ ह्रीं श्रीनिर्वाणादिशातपर्यन्त-चतुर्विंशति-अतीत- जिनेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल नाना परकार, सुप्रासुक लाइये ।
रतन थाल मे भर कर, चरण चढाईये । श्री निर्वाण।।

ॐ ह्रीं श्रीनिर्वाणादिशातपर्यन्त-चतुर्विंशति-अतीत-जिनेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गधाक्षत पुष्प, दीप चरु धूप ही ।
फल वसु मेलि सुअर्घ्य, कीजिये नृप ही । श्री निर्वाण।।

ॐ ह्रीं श्रीनिर्वाणादिशातपर्यन्त-चतुर्विंशति-अतीत-जिनेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येक अर्घ्य

चौपाई-शरणागत को करि निर्वाण, आप भये निर्वाण सुथान ।
सकल अरिन के लगत न बाण, अपने पद में मगन सुजाण।

दोहा- श्री निर्वाण जिनेश्व, पूजूँ मन वच काय ।
जल फल अर्घ्य चढाय के, विधि सुगुण गण गाय ।1।

ॐ ह्रीं श्रीनिर्वाणजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई-भवसागर अति अगम अथाह, तिहि तारन दे देशनि नाव।
करुणा सागर दीन दयाल, तारे बहु जिय देखि विहाल ।।

दोहा- ऐसे सागर गुण समुद्र, पूजूँ मन वच काय ।
जल फल अर्घ्य चढाय के, विविध सुगुण गण गाय ।2।

ॐ ह्रीं श्रीसागरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई-सब साधुनि मे साधु महान, उपज्यो जाको केवलज्ञान ।
साधु जन शिव साधन करै, इन साधी शिव तन तजि वरै।

दोहा- महा साधु ऐसे जिना, पूजूँ मन वच काय ।
जल फल अर्घ्य चढाय के, विविध सुगुण गण गाय ।3।

ॐ ह्रीं श्रीमहासाधुजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई-जगतजीव युत कर्म अथाय, नास तास मल अमल कराय ।
पुनि मल भाव कर्म रागादि, ते जड ताकी जड कर वादि ।

दोहा- ऐसे विमल प्रभु जिना, पूजूँ मन वच काय ।
जल फल अर्घ्य चढाय के, विविध सुगुण गण गाय ।4।

ॐ ह्रीं श्रीविमलप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई-करे शुद्ध रागादिक खोय, दे उपदेश ज्ञानमय सोय ।
और द्रव्य मल द्रवि कर्मादि, तेहू हनि भये अमल अबाध ।

दोहा- ऐसे शुद्ध जिनेश्वरा, पूजूँ मन वच काय ।
जल फल अर्घ्य चढाय के, विविध सुगुण गण गाय ।5।

ॐ ह्रीं श्रीशुद्धप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई-देय ज्ञान लक्ष्मी शिवदाय, करि उपकार बसै शिव जाय।
तहँ अचल सुख भोगत भये, जन्म जरा मृत्यादिक क्षये।

दोहा- ऐसे श्रीधर जिनवरा, पूजूँ मन वच काय।
जल फल अर्घ्य चढाये के, विविध सुगुण गण गाय।6।

ॐ ह्रीं श्रीश्रीधरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई-दत्त ज्ञान धन जग जन देव, हरयो दरिद मिथ्यात जु एव।
कीनी ता अविनाशी रमा, फेर न ते जन भव वन भमा।

दोहा- ऐसे दत्त जिनेश्वरा, पूजूँ मन वच काय।
जल फल अर्घ्य चढाय के, विविध सुगुण गण गाय ।7।

ॐ ह्रीं श्रीदत्तनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई-अमल करन मल कर्म विहान, दे देशन जल निर्मल ज्ञान ।
कियो जगत जीवन उपकार, पहुँचाये पद अचल मझार ।।

दोहा- ऐसे अमलप्रभु जिना, पूजूँ मन वच काय ।
जल फल अर्घ्य चढाय के, विविध सुगुण गुण गाय ।8।

ॐ ह्रीं श्रीअमलप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई-भवते उधरण शरण जिनेश, दे शिवथान हनि भववेश।
काल अनादि सहे दुखनत, ऐसे भवको हनैं महन्त।।

दोहा- ऐसे उधरन जिनवरा, पूजूँ मन वच काय।
जल फल अर्घ्य चढाय के, विविध सुगुण गण गाय ।9।

ॐ ह्रीं श्रीउद्धरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई-कर्म काष्ट में जीव परेय, दुख भुगते भव माहि अछेय।
ताहि उधारन देवन सुक्ख, कर्म जारि मेटे सब दु ख।।

दोहा- ऐसे अग्नि सुनाथ जिन, पूजूँ मन वच काय।
जल फल अर्घ्य चढाय के, विविध सुगुण गग गाय।10।
ॐ ह्रीं श्रीअग्निनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
चौपाई-टारि असजम सजम देय, हानै जन बहु कर्म अछेय।
देय अचल पद अमल अनूप, वे उपकार करै जग भूप।
दोहा- ऐसे सजम जिनवग, पूजूँ मन वच काय।
जल फल अर्घ्य चढाय के, विविध सुगुण जग गाय।11।
ॐ ह्रीं श्रीसंयमजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
चौपाई-श्री जिन पुष्पाञ्जलि के पाँय, देत पुष्य अजुल सुखदाय।
कर्म विनाश करै सुखरास, सौ प्रसाद तुम सुमरण भास।
दोहा- ऐसे पुष्पाञ्जलि जिना, पूजूँ मन वच काय।
जल फल अर्घ्य चढाय के, विविध सुगुण गण गाय।12।
ॐ ह्रीं श्रीपुष्पाञ्जलिजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
चौपाई-शिवगुण शिव करता जग जीव, कर्म विनाश राशि सुखलीव।
ताका नाम मोक्षपुर जान, सो दीनो शिव गुण भगवान।
दोहा- ऐसे शिवगुण जिनवरा, पूजूँ मन वच काय।
जल फल अर्घ्य चढाय के, विविध सुगुण गण गाय।13।
ॐ ह्रीं श्रीशिवगुणजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
अशुभ उदय जिय शोक लहाय, सो हनि छिन उत्साह कराय।
ज्ञान पाय उत्सव अति होत, लखै चराचर पद उद्योत।।
ऐसे उत्सव जिनवरा, पूजूँ मन वच काय।
जल फल अर्घ्य चढाय के, विविध सुगुण गण गाय।14।
ॐ ह्रीं श्रीउत्साहजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
चौपाई-जगत अन्ध युत नेत्र हि जान, कर्न अकर्न न भेद पिछान।
ज्ञान नेत्र जिन ज्ञान हो नैन, देय भर्म भानत दुख दैन।।

दोहा-ऐसे ज्ञान सुनैन जिन, पूजूँ मन वच काय।

जल फल अर्घ्य चढाय के, विविध सुगुण गण गाय।15।

ॐ ह्रीं श्रीज्ञानेश्वरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई-श्री परमेश्वर परम उदार, देय ज्ञान को दान अपार ।

पहुँचाये बहु जीवन मोक्ष, ताकी कौन कहे सब घोष ।।

दोहा-ऐसे परमेश्वर जिना, पूजूँ मन वच काय ।

जल फल अर्घ्य चढाय के, विविध सुगुण गण गाय ।16।

ॐ ह्रीं श्रीपरमेश्वरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई-विमल 2 पद दायक सार, हारन भव दुख समल असार।

ध्यान ठानि इनको भवि जीव, भये अनेक मोक्ष तिय पीव।

दोहा-ऐसे विमलेश्वर जिना, पूजूँ मन वच काय।

जल फल अर्घ्य चढाय के, विविध सुगुण गण गाय।17।

ॐ ह्रीं श्रीविमलेश्वरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई-सरधा अयथारथ तै जीव, भरमत भवमे रहे सदीव।

नाहि यथार्थ स्वरूप बताय, हाने भर्म महा दुखदाय।।

दोहा-ऐ जिन जु यथार्थ को, पूजूँ मन वच काय।

जल फल अर्घ्य चढाय के, विविध सुगुण गण गाय।18।

ॐ ह्री श्रीयथार्थजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई-भवते तारि जसोधर नाथ, देइ अचल पद जिय गुण गात।

जसधारी भव उधरन हार, नाम जसोधर ताते धार।।

दोहा-ऐसे जसधर जिनवरा, पूजूँ मन वच काय।

जल फल अर्घ्य चढाय के, विविध सुगुण गण गाय ।19।

ॐ ह्रीं श्रीयशोधरजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई-कालिमा मिथ्या मतकी मेटि, दीजे सम्यक् दृग शिव भेंट।
सम्यक् दृग सूरजके उदै, दीखै निज पर भ्रम सब छदै।।
दोहा-ऐसे कृष्ण जिनेश्वरा, पूजूँ मन वच काय।
जल फल अर्घ्य चढाय के, विविध सुगुण गण गाय।20।
ॐ ह्रीं श्रीकृष्णमतिजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
चौपाई-हरि अज्ञान ज्ञानमति नाथ, दीजे ज्ञान सुमेटि अरात।
ताकर भ्रम तम नासै मोय, उपजै ज्ञान स्वपर पद जोय।।
दोहा-ऐसे ज्ञानमती जिना, पूजूँ मन वच काय।
जल फल अर्घ्य चढाय के, विविध सुगुण गण गाय।21।
ॐ ह्रीं श्रीज्ञानमतिजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
चौपाई-मेटि अशुद्ध शुद्ध करि नाथ, रागादिक भव भाव विघात।
होत विशुद्ध सुकर्म खपाय, पहुँचे मोक्षपुरी जिय जाय।।
दोहा-ऐसे विशुद्धमती जिना, पूजूँ मन वच काय।
जल फल अर्घ्य चढाय के, विविध सुगुण गण गाय।22।
ॐ ह्रीं श्रीविशुद्धमतिजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
चौपाई-भद्र भद्र परिणाम सुठान, क्रूर कपट परिणाम विहान।
भद्र भावते पावै मोक्ष, फेर न आवे भव अरि सोख।
दोहा-ऐसे भद्र जिनेश्वरा, पूजूँ मन वच काय।
जल फल अर्घ्य चढाय के, विविध सुगुण गण गाय।23।
ॐ ह्रीं श्रीभद्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
चौपाई-शात भाव करि शात युक्त, करिके अशुभ अशात विमुक्त।
क्रोधादिक रिपु लगे अनादि, ताको करै छिनकर्मे वादि।
दोहा-ऐसे शातसुयु जिन, पूजूँ मन वच काय।
जल फल अर्घ्य चढाय के, विविध सुगुण गण गाय।24।
ॐ ह्रीं श्रीशांतियुक्तजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अडिल्ल- ये चौबीस जिनेश अतीत सु काल के,
निर्वाणादिरु शात युक्त लों पालके ।
ताको मन वच काय जजौं जुग पाय ही,
भक्ति भाव अति लाय सुगुण गण गाय ही ।

ॐ ह्रीं श्रीनिर्वाणादिशांतपर्यन्त-अतीत-चतुर्विंशतिजिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा-निर्वाणादि जिनेश्वरा, वरते काल अतीत ।
विविध जीव भव तारिके, बसै मोक्ष अरि जीत ।1।
तिनके भिन भिन नाम जुत, करों सार जयमाल ।
ले सहाय निज इष्टको, अरु आगम अनुसार ।2।

पद्धरि छन्द

निर्वाण नमूँ पहले जिनेश, जीवनि दायक निर्वाण वेश।
अरि काम वाण निर्वाण जीत, शिव अचल वसे भव टारि ईत।3।
भवसागर मे भरमत अज्ञान, जिय ताहि देय नवका सुज्ञान।
भवसागर ते उधरन जिनेश, शिवपुर पहुँचावत हे सुदेश।4।
महासाधु दया को धरै भेष, भव देख दुखित तारे अनेक।
सब कर्म हानि शिव दई सूर, अविचल सुख दीनूं ताहि पूर।5।
श्री विमलप्रभ निर्मल करेय, हरि कर्म महामल मोक्ष देय।
मैं मन वच पूजूँ नाय शीश, अनुचर लख पद द्यो जगीश।6।
जग शरण गही जे आप आय, ता करहु शुद्ध मल कर्म धाय।
ऐसे जिन शुद्ध सुबुद्ध देय, मोहू शिव दीजे अरि हरेय।7।
जिन श्रीधर शिव श्री लेय आप, औरनि श्री अश्रिय उथाय।
मैं मन वच पूजूँ पाद ताहि, मो देहु श्री अश्रिय विधाय।8।

जिनदत्त नाथ दे ज्ञान दान, जग दरिद मिथ्यात सुकरयो हान।
ताके पद पूजूँ नाय शीश, शिव देहु हानि भव दुख जगीश।9।
जिन अमल 2 करि नेक जीव, थापे शिव अघमल हानि अतीत।
अति निश्चल निकल निर्विकार, इक सिद्धि नमें बहु सिद्धसार।10।
उद्धरन धारि उद्धरण विर्द, शिव दीनी हान्यो भव सुदर्द।
ते अचल अनन्त अकाय भाय, अविनाश अनत सुसुख लहाय।11।
जिन अगनि नाथ गहि ध्यान अग्न, सब कर्म करे तिनमें सु भग्न।
पहुँचे शिव आप रु आन नेक, पहुँचाये ता गिनती न एक।12।
जिन सजम सजम खड्ग लेय, अरि खड करे शिव शर्म लेय।
अनि शरणागति को देय तेय, पहुँचाये शिव विधि अरि हरेय ।13।
पुष्पाजलि शिवगुण है जिनेश, हनि आठ कर्म हुये शिवेश।
नग जिन लीनूँ जिनशरनि आय, तिनको निज शर्म करे अथाय।14।
जिन उत्सव ज्ञान सुनेत्र दोय, पूजूँ मन वच तन मत्त खोय।
ते तारन विरद धरे अद्वीत, भवसिंधु सु तारक कर अजीत।15।
विमलेश्वर अर विमलेश सार, जगतोत्तम पद दीनों अपार।
पुन सेवक शरणागत सु देखि, ताहू दे उत्तम पद अशेष।16।
निजराज यथारथ नमूँ पॉय, पुनि नाथ जसोधर दुतिय थाय।
ते शत इन्द्रिनि कर पूजि होय, शिव पहुँचे मल अरि कर्म खोय।17।
पुन कृष्ण ज्ञानमति नाथ दोय, तप दुद्धर धरि अरि कर्म खोय।
पहुँचे शिव सेवक शिव सुदेय, प्रणमत ता पद फल अचल लेय।18।
करि विशुद्ध भावमति विसुध सार, सबकर्म नाशि भव भये पार।
वदौं नित निजकर शीश धार, भव सागर ते मोहे उतार।19।
जिनराज भद्र अरु शात युक्त, वन्दौं मन वच बहुभक्ति युत।
मैं भरम्यो भव वन नत काल, तुम शरन बिना न भई सभाल।20।

कोउ पुण्य उदय भयो आजि मोय, तुम शरण गह्यो अनि शरनि खोय।
तातें अब दीजे ज्ञान भाल, ताकरि पावे अपनी सुचाल।21।
भ्रमबुद्धि नाशि निजज्ञान आय, ताकर अरिहरि शिव सौख्य पाय।
जग में देखे जु अनत देव, तिनमें देवत नहि रच एव।22।
जिन वीतराग सर्वज्ञ जानि, धरि भरम भेष की करी मानि।
ते कैसे भवदधि पार होय, जिम पाथर नाव न तिरै तोय।23।
दोहा-ये अतीत जिनराज की, करी स्तुति सुखकार।
सु ही दाम निज कठ में, पहरत हुए भव पार।24।

ॐ ह्रीं श्री निर्वाणादि-शांतपर्यंतातीत-चतुर्विंशति-जिनेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इति अतीतकाल-चतुर्विंशति तीर्थंकर-पूजा सपूर्ण

वर्तमान चतुर्विंशति-तीर्थंकर पूजा

स्थापना (अडिल्ल)

ऋषभादिक अति वीर चतुर्विंशति जिना।
वरतें भरतें मँझार हार भव शिव सना,
ताको मन वच थापि जजों जुग पाय ही।
आह्वानम् सस्थापन करि गुण गाय ही।1।

ॐ ह्रीं वर्तमान-चतुर्विंशति-वृषभादिमहावीरपर्यन्त-जिनसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानं।

ॐ ह्रीं वर्तमान-चतुर्विंशति-वृषभादिमहावीरपर्यन्त-जिनसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठःठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं वर्तमान-चतुर्विंशति-वृषभादिमहावीरपर्यन्त-जिनसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

त्रिभंगी छन्द अष्टक

जल अमल सुवासक शीतल प्रासुक, तृषा विनाशक भर झारी ।
जर मरण निवारण शिव सुख कारण, रचूँ पूज अति सुखकारी ।
वृषभादिक परम वीर सुचरम, वर्तमान चतुर्विंश जिना ।
पूजूँ थुति गाऊँ भक्ति बढाऊँ, इक थल करि मन वचन तना ।1।
ॐ ह्रीं वर्तमान-चतुर्विंशति-वृषभादिमहावीरपर्यन्त-जिनेभ्यो जलं।
कर्पूर मिलावे चन्दन लावे, अगरु आदि बहु गन्ध घसे।
भरि कचन झारी ताप निवारी, अति सुखकारी पाप नसे। वृषभा०
ॐ ह्रीं वर्तमान-चतुर्विंशति-वृषभादिमहावीरपर्यन्त-जिनेभ्यः चंदनं।
अति श्वेत शशि सम मिष्ट मनोहर, स्वर्णथाल अक्षतानि भरे ।
पद अक्षय सु कारन चतुगति टारन, शिववनिता वर तुरत करे।वृषभा
ॐ ह्रीं वर्तमान-चतुर्विंशति-वृषभादिमहावीरपर्यन्त-जिनेभ्यो अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।
मय स्वर्ण स्वरूप विविध सुपुष्प, वरन अनूप भर थारी।
मन नासा नेत्रनकी प्रिय है अति ही, मन्मथ चूरण मनहारी।वृषभा
ॐ ह्रीं वर्तमान-चतुर्विंशति-वृषभादिमहावीरपर्यन्त-जिनेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।
पकवान रसाकर रसनसुरजन, मेवादिक बहु भरि थारी।
चरु से पूजत अरिगन धूजत, क्षुधा निवारन बलकारी। वृषभा
ॐ ह्रीं वर्तमान-चतुर्विंशति-वृषभादिमहावीरपर्यन्त-जिनेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।
ले मणिमय मनहर ज्योति पुजधर, रतनथाल में भरि भारी।
पद पूज रचावें मोह नशावें ज्ञान बढावें भ्रमहारी। वृषभा
ॐ ह्रीं वर्तमान-चतुर्विंशति-वृषभादिमहावीरपर्यन्त-जिनेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगुरु कर्पूर चन्दन आदिक, विविध गन्धकी धूप करें।
खेवत धूपायन हेम सु निर्मित, अष्ट कर्म अरि तुरत जरें। वृषभा

ॐ ह्रीं वर्तमान-चतुर्विंशति-वृषभादिमहावीरपर्यन्त-जिनेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

बादाम सुपारी प्रासुक भारी, श्रीफल आदिक फल लावें।
भरि थाल सुलावे पूजन आवें, कर्म खिपावें शिव पावें। वृषभा

ॐ ह्रीं वर्तमान-चतुर्विंशति-वृषभादिमहावीरपर्यन्त-जिनेभ्यः फल निर्वपामीति स्वाहा।

जल गन्धाक्षत पुष्प चरु वर, दीप धूप फल अर्घ्य करें।
पूजत वर्तमान जिन चरणन, हरि ससार सु मोक्ष वरें। वृषभा

ॐ ह्रीं वर्तमान-चतुर्विंशति-वृषभादिमहावीरपर्यन्त-जिनेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्वय अर्घ

चौपाई

श्री वृषभादि वीर पर्यन्त, वर्तमान चववीसू सन्त।
पूजूँ मन वच अर्घ्य लगाय, धर अति भक्तिरु गा बजाय।।

ॐ ह्रीं वर्तमान-चतुर्विंशति-वृषभादिमहावीरपर्यन्त-जिनेभ्यो समुच्वयार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येक अर्घ्य

अडिल्ल- भोगभूमि के अन्त कर्म भू आदि ही।
उपजे श्रीजिनराज वृषभ सुख साध ही।।
लख चवरासी पूर्व साढ वसु मास ही।
तीन बरस युत रह्यो काल त्रय शेष ही।1।
तब जनमें जिनराज कल्पद्रुम क्षय गये।
देखि दुखी निज प्रजा, कर्म भू थापये ।

राज त्याग मुनि होय लक्ष्मि केवल गही ।
धर्म सुरीति बताय लही पुनि शिव मही ।2।
ऐसे तीजे काल माहि प्रभु शिवगये
तीन बरस वसु मास साढ बारी रहे।
वही समय ते लेय अर्जो लौ चालि है।
सोहि धर्म उपकार उन्हीं को भालि है ।3।
ऐसे आदि जिनेश जजूँ जुग पाय ही।
जल गधादिक अर्घ्य देय गुन गाय ही ।
मै मो चेरा तेरा भव भय की हरो।
मो दुखिया अति देख सहाय मेरी करो।4।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई

इन्द्र चक्र आदिक बल जोय, ताको तो हित तोल जु होय ।
प्रभु जनम के अतिशय माहि, अतुल वीर्य बिन तोल धराहि ।1।
रूपकाति आदिक गुण और, ता सम जनमें नहि कहुँ ठौर ।
ताते अजित यथारथ नाम, पूजूँ ताके पद अभिराम ।2।

ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।2।

सभव भव को करके छेह, पहुँचे मुक्ति माहि गुण गेह ।
तजि त्रय दोष असभव आदि, सभव पद लीनू सुख साधि ।1।
सभव सभव देश जु देय, काटे भवते जीव अछेय ।
यही उपकार तिहारो नाथ, तारन विरद सही गुन गात ।2।
सो ही विरद धार तुम देव, मोकूँ भवदधि तारि अछेव ।
पूजूँ मन वच अर्घ्य सुदेय, मोकूँ भवदधि तारि अछेव ।

पूजूँ मन वच अर्घ्य सुदेय, मोकूं भवदधि तारि अछेव ।

पूजूँ मन वच अर्घ्य सुदेय, भक्ति भाव युत मनोहरेय ।3।

ॐ ह्रीं श्रीसंभवनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।3।

हरि अभिमान खानि दुख जीव, दोनों मार्दव वृष शिव पीव ।

ताकर सम्यग्दर्शन पाय, पहुँचे मोक्षपुरी जिन जाय ।1।

सो उपकार तिहारो नाथ, अभिनन्दन जिनराज विख्यात ।

मन देके दे अर्घ्य जिनेश, काटे भवते हरि भ्रम वेश ।2।

ॐ ह्रीं श्रीअभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।4।

देय भली मति सुमति जिनेश, काटे भवतें हरि भ्रम वेश।

कुमति कुगति को मूल अनादि, ताकर जीव भ्रमै भव वादि।1।

ताके को शुभ उदय बसाय, तुम पद शरण ग्रहण बुधि आय।

तब शरणे पकड्यो दृढ आय, ताकर भई सुदर्शन थाय।2।

करि अनुभौ बुधि लेय, पहुँचे कर्म काटि शिव गेय।

ऐसे सुमति सुमति दातार, पूजूँ मन वच अर्घ्य उतार ।3।

ॐ ह्रीं श्रीसुमतिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।5।

पाद पद्म वदै मद छोरि, करै कल्याणक पाँच बहोरि ।

अपनों देव जनम साफल्य, मानो जा दिन हरि हर-शल्य ।1।

कमल न जाकी तुलि जग माहि, पै कमलिन की उपमा लाहि ।

औरनि को सो लगे जिनेश, आप पद्म निरवोपम देश ।2।

ऐसे पद्मनाथ जिन देव, कर्म काट पहुँचे शिव एव ।

अन्य शरण आवे जन कोय, ताको हू आतम हित होय ।3।

मैं वन्दों तुमरे प्रभु पाय, देय अर्घ्य मन वचन सुकाय ।4।

ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।6।

जिन सुपार्श्व पारस सम जोय, जो लोहा कचन करि सोय ।

तुम सुपास कैसे को कहें, इन्द्र चक्र आदिक थकि रहे ।1।

तब कैसे मो पै थुति होय, शरणागत दृढ मो अवलोय ।
शत इन्द्रनि कर पूजित पाय, दयासिंधु भव सिंधु तिराय ।2।
मैं चेरा हूँ तेरा नाथ, स्वप्न मात्र अनि अरूँ न साथ ।
देय अर्घ्य मन वच तन आप, पूजूँ माहिपुरी शिवथाप ।3।

ॐ ह्रीं श्रीसुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।7।

चन्द्र-चन्द्र सम श्वेत शरीर, परम उदायिक लोहू क्षीर ।
तामें क्षुधा तृषादि न दोष, भवदधि तारन गुण के कोष ।1।
चन्द्रोपम दीजे जो आप, है कलंक जुत जाकी छाप ।
पुन आच्छादे राहु जु वाहि, अस्त उदै दिन रैनिहि थाहि ।2।
तुम निकलंक रु उदै सदीव, आच्छादन दूषन नहि लीव ।
तातै चन्द्र औपमा नाथ, आप न लागे अनुपम गात ।3।
ऐसे चन्द्र सु पूजे पाय, मन वच तन तिय अर्घ्य चढाय ।
विह्वल कीनो विधि अरि मोहि, हनि ता अजर अमर पद द्योहि ।

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।8।

पुष्पदन्त अन्तक करि अन्त, कीने अनेकनि को शिवकन्त ।
बिना शरण भटके भव माहि, अन्तातीति दुखनि को पाहि ।1।
जब बड भाग उदै भयो आय, तब तुम चरण शरण गह्यो जाय।
देय ज्ञान उपदेश जु ताहि, करयो प्रकाश हर्यो भ्रम जाहि ।2।
उपज्यो सब सम्यक् दृग सार, निज पर भेद बतावन हार ।
जाने भव तन भोग विनिद तजि गृह भार लह्यो सुखकद ।3।
ऐसे प्रभु को देकर अर्घ्य, करूँ सेव दीजे अपवर्ग ।
मेरे तुमरो ध्यान जु नाथ, तुम सम करिये देख अनाथ ।4।

ॐ ह्रीं श्रीपुष्पदन्त-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।9।

भवाग्नि तप में तप्त सदीव, काल अनन्त गयो यह जीव ।
जन्म जरामृत चहुँगति माहि, बिन केवल ता परमित नाहि ।1।
ऐसी दुसत ताप के हार, श्री जिन शीतल शीतलकार ।
जग में शीतल वस्तु अनेक, पै भव-तप्त न हरै जु एक ।2।
वे तो दाह देह की हरे, ये जन्मादि ताप को हरे ।
तातें मन वच शीश नवाय, तुम पद शरन गह्यो जिनराय ।3।
मेरे भव की तप को हानि, दीजे शिव पूजूँ जुग पानि ।
मगलगान ठान बहु तोहि, शक्तिभाव अति चित्त ही गोय ।4।

ॐ ह्रीं श्रीशीतल-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।10।

दाय श्रेय अश्रेय विहाय, अविनाशी अति अमल अथाय ।
जग जन कीजे बहु श्री सोय, बिन सुर समल थान जुत जोय ।1।
वा या लछि के जे दातार, तुम सेवा ते ही अवतार ।
ताते तुम पद ही किन सेय, ता करि शिव लछि निश्चल लेय ।2।
इमि विचारि करै हों तुम सेव, भवदुख हनि कीजे शिव एव ।
अर्घ्य देय अति गाय बजाय, भक्ति भाव जुत मन वच काय ।3।

ॐ ह्रीं श्रीश्रेयांस-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।11।

शत इन्द्रन करि पूजित पॉय, अति सुगन्ध करि गधित काय ।
और अनेक महा गुण जके, ताहि कौन वरनन कर सके ।1।
इन्द्र चन्द्र चक्रादिक जेह, बडी बुद्धि के धारी जेह ।
तेहू ऐसे वचन कहाय, तुम गुन अबुधि पार न पाय ।2।
तो हमसे तुछ बुद्धी जीव, तुम गुणदधि किम पार लहीव ।
तातें तुम दृढ शरनूँ लयो, ये मोहूँ पद द्यो सुखमयो ।3।
मै पूजूँ पद अर्घ्य सुदेय, मन वच तन बहु भक्ति सुलेय ।
काहू के काहू को शरन, मेरे अनि सुपने नहि धरन ।4।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्य-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।12।

रागद्वेष आदिक मल भाव, ता करि मलिन चेतना राव ।
बाँधे द्रव्य कर्म नौ कर्म, ताकरि भव वन भरमे ब्रह्म ।1।
ते मल हानि विमल जिनराय, केवल पद ठाने तिमि लाय ।
हानि कर्मत्रय शुद्ध जो होय, पहुँचे पद अविचल शिव होय ।2।
हो तुम ही उपकार जिनेश, शरणगतनि पार शुभभेश ।
पूजूँ मन वच अर्घ्य चढाय, मोकूं द्यो प्रभु अविचल ठाय ।3।

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।13।

भरम्यो जीव अनत ससार, मुख्य मिथ्यात लेइ बहु भार ।
पीछे क्रोध मान छल लोभ, पच प्रमोद धरे पुनि क्षोभ ।1।
वा अव्रत आदिक बहु भाय आस्रव भाव गहे अधिकाय ।
ता करि बहु विधि बध जु करे, बध थकी नाना दुख भरे।2।
पीछे कदा पुण्य के जोग, शरण गह्यो तुम चरण नियोग ।
ता करि निरजर कर्म अधाय, पहुँचे शिव हुये निर्मल भाय ।3।
ऐसे अनन्त नाथ जिनराय, पूजूँ मन वच अर्घ्य चढाय ।
मैं हूँ दुखी कर्मवश नाथ, लखि चेरो लीजे तुम साथ ।4।

ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।14।

हिसादिक पण पाप उपाय, बस्यो नरक नाना दुख पाय ।
छेदन भेदन ताडन ताप, सहे इत्यादि तहाँ सताप ।1।
तिहतें निकसि रुल्यो पुनि जोर, सब कहते आवत नहि ओर ।
अब मो भाग उदयतें आय, तुम पद शरण गह्यो जिनराय ।2।
तुम वानी सुनि सम दृग गह्यो, ता करि कर्म निर्जरा ठयो ।
होय हर्ष पहुँच्यो निर्वाण, सो प्रसाद तुमरो भगवान ।3।
ऐसे धर्मनाथ जिनराय, पूजूँ मन वच अर्घ्य चढाय ।
मो अनुचर को अति दुख देख, करो सहाय दयानिधि भेष ।4।

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।15।

जनम जरा मृतु ये त्रय ताप, सही अनन्त काल भव छाप ।
जैसे अगनि माहि घृत जरै, तैसे ताप त्रये दुख करै ।1।
या प्रकार दुख देखत जीव, पाय कोउ शुभ उदय कदीव ।
ता करि भेटें तुम प्रभु आय, सब दुख तुम लखि गये विलाय ।2।
करन शाति जिन शाति सुनाथ, पूजूँ अर्घ्य देइ गुन गात ।
मोको हूँ लखि चरननि शर्न, मेटो भव दुख जामन मर्न ।3।

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।16।

कीडी कुथव आदि जु थोक, त्रस स्थावर के भरे जु लोक ।
ताके रक्षक कुन्थु जिनेश, सार्थक नाम धरै शुभ भेष ।1।
करुणा सागर दीनदयाल, विरद सदीव धरै गुणमाल ।
सोह विरद प्रभु आप सँभालि, मेरो हू कीजे प्रतिपाल ।2।
पूजूँ मन वच भक्ति धराय, अर्घ्य देय तुमरे जुग पाय।
या भव परभव पाकर आप, महिमा कौन कहे वच लाय ।3।

ॐ ह्रीं श्रीकुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।17।

जब ते जीव तबहि तें कर्म, ताको तीन भाँति ते मर्म ।
द्रव्य कर्म ज्ञानावरणादि, भाव कर्म दूजो रागादि ।1।
शरीरादि नौ कर्म अनादि, लगि जिय शक्ति करी सब वानि ।
एकेन्द्री वेइन्द्री जीव, ते-इन्दी तन धरे अतीव ।2।
चौ-इन्द्री पचेन्द्री घने, देह धराय जीव दुख सने ।
पचेन्द्री में हूँ बहु भाँति, सुर नर नारक तिर जग थाति ।3।
इत्यादिक बहु भेष धराय, ताकी सख्या नाहि अथाय ।
ताकर विकल हुयो मैं नाथ, तुम पद शरण गह्यो गुन गाथ ।4।
अरनाथ करिहौ निर्मूल, पूजूँ अर्घ्य देय जम थूल ।
मन वच तन बहु भक्ति लगाय, तुम बिन मेरो कौन सहाय ।5।

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।18।

कर्मनि के निज वसि जिय रक, भरमावत चहुँ गति में बक ।
नर तें देव देव तें पशु, पशुते नरक निगोद जसु ।1।
ऐसे उलट पलट नट जेम, करे जीव को को कहि क्षेम ।
ताको मेटहुँ श्रीजिनराज, मैं तुम शरनि तुमरि मो लाज ।2।
ऐसे मल्लिनाथ भगवान, शरनि गह्यो मै चरननि आन ।
पूजूँ आठ द्रव्य दें अर्घ्य, मन वच भक्ति लाय हरि स्वर्ग ।3।

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।19।

हनि अव्रत सुव्रत लहि जीव, मुनिसुव्रत की शरण सदीव ।
ये जिय के हितकर तम्हार, तातें यही शरण हितकार ।1।
असहायनि को यही सहाय, अशरनि को यह शरण सहाय ।
शरणागत प्रतिपालक विरद, लिये सदा हारक सब दर्द ।2।
ऐसे मुनिसुव्रत जिनराय, बीसन ब्रह्मलीन सुखदाय ।
ताकूँ मन वच अर्घ्य सुदेय, पूजूँ पद द्यो शर्म अछेय ।3।

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।20।

नमे तास इन्द्रादिक देव, अपनो जन्म सफल गिन लेय ।
देव इन्द्र के कछु व्रत नाहि, एक पुण्य पूजादि कथाहि ।1।
सो नित ठाने चर्चा करैं, ता करि सुकृत सचय करैं ।
कल्याणक मुनि वदन आदि, काल व्यतीत करे सुख साधि ।2।
ते कर भक्ति पुण्य उपजाय, है नृपादि शिवपुरहि सिधाय ।
ये प्रसाद है सब भगवान, नमि जिनवर शिव कर सुखदान ।3।
पूजूँ ता पद अर्घ्य सुदेव, भक्ति सहित मन वचन तनेय ।
मोकूँ हू दीजे जिनराय, अचल सुपद जन्मादि मिटाय ।4।

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।21।

पशु विलाप सुन दया विचार, ताहि छुडाय चढे गिरनार ।
राजमती को राग विहाय, ले वैराग सु श्रेणि चढाय ।1।
शुक्ल ध्यान व्यापो जिनराज, कर्म काट पायो शिव साध ।
ताको मन वच अर्घ्य सुदेय, पूजूँ पाद भक्ति बहु लेय ।2।

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।22।

बनारस भू सुफल सो कियो, तहाँ जनम पारस जिन लियो।
जहाँ देव इन्द्रादिक आय, कियो कल्याणक को उत्साह।1।
वह थानक पूजे सब लोक, तीरथ मान देय सब ढोक।
कमठ दुष्ट को ज्योतिष जीव, तिन कीन्हो उपसर्ग अतीव।2।
ताको जीत घातिया नाश, उपजायो केवल सुखराश।
दे उपदेश उधारि अनेक, हरि अघाति पहुँचे शिव नेक।3।
ऐसे पारस पारस जिना, लोहा कन जन कचन समा।
पूजूँ अर्घ्य देय तसु पाय, मन वच काय सुभक्ति लगाय।4।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।23।

जाके तन को परसत पौन, गयो भ्रम मुनि को दुख जौन ।
वा उपसर्ग दुसह जिन सह्यो, गहि कुमार तप परिषह सह्यो ।1।
ग्रन्थ बने या कलि से जोय, ते उपकार उन्हीं अवलोय।
ऐसे महावीर जिनराय, कौलों कहें सकल गुण ताय।2।
पूजूँ नित जिन मन वच काय, जल गधादि अर्घ्य को लाय।
भक्ति भाव अति गाय बजाय, मोकूँ शिव द्यो भव विनसाय।3।

ॐ ह्रीं श्रीवर्धमान-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।24।

अडिल्ल- ऋषभ जिनेश्वर आदि वीर लों नाथ जी।
चौबीसों जिनराज जजों नय माथ जी।।1।।

जम्बू भारत क्षेत्र वर्तमान हि जिना ।
पूजूँ अर्घ्य सुदेय हरो भ्रम भव वना ।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादि-महावीरपर्यन्तवर्तमान-चतुर्विंशति-जिनेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा-आदि वृषभ जिनवर तनी, अन्त जिनेश्वर वीर ।
वर्तमान चौबीस जिन, करूँ स्तुति हर पीर ।1।

ढाल-त्रिभुवन-गुरुस्वामी

श्री वृषभ जिनन्दा जी, हरिये भव फदा जी ।
करिये सुखवृन्दा अविनाशी जु के जी ।1।
अजितेसुर स्वामी जी, त्रयलोक सुनामी जी ।
करिये शिवगामी, सेवक देखिकै जी।2।
भव भ्रमण निवारो जी, लखि सेवक थारो जी ।
जिन सभव भारो, तारन विरद है जी ।3।
अभिनन्दन जिनन्दा जी, दायक सुख वृन्दा जी ।
हरिये भव फदा, शरण तुहे गहा जी ।4।
सुमति सुमतिकर जी, कुमति जडतै हर जी ।
करिहो वर भक्ति, सु मन वच कायतैं जी ।5।
पद पद्म नमूँ तुम जी, मन वच हरिये जम जी ।
जिन पद्म सु हम लखि, सेवक रावरो जी ।6।
सु सुपारस जिनवर जी, पूजूँ शिव लक्ष्मीकर जी ।
हरिये भव दुख भर, हरि सब कर्म को जी ।7।
सुर इन्द्र नमै पद जी, तन चन्द्र समा सद जी।
जिन चन्द्र प्रभू गद, जनम जरा हरो जी।8।

जिन पुष्प सुरद पद जी, पूजूँ हरिकै मद जी ।
हरि कर्म महावद, सद पद दीजिये जी ।9।
भव ताप हमारे जी, हरिये दुख कारे जी ।
जिन शीतल सारे, शिव पद दीजिये जी ।10।
शुभ श्रेय जिनेश्वर जी, हरिये भवको भर जी ।
करिये मम अमर, अक्षय पद दीजिये जी।11।
जिन वासु सुपूजै जी, तुम सम नहि दूजे जी ।
प्रभु हूजे मम सहाय, जु भव सकट विषै जी ।12।
विमलेश हरो मल जी, रागादि महागद जी ।
प्रभु देहु महाबल, कर्म विनाशकै जी ।13।
गुणनन्त तुम्हारे जी, कवि कौन उचारे जी ।
जिननत हमारे, कर्म बली हनूँ जी।14।
द्वै धर्म कहे जिन जी, मुनि श्रावक थे तिन जी।
जिनधर्म महामुनि, दीनदयाल है जी ।15।
दुख ताप अनेकै जी, जग में जिन देखै जी ।
हरि शाति जिनेशे, शिवपद को करो जी ।16।
कीडी कुन्थव बहुजी, पारे जिन जीव सहू जी ।
ऐसे जिन कुन्थ, लघु-गुरु ना गिने जी ।17।
अरि कर्म महा दु ख जी, दे होय मिथ्या रुख जी ।
तिन हानि महा सुख, द्यो अरिनाथ जु जी ।18।
विधि मल्ल महामद जी, धारयो जग जय पद जी ।
तिन गल्ल सुमल्ल, निधारण मल्लि है जी ।19।
मुनिसुव्रत स्वामी जी, जग अन्तरयामी जी ।
करुणानिधि नामी, करुणा कीजिये जी ।20।

नमिनाथ जिनेश्वर जी, नमि हों मन वच कर जी ।
हरि कर्मनि के भर, मेरे नाथ जू जी ।21।
हरिवश उजारे जी, जिन नेमि निहारे जी ।
अनिहो सम तारे, ये सम चन्द्र है जी ।22।
जिन पारस पारस जी, जे पीवत या रस जी ।
है लोह समा जस, कचन से करै जी ।23।
वर्धमान जिनेशा जी, तपलेय सुभेशा जी ।
अरिकर्म अनेशा, है शिवको लही जी ।24।
जा जनम सु माही जी, मणि वृष्टि जु थाहीं जी ।
मुर इन्द्र कराही, कोटि अनेक ही जी ।25।
जिन तन के माही जी, मल सूत्र न थाही जी ।
पर म्वेद जू नाही, क्षीर सुरुधिर है जी ।26।
सहनन सस्थाने जी, दोउ आदि बखाने जी ।
अरु रूप महाने, काम कहा तिहि जी ।27।
वपु बहुत सुगन्धे जी, भ्रमर निकर अधे जी।
इक सहस वसुधे, लखन धारि है जी ।28।
बल धरत अतोले जी, हितमित प्रिय बोले जी ।
ये जनमत खोले, दश, दश गुन जिनवर जी।29।
जोजन शत शत में जी, चतु दिश जित तित में जी ।
नहि काल परै कित, जिनवर जिह लसै जी ।30।
आकाश करै गम जी, भू गम नाहि पग जी ।
कोई जीव न बँधै, मम करुणा कीजिये जी ।31।
उपसर्ग नहीं कब जी, अहार न कवला जी ।
मुख चारि लखै सब, इक मख पूरव ही जी ।32।

विद्या सब ईशै जी, तन छाँह न दीसै जी ।
नहि नैनन दीसे, सब टमकार ही जी ।33।
नख केश बढे नहि जी, केवल गुन दश ये ही जी ।
चय मागधि भाषा, सब समझे जना जी ।34।
सब जन हित भावै जी, बैर न कोऊ काहै जी ।
इक ऋतु मे जु फला, है षट् फल ही जी ।35।
आदर्श समानी जी, जिरह को भुव ठानी जी ।
मन्द गन्ध सुहानी, पौन चले जहाँ जी ।36।
फल खेत सु निर्मल जी, दश दिश है निर्मल जी।
हुय जय जय सुर गल, सार सुहावनू जी ।37।
वृष चक्र चलै ढिग जी, मगल द्रव्य हू सगि जी ।
दश चार सुराकृत, अति शोभा बनी जी ।38।
ये गुण चवतीसा जी, धरि है जगदीशा जी।
वर सार अमीसा सो अनि ठौर ना जी ।39।
त्रय पीठ सुखासन जी, तापे सिहासन जी ।
तिति कज सुवासन, अन्तर तिह लसै जी ।40।
त्रय छत्र फबै सिर जी, त्रय जग प्रभुता धर जी ।
चवसठि चवर ढुरै, सैन करै मनु जी ।41।
सुर दुन्दुभि बाजै जी, मनू सैन कराजे जी ।
दिव्य ध्वनि खिरजे, चारो काल मे जी ।42।
तरु शोक हरे जन जी, भामडल भव भन जी ।
बरसा है सुर सुमन, सु तीनू काल ही जी ।43।
चव घात विनाशे जी, चव गुण प्रकाशे जी ।
दृग केवल भासै, लोकालोक कूँ जी।44।

लहि केवलज्ञानू जी, सब जगत पिछानू जी ।
सुखनन्त लहानू, आतम जनित ही जी ।45।
बलनन्त उपावे जी, निज शक्ति सुपावे जी ।
अविनाशि अथाहै, को महिमा कहे जी ।46।
सब मिल गुण सारे जी, सख्या सु छियारै जी ।
बिन दोष अठारे, सौ कहुँ नाम को जी ।47।
क्षुद तिरषा खोई जी, रुख राग न कोई जी ।
जर जनम मृत्यु हू, नाशि मूलतै जी ।48।
गद शोक रु विस्मय जी, नाशि निद्रा भय जी।
हनि स्वेद रु खेद, जये मद मोह को जी ।49।
हरि आरति चिन्ता जी, लियो पद अरहता जी ।
तिन चर्न महन्ता, मन वच पूजिहो जी ।50।

दोहा-ये गुन युत दूषण रहित, श्री चौबीस जिनेश ।
पूजूँ मन वच काय ते, अर्घ्य देय शुभ भेष ।51।

ॐ ह्री श्रीवृषभादिमहावीरपर्यन्त-चतुर्विंशतिजिनभ्यो महार्घ्यं

अडिल्ल- हो आरोग्य शरीर, सु घर सपत्ति भरो ।
वरो सयानी नारि, रूप रभा धरो ।।
लहो सपूत सुपुत्र, सुजस जग हो महा,
ये ते वर तुम देहुँ, जनम जोलौ गहा ।।

इति वर्तमान-चतुर्विंशति-तीर्थंकर-पूजा सपूर्णा

अनागत चतुर्विंशति तीर्थंकर पूजा

अडिल्ल- महा पद्म ले आदि, अनन्त बल लो जिना।
जबू भरत सु उतपति, भविषित भव हना,

विद्या सब ईशै जी, तन छाँह न दीसै जी ।
नहि नैनन दीसे, सब टमकार ही जी ।33।
नख केश बढे नहि जी, केवल गुन दश ये ही जी ।
चय मागधि भाषा, सब समझे जना जी ।34।
सब जन हित भावे जी, बैर न कोऊ काहै जी ।
इक ऋतु मे जु फला, है षट् फल ही जी ।35।
आदर्श समानी जी, जिरह को भुव ठानी जी ।
मन्द गन्ध सुहानी, पौन चले जहाँ जी ।36।
फल खेत सु निर्मल जी, दश दिश है निर्मल जी।
हुय जय जय सुर गल, सार सुहावन् जी ।37।
वृष चक्र चलै ढिग जी, मगल द्रव्य हू सगि जी ।
दश चार सुराकृत, अति शोभा बनी जी ।38।
ये गुण चवतीमा जी, धरि है जगदीशा जी।
वर सार अमीसा, सो अनि ठौर ना जी ।39।
त्रय पीठ सुखासन जी, तापे सिहासन जी ।
तिति कज सुवासन, अन्तर तिह लसै जी ।40।
त्रय छत्र फबै सिर जी, त्रय जग प्रभुता धर जी ।
चवसठि चवर ढुरै, सैन करै मनु जी ।41।
सुर दुन्दुभि बाजै जी, मनू सैन कराजे जी ।
दिव्य ध्वनि खिरजे, चारों काल मे जी ।42।
तरु शोक हरे जन जी, भामडल भव भन जी ।
बरसा है सुर सुमन, सु तीनू काल ही जी ।43।
चव घात विनाशे जी, चव गुण प्रकाशे जी ।
दृग केवल भासै, लोकालोक कूँ जी।44।

लहि केवलज्ञानू जी, सब जगत पिछानू जी ।
सुखनन्त लहानू, आतम जनित ही जी ।45।
बलनन्त उपावे जी, निज शक्ति सुपावे जी ।
अविनाशि अथाहै, को महिमा कहे जी ।46।
सब मिल गुण सारे जी, सख्या सु छियारै जी ।
विन दोष अठारे, सौ कहुँ नाम को जी ।47।
क्षुद तिरषा खोई जी, रुख राग न कोई जी ।
जर जनम मृत्यु हू, नाशि मूलतै जी ।48।
गद शोक रु विस्मय जी, नाशि निद्रा भय जी।
हनि स्वेद रु खेद, जये मद मोह को जी ।49।
हरि आरति चिन्ता जी, लियो पद अरहता जी ।
तिन चर्न महन्ता, मन वच पूजिहो जी ।50।

दोहा-ये गुन युत दूषण रहित, श्री चौबीस जिनेश ।
पूजूँ मन वच काय ते, अर्घ्य देय शुभ भेष ।51।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरपर्यन्त-चतुर्विंशतिजिनभ्यो महार्घ्यं

अडिल्ल- हो आरोग्य शरीर, सु घर सपत्ति भरो ।
वरो सयानी नारि, रूप रभा धरो ।।
लहो सपूत सुपुत्र, सुजस जग हो महा,
ये ते वर तुम देहुँ, जनम जोलौ गहा ।।

इति वर्तमान-चतुर्विंशति-तीर्थंकर-पूजा सपूर्णा

अनागत चतुर्विंशति तीर्थंकर पूजा

अडिल्ल- महा पद्म ले आदि, अनन्त बल लो जिना।
जबू भरत सु उतपति, भविषित भव हना,

ता पूजूँ मन लाय, थापि मन वच तना ।

आह्वानम् सस्थापन करि, अघ गन हना ।1।

ॐ ह्रीं अनागतमहापद्मादि-अनंतवीर्यपर्यंत-चतुर्विंशतिजिनसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् अह्वानं।

ॐ ह्रीं अनागतमहापद्मादि-अनन्तवीर्यपर्यन्त-चतुर्विंशतिजिनसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं अनागतमहापद्मादि-अनन्तवीर्यपर्यन्त-चतुर्विंशतिजिनसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

अष्ट चाल जोगीरासा

जल निर्मल सुर सरित आदि को, लेय कनक भरि झारी।

जन्म जरा मृत मेटन कारन, पूज रचूँ सुखकारी ।।

महापद्म सुरदेव आदि दे, अनन्त वीर्य लौ सारे।

काल अनागत के चवबीसों, पूजों मन वच भारे ।।

ॐ ह्रीं अनागतमहापद्म-सुरदेव-सुप्रभ-स्वयंप्रभ-सर्वायुध-जयदेव-उदयदेव-प्रभादेव-उदंकदेव-प्रश्नकीर्ति-जयकीर्ति-पूर्णबुद्ध-निष्कषाय-विमलप्रभ-बहुलप्रभ-निर्मल-चित्रगुप्त- समाधिगुप्त-स्वयंभू-कंदर्पनाथ-जयनाथ-विमल-दिव्यवादानन्तवीर्य-चतुर्विंशति-जिनेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

पावन चदन गध थकी अहि, लपटै चहुँ दिश आही।

पुन ता सग अनेक और तरु, आप समान कराही।।महा ।।

ॐ ह्रीं महापद्मादि-अनन्तवीर्यपर्यन्तानागत-चतुर्विंशति-जिनेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत उज्ज्वल इन्दु कुन्द सम, सार सुगन्ध अपारे।

ताकरिके शुभ कनक थाल भरि, पूजूँ पद अविकारे ।महा ।

ॐ ह्रीं महापद्मादि-अनन्तवीर्यपर्यन्तानागत-चतुर्विंशति-जिनेभ्यो अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्ण रूप मय विविध वर्ण के, सुन्दर पुष्प मिलावें।

ताकरि थार सुभरि सुवरण मय, श्रीजिन चरण चढावें।महा ।

ॐ ह्रीं अनागत-महापद्मादि-अनंतवीर्यपर्यन्तानागत-चतुर्विंशति-जिनेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत खडादि रसनि कर पूरित, रसना प्रिय चरु ल्यावै ।

भरि वर थार सु सुन्दर क्षुतहर, श्रीजिन चरण चढावें ।महा ।

ॐ ह्रीं महापद्मादि-अनन्तवीर्यपर्यन्तानागत-चतुर्विंशति-जिनेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणिमय दीप प्रकाश अधिक युत, प्रासुक सार सु ल्यावें ।

ते धरि सुचर्ण सुथार मनोहर, पूज जिनेश करावें । महा ।

ॐ ह्रीं महापद्मादि-अनन्तवीर्यपर्यन्तानागत-चतुर्विंशति जिनेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप विविध विधि गध मिलाके, सार दशाग करावें ।

खेवत धूपायन रुचि सेती, अष्ट करम जरि जावें ।महा ।

ॐ ह्रीं महापद्मादि-अनन्तवीर्यपर्यन्तानागत-चतुर्विंशति जिनेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा

फल बादाम सुपारी आदिक, नाना विधि के लावें ।

मोक्ष महा फल सुन्दर दायक, भर कर थाल चढावें ।महा ।

ॐ ह्रीं महापद्मादि-अनन्तवीर्यपर्यन्तानागत-चतुर्विंशति जिनेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा

जल गधाक्षत पुष्प चारु चरु, दीप धूप फल लावें।

सब ही मेलि सुवर्ण थाल में, अर्घ्य बनाय चढावें।महा ।

ॐ ह्रीं महापद्मादि-अनन्तवीर्यपर्यन्तानागत-चतुर्विंशति जिनेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय अर्घ्य

अडिल्ल- महापद्म सुरदेव आदि चवबीस ही,
काल अनागत तने जजो जगदीश ही।।
जल चन्दन अक्षतादि अर्घ्य शुभ ठानि के,
गीत नृत्य वादित्र भक्ति अति आनि के।।

ॐ ह्रीं महापद्मादि-अनन्तवीर्यपर्यन्तानागत-चतुर्विंशति जिनेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येक अर्घ्य

जगत माहि वोपमा कमल की दीजिये।
पराधीन एकेंद्री विनश्वरता लिये ।।
अविनाशी स्वाधीन पचेंद्री प्रभु महा,
ताते उपमा कज बने कैसे तिहॉ।1।
तातै महा सुपद्म नाम जिन पाइयो ।
अनुपम अद्भुत अकृत आप उपाइयो ।
ऐसे जिन महापद्म पद्म पद पूजि हो।
मन वच अर्घ्य सुदेय भक्तियुत हूजि हों ।2।

ॐ ही श्रीमहापद्म-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।1।

सुरदेव जिनराज सूर सिरमौर है ।
कर्म महा रिपु जीति बसे शिव ठौर हैं ।
जगत जीव सब जीति अतीत भये अरी ।
ताकूं छिन मे जीति सूर सज्ञ वरी ।1।
छिनमे जीति सूर सज्ञा वरी।1।
मै अरि वसि हों दीन आप पद सूर हो ।
मौको अरि करि चूर देहु सुख पूर हो ।

आठ द्रव्य शुभ लेय सु अर्घ्य बनाय के ।
आप चरण सुखकरण जजों मन लाय के । 2 ।

ॐ ह्रीं श्रीसुरदेव-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।2।

रत्नादिक की काति सहित शशि सूर है ।
सो प्रभ जा ढिग हीन सुप्रभ मूर है ।
देह काति जाकी करि भामडल बने ।
जामें प्राणी अपने भव सप्त हि सने ।1।
ताते सुप्रभ प्रभा अनूपम है महा।
पूजूँ मन वच काय अर्घ्य दे अघ खहा ।
गीतनृत्य वादित्र अनेक बजाय के ।
भक्ति भाव धरि अधिक सुगुण गण गायके ।2।

ॐ ह्रीं श्रीसुप्रभ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।3।

को करि रचित जु प्रभा जिनूँ की नाहि है ।
स्वय भई तिन प्रभा उपम तिहि काहि है ।
लखो देह गुणप्रभा भवातर देखनी ।
अन्तर गुण जिन केवलज्ञान विलोकनी ।1।
ऐसे श्रीजिनराय स्वयप्रभ पूजते।
मिटे महादुख मोहि कर्म अरि धूजते।
तातै जल गधादि द्रव्य वसु लायके ।
पूजूँ अर्घ्य चढाय सुगुण गण गायके ।2।

ॐ ह्रीं श्रीस्वयंप्रभ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।4।

सर्वायुध को मारि ध्यान आयुध धरयो ।
ताकरि ज्ञानावरण आदि अरि जय करयो।
या अरि आयुध धारी जग केशव जये ।
ताको जीतो आप अनुप आयुध थये ।1।

सर्वायुध ये नाम सार्थ जिन पाइयो ।
कर्म काटिके अविचल थान सिधाइयो ।
ऐसे जिन सर्वायुध बुधके मूर को ।
पूजूँ मन वच काय अर्घ्य दे सूर को ।2।

ॐ ह्रीं श्रीसर्वायुध-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।5।

देव जके जग माहि कहन के देव हैं ।
तारन विरदन ताहि धरे अहमेव है ।।
ताते ये जग देव सु साँचे देव हैं ।
शरणागत प्रतिपालक तारक एव है ।1।
पुनि गुण सार सु धरे वीतरागी महा ।
देखै लोकालोक सर्व सर्वज्ञ कहा ।
तातै ये जिनदेव देवनिके देव है ।
पूजूँ अर्घ्य चढाय त्यागि अहमेव हैं ।2।

ॐ ह्रीं श्रीजयदेव-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।6।

उदयदेव जिनराज उदय सब काल में ।
केवल किरण समूह सहित गुनमाल में ।
तारे जीव अनेक भास निज पर करै ।
कौन कहे तिन महिमा तम सब भ्रम हरे ।1।
पुनि तन तज शिव गये अचल निर्मल भये ।
पूजूँ अर्घ्य चढाय गान गुन विविध ये ।
नृत्य भक्ति अति ठानि सुमन वच काय तें।
देहु अचल पद मोहु कर्म मल हानि के ।2।

ॐ ह्रीं श्रीउदयदेव-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन उदक के पात्र नमूँ सिर नाय ही ।
उदय भयो रविज्ञान सकल भ्रम धाव ही।

परणति नन्तानन्त सकल द्रव्य को लखी ।
काल त्रयरु स्वभाव विभाव सबै अखी ।1।
जजों जास के पाय अर्घ्य शुभ लाय के ।
भक्ति भाव थुति युक्त अधिक गुण गाय के।
पातिक विष सु उखार सुधा सम वानि है ।
सुनि सम्यक् दृग गहे दाय निरवान है ।2।

ॐ ह्रीं श्रीउदंक-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।8।

शोक कियो सब दूरि भरम भाव न लियो ।
केवलवाणि प्रकाश ज्ञान आनद कियो।
प्रश्नकीर्ति कर प्रश्न, सनेह सुसब खयो ।
पूजूँ मन वच काय अर्घ्य दे सुख भयो। ।1।

ॐ ह्रीं श्रीप्रश्नकीर्ति-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।9।

कर्म महा दुठ जीति, कीर्ति जग में लई ।
जयकीरति जग माहि, सत्य सज्ञा पई।
केवलज्ञान उपाय, दिव्य ध्वनि गाय जू ।
कर्म महा दुठ हरन, उपाय बताय जू ।1।
हूँ ता कीर्ति जगत में प्रगटयो ।
सब बातें करि कीर्ति, सुजय सार्थक लयो ।
ऐसे जश जय पाय अर्घ्य दे पूजि हों ।
मेरे हूँ अरि हानि और नहि दूज हो ।2।

ॐ ह्रीं श्रीजयकीर्ति-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।10।

है निरबुद्धि जीव, जगत में रुलत है ।
बस मिथ्या हित अनहित, लख तन जलत है ।
आयो शुभ को उदय तबै कछु बुधि लई।
पूर्णबुद्धि लयो शरन, गह्यो हित पूर्ण ही ।1।

सुनी जिनेश्वर वानि, तत्व सरधा भई।
तब धरिके निज ध्यान कर्म सेना खई।
ऐसे पूरन सुबुधि जजूँ जुग पाय ही ।
भक्ति भाव युत ताके, गुणगण गाय ही ।2।

ॐ ह्रीं श्रीपूर्णबुद्धि-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।11।

बुद्धि कुबुद्धि बसात, मिथ्यात गहात है।
पुनि इनकी सहचरी, कषाय जु आज है ।
गहि मिथ्यात्व कषाय, रुलत ससार में ।
किये परावृत पच, भवो दधि धार मे ।1।
जब कोई पुण्य बसाय निकषाय सुशर्ण को।
लीनू तव तिन वानि, सुनी सुख कर्ण को।
तब मिथ्या दृग हानि, सत्य सरधा भई :
भव तनुते तजि राग, विराग दशा लई ।2।
उपज्यो केवलज्ञान, उद्धारे जीव हो ।
पुनि अघाति अरि हानि, लई सुख सीव ही ।
इन अकषाय जिनेश, जजो जुग पाय ही ।
मन वच भक्ति लगाय, गाय गुण भाय ही ।3।

ॐ ह्रीं श्रीनिष्कषाय-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।12।

जिम मणि मलते रहित, धरै निर्मल प्रभा ।
तैसे विधि मल हान, विमलप्रभ जिन लभा ।
देख अन्य मल युक्त, दया निधि जिनवरा ।
निज वाणी जल बरसि, समल निर्मल करा ।1।
देय मोक्ष को मार्ग, अमार्ग विहाय के ।
पहुँचाये शिवसुपुर, अपर भव धाय के

ऐसे विमल जिनेश, हरो मल मो तनू ।
पूजूँ अर्घ्य चढाय, देखि दुनिया घनू।2।

ॐ ह्रीं श्रीविमलप्रभ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।13।

मेटि मोह की गहल, बहल जिनराज जी ।
करि सचेत दे ज्ञान, हरो भव साज जी।
मै वदौ पद पद्म, छद्म को हानिके।
दजे छल बिन बानि, सरलता आनिके ।1।
जल गधाक्षत पुष्प सुचरु वर दीप ही ।
धूप मेलि फल अर्घ्य करो, अघ खीप ही।
नृत्य गीत वादित्र, सु विविध बजाय कै ।
देऊँ अर्घ्य अनूप विविध गुण गायकै ।2।

ॐ ह्रीं श्रीबहल-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।14।

निर्मल निर्मल करो, सकल मल हानिके ।
देहु विमल पद मोहि, कर्म मल भानिके ।
मल मे मुखि मिथ्यात्व, घात करि नाथ जी।
द्यो मोहि सम्यग्ज्ञान, नमूं नय माथ जी ।1।
ताकरि है भव हानि, मोक्ष पद आय है।
पूजूं अर्घ्य चढाय, पाय गुण गाय है।
विविध सु उत्सव सहित, सुमन वच काय ते ।
भर्म भानि भव हानि, छुटों दुख भाय ते ।2।

ॐ ह्रीं श्रीनिर्मल-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।15।

चित्रगुप्त जिन मोहि, विचित्र दशा हरो।
देहु दशा इक मोहि, अचल सपति करो।
ज्ञानावरणी आदि, करम वसु हानिये ।
चित्र दशा के कारण, ये पहचानिये ।1।

कारन हानत होइ, काज को नाश ही ।
ये तुम जानत नाथ, कहूँ का मैं सही ।
पूजूँ अर्घ्य चढाय, गाय गुण आप ही ।
मन वच काय लगाय भक्ति बहु थाप ही ।2।

ॐ ह्रीं श्रीचित्रगुप्त-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।16।

करि समाधि शिव साधि, आधि व्याधी हरो ।
प्रभु समाधि वर गुप्त, सुप्त अदशा हरौ।
आधि व्याधि जिय ठानि, विविध विधि विकल्पता।
करे कर्म मो नाथ, बधावे भव-लता ।9।
तातै ये समार, मूल प्रभु जानिके ।
देहु अचल पद मोहि, मूल इन हानिके
पूजूँ अर्घ्य चढाय, गाय गुण विविध ही।
वच तन भाव लगाय, देहु निज सुख मही ।2।

ॐ ह्रीं श्रीसमाधिगुप्त-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।17।

स्वातम भू को जोय, स्वय प्रभु साधि ही ।
देहि आदि पर भूमि, लखी पर वादि ही ।
करि अनुभो सु स्वरूप, ज्ञान केवल लयो ।
ता करि लोक अलोक, सुपतछि देखियो ।1।
चय वानी तब आप, कियो उपकार को ।
भव भ्रम जीवनि हानि, दयो दृग सार को ।
ताकरि करि निज ध्यान, सुकर्म खिपाय के,
पहुँचे शिवपुर जाय, जरादि विहाय के ।2।
ऐसे श्री जिनराज, स्वयभू पाद ही ।
पूजूँ अर्घ्य चढाय, मत्र करि वादि ही ।
मेरे हू प्रभु कर्म हानि, शिव कीजिये ।
जन्म जरामृत फिर नही, है ये दीजिये ।3।

ॐ ह्रीं श्रीस्वयभू-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।18।

करि कदर्प सुहानि, नाम कदर्प लियो,
सहस अठारह भेदनि, जिनवर ने जयो ।
श्री कदर्प जिनेश, दर्प हर भर गुनो ।
दर्प मान को नाव, जीव बैरी भनो ।1।
ता करि भव-भव रुले, महासकट सहे ।
ताहि निमित्त तै, क्रोध आदि सब की गहे
तातैं ये कदर्प, दर्प सब मूल हैं ।
लखि कर करुणा धारि, हरो हम भूल है।2।
श्री कदर्प जिनेश, नमूँ शिर नाय के ।
पूजूँ अर्घ्य चढाय, द्रव्य वसु लाय के।
तुम शरना बिन जिनवर, जग भरम्यो महा।
अब कोउ पुण्य प्रसाद, शरन तेरो गहा ।3।
तुम शरना सुख करना, दु ख हरना महा।
स्वपन मात्र हू अन्य, नयादि गहो कहाँ।
बैठत सोवत उठत सुमरन आप ही ।
करो मोय करुणानिधि मो शिव थाप ही ।।

ॐ ह्रीं श्रीकदर्प-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।19।

जयन शील जे पुरुष, तासके नाथ जी ।
ताते श्री जयनाथ यथारथ पात जी।
कर्म महा दुठ जये, जगत जीतक चके ।
तातै हू जयनाथ, यथारथ है तके ।1।
जे जीये शरनो गहे, तास हू अरि हरे ।
देय मुक्ति को जन्म, नहीं फिरि कर धरे ।
ऐसे श्री जय नाथ, हरो हम कर्म को ।
देहु मोक्ष को वास, दास लखि पर्म को ।

ॐ ह्रीं श्रीजयनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।20।

विमलनाथ जिनदेव, अमल इक्कीसमे ।
देहु अमल पद मोहि, समल पद करि गमे ।।
चरननि चेरो जानि, चरन शरनू रखो ।
सुपने हू नहि यादि, और तुम ही लखो ।1।
विमल मूर्ति तुम बाहिर, अन्तरि विमल हो ।
विमल आपके बैन, सुने हम सम लहो ।
तातै मन वच काय, विमल पद पूजिहो ।
देहु विमल पद मोहि, समल नहि हूजिहो ।2।

ॐ ह्री श्रीविमल-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।21।

दिव्यवाद जिनराज, देव के देव हो ।
मै पद पूजूॅ आप हरन अहमेव हो ।
जे तुम शरनू गहे, ते न वरनू लहे ।
गहि अजरा-मर पद, सुकर्म जरतै दहे ।1।
तातै पूजूॅ पाय, सुमन वच काय ते ।
मो मृत्यु जन्म निवारि, करो च्युत कायतै ।
अर्घ्य देय करि भक्ति, नृत्य वादित्र ही ।
गाय सुगुण बहु भाय, एक करि चित्त ही ।2।

ॐ ह्री श्रीदिव्यवाद-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।22।

वीर अनेक सु जीते, ऐसे वीर कूॅ।
जीति गह्या अति गर्भ, कर्म धरि धीर कूँ।
ताकूॅ छिन मे जीत्यो, वीर जिनेश ने ।
तातै सार्थक वीर, नाम गह्यो वेश ने ।1।
ऐसे वीर जिनेश, जजूॅ जुग पाय ही ।
मन वच अर्घ्य चढाय, गाय गुण भाय ही ।

मै प्रभु विधि वशि रक, होय शरनू गह्यो।
मेरे कर्म निवारि, देहु पद सुखमयो।2।

ॐ ह्रीं श्रीअनन्तवीर-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।23।

अनतवीर के धारी, नाम सुपाइयो ।
सचित कर्म अनेक, दुखद अरि धाइयो ।
जे जेशरने जिन अये, तास हू अरि खये ।
तातै हू बलधार, नाम प्रभु ने पंये ।1।
ऐसे अनत सुवीर्य, जजूँ जुग पाय ही ।
मन वच काय लगाय, विविध गुण गायही ।
मेरे हू अरि हरो, करो सुख वास मो ।
मै हूँ शरन तुम्हारे, लखिये दास मो ।2।

ॐ ही श्रीअनन्तवीर्य-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।24।

सवैया- महापद्म मुरदेव सुप्रभ रु स्वयप्रभू,
मर्वायुध जयदेव उदय उदक जू ।
प्रश्नकीर्ति जयकीर्ति निकषाय, विमलेश वहुल,
निर्मलप्रभ हारन भो पक जू ।
चित्र रु समाधिगुप्त स्वयम्भू व कदर्प जू,
जैनाथ विमलप्रभ दिव्यवाद अकजू ।
नतवीर नतवीर्य अनागत चवबीसी,
जम्बू द्वीप भरत क्षेत्र पूजूँ सुखकद जू।

दोहा-ये चौबीस जिनेश के, अर्घ्य देय युग चरन ।
पूज मन वच काय ते, हारक जामन मरन ।।

ॐ ही श्रीमहापद्मादिअनन्तवीर्यपर्यंत-अनागत-चतुर्विंशति-जिनेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा- महापद्म को आदि दे, अनन्तवीर्य पर्यन्त ।
काल अनागत में जिना, होंगे सुखकर सत ।1।
ताकी थुति रचि हूँ कछुक, जिन आगम अनुसार ।
तुछ धी ते निज इष्टको, बल लेके अविकार ।2।

चाल- अहो जगत गुरु देव

महापद्म जिनराय, वन्दौ मन वच काई ।
सूरदेव के पॉय, नमूँ दुतियम सुखदाई ।3।
सुप्रभ तृतियम देव, नमि हूँ चरना चित देके ।
नमूँ स्वयप्रभ एव, चतुरथ मन वच लेके ।4।
सर्वायुध जयदेव, युगम देवनि के देवा ।
मन वच करि हो सेव, गाय गुण विविध सुयेवा ।5।
उदयदेव उदयक, दोऊ ही दायक शर्मा ।
हरन मिथ्यात कलक, करन सेवक पद पर्मा ।6।
प्रश्नकीर्ति जयकीर्ति, भयी कीर्ति जग एवा ।
तिन युग ते करि प्रीति, करो तन चरननि सेवा ।7।
पूर्णबुद्धि निष्काय, दोय दायक शिव सारम् ।
ताके नमि के पाय, हरो भव भाव असारम् ।8।
नमूँ विमलप्रभ देव हरो अरि कर्म हमारे ।
बहुल करत पद सेव, होत भव ते निरवारे ।9।
निर्मल चित्र सुगुप्त, चित्र ससार हरीजे ।
हरो मोह मद सुप्त, मोक्ष सुख सार करीजे ।10।
गुप्त समाधि जिनेश, करो अजरामर मोकूँ।
देहु स्वयभू अशेष-मोक्ष पद तुम पद ढोकूँ।11।

श्री कदर्प नमामि दर्प हरि मन वच कोई ।
पुनि जयनाथ सुस्वामि, नमूँ पद द्यो सुखदाई ।12।
विमलनाथ दिव्यवाद, पाद युग युग जिन सेऊँ ।
क्षीर सार वच स्याद् देहु दृग निज बेऊँ।13।
अनन्तवीर्य अरि जीति, मोक्ष पद ले भ्रम नाश्यो ।
अनन्तवीर्य भव भीत, होइ अरि कर्म विनाश्यो ।14।
ये चवबीस जिनेश, अनागत काल जु केरे ।
धरे विविध गुण वेश, कौन कहिये कछु टेरे ।15।
धुर जिन पुण्य प्रताप, नगर रचि है सुर स्वामी ।
नव योजन ते चार, दोय दस दीर्घ करामी ।16।
तिह जिन मात पिता, मु मह बडभाग विराजे ।
गर्भ प्रथम षट् मास, रतन विरखा सुर भाजे ।17।
गज प्रवेश सुपनात, तिह प्रभु गर्भ सु आवे ।
वरषे रतन मुपाति, सुरागन सेव करावे ।18।
आवे चतुरनिकाय, देव कल्यानक काजे ।
मात पिता कू पूजि, थान अपने जु विराजे ।19।
बीते जब नव मास, जन्म जिनराज मुपावे ।
तब तजि करि निज वास, इन्द्र ऐरावत ल्यावे ।20।
तापरि करि असवार, मेरु गिरि पै ले जावे ।
एक सहस वसु सार, कलश भरि क्षीर नहावे ।21।
नाम उचार कराय, नृत्य अद्भुत सु करावे ।
करि श्रृगार सुलाय, पिता माता ढिग लावे ।22।
करि जिन जन्म कल्यान, बहुरि निज थान सिधावे ।
पुनि सेवे सुर आनि, विविध मरजी जिम पावे ।23।

इह विधि बाल विहाय, प्रजापति पालन काजे ।
राज करे युत न्याय, बहुरि वैराग सु साजे ।24।
तब आवे सुर असुर, करे तप को कल्याने ।
करि शिविका असवार, धरे, व्रत निर्जन थाने ।25।
मनपर्यय लहि ज्ञान, ध्यान निश्चल मन ध्यावे ।
ता करि घाति सु हान, ज्ञान केवल शुभ पावे ।26।
तब सुर आसन कपि, सुरासुर पूजनि आवे ।
करिके ज्ञान कल्यान, बहुरि निज थान सिधावे ।27।
भासे लोकालोक, लखे सब परिणति सारी
काल तीन की थोक, लखे इक समय मझारी ।28।
जिमि भासै कहि सोई, जननि को भरम मिटावे ।
निज पर को अवलोक, सार सम्यक् दृग पावे ।29।
कोउ श्रावक व्रत गहे, कोऊ मुनिव्रत सुपारे ।
इमि करि जिय उपकार, अघाती हनि शिव धारे ।30।
तब सुर च्यारि मिलान, मोक्ष कल्यानक काजे ।
तन सस्कार सुठानि, जाय निज थान विराजे ।31।
तिथि तिन नतानत, शर्म पुनि नत विराजे ।
ज्ञान अनत सुमत, दर्श पुन 'नतहि छाजे ।32।
एक सिद्ध अवगाह, माहि सिद्ध नन्त विराजे ।
क्षायिक सम्यक् अथाह, वीर्य पुनि थाह न पाजे ।33।
सूक्षम तु गुण धार, ग्राह इन्द्रनि करि नाहीं ।
अगुरु लघु गुण सार, लघु गुरु दोऊ न थाहीं ।34।
अव्याबाध सुधार, हरी सुख दुख सब बाधा ।
इन आदिक गुण सार, धरे अहि कौन अगाधा ।35।

जनम जरामृत आदि, करन कारन तन नाश्यो ।
भाव कर्म द्रवि कर्म, सोहू तिमि मूल विनाश्यो ।36।
इन आदिक गुन नन्त सार कौन कोलौं वरनावे ।
पूजूँ अर्घ्य चढाय, भक्ति युत वच तन भावे।37।

दोहा- यें चौबीस अनागते, महापद्मदे आदि ।
अनन्त वीर्य लों पूजि हों, मन धरि अति आह्लाद ।।

ॐ ह्रीं महापद्मादि-अनंतवीर्यपर्यन्त-अनागतचतुर्विंशति-जिनेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अडिल्ल- डारि भरम की भूल, लूभि रह रूप में ।
राह यही शिव एक, मन सु लगि भूप में ।
अमन अकाय अवाच, ग्रहे नहि जम कदा ।
वा पद में हो मगन, लहो पद शिव सदा ।1।
डाइनि साइनि प्रेत, आदि नहि लागि है ।
अग्नि चोर जल जोर, आदि नहि पागि है।
या भव महि रहि सुजस लोक पर सुख लहै ।
या जिन चरन प्रसाद, बात येती रहै ।2।

इत्याशीर्वादः ।

निर्वाणादि अतीत, जजूँ मन लाय के ।
ऋषभादिक वर्तमान जजूँ सुखदाय के ।
महापद्म को आदि, अनागत नाथ को ।
पूजूँ मन वच काय, नाय निज माथ को ।।

ॐ ह्रीं अतीत-अनागत-वर्तमान-चतुर्विंशति-जिनेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इति तीन चौबीसी पूजा संपूर्णम्

त्रैलोक्य जिनालय विधान

दोहा- द्वीप अढाई के विषै, भये जिनेन्द्र अनन्त।
होगे केवलज्ञानमय, नाथ अनन्तानन्त।।
अपने को उनके सदृश, करो भाव धरि येह।
तिन सबकी पूजन करो, मन वच तन धर नेह।।

अडिल्ल- तीन लोक जिन कृत्रिमा कृत्रिम थान जे।
इन्द्र नरेन्द्र खगेन्द्र, नमावत भाल जे।।
तिनको वन्दत है, त्रिभुवन थुति गाय के।
तिन सबको मै वन्दो, शीश नवाय के।।

दोहा- कृत्रिम और अकृत्रिमा, जिनप्रतिमा जिनगेह।
तिन सबको पूजन करो, धारो धर्म सनेह।।

ॐ ही श्रीत्रैलोक्यसम्बन्धितजिनालयसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानं।

ॐ हीं श्रीत्रैलोक्यसम्बन्धितजिनालयसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ. स्थापनं।

ॐ हीं श्रीत्रैलोक्यसम्बन्धितजिनालयसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

अष्टक सुन्दरी छन्द

उदक क्षीर समुद्र समान जी, कनक भाजन मे भर आन जी।
हरषधार महा छविवन्त जी, जिनगेह यजों मै विनत जी।।

ॐ हीं श्रीत्रैलोक्यसम्बन्ध्यकृत्रिम-जिनालयेभ्यो जल नि० स्वाहा।

मलय-चन्दन गारि सुल्याय कें, अति सुगन्ध रही महकायकें।।हरष।

ॐ हीं श्रीत्रैलोक्यसम्बन्ध्यकृत्रिम-जिनालयेभ्यः चन्दन नि० स्वाहा।

धवलशालि पखारि पिछान के, रजतथार विर्षे भरि आनकें।।हरष ।।

ॐ ह्रीं श्रीत्रैलोक्यसम्बन्ध्यकृत्रिम-जिनालयेभ्यो अक्षतान् नि०।।

वर अनेक मनोहर फूल जे, तिनहि लेय सुगध सुमूल जे।।हरष ।।

ॐ ह्रीं श्रीत्रैलोक्यसम्बन्ध्यकृत्रिम-जिनालयेभ्यः पुष्पं नि० स्वाहा।।

सरस नेवज थाल सजोयके, परममूरति श्रीजिन जोयकें।।हरष ।।

ॐ ही श्रीत्रैलोक्यसम्बन्ध्यकृत्रिम-जिनालयेभ्यो नैवेद्यं नि०।।

रतन दीपक दिव्य सुहावने, जगमगाति सबै मनभावने।।हरष ।।

ॐ ह्रीं श्रीत्रैलोक्यसम्बन्ध्यकृत्रिम-जिनालयेभ्यो दीप नि० स्वाहा।।

परम धूप दशाग सुवास ले, अलि समूह रहे झुक आश ले।।हरष।।

ॐ ह्रीं श्रीत्रैलोक्यसम्बन्ध्यकृत्रिम-जिनालयेभ्यो धूपं नि० स्वाहा।।

कथित आगम जे फलसार जी, विविध भांतिन के धरथार जी।।हरष।।

ॐ ह्रीं श्रीत्रैलोक्यसम्बन्ध्यकृत्रिम-जिनालयेभ्यः फल नि० स्वाहा।।

सलिल आदिक ले वसुविध सबे, विनयपूर्व प्रभूदित ह्वै तबै।।हरष।।

ॐ ह्रीं श्रीत्रैलोक्यसम्बन्ध्यकृत्रिम-जिनालयेभ्यो अर्घ्यं नि० स्वाहा।।

परम पावन सुन्दर सोहने, जगत जीव तने मनमोहने।
धनि प्रतक्ष जजे लख ते जहाँ, हम परोक्ष त्रिकाल जजें यहाँ।।हरष।।

ॐ ह्रीं श्रीत्रैलोक्यसम्बन्ध्यकृत्रिम-जिनालयेभ्यः पूर्णार्घ्यं नि०।।

प्रत्येक पूजा

दोहा- तीन लोक मे राजते, भवन अकृत्रिम जेह।
तिन सबको सामान्य करि, व्यासादिक वरणेह।।

अडिल्ल- जिनगृह अचल मनोग, भुवन त्रय के दिखें।
उत्तम मध्यम और जघन्य सबै अखै।।
तिनकी अब लम्बाई, क्रम तैं जानिये।
जोजन शतक पचास, पचीस प्रमानिये।।

हरिगीतिका

इनतें सु अर्ध प्रमान चौडे, अब ऊँचाई तिन तनी।
लम्बाई चौंड़ाई मिलायें, आध कर जोजन भनी।।
त्रय भाँति जिनगृह द्वार गुरु, तिन उदय जोजन खास है।
सो जान सोलह आठ चव, तिन अर्द्ध करी यह व्यास है।।
उत्कृष्ट मध्यम जघन चैत्यालय न लघु द्वारान की।
इमि आध वसु चव दोय जोजन, व्यास इन आधान की।।
उत्कृष्ट मध्यम जघन जिनगृह, जान व्यासादिक भनो।
क्रमतें सु आधा जानहू, अब विशेष तिनो सुनो।।

ॐ ह्रीं श्रीत्रैलोक्यसम्बन्ध्यकृत्रिम-जिनालयेभ्यो अर्घ्यं नि० स्वाहा।।

चाल छन्द

वर भद्रसाल सुखकारी, नन्दनवन सार निहारी।
नन्दीश्वर द्वीप गहारी, वैमानिक जान मँझारी।।
इन विषै जिनालय सारे, उत्कृष्ट सबै सुखकारे।
तहाँ पूजन सुरगन जाहीं, हम पूजत इस थल पाहीं।।

ॐ ह्रीं श्रीसर्वोत्कृष्टजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं नि० स्वाहा।।

सौमनस अरन मनहारे, कुडलगिरि रुचक पहारे।
वक्षार कुलाचल शीश, पुनि इष्वाकार गिरीश।।
गिरि मानुषोत्र के माहीं, मध्यम जिनधाम कहाहीं।
तहाँ पूजन सुरगन जाहीं, हम पूजत इस थल पाहीं।।

ॐ ह्रीं श्रीसर्वमध्यमजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं नि० स्वाहा।।

पाडुकवन माहीं जिनालै, ते सर्व जघन्य कहालै।
तहाँ पूजन सुरगन जाहीं, हम पूजत इस थल पाहीं।।

ॐ ह्रीं श्रीसर्वजघन्यजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं नि० स्वाहा।।

गीतिका छन्द

जिन नींव जोजन आध-शत आयाम जोजन सबनि की।
जोजन जु सोलह द्वार तुगसु, द्वार सन्मुख दिशनि की।।
अरु जिनगृहन के दोउ पारस, वनहि दो दो द्वार हैं।
छोटे बखाने फेर पीछे, द्वार नाहीं धार हैं।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्कृष्ट-जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं नि० स्वाहा।।

वैताढ्य जम्बू कुरुह शाल्मलि, परसु जिनगृह लेखिये।
तिनकी लम्बाई कोस एक, प्रमान पुनि अवशेषिये।।
वितरन भावन ज्योतिषी, इत्यादि जिनगृह-पाँति हैं।
जथाजोग तिनि आयाम श्रीजिन, देव लखि बहु भाँति हैं।।

ॐ ह्रीं श्रीउत्कृष्टादिविशेषणरहितजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं।

कवित्त

सर्वजिन सद्म चार द्वारन तें शोभनीक,
मणिमई तीन कोटि लसत उतुग है।
द्वारनकर जावे की गली तिनमें एक एक,
बीथी प्रति एक एक सोहे मानथभ है।।
और नव नव तूप फेरि तिन तीन कोट,
बीच बीच अन्तराल वाहि वन झूम हैं।
द्विती तृती कोट बीच धुजायें फरहरात,
तृती कोट चैत्यालय बीच चैत्यभूमि हैं।।

ॐ ह्रीं चतुःद्वार-वन मानस्तंभादि-संयुक्त-जिनालयेभ्यो अर्घ्यं।

सुन्दरी छन्द

तिन जिनालय में वसु एक सौ, गरभगेह बने सुख देत सो।
अरु तहाँ जिनमन्दिर मध्यने, रतनखम्भ सुवर्ण मई बने।।

जुगल जोजन चौंडिय हैं तिनै, आठ जोजन लम्बाई भनै।
तुरिय जोजन ऊँचपनो गिने, देवच्छद छप्पर सोहने।।

ॐ ह्रीं श्रीगर्भगृहदेवच्छदछप्परमंडपसंयुक्त-जिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

ढार मगल की

सिहासन छत्रादि, सहित प्रतिबिम्ब ते।
नीलवरन तिन केश, शिखा पर शोभते।।
वज्रमयी तिन दशन, ओठ आरक्त है।
वर नवीन कोंपल, सम कर पद रक्त है।।
ऐसे जिनेशाकार पुद्‌गलरूप आपहि परणये।
दस ताल मान प्रमान ताल, प्रमान द्वादश अँगुल ये।।
जिनराज वत विहसेक बोले, रिपभ वत तन मानिये!
ते रतनमय शत आठ प्रतिगृह, गर्भ इक इक जानिये।।

ॐ ह्रीं गर्भगृहे शताष्ट-जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं नि० स्वाहा।।

ढार मंगल की

नागकुमार अरु यक्ष जुगल बत्तीस ते,
एक एक गृहगर्भ खडे समरूप ते।
पकतिबद्ध बरोबर सोहें जुदे जुदे,
चौंसठ तिनके चँवर हस्त चित्रित खुदे।
खुदे तिनकर वीर्यवान, जिनेश पुनि पार्श्व तनै।
श्रीदेवि अरु सरसुती देवी, यक्ष सर्वाण्ह कनै।।
अरु यक्ष सनत्कुमार इन, चउ रूप के प्रतिबिम्ब हैं।
श्रीधनरूप सरसुति, वानि क्यों प्रतिबिम्ब हैं।।
श्रीदेवी सरस्वति दोऊ उत्कृष्ट हैं।
तातें इनकी देवागन आकृति है।।

बहुरि यक्ष ये दोऊ भक्त विशेष हैं।
तातें तिन आकार अनादि लिखेष हैं।।

ॐ ह्रीं अनेकपरिकरसंयुक्त-जिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं नि0।।

सुन्दरी छन्द

निकट श्रीप्रतिबिम्ब के जहाँ, खचित अष्ट सु मगल द्रव्य तहाँ।
गन अठोत्तर सौ इक जात की, सरब मगलद्रव्य सुहावती।।

ॐ ह्रीं अष्टमगलसंयुक्त-जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं नि0 स्वाहा।।

ढाल जोगीरासा की

मणि सुवरन मय पुष्पनि कर जुत, देवच्छद गृह सोहे।
ताके पूव विषें बस्ती जो, जिनमन्दिर मन मोहे।।
ताके मध्य विषे रूपामय, कचन वर्ण घडे है।
सहस बत्तीस अनादिनिधन ते, पृथिवी माहि धरे है।।

ॐ ह्रीं धूपघटसंयुक्त-जिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं नि0 स्वाहा।।

अडिल्ल- महाद्वार जो बडे द्वार के पार्श्व दो,
चौबिस सहस धूपघट पुनिमह द्वार दो।
वाहि पास दो और विषें लूमे तहाँ,
आठ सहस मणिमय माला झूमे वहाँ।।

गीतिका छन्द

तिनिमाल बिच बिच महस चौबिस, माल सुवरन मय जहाँ।
है बहुर तिन महि द्वार आगे, सु मुख मडप हैं तहाँ।।
तिस विषें कलश सुवर्णमाला, सोल सोलह सहस है।
बहुरि सोलह सहस तिन मधि, धूप घट महकत है।।

ॐ ह्रीं धूपघटमाला-संयुक्त-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं नि0।।

अडिल्ल- तिन सन्मुख मण्डप के मधि घण्टा बडे।
मीठे झुन झुन शब्द, करें मोतिन जडे।।

किकिणि छोटो घण्टि सहित बहु जुक्ति हैं।
घण्टन जुत्थ अनेक, सुरचना युक्त है।।

ॐ ह्रीं घण्टा-झल्लरी रचनासंयुक्त-अनेक-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

गीतिका छन्द

जिनसदन दक्खिन और उत्तर, पार्श्व के मध्यम विषे।
तहँ द्वार छोटे जान यहँ पुनि, बडे द्वारिन तें लिखें।।
मणिमाल आदिक का प्रमान सु, पूर्वते आधा यहाँ।
वसु सहस माला सदन पीछे, सहस चौबीस है तहाँ।।

ॐ ह्रीं बृहद्लघुद्वार-संयुक्तजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं नि०।।

ढार मंगल की

माला तो चौगिरद भीत के लूमती,
घडे रत्नमय ऊपर धूप सु घूमती।
घण्टा मण्डप बीच सु लूमत जानिये,
इत्यादिक रचना जिनमन्दिर मानिये।।
मानिये कोट जु तीन वेदी, पाँच भूमि सु आठ ही।
इत्यादि समोसरण विभूती, कहे पढे जिन पाठ ही।।
जो सुनन चाहि विशेष भविजन, तो त्रिलोक जु सार ही।
गुन होहु हर्षित सुरगुरु, कहि नाहि पावत पार ही।।

ॐ ह्रीं श्रीसमवसरणानादिस्थितानेकरचना-संयुक्तजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

ढाल त्रिभुवन गुरुस्वामी की

पुनि जे चैत्यालय जी, सामायिक बाले जी,
तिनि आदि क्रिया करने के थान है जी।
हैं वन्दन मण्डप जी, तिन शोभ अखण्डप जी,
असनान करने के स्थान बने जहाँ जी।।

अभिषेक सुमण्डप जी, अनजडित मण्डप जी,
हैं नृत्य करने के स्थान सुहावने जी।
नर्त्तन वर मण्डप जी, लखते अघ खण्डप जी,
देवन के रहने के स्थान बने जहाँ जी।।
अवलोकन मण्डप जी, जिनि शोभ अखण्डप जी,
गिरि क्रीडा करने के गृह स्थान है जी।
श्रुतिभ्यासन थानक जी, सुगुनन गृह मानिक जी,
विस्तीरण उत्तम पट चित्रामादि जी।
लखने वर स्थानक जी, पटिसाला मानिक जी,
जिनकर सयुक्त जिनालय शोभते जी।।

ॐ ह्रीं श्रीत्रैलोक्यसम्बन्धिसामायिकादिक्रियाकरणस्थान-सयुक्त-जिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

अडिल्ल

अकृत्रिम सु अनादिनिधन वपु पर नये।
अरु कृत्रिम जो भत्य जीव करते भये।।
रतनमयी से हेममयी रूपामई।
अरिहतन अरु सिद्धन की प्रतिमा कही।।
तिन बिम्बन को मै वदों थुतिकर अदा।
धनि जे जिय जो परतछ लखि पूजे सदा।।

ॐ ह्रीं श्रीजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

सुन्दरी छन्द

सात कोडि बहत्तर लाख ते, भवन तुल्य मनोहर भाखि ते।
चमर आदि जजें हरि सारजे, भवनवासिन के जिन आगार जे।।

ॐ ह्रीं श्रीभवनवासिदेवसप्तकोटिद्वासप्ततिलक्ष-जिनालयेभ्यो अर्घ्यं।

भुजंगी छन्द

मनुष्य लोक में चार सौ दोह घाटी,
जिनालय नमों ते महा शर्मपाठी।
बहुरि लोक तिर्यक विषे द्वीप आठी,
प्रभू-गेह बावन जजो क्रर्म-काटी।।
कहे चार कुण्डल गिरी पापहारी,
बने ते नमों मै परम भक्ति धारी।
बने गिरि रुचिक पै चार कर्म हारी,
जजें सार सुन्दर सरम अर्घ्य धारी।

ॐ ह्रीं मध्यलोक-संबंधि-चतु·शताष्ट-पचाशज्जिनालयेभ्यो अर्घ्यं।

भुजंगी छन्द

महा मेरुन पै असी देव आलय,
कुलाचल शिखर तीस सिर तीस छाजय।
गजदन्त गिरि बीस पै बीस आलय,
असी शिखर वछार गिरिपै जिनालय।।
इष्वाकार चौ चारि मानषोत्तरालय,
शतक एक सत्तर जु वैताढ्य गाजय।
देव उतर कुरु दस पै दस है जिनालय,
मुनष्य लोक में जिनगेह ये विराजय।।

ॐ ह्रीं श्रीमनुष्य-क्षेत्र-संबंधिअष्टनवति-त्रिंशज्जिनालयेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

भुजंगी छन्द

जोजन महा तीन सौ का किये वर्ग,
जोजन भये महस नब्बे सबेई।
बहुरि एक जोजन सात लख और,
अडसठ सहस अँगुल होय तेई।।

ऐसे सहस नब्बै करे जोजनों के,
जिते होंहि अगुल त्रिरासिक करे ही।
सो ही वर्गरासिक तिनो का गुनाकार,
भागाहार सतती जगत्प्रतर देई।।

ॐ ह्रीं व्यतरभवनस्थ-जिनालयेभ्यो अर्घ्यं नि० स्वाहा।।

अडिल्ल- देय शत छप्पन अँगुल के वर्ग का,
भाग जगत्प्रतर को दिये जो प्रमान का।
ताके सख्यातवें भाग परमान है,
असख्यात जिनेन्द्र मन्दिर अभिराम है।

ॐ ह्री ज्यातिष्कलोक-सबधि-जिनालयेभ्यो अर्घ्यं नि० स्वाहा।।

अडिल्ल

लाख चौरासी सहस सत्तानवे मानिये
तेइस सर्व विमान जिनालय जानिये।
एक एक सुर जान जिनेश्वर थोक है,
ऊर्ध्वलोक के भवन तिन पगधोक है।।

ॐ ह्री श्रीऊर्ध्वलोकस्थ-चतुरशीतिलक्षनवतिशतसहस्रत्रयो-विशतिप्रमाण-जिनालयेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

गीतिका छन्द

वसु कोडि छप्पन लाख सत्तानवें सहस बखानिये।
चार सै इक्यासी सुलोका-काश माहि प्रमानिये।।
इह भवनवासी आदि जिनगृह, लोकमधि सख्या भनी।
ज्योतिषी व्यन्तर भवन, सम्बन्धी असख्याते तनी।।

ॐ ह्रीं श्रीलोकाकाशस्थित-जिनालयेभ्यो अर्घ्यं नि० स्वाहा।।

सवैया तेइसा

नौ सौ पचीस करोर तिरेपन, लाख हजार सत्ताइस गाये।
और कहे नव सै अडतालि, त्रिलोक जिनालय के दरसाये।।
ये प्रतिबिम्ब विराजत हैं, इक एक जिनालय सौ अठ गाये।
जोर करे इकठे तिनको 'जगराम' नमें नित शीश नवाये।।

ॐ ह्रीं त्रिलोक-सम्बन्धि-जिनालय-जिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं नि०।।

दोहा-तीन भुवन के सदन जिन, तिन प्रतिबिम्ब विशाल।
भवनन जुत प्रत्येक मब, वरनों वर जयमाल।।

जयमाला

(भुजंगी छन्द)

जिनालय बहत्तर लाख सात कोडी,
तहाँ आठ सै बिम्ब तैतीस कोडी।
छिहत्तर कहे लाख सुन्दर सुहाये,
नमों बिम्ब पाताल के माथ नाये।।
प्रथम द्वीप जम्बू विषें जिन दिवाले,
अठत्तर अकृत्रिम महा शोभ वाले।
सहस आठ शत चार चौबीस गाये,
तहाँ बिम्ब राजे तिन्हें शीश नाये।।
दुती धातकी खण्ड के जिनगृहाले,
अठावन अधिक एक शत विशाले।
सहस सब चौंसठ तहाँ बिम्ब दरसी,
नमों हाथ धर माथ जिनगुन समरसी।।
तिरयच धरा क्षेत्र में चैत्य सोहे,
कहे दुगुन बत्तीस लख चित्त मोहे।

सहस षट् शतक नव द्वादश बखाने,
नमों हाथ धर माथ प्रतिबिम्ब जाने।।
असख्यात व्यन्तर विबुध ज्योतिषन के,
जिनालय असख्यात अविचल सबन के।
असख्यात जिनबिम्ब राजें तिन्हों में,
नमों हाथ धर माथ अरजी करों मैं।।
प्रथम नर्क ते ऊर्ध्वगृह लख चुरासी,
सहस सत्तानवे तेइस सर्व भासी।
प्रतिकोडि इक नव छियत्तर लखासी,
अठत्तर सहस चार सै अरु चुरासी।।
नदी सरस सीता सितोदा तडाग्रे,
सहस शैल कचन कहे तिन शिराग्रे।
अद्भुत महान सहस आनन्दकारी,
तिन्हो को जु अष्टाग वन्दना हमारी।।
प्रथम भरत नर इन्द्र कैलाश कूटे,
तहॉ बिम्ब निर्मापि अघ वृन्द छूटे।
बहुरि भव्य जीवन करे मध्यलोके,
तिन्हें प्रात ही सदा नमें सौख्य होते।।
महा एक शतक क्षेत्र सत्तर जु मुक्ता,
नमों पञ्चकल्यानक सु सार जुक्ता।
कहे कृत्यकृत्य जिनालय त्रिलोक,
सबै बिम्ब राजे हृदै धार धोक।।
अतीता अनागत कहै वर्तमान,
जिनेन्द्रादि रत्नत्रय भूषितान।

जगत में कहे सार तीरथ महानी,
नमे सो 'जगतराम' अष्टाग आनी।।

ॐ ह्रीं त्रिलोक-सम्बन्धि-जिनालय-जिनबिम्बेभ्यो जयमालाघ्यं।

अडिल्ल- जो इह पूजन सार करे अभ्यासने,
सकल तीर्थ की वन्दन कीनी तासने।
रोग क्लेश नशे धन धान्य जु आवही,
अनुक्रम सो शिवराज परमपद पावही।।

इत्याशीर्वाद.।

इति श्रीत्रैलोक्यजिनालयपूजा सपूर्णा

स्तुति

दोहा-प्रणमि सुगुरु अरिहतपद प्रणमि सिद्धवरदेव।
आचारज उवझाय नमि, प्रणमि साधुपद एव।।

सुनयनानन्द छन्द

इन्द्र धरणेन्द्र नर इन्द्र जग ईश के,
होय अनुचर धरें छत्र त्रय सीस के।
पञ्चकल्याण लहि घातिया जय लये
गणधरादिक जजे परम हर्षित भये।।
ज्ञान दर्शन जुगल ये अनन्ता महा,
ध्यान वर शुकल सो अनन्ता सुख लहा।
वीर्य सो अनन्त लहते परमदेव जी,
द्यो प्रभू श्रेष्ठ मगल हमें सेव जी।।
जनम जर मरण ये प्रबल त्रय नग्र ते,
ध्यानरूप अग्निबाण कर किये दग्ध ते।
सास्वतो सिद्धपद पाय गन सिद्ध ते,
दो हमे पञ्चमो ज्ञान परसिद्ध जे।।

ज्ञान दर्शन तपा वीर्य चारित्र ये,
पञ्च आचार के धार आचार्य जे।
येहि सुध्यान के सिद्धि कर्त्ता तपी,
सघ मुनि ता विषें परम नायक जपी।।
शुद्ध रत्नादि गम्भीर गुन धार है,
अग द्वादश श्रुत-ज्ञान-दधि पार है।।
सूर होते शिव स्वरूप लक्ष्मी यदा,
दो हमे सरस्वती अन्त रहिते सदा।।
घोर अति रौद्र दुख थल भयानक दिखे,
जगत रूपी जड विपिन तिहि के विषे।
वदन विकराल नख कठिन तीक्षण दिखे,
पापरूपी इसो सिह जिहि के विषें।।
मुक्तिरूपी सुगम पथ तें भ्रष्ट है,
मोह मिथ्या कुतप सेय अतिकष्ट है।
इसे भनि जीव शिवमार्ग परकाशते,
दो हमें श्रेष्ठ पाठक पठन पाठते।।
उग्र तप चरण कर अग शोषित भया,
धर्म अरु शुकल जुग ध्यान माहीं ठया।।
भेद षट् द्रव्य स्वरूप त्रयकाल जे,
ज्ञान ध्यावत सु निज आतमलाल जे।।
जीव षट्काय रखपाल समभाव ते,
करम वन दहन लहि परमपद ध्यावते।
बीस वसु मूलगुण धार ऋषिराज जी,
दो गुरु श्रेष्ठ मगल हमें सेव जी।।

घत्ता- ये ही परम गुरु परमेष्ठी, ये ही सकल हितू सुखकार।
ये ही उत्तम पुरुष जगत में, ये ही मनवाछित दातार।।
ये ही मगलमय मगल कर, ये ही पञ्चमगति करतार।
इनके पद को भव भव शरना, मार्गो परम जगत में सार।।

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो महार्घ्यं नि० स्वाहा।।

अडिल्ल- इस प्रकार यह थुति है ताके काज कों,
पञ्च परम गुरु वन्दों नित प्रति साज कों।
कठिन जगत वनबेल सु छेह लहाय जी,
कर्म-काठ दहि मुक्ति परमपद पाय जी।।

इत्याशीर्वादः

वर्तमान में दूसरों की देखा-देखी अनुष्ठान एव व्रतोपवास करने का रिवाज सा चल पडा है। व्रतविधि का ज्ञान नहीं होने से उतना लाभ नहीं होता है जितना होना चाहिए। व्रतों का काल, कारण, जापमन्त्र, व्रतों में पूजा, विधि, उद्यापन आदि की पूर्णरूपेण जानकारी से जहाँ हमारी श्रद्धा दृढ होती है, वहीं हमारी मानसिकता में भी बदलाव आता है, इच्छाओं का निरोध होने से समता आती है, मन्त्रसाधना से परिणाम भी शुद्ध होते हैं जिससे सवर व निर्जरा होती है। इसके अभाव में व्रतों में बाहर का आहार तो त्याग दिया जाता है किन्तु आन्तरिक ऊर्जा का स्रोत जागृत नहीं होता है। यही कारण है कि शारीरिक कमजोरी बढने से मानसिक चिडचिडापन बढ जाता है। अर्थात् व्रतों से सयम एव त्याग करने का उत्साह बढने की अपेक्षा क्रोध एव क्षोभ बढने लगता है। अत व्रत विधि की वैज्ञानिकता जानना अनिवार्य है।

-ब्र जय 'निशात'

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1	कृति	अक्षय निधि कथा पूजा
	प्रकाशक	आर्यिका धर्ममति राजमति पुस्तकालय, दि जैन मदिर, प लूणकरण सिह रास्ता, ठाकुर पचेवर, जयपुर-3
2	कृति	आचार्य धर्मसागर अभिनदन ग्रन्थ
	प्रकाशक	श्री दि जैन नवयुवक मडल, कलकत्ता, सन् 1982 ई
3	कृति	आरोग्य आपका
4	कृति	आष्टाह्निक व्रतोद्यापन
	लेखक	श्री कल्याण कुमार जैन 'शशि'
	प्रकाशक	सरल जैन ग्रन्थ भण्डार, जबलपुर, वी स 2508
5	कृति	कर्मदहन विधान
	प्रकाशक	सेठी बधु श्री वीर पुस्तक मदिर, महावीर जी (राज)
6	कृति	कर्म निर्झर व्रत पूजा
	लेखक	गुलाबचन्द्र जैन 'दर्शनाचार्य'
	प्रकाशक	वीर पुस्तक भण्डार, जयपुर स 2039
7	कृति	क्रिया कोश
	लेखक	श्री कवि किशन सिह
	प्रकाशक	श्री परमयुत प्रभावक मडल, अगास, वि स 2041
8	कृति	कुदरती उपचार
9	कृति	काजिका द्वादशी व्रतोद्यापन
	प्रकाशक	वीर पुस्तक भण्डार, मनिहारों का रास्ता, जयपुर-3
10	कृति	गणधर वलय विधान
	लेखक	आर्यिकारत्न ज्ञानमति
	प्रकाशक	दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध सस्थान, हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र , वी नि स 2525

11	कृति	चतुर्विंशति विधान
	लेखक	कवि रामचन्द्र जी
	प्रकाशक	नेमिचन्द्र बाकलीवाल किशनगढ (राज)
12	कृति	चारित्र शुद्धि विधान
	प्रकाशक	आचार्य धर्मश्रुत ग्रन्थमाला जैन मदिर, गुलाब वाटिका, लोनी रोड, गाजियाबाद (उ प्र)
13	कृति	चारित्र सार
	लेखक	प लालाराम जी
	प्रकाशक	नेमचन्द्र सर्राफ, बडौत (मेरठ)
14	कृति	चौसठ ऋद्धि विधान
	प्रकाशक	दिगम्बर जैन पुस्तकालय, गाधी चौक, सूरत (गुज)
15	कृति	जैन पूजा पाठ सग्रह
	प्रकाशक	जैन पुस्तक भवन, कलकत्ता
16	कृति	जैन पूजा पाठ सग्रह
	प्रकाशक	दि जैन मंदिर, गोपालवाडी, जयपुर (राज)
17	कृति	जैनेन्द्र कथा कोश
	लेखक	प वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री
18	कृति	जैन व्रत कथा सग्रह
	सपादक	स्व प वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री
	प्रकाशक	मदन मजरी वर्धमान शास्त्री, सोलापुर-3, सन् 1983 ई
19	कृति	जैन व्रत विधान सग्रह
	सकलन	प बारेलाल जैन 'राजवैद्य', टीकमगढ
	प्रकाशक	सिघई भगवानदास कुदनलाल जैन अटारी वाले, वी नि स 2478
20	कृति	जैन व्रत विधान सग्रह
	प्रकाशक	शैलेष भाई डाह्या भाई कापडिया, विजय जैन प्रिटिग प्रेस, गाधी चौक, सूरत, सवत् 2047
21	कृति	जैन व्रत विधि
	प्रकाशक	श्रीमती निर्मला जैन, प्ला न 9335, गोविन्द पथ, किसान मार्ग, वरकत नगर, जयपुर, सन् 1993 ई

22	कृति	जैनेन्द्र सिद्धात कोश
	लेखक	क्षु जिनेन्द्र वर्णी
	प्रकाशक	भारतीय ज्ञानपीठ दिल्ली, सन् 1988 ई
23	कृति	दशलक्षण मडल विधान
	प्रकाशक	वीर पुस्तक भण्डार जयपुर, मनिहारों का रास्ता, जयपुर-3 भाद्रपद स 2038
24	कृति	The Hygenic system
25	कृति	नदीश्वर द्वीप पूजन विधान
	लेखक	स्व श्री रविलाल
	प्रकाशक	शाति सेवा सघ, श्री 1008 दि जैन सिद्ध क्षेत्र बडागाव (धसान), टीकमगढ (म प्र) वि स 2048 वी नि स 2517
26	कृति	णमोकार पैतीसी विधान
	प्रकाशक	जैन साहित्य सदन, लाल मदिर, दिल्ली, वीर नि स 2508
27	कृति	णमोकार मत्र का माहात्म्य तथा जिनगुण सपत्ति मत्र
	प्रकाशक	श्री सेठ मगलचन्द्र पाड्या, हैदराबाद।
28	कृति	पचकल्याणक विधान
	प्रकाशक	जैन पुस्तक भवन, कलकत्ता
29	कृति	पचपरमेष्ठी विधान
	प्रकाशक	जैन पुस्तक भवन, कलकत्ता
30	कृति	पातजलि योगदर्शन
	लेखक	श्री पातजलि
31	कृति	पुरुषार्थसिद्ध्युपाय
	लेखक	आचार्य अमृतचन्द्र स्वामी
	प्रकाशक	भारतीय अनेकात विद्वत् परिषद् सन् 1995 ई
32	कृति	Fasting can save your life
33	कृति	भगवान महावीर और उनका तत्त्वदर्शन
	प्रकाशक	श्री पारस दास श्रीपाल जैन, मोटर वाले, श्यामा प्रसाद मुखर्जी मार्ग, दिल्ली-6, सितम्बर 1973 ई

34	कृति	महावीर कीर्तन
	सपादक	प भैरव लाल सेठी न्यायतीर्थ
	प्रकाशक	**गजेन्द्र ग्रन्थमाला**, 2578, धर्मपूरा, दिल्ली-110006
35	कृति	रत्नकरण्डक श्रावकाचार
	लेखक	आचार्य समतभद्र, हिन्दी- प सुखदास जैन
	प्रकाशक	जैन पुस्तक भवन, कलकत्ता
36	कृति	रत्नत्रय विधान
	प्रकाशक	वीर पुस्तक भण्डार, मनिहारों का रास्ता, जयपुर-3
37	कृति	रविवार व्रत विधान
	प्रकाशक	दिगम्बर जैन पुस्तकालय, गाधी चौक, सूरत (अहमदावाद)
38	कृति	लब्धि विधान
	लेखक	कवि श्रीचन्द्र
	प्रकाशक	वीर पुस्तक भण्डार, मनिहारों का रास्ता, जयपुर-3
39	कृति	वर्धमान पुराण
	लेखक	कविवर श्री नवलशाह
40	कृति	व्रत कथा कोष
	अनु सग्रह	गणधराचार्य कुथुसागर
	प्रकाशक	श्री दि जैन कुथु विजय ग्रथमाला समिति,जयपुर(राज)
41	कृति	व्रत तिथि निर्णय
	लेखक	डॉ नेमिचन्द्र शास्त्री 'ज्योतिषाचार्य'
	प्रकाशक	भारतीय ज्ञानपीठ, बनारस सन् 1956 ई
42	कृति	व्रत विधि एव पूजा
	लेखक	आर्यिका ज्ञानमति
	प्रकाशक	दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध सस्थान हस्तिनापुर (मेरठ) उ प्र , वी नि स 2516
43	कृति	वसुनन्दि श्रावकाचार
	लेखक	आचार्य वसुनन्दि
	प्रकाशक	अनेकात विद्वत् परिषद् सन् 1989-90 ई

44 कृति वृन्दावन चौबीसी पाठ
प्रकाशक जैन पुस्तक भवन, महात्मागाधी रोड, कलकत्ता
45 कृति श्रावकाचार सग्रह
स व अनु प हीरालाल जी
प्रकाशक जैन सस्कृति सरक्षक सघ, सोलापुर (महा) सन् 1976 ई
46 कृति शिखर सम्मेद विधान
प्रकाशक सेठी बधु श्री वीर पुस्तक मदिर, महावीर जी (राज)
47 कृति सन्मार्ग दैनिक, 4 अगस्त 1989
व्रत पर्व त्योहार विशेषाक
प्रकाशक सन्मार्ग दैनिक, कार्यालय, वाराणसी
48 कृति समवशरण विधान
प्रकाशक मोहन लाल जी शास्त्री, जवाहरगज, जबलपुर
49 कृति सर्वार्थ सिद्धि
लेखक आचार्य पूज्यपाद स्वामी, सपा -प फूलचन्द्र जी
प्रकाशक भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, सन् 1983 ई
50 कृति सर्वोदयी जैन तत्र
लेखक डॉ नदलाल जैन
प्रकाशक पोतदार ट्रस्ट, टीकमगढ (म प्र)
51 कृति सागार धर्मामृत
लेखक प आशाधर जी, अनु - आर्यिका सुपार्श्वमति
प्रकाशक भारतीय अनेकात विद्वत् परिषद् सोनागिर सन् 1990 ई
52 कृति सस्कृत वागमय शब्द कोश परिच्छेद खण्ड पूर्वार्द्ध
53 कृति सुगध दशमी व्रत कथा
प्रकाशक जैन साहित्य सदन, श्री दि0 जैन लाल मदिर, दिल्ली
54 कृति सुदृष्टि तरगणी
सकलन प टेकचन्द्र जी
प्रकाशक श्रीमती सतोष वाला जैन, 1 सी/ 47 न्यू रोहतक रोड, नई दिल्ली-5, सन् 1998 ई

55 कृति हरिवश पुराण
लेखक आचार्य जिनसेन, सपा व अनु - डॉ पन्नालाल जैन
प्रकाशक जैन साहित्य सदन, चादनी चौक, दिल्ली सन् 1994 ई
56 कृति त्रिलोक तीज व्रत पूजा, तीन चौबीसी
प्रकाशक वीर पुस्तक भण्डार, मनिहारों का रास्ता, जयपुर-3

संक्षिप्तिका

आ ध अ ग्र	आचार्य धर्मसागर अभिनदन ग्रन्थ
क्रि को	क्रियाकोश
व्र वि स	व्रत विधान सग्रह
जै व्र वि स	जैन व्रत विधान सग्रह
व्र क को	व्रत कथा कोश
जे व्र ति नि	जैन व्रत तिथि निर्णय
स वा श को परि ख पू खण्ड पूर्वार्द्ध	सस्कृत वागमय शब्द कोश परिच्छेद
ह पु	हरिवश पुराण
सु त	सुदृष्टि तरगणी
जै व्र वि	जैन व्रत विधि